चौधरी चरण सिंह
स्मृति और मूल्यांकन

चरण सिंह अभिलेखागार

चौधरी चरण सिंह
स्मृति और मूल्यांकन

चरण सिंह अभिलेखागार

प्रकाशनाधिकार © चरण सिंह अभिलेखागार

प्रथम संस्करण १९९५ किसान ट्रस्ट, दिल्ली

२३ दिसंबर २०२४
चरण सिंह अभिलेखागार द्वारा प्रकाशित
www.charansingh.com
info@charansingh.org

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन को केवल पूर्व अनुमति के साथ
पुनः प्रस्तुत, वितरित या प्रसारित किया जा सकता है।
अनुमति के लिए कृपया लिखें info@charansingh.org

अक्षर तथा आवरण संयोजन राम दास लाल
सौरभ प्रिंटर्स प्राइवेट लिमिटेड, ग्रेटर नोएडा, भारत द्वारा मुद्रित।

प्रकाशक की कलम से

चौधरी चरण सिंह की ये स्मृतियाँ राजनीतिज्ञों, पत्रकारों, नौकरशाहों, परिवार के सदस्यों तथा उन महानुभावों ने लिखीं जिन्हें चौधरी साहब के लंबे सार्वजनिक जीवन के दौरान उनसे संवाद करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। ये आख्यान चौधरी चरण सिंह के चरित्र, राजनीति, नीतियों तथा उपलब्धियों को जीवंत रूप में प्रस्तुत करते हैं। इस पुस्तक में चौधरी चरण सिंह की नेतृत्व शैली के साथ–साथ उनके व्यक्तित्व का वर्णन सम्मिलित है। इन लेखों को पढ़ने के पश्चात् आपके मन में कई बार प्रश्न जरूर उठेगा की ऐसा अजूबा इंसान क्या सचमुच था भी?

चौधरी साहब के विचारों का अध्ययन तथा इन विचारों का व्यवहार में प्रयोग करके समाज जरूर लाभान्वित हो सकता हैं। उन्होंने हमारे उन नागरिकों को एक उत्कृष्ट जीवन प्रदान करने की दिशा में विचार किया जो अब तक पर्याप्त पोषण, आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा रोजगार प्राप्त करने में असमर्थ हैं। आज भी प्रभावशाली जीडीपी वृद्धि के आंकड़ों के पश्चात हमारी जनसंख्या का विशाल बहुमत निर्धनता की स्थिति में है। इसके अतिरिक्त, हमारे समाज का नैतिक ताना–बाना निरंतर क्षतिग्रस्त हो रहा है, तथा लगभग प्रत्येक संस्था गहन और व्यापक भ्रष्टाचार से प्रभावित है। इस परिप्रेक्ष्य में चौधरी चरण सिंह एक दूरदर्शी नेता के रूप में उभरते हैं, जिनके पास भारत के आर्थिक विकास के लिए एक स्पष्ट प्रतिमान था–एक ऐसा प्रतिमान जो मुक्त–बाजार पूँजीवाद तथा राज्य–नियंत्रित समाजवाद के दोनों अतिवादों से बचता है।

उनकी १९६६ की कृति "भारत की अर्थनीति, एक गाँधीवादी रूपरेखा" उनके विचारों का उत्कृष्ट प्रतिपादन करती है। इसमें उन्होंने दो प्रमुख स्तंभों को रेखांकित किया: पहला, किसानों को लाभ पहुँचाने वाला कृषि विकास, तथा कारीगरों व भूमिहीनों के लिए गाँवों और छोटे कस्बों में वैकल्पिक रोजगार के अवसर। उनकी नीति संबंधी अनुशंसाएँ भारत की वास्तविकता में गहराई से निहित हैं। ये अनुशंसाएँ देश की विशाल जनसंख्या को संबोधित करते हैं तथा ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों के मध्य, साथ ही तथाकथित 'उच्च' और 'निम्न' जातियों के मध्य की सामाजिक असमानताओं को पाटने का प्रयास करती हैं। चरण सिंह प्रायः कहते थे कि उन्होंने एक वर्ग–युद्ध और एक जाति–युद्ध दोनों लड़े। गाँधीवादी

सिद्धांतों से प्रेरित उनकी आर्थिक सोच पारिस्थितिक रूप से गाँवों का विकास की टिकाऊ नींव पर आधारित थी नाकि भारत के वर्तमान ना रहने योग्य नगरों व कस्बों के अव्यवस्थित निर्माण पर।

अपने आदर्श स्वामी दयानंद सरस्वती और महात्मा गाँधी से प्रभावित, चौधरी चरण सिंह एक उच्च चरित्र और सिद्धांतों–वाले व्यक्ति के रूप में दिखाई पड़ते हैं। निश्चित रूप से यह पुस्तक उनकी राजनीतिक असफलताओं या उनके द्वारा आकांक्षित उपलब्धियों को प्राप्त ना कर पाने की विवेचना नहीं करती। इसके लिए हमें उन स्वतंत्र विद्वानों की ओर दृष्टिपात करना होगा जिन्होंने हमारे देश के राजनीतिक इतिहास और हमारे द्वारा चुने गए नेताओं का गहरा अध्ययन किया है। फिर भी ये अध्याय एक ऐसे व्यक्ति का सजीव और प्रेरक चित्र प्रस्तुत करते हैं, जो अडिग नैतिकता तथा उच्चतम चरित्र के साथ साथ निडर होकर सदैव एक स्वतंत्र मार्ग पर चला। जो लोग सुनने और सीखने की इच्छा रखते हैं, उनके साथ संपूर्ण भारत के लिए चरण सिंह के विचार व शिक्षाएँ आज भी प्रासंगिक हैं।

१९९५ के संस्करण से ऐसे लेख हटा दिए गए हैं जो चौधरी चरण सिंह के बारे में कोई मूल्यवान जानकारी नहीं देते थे। हमने अन्य सत्यापित स्रोतों से कई लेख जोड़े हैं, पढ़ने में आसानी के लिए पुस्तक को तीन खंडों में संरचित किया है और पाठकों के लाभ के लिए प्रत्येक लेखक की संक्षिप्त जीवनी प्रदान की है।

विष्णु गावर ने इस नए संस्करण के संपादन में प्राची हूडा की मदद करी, प्रवीण ढांडा ने बौद्धिक मार्गदर्शन किया, जया ओझा ने वर्तनी जाँच और व्याकरण सुधार किया तथा राम दास लाल ने सामान्य धैर्य और गुणवत्ता के साथ पुस्तक को टाइपसेट किया। चरण सिंह अभिलेखागार इनका आभारी है।

हर्ष सिंह लोहित
अध्यक्ष, चरण सिंह अभिलेखागार
२३ दिसंबर २०२४

मीर सिंह और नेत्र कौर। १९५०
चरण सिंह के माता–पिता

५ बच्चों में सबसे बड़े चरण सिंह का जन्म १९०२ में संयुक्त प्रान्त आगरा एवं अवध के नूरपुर गाँव, जिला बुलन्दशहर के एक गरीब बटाईदार परिवार में हुआ था। आधुनिक दृष्टि से अशिक्षित, मीर सिंह और नेत्र कौर एक मेहनती किसान समुदाय से थे जिन्हे अपने हाथों से खेती करने का गहन पीढ़ीगत ज्ञान था।

"[मैं]... एक साधारण किसान के घर में कच्ची मिट्टी की दीवारों पर टिकी हुई फूस की छत के नीचे पैदा हुआ था... जहां पीने के पानी और सिंचाई के लिए एक कच्चा कुआँ था।" चरण सिंह, १९८२

गरीबी में जन्मा यह शिशु आगे चलकर १९४७ की आजादी के बाद एक स्वदेशी सामाजिक, आर्थिक और विकासात्मक विश्वदृष्टिकोण की सबसे प्रमुख राजनीतिक आवाज बना। चरण सिंह के दृष्टिकोण की जड़ें भारत की संस्कृति से जीवन लेती हैं – स्व–काश्त किसानों के एकीकृत गाँव, भूमिहीन हस्तकरघा कारीगरों के लिए भरपूर व्यवसाय, और जाति, गरीबी, असमानता, बेरोजगारी और भ्रष्टाचार से मुक्त नैतिक और उन्नत समाज।

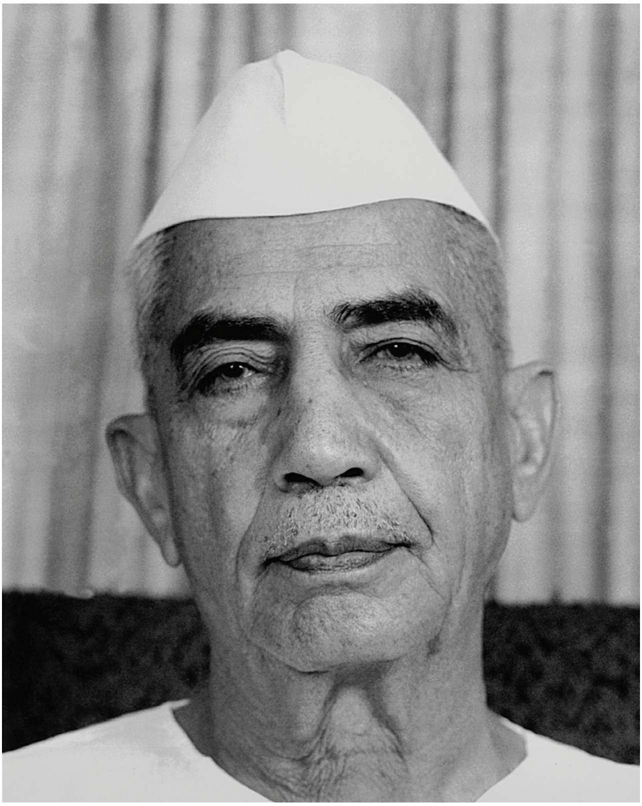

चौधरी चरण सिंह, भारत के प्रधान मंत्री, १९७९

प्रस्तावना

चौधरी चरण सिंह एक ऐसे राजनीतिज्ञ थे जिनके विचार भारतीय समाज के लिए अत्यंत प्रासंगिक हैं, क्योंकि वे हर पीढ़ी को नया दृष्टिकोण प्रदान करते हैं।

१९९५ में किसान ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित 'स्मृति और मूल्यांकन' ने चरण सिंह के जीवन की अनेकों झलकियाँ प्रस्तुत की थीं। इनमें उनके परिवारजन, राजनीतिक साथी और विरोधी, प्रशासनिक अधिकारी तथा मीडियाकर्मी सम्मिलित थे, जिन्होंने अपनी–अपनी दृष्टि से उनके व्यक्तित्व को समझा। हर योगदानकर्ता ने अपना विशिष्ट दृष्टिकोण साझा किया। उन्होंने चरण सिंह के सिद्धांतों, प्रशासनिक कौशल, और भारत के विकास के लिए उनके वैकल्पिक विचारों का वर्णन किया। ये स्मृतियाँ एक ऐसे नेता के विविध व्यक्तित्व को दर्शाती हैं, जिसने भारत की राजनीति और अर्थव्यवस्था को गहराई से प्रभावित किया।

यह नया संस्करण दो अन्य महत्वपूर्ण कृतियों – 'परंतप' (१९७८) और 'चौधरी चरण सिंह स्मृति ग्रंथ' (२०१०) के चयनित अध्यायों को सम्मिलित करके उनके पूर्ववर्ती संस्करण को और समृद्ध बनाता है। इसमें ऐसे वृत्तांत सम्मिलित हैं जो एक ओर चरण सिंह के विषय में एक नवीन सूचनाएं उपलब्ध कराते है तथा दूसरी ओर उनके जीवन के परिचित पक्षों को नवीन दृष्टिकोण से प्रस्तुत करते हैं। ये अध्याय उनके चरित्र और विचारों के अप्रत्यक्ष पक्षों को भी पाठक के सामने लाते हैं।

यह संकलन चरण सिंह के व्यक्तिगत एवं राजनीतिक दोनों पक्षों को सम्मिलित करता है। इसमें उनकी पत्नी, पुत्री, और दामाद की स्मृतियाँ सम्मिलित हैं। साथ ही इसमें जन सेवकों, पत्रकारों, और राजनीतिक समकालीनों के विचार भी हैं। ये वृतांत सामूहिक रूप से उनकी नैतिक दिशा, राजनीतिक विचारधारा, प्रशासनिक क्षमताओं और पूँजीवाद व साम्यवाद दोनों की उनकी विशिष्ट आलोचना को प्रदर्शित करते हैं। सबसे महत्वपूर्ण बिंदु यह है कि ये विकास के विषय में चरण सिंह द्वारा दिए गए वैकल्पिक विचारों को उजागर करते हैं, जो सतत और समतामूलक विकास पर समकालीन चर्चाओं में आज भी प्रासंगिक हैं।

इस प्रकार यह खंड मात्र एक स्मारक के रूप में नहीं, अपितु भारत के सबसे महत्वपूर्ण राजनीतिक व्यक्तित्वों में से एक के सिद्धांतों और नीतियों

को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में कार्य करता है। इन वृतांतों के माध्यम से, पाठक उनके व्यक्तिगत व सार्वजनिक व्यक्तित्व से परिचित होंगे, जिससे भारतीय राजनीति और समाज में चौधरी चरण सिंह की स्थायी विरासत की गहरी समझ विकसित होगी।

इस पुस्तक के लेख तीन भागों में विभाजित हैं: व्यक्तित्व और चरित्र, राजनीति, और आर्थिक व सामाजिक नीतियाँ। पहला भाग उनके आदर्श, सात्विक और दृढ़ व्यक्तित्व से परिचित कराता है। दूसरा भाग उनके यथार्थवादी राजनीतिक जीवन का परिचय देता है। अंतिम भाग उनकी गाँधीवादी विचारधारा और आर्थिक विकास की नवीन प्राथमिकताओं को दर्शाता है।

चरित्र-चित्रण: लेखकों की कलम से

चौधरी चरण सिंह के व्यक्तित्व की विशेषताएं – ईमानदारी, कर्मठता, नैतिक मूल्य, अकाट्य सत्यनिष्ठा और चारित्रिक दृढ़ता – इस पुस्तक में विभिन्न लेखकों द्वारा विस्तृत रूप से प्रतिपादित की गई हैं। उनकी वैचारिक यात्रा मुख्यतः कबीर की रचनाओं, स्वामी दयानंद सरस्वती के सामाजिक–राजनीतिक परिवर्तन के आदर्शों, तथा महात्मा गाँधी के राजनीतिक–आर्थिक दृष्टिकोण से प्रेरित रही।

लेखकों ने अपने संस्मरणों में चौधरी चरण सिंह के व्यक्तित्व के विविध पक्षों को उजागर किया है। १९६३ और १९६७ के बीच लखनऊ में चौधरी चरण सिंह के निजी सचिव तिलक राम शर्मा ने अपने लेख 'कुछ अनछुए पहलू' में उनकी ईमानदारी का एक प्रभावशाली उदाहरण प्रस्तुत किया है, जब उन्होंने अपनी बड़ी बेटी के वन विभाग की जीप के उपयोग के लिए न केवल पेट्रोल का खर्च चुकाया बल्कि सरकारी वाहन के व्यक्तिगत उपयोग के लिए निर्धारित पूरी राशि का भी भुगतान किया। शर्मा ने चौधरी साहब की ईमानदारी तथा कार्य करने की प्रणाली के ऐसे अनेक वृत्तांत बताये हैं, जिनसे स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने कभी अपने व्यक्तिगत कार्यों के लिए सरकार निधि का व्यय नहीं किया।

बागपत, उत्तर प्रदेश के जयपाल सिंह ने अपने लेख 'स्मृति–शेष' में १९५९ के नागपुर कांग्रेस अधिवेशन का आँखो देखा वर्णन किया है, जहाँ भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने सहकारी खेती लागू करने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया। चौधरी चरण सिंह अकेले विपक्ष में बोलने वाले व्यक्ति थे जिन्होंने सहकारी खेती के विरुद्ध अपने तर्कों से सभी को प्रभावित किया। चौधरी साहब सदैव स्पष्टवादी रहे

और अपने मूल्यों के प्रति अडिग रहे। उनके स्वाभिमान और देशभक्ति का प्रमाण १९७७ के चुनाव के दौरान मिला, जब उन्होंने बागपत के नवाब के यहाँ चाय पीने से इनकार कर दिया क्योंकि उनके परिवार ने ब्रिटिश उपनिवेशवाद के दौरान अंग्रेजों का समर्थन किया था।

सीसीएस हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार के प्रोफेसर और प्रमुख, प्रो एस डी चमोला ने अपने लेखन में चौधरी चरण सिंह की भारतीय अर्थव्यवस्था पर टिप्पणियों पर प्रकाश डाला है। प्रो चमोला ने लिखा है कि चरण सिंह का आर्थिक दर्शन चार प्रमुख स्तंभों पर टिका था: अधिकतम उत्पादन और गरीबी उन्मूलन, पूर्ण रोजगार, आर्थिक असमानता की समाप्ति, और लोकतांत्रिक व्यवस्था का सुदृढ़ीकरण। उन्होंने भारत के लिए न तो पूँजीवाद और न ही साम्यवाद, अपितु गाँधीवाद को उपयुक्त माना, क्योंकि यही भारतीय सभ्यता और संस्कृति के अनुरूप था। उनका मानना था कि विकास का प्रतिमान (मॉडल) ऐसा हो जो मानवीय गरिमा और मूल्यों की रक्षा करे। इसके लिए उन्होंने ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे और कुटीर उद्योगों के विकास पर बल दिया, जिससे रोजगार के अवसर बढ़ें और शहरों की ओर पलायन रुके। उनका विश्वास था कि भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में सहकारी या सामूहिक खेती की बजाय व्यक्तिगत खेती ही सफल हो सकती है, जहाँ किसान अपनी भूमि का मालिक हो और उसे आवश्यक सहायता व सेवाएं उपलब्ध हों।

दिल्ली के पहले पुलिस कमिश्नर, उत्तर प्रदेश के डीजीपी, बीएसएफ के प्रमुख रहे जे.एन. चतुर्वेदी ने स्पष्ट किया है कि चौधरी साहब ने कभी भी किसी भर्ती या नियुक्ति में जातिगत सिफारिश नहीं की। डॉ. धर्मचंद्र विद्यालंकार ने उनके सामाजिक न्याय के दृष्टिकोण को रेखांकित किया है, जिसमें मंडल आयोग का गठन एक महत्वपूर्ण कदम था। सर मार्क टली ने एक विदेशी पत्रकार के रूप में टिप्पणी की है कि अंतर्राष्ट्रीय मीडिया और भारत का अंग्रेजी प्रेस ग्रामीण पृष्ठभूमि के नेताओं को समझने में विफल रहा।

चौधरी चरण सिंह अपने सिद्धांतों के प्रति प्रतिबद्ध थे। गायत्री देवी ने उनके सिद्धांतों पर अटल रहने का उदाहरण दिया है, जब उन्होंने पटवारियों की हड़ताल के दौरान तत्कालीन मुख्यमंत्री पंत जी के विरोध के बावजूद अपना निर्णय नहीं बदला। इसी प्रकार, जब उन्होंने जमींदारी समाप्त करने के लिए कानून बनवाने का निर्णय लिया, तो बड़े कांग्रेसी नेताओं की सलाह को भी उन्होंने ठुकरा दिया।

चौधरी चरण सिंह सत्ता के प्रति लोलुप नहीं थे। यह सभी को ज्ञात है कि सत्ता के लिए राजनीतिज्ञ विभिन्न प्रकार के समझौते करते हैं, लेकिन

चौधरी साहब को समझौतों और शर्तों के अधीन रहकर शासन करना कभी भी उचित नहीं लगा। वे अनुशासन, नियम और कानून के प्रति हमेशा प्रतिबद्ध रहे। उनके सिद्धांतों की दृढ़ता का एक और उदाहरण तब सामने आया जब उन्होंने इंदिरा गाँधी के राजनीतिक विरोधी होने के पश्चात भी वाराणसी में उनके घेराव की योजना को विफल किया, ताकि हिंदुस्तान की प्रधानमंत्री की गरिमा तो ठेस न पहुँचे। यह निर्णय उनकी संयुक्त विधायक दल सरकार के पतन का कारण बना, लेकिन उनके लिए पद से कहीं अधिक सिद्धांत महत्वपूर्ण था।

१९७९ में इंदिरा गाँधी के समर्थन से चौधरी चरण सिंह प्रधानमंत्री बने। इंदिरा गाँधी चाहती थीं कि उनके खिलाफ आपातकाल के दौरान किए गए अत्याचारों से संबंधित मुकदमे वापस लिए जाएं, लेकिन यह चौधरी चरण सिंह को स्वीकृत नहीं था। इस कारण श्रीमती गाँधी ने सरकार से कांग्रेस का समर्थन वापस लिया।

इन सभी संस्मरणों से चौधरी चरण सिंह का एक ऐसा चित्र उभरता है जो ईमानदारी, सिद्धांतनिष्ठा, और राष्ट्रीय हित को व्यक्तिगत लाभ से ऊपर रखने वाले नेता का है। उनका जीवन सार्वजनिक जीवन में नैतिक मूल्यों और सिद्धांतों के महत्व का एक ज्वलंत उदाहरण है।

चरण सिंह के सामाजिक-आर्थिक विचार: एक संक्षिप्त दृष्टिकोण

अपने पूरे राजनीतिक जीवन में सिंह ने राजनीतिक अर्थव्यवस्था अथवा पॉलिटिकल इकॉनमी के वैकल्पिक दृष्टिकोण की वकालत की। उनके इस वैकल्पिक दृष्टिकोण में बेरोजगारी को समाप्त करना, धन का समान वितरण, लोकतंत्र को सशक्त करना और कृषि को प्राथमिकता देना जैसे उद्देश्य शामिल थे। उन्होंने अपने तर्कों से छोटे स्वतंत्र खेतों और लघु उद्योगों द्वारा संचालित अर्थव्यवस्था प्रणाली को प्राथमिकता देने का समर्थन किया। उन्होंने छोटे स्तर पर श्रम–प्रधान तथा बड़े स्तर पर पूँजी–प्रधान उत्पादन द्वारा कृषि और उद्योग के बीच एक स्वस्थ संतुलन की माँग की। उन्होंने आज के भीड़भाड़ वाले शहरों के स्थान पर विकसित गाँवों (जिसमे सभी बुनियादी सुविधाएँ हों) के पक्ष में तर्क दिया। सिंह ने धन के न्यायसंगत वितरण के महत्व पर बल दिया। उनका मानना था कि छोटे स्वतंत्र कृषक और छोटे पैमाने के उद्यमों की बहुलता वाली आर्थिक प्रणाली इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सबसे उपयुक्त है।

चरण सिंह ने भारत के विकास में शहरी पूर्वाग्रह को उजागर किया, जो शहर और गाँव के बीच असमान शक्ति संबंधों के कारण है। इस शहरी

पूर्वाग्रह में कृषि और उद्योग, साथ ही ग्रामीण और शहरी संसाधनों का असमान वितरण शामिल है, जिसके कारण ग्रामीण और शहरी संपदा में अंतर बढ़ा। उन्होंने स्वास्थ्य, स्वच्छता, आवास, पानी, परिवहन, बिजली, और विशेष रूप से शिक्षा जैसी सेवाओं में गाँवों की उपेक्षा की ओर ध्यान आकृष्ट कराया। यह कृषि उत्पादों के लिए कम मूल्य निर्धारण से भी स्पष्ट है, जो शहरवासियों के पूर्वाग्रहों को और बढ़ाता है। उन्होंने लिखा, "एक शहर में बड़ा हुआ गैर–कृषक उसी तरह से अपने गाँव के गरीब लोगों को तिरस्कार से देहाती, गंवार या देहकानी कहता है, जैसे एक यूरोपीय भारतीयों के लिए तिरस्कारपूर्ण शब्दों का प्रयोग करता है।"

संसाधनों के वितरण में इस शहरी पूर्वाग्रह का मुकाबला करने के लिए, सिंह ने सरकारी नौकरियों में कृषि से संबंधित लोगों को आरक्षण देने की बात की। सत्ता संरचनाओं में ग्रामीण इलाकों की कम उपस्थिति के लिए यह उनका समाधान था। उनका मानना था कि शिक्षित और नौकरशाहों की सामाजिक पृष्ठभूमि महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह उनकी सोच और सहानुभूति को प्रभावित करती है। कुल मिलाकर, सिंह का दृष्टिकोण शहर–गाँव के बीच के संबंधों पर नए विचारों की ओर ले जाता है।

चरण सिंह ने विकास और राजनीतिक अर्थव्यवस्था के मुद्दों पर वैकल्पिक विकास की एक स्पष्ट और विचारशील अवधारणा दी। निश्चित रूप से चरण सिंह स्वतंत्र भारत में किसानों के सबसे प्रमुख नेता और गाँव की एक शक्तिशाली आवाज थे, जो शहरी और उच्च जाति के अभिजात वर्ग के पूर्वाग्रहों पर सवाल उठाते थे। उनका दृष्टिकोण व्यापक था, जिसमें कृषि और ग्राम उद्योग को अधिक महत्व दिया गया था। यह दृष्टिकोण आज भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि ६७ प्रतिशत लोग अभी भी गाँवों में रहते हैं और ४८ प्रतिशत अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर हैं, जबकि गरीबी, असमानता और बेरोजगारी बढ़ती जा रही है।

उनकी सोच गाँवों से कहीं आगे बढ़कर थी। उनके घोषणापत्रों व पुस्तकों से ज्ञात होता है कि उनकी सोच एक सच्चे भारतीय दृष्टिकोण पर आधारित थी, जो मुक्त बाजार की विचारधारा या राज्य के नियंत्रण तक सीमित नहीं थी। वे पूँजीवाद और साम्यवाद, दोनों के विरुद्ध थे। वे इस धारणा के आलोचक थे कि समाज केवल एक दिशा में बढ़ता है–पारंपरिक से आधुनिक, कृषि से उद्योग, तथा ग्रामीण से शहरी। उन्होंने विकास के पाश्चात्यवादी दृष्टिकोण की आलोचना की और एक सच्चे उपनिवेशवाद–विरोधी विचारक के रूप में अपनी पहचान बनाई। उनकी औद्योगिक संरचना की अवधारणा ने उचित प्रौद्योगिकी के जरिए विकेंद्रीकृत और ग्रामीण आधारित उत्पादन पर जोर दिया।

अपने राजनीतिक जीवन में सिंह ने महत्वपूर्ण सामाजिक मुद्दों पर भी प्रकाश डाला। चरण सिंह का मानना था कि छुआछूत की प्रथा और जाति व्यवस्था राष्ट्रीय एकता के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा थी। उन्होंने तर्क दिया कि चूंकि जाति व्यवस्था जाति–समूह के भीतर विवाहों के माध्यम से कायम रहती है, इसलिए मुख्य रूप से अंतर्जातीय विवाहों के माध्यम से ही इस व्यवस्था को चुनौती दी जा सकती है। इसलिए उन्होंने १९५४ में प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू को पत्र लिखते हुए यह प्रस्ताव पेश किया कि केवल उन लोगों को विधानमंडल या राजपत्रित सेवाओं में प्रवेश की अनुमति देनी चाहिए जिन्होंने अपनी जाति से बाहर विवाह किया है, या यदि वे अविवाहित हैं, तो ऐसा करने के लिए सहमत हैं। १६ फरवरी, १९५१ को सिंह ने प्रदेश कांग्रेस कमेटी की कार्यकारिणी की बैठक में एक यह प्रस्ताव भी रखा था कि कांग्रेस के किसी भी सक्रिय सदस्य को जाति संस्थाओं या संगठनों से जुड़ने की अनुमति नहीं दी जाए। दिसंबर १९६३ में उन्होंने यह सुनिश्चित किया कि उनके अधीन आने वाले तीन विभागों – कृषि, पशुपालन और वन – में चतुर्थ श्रेणी की सेवाओं में सभी भावी रिक्तियों को तब तक अनुसूचित जाति से भरा जाना चाहिए, जब तक कि इन सेवाओं में उनका अनुपात १८ प्रतिशत तक न पहुँच जाए। इसके अतिरिक्त, सिंह की पार्टी – भारतीय क्रांति दल – के चुनाव घोषणापत्र में एक प्रावधान था जिसके अंतर्गत सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों की सभी फैक्ट्रियों में अकुशल नौकरियों के साथ–साथ सरकार द्वारा उपहार स्वरूप दिए जाने वाले परमिट और लाइसेंसों में २० प्रतिशत नौकरियां (जिनमें तकनीकी कौशल की आवश्यकता नहीं होती है) अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित होंगी। उन्होंने पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण के समर्थन में भी एक मजबूत रुख अपनाया। केंद्र और उत्तर भारत में १९७७ से १९७९ के बीच जनता शासन की अवधि के दौरान, चरण सिंह ने यूपी और बिहार की जनता सरकारों द्वारा पिछड़ी जातियों के लिए अपनाई गई आरक्षण नीतियों का समर्थन किया। वर्ष १९७९ में जब चरण सिंह प्रधानमंत्री थे, उनके मंत्रिमंडल ने केंद्रीय सेवाओं में पिछड़े वर्गों के लिए जाति के आधार पर आरक्षण लागू करने के लिए राष्ट्रपति नीलम संजीव रेड्डी को एक प्रस्ताव भेजा था। यद्यपि यह प्रस्ताव लागू नहीं हो सका क्योंकि यह एक कार्यवाहक सरकार थी, लेकिन इस कदम ने एक बार फिर पिछड़े वर्गों के लिए न्याय की सिंह की खोज को साबित कर दिया।

जैसा कि पहले निर्दिष्ट किया गया है, सिंह को किसानों के अधिकारों के सबसे बड़े समर्थकों में से एक माना जाता है और उन्हें किसानों का 'जैविक' बुद्धिजीवी कहा जाता है (बायर्स, १९८८)। राजनीतिज्ञ होने

के अतिरिक्त सिंह एक बुद्धिजीवी भी थे, जिन्होंने अनेकों पुस्तकें और राजनीतिक पैम्फलेट लिखे। 'विशिष्ट रचनाए' नामक पुस्तक में अजय सिंह ने लिखा है कि चरण सिंह द्वारा लिखी पुस्तक 'इकनॉमिक नाईटमेयर ऑफ इंडिया: इट्स कॉज एंड क्योर' अमेरिका के प्रमुख विश्वविद्यालय हार्वर्ड यूनिवर्सिटी के अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम में भी सम्मिलित है। उन्होंने कृषि, ग्रामीण और श्रम प्रधान, कुटीर और लघु उद्योगों पर बल दिया – जो कि प्रधानमंत्रियों जवाहरलाल नेहरू और इंदिरा गाँधी के पूँजी प्रधान औद्योगिकीकरण के विपरीत था। उनके अधिकांश प्रकाशन अंग्रेजी में थे क्योंकि वह चाहते थे कि उनके विचार अंग्रेजी बोलने वाले शहरी अभिजात वर्ग तक पहुँचें।

निष्कर्ष

स्मृति और मूल्यांकन का यह संशोधित संस्करण चौधरी चरण सिंह की विरासत को श्रद्धांजलि है। इसमें पहले की तीन पुस्तकों 'स्मृति और मूल्यांकन', 'परंतप' और 'स्मृति ग्रंथ' के अध्याय शामिल हैं। ये अध्याय सिंह के सहयोगियों द्वारा लिखे गए हैं, जो उन्हें निकट से जानते थे, जिन्होंने राजनीतिक जीवन में उनका साथ दिया, व परिजनों और परिवार के सदस्यों द्वारा लिखे लेख भी शामिल हैं। लेखकों की सिंह से निकटता के कारण, ये अध्याय सिंह के सार्वजनिक जीवन के व्यापक रूप से ज्ञात पक्षों के अतिरिक्त उनके जीवन के रोचक पक्षों को प्रस्तुत करते हैं। इनमें उपाख्यान, प्रिय स्मृतियाँ, और साझा अनुभव शामिल हैं, जो सिंह के चरित्र की गहराई को उजागर करते हैं।

इस संकलन में प्रस्तुत विभिन्न लेखकों के संस्मरण चौधरी चरण सिंह के व्यक्तित्व के विविध आयामों को उजागर करते हैं। एक ऐसा नेता जो अपने सिद्धांतों पर अडिग रहा, जिसने सत्ता के लिए कभी अपने मूल्यों से समझौता नहीं किया। उनकी ईमानदारी के किस्से, चाहे वह बेटी के लिए सरकारी वाहन के उपयोग का पूरा भुगतान हो या उद्योगपतियों से चुनावी चंदा लेने से इनकार, आज भी प्रेरणा का स्रोत हैं।

चौधरी साहब की दूरदर्शिता ने न केवल भारतीय कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था की समस्याओं को पहचाना, बल्कि उनके समाधान का मार्ग भी सुझाया। उनका मानना था कि न तो पूँजीवाद और न ही साम्यवाद, बल्कि गाँधीवाद ही भारत के लिए उपयुक्त है। जातिवाद के विरुद्ध उनका निरंतर संघर्ष, सामाजिक न्याय के प्रति प्रतिबद्धता, और प्रशासनिक ईमानदारी ने उन्हें एक विशिष्ट स्थान दिया।

आज जब राजनीति में नैतिक मूल्यों का क्षरण हो रहा है, चौधरी चरण सिंह के जीवन से जुड़े ये प्रसंग एक दीपस्तंभ का काम करते हैं। उनका जीवन इस बात का प्रमाण है कि राजनीति में रहते हुए भी सिद्धांतों पर चला जा सकता है, और जनहित के लिए व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं को त्यागा जा सकता है। यह संकलन न केवल एक महान नेता की स्मृतियों का संग्रह है, बल्कि वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक मार्गदर्शक प्रकाश–स्तंभ भी है।

प्राची हुड्डा
२३ दिसंबर २०२४

प्राची हुड्डा जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली से पीएचडी कर रही हैं और नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी, दिल्ली में रिसर्च एफ़िलिएट हैं। उनका शोध खेल, लिंग और शासन के समाजशास्त्र और सामाजिक आंदोलनों पर केंद्रित है। अपने काम के ज़रिए, प्राची विशेष रूप से ग्रामीण हरियाणा में बदलते सामाजिक परिवेश का अध्ययन करने का प्रयास करती हैं।

प्रथम संस्करण की प्रस्तावना

गाँव की गोधूलि से अपने जीवन पथ की लंबी यात्रा कर देश के राजनीतिक आकाश के जाज्वल्यमान नक्षत्र बनने वाले तथा अपने जीवन काल में ही व्यक्ति से विचारधारा में बदल जाने वाले अनूठे व्यक्तित्व का नाम है—चौधरी चरण सिंह। राजनीति के ऐसे महापुरुष, पुरोधा का जन्म बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में आगरा और अवध के संयुक्त प्रांत की मेरठ कमिश्नरी की हापुड़ तहसील में, बाबूगढ़ छावनी के समीप बसे नूरपुर गाँव के एक साधारण किसान परिवार में २३ दिसम्बर १९०२ को हुआ था। चौधरी साहब भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के एक ऐसे नेता थे, जिन्हें किसान समस्या और ग्राम्य जीवन की दुरूहताओं का विस्तृत ज्ञान था। उन्होंने गाँधी के उस "आखिरी आदमी" के दुख, तकलीफ, जिसके चलते वह गरीबी और भुखमरी की बदहाल ज़िंदगी जीने को मजबूर था, के शोषण को बहुत नजदीक से देखा, पहचाना। यही वजह थी कि किसानों, मजदूरों, गरीबों और समाज के दबे—थके लोगों के प्रति हमदर्दी और उनके अधिकारों की खातिर संघर्ष की भावना, उनके अंतर में जीवन पर्यंत विद्यमान रही। अपने इसी लक्ष्य की प्राप्ति की खातिर वह रुग्णावस्था में आने से पहले तक संघर्षरत रहे।

गाँव से प्राथमिक शिक्षा पाकर तथा आगरा से सन् १९२५ में एम. ए. और १९२६ में वकालत पास युवक चौधरी चरण सिंह को वकालत रास नहीं आई और वह राष्ट्रीय आंदोलन में कूद पड़े। १९३० में नमक सत्याग्रह में जेल जाने से ही उनकी राजनीतिक यात्रा का दौर शुरू हुआ, जो २९ मई १९८७ को जाकर खत्म हुआ। इस दौरान उन्होंने प्रदेश में संसदीय सचिव, कृषि, विधि, न्याय, सूचना, वन, पशु पालन एवं राजस्व मंत्री, मुख्यमंत्री, केंद्र में गृह व वित्तमंत्री, उपप्रधानमंत्री और प्रधानमंत्री पद का भी दायित्व संभाला। १९३७ में वह बागपत गाजियाबाद क्षेत्र से पहली बार तथा १९३८ में पुनः उत्तर प्रदेश धारा सभा के लिए चुने गए। चाहे सवाल जमींदारी प्रथा को खत्म करने का हो, भूमि सुधार विधेयक विधान मंडल में पारित करवाने का रहा हो, कृषि संबंधी समस्या और सामाजिक सवालों का हो, सामूहिक व सहकारी खेती का हो या जाति व्यवस्था का हो, पर उन्होंने निर्भीकता से अपनी राय व्यक्त की। उनका कृषक लोकतंत्र और विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था में ईमानदारी से गहरा विश्वास था। उनका मानना

था कि सत्ता के बगैर कुछ नहीं किया जा सकता।

चौधरी साहब के व्यक्तित्व का विकास गाँधी युग की ही देन थी। उनकी दृष्टि में लोकतंत्र में नागरिक अवज्ञा के लिए कोई जगह नहीं थी। अन्याय के निदान के लिए सरकार को वोट के जरिये बदलना चाहिए, ऐसी उनकी मान्यता थी। आस्थाओं और कार्यक्रमों से गहरे रूप से जुड़े चौधरी साहब ने उन्हें लागू करने में किसी भी किस्म की बाधाओं की परवाह नहीं की। इसके लिए पदच्युत होने का खतरा भी लेने में वह हिचके नहीं। एक ईमानदार और सशक्त शासक के रूप में उनकी जो ख्याति बनी, वह आजीवन बनी रही।

स्वामी दयानंद चौधरी साहब के प्रेरणा–स्रोत थे। उन्होंने स्वामी दयानंद के नारे 'वेदों की ओर चलो' को अपने जीवन का मूलमंत्र माना और जीवन पर्यंत आर्य संस्कृति के संवाहक बनकर स्वामीजी के कार्यों को पूरा करने के लिए संघर्षरत रहे। शिष्टाचार एक महान गुण है तथा मनुष्यत्व का विशेष परिचायक। इसी गुण के प्रकाश से ही मनुष्य की शिक्षा, रूचि और संस्कृति का परिचय मिलता है। उसका आचार–व्यवहार एक प्रकार से उसकी कुलीनता का पैमाना होता है। चौधरी साहब ने राजनीतिक बंदी के रूप में बरेली सेंट्रल जेल से अपने बच्चों को कुछ पत्र लिखे थे। शिष्टाचार की शिक्षा देते हुए उन्होंने अपने पत्रों में कहा था कि "शिष्टाचार का भारतीय संस्कृति में तो महत्व है ही, सामाजिक और घरेलू जीवन में भी कदम–कदम पर इसके महत्व को झुठलाया नहीं जा सकता, क्योंकि यही समाज में हमारे सुशिक्षित, सुसंस्कृत और सभ्य होने का प्रमाण पत्र देता है।" इससे यह जाहिर होता है कि चौधरी साहब शिष्टाचार को कितना महत्व देते थे।

चौधरी साहब ने ग्रामीण परिवेश में ही बचपन से यौवन की दहलीज तक पहुँचने के बीच के समय को गुजारा था। किसानों की समस्याओं के बारे में उनका चिंतन था कि एक ग्रामीण या किसान की समस्याओं को वही अधिकारी व्यक्ति हल कर सकता है, जिसकी सोच वस्तुओं के प्रति किसान जैसी ही हो। इसी विचार के तहत उन्होंने ५० प्रतिशत उच्च प्रशासनिक पद खेतिहर अथवा ग्रामों के निवासियों के लिए आरक्षित करने की बात कही। उनके मन में किसानों के लिए हमदर्दी और उनकी बहबूदी का कितना जज़्बा था, यह इसी से जाहिर होता है कि उन्होंने इस बात पर १९३९ में उत्तर प्रदेश की धारा सभा में एक प्रस्ताव तक पेश कर डाला। इसमें उन्होंने "किसानों की संतान के लिए आरक्षण क्यों?" के विभिन्न पहलुओं पर तथा उसकी आवश्यकता और महत्व पर भी विस्तार से प्रकाश डाला।

चौधरी साहब देश की गरीबी और गरीब के बारे में हमेशा सोचते रहते थे। गरीबों के लिए उनके मन में बेहद टीस थी जो समय–असमय उनकी आँखों के सहारे आँसुओं की धारा के रूप में फूट पड़ती थी। उनका कहना था कि "बिना देशवासियों की मौजूदा सामाजिक, आर्थिक अभिवृत्तियों में परिवर्तन लाये देश समृद्धशाली नहीं होगा।" गाँव और खेती को उन्होंने देश के विकास का आधार माना। उन्होंने देश की मौजूदा बदहाली के लिए गरीबी, बेरोजगारी और आर्थिक हालात को दोषी ठहराया और एक सुधार सिद्धांत पेश करने का काम किया।

चौधरी साहब ने "हमारी गुलामी के कारण" शीर्षक से लिखे लेख में उन कारणों का खुलासा किया है जिसके कारण अंग्रेज हमारे मुल्क पर सैकड़ों साल तक निर्बाध गति से शासन करते रहे। इसमें कोई दो राय नहीं कि स्वामी दयानंद के बाद अगर किसी का उनके जीवन पर प्रभाव पड़ा, तो वह थे बापू यानी मोहनदास करमचंद गाँधी, जिनके सिद्धांतों के वह जीवन पर्यंत अनुगामी रहे। लेकिन पटेल उनके आदर्श या यों कहें कि नायक थे। गाँधी जी की सी सादगी, ईमानदारी और पटेल की तरह परिणाम की परवाह किये बिना निष्कर्ष लेने की क्षमता, स्पष्टवादिता और निर्भीकता उनके जीवन की अमूल्य निधि थी। सन् १९५१ में गाँधी जी की तीसरी पुण्य तिथि पर चौधरी साहब का आकाशवाणी, लखनऊ से एक भाषण प्रसारित हुआ था जो उनके गाँधीवादी होने तथा गाँधीवादी चिंतन का द्योतक था।

अगस्त १९३९ में आपने धारा सभा में ऋण निर्मोचन विधेयक पारित कराया जिसके परिणाम स्वरूप प्रदेश के लाखों गरीब किसान ऋण से मुक्त हो सके। इसके अलावा चौधरी साहब ने अपने जीवन में जो महत्वपूर्ण कार्य किया, वह है जमींदारी उन्मूलन। उस समय इसकी भू–सामंतों, भूस्वामियों और उनके प्रतिनिधियों ने बड़ी आलोचना की थी। चौधरी साहब ने उस समय 'जमींदारी उन्मूलनः आलोचनाओं के जवाब' नामक एक लेख के माध्यम से भू–सामंतों की आलोचनाओं का दो टूक जवाब दिया। १६ अगस्त १९४९ को लखनऊ से प्रकाशित "नेशनल हेराल्ड" में छपे उस लेख में उन्होंने काश्तकारी, पूँजीपति, मुआवजा, भूमिधारी, अधिकार, खेतिहर की उपलब्धियाँ, बांड, भूमिहीन मजदूर आदि विभिन्न मुद्दों के माध्यम से स्पष्टीकरण दिया, साथ ही यह भी लिखा कि इस कानून से एक ऐसे किसान का उदय होगा, जो एक साथ जमीन का मालिक और रोजी कमाने वाला होगा। इस अवधारणा के तहत उनका भूमिधर जनतंत्र का आधार होगा। दरअसल यह विधेयक "राज्य के कल्याणकारी निर्देशक सिद्धांत" की परिकल्पना पर आधारित था। इस

विधेयक को न्यायालय में चुनौती भी दी गयी लेकिन विद्धान न्यायाधीशों को इस विधेयक में कहीं भी कोई कमी नजर नहीं आई। नतिजन इस विधेयक की कोई भी धारा न्यायालय में रद्द नहीं की जा सकी। इसके बाद एक जुलाई १९५२ को उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलन विधेयक लागू हो सका। इस विधेयक की अमेरिकी कृषि विशेषज्ञ डब्ल्यू. ए. लैडजिंस्की ने काफी प्रशंसा की और भारत के योजना आयोग को प्रस्तुत रिपोर्ट– "टेन्युरियल कंडीशन्स इन दि पेकेज डिस्ट्रिक्ट्स १९६३" में कहा कि–

> "वास्तव में केवल उत्तर प्रदेश ही एक ऐसा राज्य है, जहाँ बहुत सोचा–समझा व व्यापक कानून पास किया गया है और उसे असरदार ढंग से लागू किया गया है। वहाँ लाखों काश्तकारों को, जो जमीन से बेदखल कर दिये गये थे, उनके अधिकार वापिस दिये गये हैं।"

दरअसल चौधरी साहब यह भली भाँति जानते थे कि छोटी–छोटी और बिखरी जोतें, किसान के लिए अनेकों कठिनाइयां पैदा करती थीं, वहीं उनसे अन्न का उत्पादन भी कम होता है। किसान की समस्याओं को किसान की दृष्टि से देखने का ही नतीजा था कि सन् १९५३ में जब वह कृषि एवं राजस्व मंत्री थे, उन्होंने किसानों की बहबूदी के लिए "चकबंदी कानून" पारित करवाया।

अमेरिकी कृषि विशेषज्ञ डब्ल्यू.ए. लैडजिंस्की ने फोर्ड फाउण्डेशन को भेजी अपनी रिपोर्ट में चौधरी साहब की चकबंदी योजना की भूरि–भूरि प्रशंसा की थी। उस समय उत्तर प्रदेश में कृषि विकास के सलाहकार प्रख्यात कृषि विशेषज्ञ अल्बर्ट मायर ने कहा था कि "चकबंदी के काम को देखकर मुझे ऐसा लगा है कि यह अत्यंत महत्व का काम गाँवों के कृषि उत्पादन में क्रांति लाने वाला सिद्ध होगा।" सन् १९५४ में चौधरी साहब ने "भूमि संरक्षण कानून" बनाया और उसे विधानसभा में पारित कराया। इस तरह का कानून समूचे देश में अपनी तरह का पहला कानून था। जिला तथा ब्लॉक स्तर पर मिट्टी के वैज्ञानिक परीक्षण की योजना के क्रियान्वयन का श्रेय चौधरी साहब को ही है। इसका मुख्य लक्ष्य मिट्टी की प्रकृति के अनुरूप खादों का प्रयोग कराके कृषि उपज को बढ़ाना था।

मंडी में किसान की किस तरह सरेआम लूट की जाती थी और इसको किस तरह रोका जा सकता था, को चौधरी साहब भली भाँति जानते थे। उन्होंने इसके लिए जरूरी कानून बनाये जाने पर बल दिया ताकि किसानों को उसके उत्पाद का उचित मूल्य मिल सके और वह बिचौलियों के जाल से भी निकलने में कामयाब हो सके। उन्होंने ३१ मार्च और

एक अप्रैल १९३८ के "हिन्दुस्तान टाइम्स" में कृषि विपणन (एग्रीकल्चरल मार्केटिंग) पर दो लेख लिखे थे। 'मंडी में किसान की लूट' तथा 'नियमन के लिए प्रस्तावित कानून' आदि शीर्षक से लिखे इन दो लेखों में चौधरी साहब ने बाजार में किसान को होने वाली परेशानियों तथा उसके शोषण की स्थितियों को उजागर किया था तथा समस्या के हल के संबंध में सुझाव भी दिये थे।

इन लेखों को पढ़कर पंजाब के तत्कालीन कृषि मंत्री सर छोटूराम काफी प्रभावित हुए थे। किसान के उत्पादन की बाजार व्यवस्था के लिए उन्हें चौधरी साहब के सुझाव बेहद उपयोगी लगे और उन्होंने अपने संसदीय सचिव श्री टीकाराम को चौधरी साहब के पास भेजा तथा उनकी सहमति से उनके कृषि विपणन संबंधी विचारों को "मंडी समिति एक्ट" के नाम से पंजाब में पारित कराया। इस बिल को चौधरी साहब उत्तर प्रदेश धारा सभा में भी पारित कराना चाहते थे। लेकिन १९३८ में धारा सभा भंग हो जाने की वजह से यह संभव न हो सका। ११ साल बाद सन् १९४९ में यह बिल उत्तर प्रदेश विधानसभा में चौधरी साहब पास कराने में कामयाब हो सके।

चौधरी साहब का विचार था कि भारत एक विशाल जनसंख्या वाला देश है। अतः यहाँ ऐसे उद्योगों को तरजीह नहीं दी जा सकती, जिनमें आदमियों की खपत कम हो और मशीन के जरिये ही सारा काम निपटा लिया जाये। भारत में ऐसे छोटे–छोटे कुटीर उद्योग धंधों की जरूरत थी जिनमें उत्पादन में अधिक से अधिक लोगों की भागीदारी हो। साथ ही इन कुटीर उद्योगों को गाँव–कस्बों में ही स्थापित किया जा सके ताकि कृषि उत्पादन को इनमें खपाया जा सके और इन्हें कच्चे माल की कोई समस्या न हो। उनका विचार था कि जब अधिक से अधिक लोगों को रोजगार मिलेगा, तब उनकी क्रय शक्ति बढ़ेगी और साथ ही कृषि भूमि पर बोझ भी कम होगा।

स्वामी दयानंद का प्रभाव तो उनके कण–कण में मौजूद था। सामाजिक कुरीतियों जैसे– जाति प्रथा के वे घोर विरोधी थे। उन्होंने जाति प्रथा को राजनीतिक गुलामी का प्रमुख कारण माना। उन्होंने स्पष्ट किया कि जाति–व्यवस्था के कोढ़ के चलते देश में एकता का अभाव रहा। नतिजन विदेशी आक्रांता का मुकाबला कर पाने में हम नाकाम रहे। उनके अनुसार यह समस्या घुन की तरह हमारे समाज को खाती रही है। स्वार्थों की राजनीति के चलते आज भी हमारा समाज इस कोढ़ से छुटकारा नहीं पा सका है। जाति की संकीर्णता से शुरू से ही वह ऊपर उठे हुए थे। छात्र जीवन में, वकालत के दौरान और उत्तर प्रदेश के मंत्रित्व काल में उनका

खाना एक हरिजन लड़का ही बनाया करता था। वह आजीवन जातिवाद को मिटाने के लिए प्रयासरत रहे। "जो भी प्रत्याशी शैक्षणिक संस्था या लोक सेवा में प्रवेश प्राप्त करे, उससे जाति की बावत कुछ न पूछा जाये, केवल यह मालूम किया जाये कि वह हरिजन है या नहीं" यह प्रस्ताव चौधरी साहब ने १९३९ में कांग्रेस विधायक दल की बैठक में रखा था। १९४८ में जब वह विधि, न्याय एवं सूचना मंत्री थे, के अथक प्रयास से ही उत्तर प्रदेश सरकार ने राजस्व विभाग के किसी भी पट्टे या रिकॉर्ड में जाति दर्ज न करने के आदेश जारी किये। १६ फरवरी १९५१ को प्रदेश कांग्रेस कमेटी की बैठक में आपने यह प्रस्ताव रखा था कि "कांग्रेस का कोई सदस्य स्वयं को जाति के आधार पर बने किसी संगठन अथवा संस्था से नहीं जोड़ेगा।" यह प्रस्ताव भारी बहुमत से पारित भी हुआ।

चौधरी साहब कभी जाति सम्मेलनों में नहीं गए। २२ मई सन् १९५४ को उन्होंने देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू को एक पत्र लिखा था। उस पत्र में चौधरी साहब ने लिखा कि– "संविधान में संशोधन कर ऐसी व्यवस्था की जाए, जिसके तहत राजपत्रित पदों पर उन्हीं युवक–युवतियों को चुना जाए, जो अपनी जाति से बाहर विवाह करने को तैयार हों।" पंडित जी ने इस सुझाव को स्वीकारा, लेकिन यह भी कहा कि इससे व्यक्तिगत स्वतंत्रता का हनन होगा। और इस तरह के कार्य स्वेच्छा से होने चाहिए, दबाव में नहीं।

चौधरी साहब जातिवाद के विरोध में किस सीमा तक जा सकते थे, यह उनके सन् १९६७ में मुख्यमंत्रित्व काल के समय जारी आदेश से प्रमाणित होता है। उन्होंने शासकीय आदेश पारित करवाया कि– "जो संस्थाएँ किसी जाति विशेष के नाम पर चल रहीं हैं, उनका शासकीय अनुदान बंद कर दिया जायेगा।" नतीजतन इस आदेश के तत्काल बाद ही कालेजों के नाम के आगे से जाति सूचक शब्द हटा दिये गए। दरअसल चौधरी साहब जातिवाद को राष्ट्रीयता के लिए सबसे बड़ा खतरा मानते थे। उनका मानना था कि "यह जातिवाद का ही परिणाम था कि हम भारतियों ने सैकड़ों सालों तक गुलामी का जुआ अपने कंधों पर ढोया। जातिवाद का जहर आज भी समाज को भीतर ही भीतर खोखला कर रहा है। जब तक जातिवाद का अंधेरा नहीं मिटेगा, राष्ट्रीय एकता का सूरज उदय नहीं होगा।"

एक अप्रैल १९६७ को बजट प्रस्ताव पर बहस के दौरान उत्तर प्रदेश की चन्द्रभानु गुप्त सरकार के पराजित हो जाने पर ३ अप्रैल १९६७ को चौधरी साहब संविद सरकार के नेता के रूप में उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री बने। चौधरी साहब ने मुख्यमंत्री बनते ही निचले तबकों और किसानों

की हालत में सुधार लाने के अनेकानेक काम किये। कुटीर उद्योग–धंधों तथा कृषि उत्पादन में वृद्धि की योजनाओं को क्रियान्वित करने की दृष्टि से सरकारी एजेंसियों द्वारा ऋण देने के तौर–तरीकों को सुगम बनाया। साढ़े छह एकड़ तक की जोत पर लगान आधा कर दिया। किसानों की उपज, विशेषकर नकदी फसलों के लाभकारी मूल्य दिलाने की दिशा में महत्वपूर्ण निर्णय लिये। भूमि–भवन कर समाप्त कर दिया। सरकारी कामकाज में हिंदी का शत–प्रतिशत प्रयोग तथा २३ तहसीलों में, जो उर्दू बहुल थीं, सरकारी गजट उर्दू में उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई। किसानों को जोत वही दिलवाई, जिससे उनके भूमि संबंधी रिकॉर्ड में गड़बड़ न की जा सके। ब्रिटिश शासन के दौर से नहर की पटरियों पर चलने की पाबंदी खत्म कराई।

चौधरी साहब के लिए अल्पसंख्यकों के मन में अपार श्रद्धा और विश्वास था। इसका प्रतिफल यह रहा कि उन दिनों जब मध्य प्रदेश, गुजरात, बिहार और महाराष्ट्र भीषण दंगों की चपेट में सुलग रहे थे, उत्तर प्रदेश में पूर्णतया शांति थी। चौधरी साहब ही थे, जिन्होंने अनुसूचित जाति के एक सदस्य को पहली बार राज्य लोक सेवा आयोग का सदस्य नियुक्त किया। मंत्रिमंडल में हरिजनों के अलावा पिछड़े वर्गों के चार मंत्री लिये। उन्होंने यह व्यवस्था भी की कि शिक्षण संस्थाओं में छात्र संघों का होना अनिवार्य नहीं होगा। उस वर्ष विडंबना यह रही कि कॉलेजों में अन्य वर्षों की अपेक्षा अध्ययन–अध्यापन अधिक हुआ तथा माहौल शांतिपूर्ण रहा।

चौधरी साहब के मुख्य मंत्रित्व काल में अनुशासन अपने स्वाभाविक और सच्चे अर्थों में सरकारी विभागों में देखने को मिला। कर्मचारी समय पर कार्यालयों में आते थे तथा अपनी सीट पर मौजूद रहकर काम करते थे। चौधरी साहब के भेष बदलकर रिश्वत लेते अधिकारियों–कर्मचारियों को पकड़ लेने का नतीजा यह हुआ कि प्रदेश में रिश्वत का बाजार एकदम ठप्प पड़ गया था। गौरतलब है कि सरकार अपने इकबाल से चलती है। जिस सरकार का इकबाल कायम नहीं होता, वह अपनी जनता को स्वच्छ और व्यवस्थित प्रशासन नहीं दे पाती। चौधरी साहब की सरकार का इकबाल कायम था, जो सरकारी विभागों में ईमानदारी और अनुशासन कायम रखने में सहायक हुआ। सरकार के इकबाल का दारोमदार नेता पर होता है। चौधरी साहब ऐसे ही नेता थे, जिनकी ईमानदारी, नैतिकता और प्रशासनिक दृढ़ता की धाक पहले ही से थी। चौधरी साहब की प्रशासनिक कुशलता का ही नतीजा था कि उनके मुख्यमंत्रित्व काल में जहाँ पुलिस चुस्त और दुरुस्त रही, वहीं राज्य में रही, वहीं राज्य में कानून–व्यवस्था में भी व्यापक सुधार आया। साथ ही गरीब, पिछड़े, किसान–मजदूर और

अल्पसंख्यक वर्ग को राहत मिली। लेकिन जनहित के अनगिनत कार्यों और सफल प्रशासनिक क्षमता के बावजूद संविद के दूसरे घटकों के मनमाने तौर–तरीकों, क्रिया–कलापों से क्षुब्ध होकर मात्र दस महीने बाद ही चौधरी साहब ने मुख्यमंत्री पद से त्यागपत्र दे दिया।

१० फरवरी १९७० को श्री चंद्रभानु गुप्त की कांग्रेस सरकार द्वारा इस्तीफा दिये जाने के कारण १७ फरवरी १९७० को भारतीय क्रांति दल नेता के रूप में चौधरी साहब दूसरी बार प्रदेश के मुख्यमंत्री बने। मुख्यमंत्री पद की शपथ ग्रहण करते ही उन्होंने अपने दल भारतीय क्रांति दल के १९६८ में कानपुर में सम्पन्न अधिवेशन में घोषित नीतियों जैसे–ग्रामोन्मुखी आर्थिक नीति पर चलने, कृषि उपज बढ़ाकर गाँवों में कुटीर उद्योग–धंधे लगाकर बेरोजगारी खत्म करने और गाँवों से शहरों की ओर हो रहे पलायन को रोकने तथा कृषि भूमि पर बोझ कम करने का संकल्प लिया। कृषि उत्पादन बढ़ाने की नीति को प्रोत्साहन देते हुए उन्होंने उर्वरकों पर से बिक्री कर उठा लिया। साढ़े तीन एकड़ वाली जोतों का लगान माफ कर दिया, भूमिहीन खेतिहर मजदूरों को कृषि भूमि दिलाने के काम पर जोर दिया। कुल छह महीने की अवधि में ही ६२८.३३८ एकड़ भूमि की सीरदारी के पट्टे और ३१.१८८ एकड़ के आसामी पट्टे वितरित किये। सीलिंग से प्राप्त सारी जमीन भूमिहीन हरिजनों तथा पिछड़े लोगों को दी। भूमि विकास बैंकों की कार्य प्रणाली को और अधिक उपयोगी बनाया।

आपातकाल के दौर में नजरबंद रहने और उससे रिहाई के बाद १९७७ में चौधरी साहब केन्द्र में मोरारजी देसाई की जनता पार्टी की सरकार में, जिसके गठन में औरों के मुकाबले चौधरी साहब का महत्वपूर्ण योगदान था, गृह मंत्री बने। उस दौरान उन्होंने अल्पसंख्यकों के हित–संवर्धन की दृष्टि से अल्पसंख्यक आयोग की स्थापना की थी।

वित्त मंत्री की हैसियत से चौधरी साहब ने राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक की स्थापना की, ताकि राष्ट्रीयकृत बैंकों से कृषि विकास के लिए निर्धारित राशि का कृषक समुदाय को पूरा लाभ मिल सके। उर्वरकों, काले डीजल तथा कृषि जिन्सों जैसे–चावल, चीनी, खांडसारी आदि की अंतर्राज्यीय आवाजाही पर लगी रोक हटवाई ताकि उनकी मूल्यगत विषमता पर रोक लग सके। विलासिता की वस्तुओं पर भारी कर लगाये। एकाधिकारी घरानों पर लाइसेंस आवंटन के मामलों में पाबंदियां लगाईं तथा पहली बार देश में १२० ऐसी वस्तुओं के बड़े उद्योगों पर पाबंदी लगाईं जिनका उत्पादन लघु उद्योगों में संभव था। कपड़ा मिलों को हिदायत दी कि वह २० प्रतिशत कपड़ा गरीब जनता के लिए बनाए और पहली बार बजट में कृषि के लिए आवंटित राशि में बढ़ोतरी की गयी।

२४ जुलाई, १९७९ को चौधरी साहब देश के प्रधानमंत्री बने। प्रधानमंत्री के रूप में उन्होंने पहली बार देश में ग्रामीण पुनरूत्थान मंत्रालय की स्थापना की, जिसका प्रमुख लक्ष्य यह था कि स्वतंत्र रूप से ग्रामीण विकास की संभावनाओं का आंकलन कर उन्हें क्रियान्वित किया जा सके। चौधरी साहब को प्रधानमंत्री के पद पर काम करने का अधिक समय तो नहीं मिला, किंतु अल्प समय में उन्होंने जो कुछ किया, उससे इसी तथ्य की पुष्टि होती है कि यदि समय मिलता तो वह इस देश के पिछड़ों और किसानों के लिए अपनी सामर्थ्य भर बहुत कुछ करते।

समस्या कोई भी हो, उसके बारे में उनका चिंतन सदैव निर्भीक रहा करता था। पंजाब समस्या के बारे में उन्होंने लोकसभा में जो विश्लेषण किया, दरअसल वह उनकी निर्भीकता, स्पष्टवादिता, साहसिकता और दूरदृष्टि का परिचायक था। पंजाब समस्या के संदर्भ में उन्होंने स्पष्ट किया था कि "पंजाब का बंटवारा ही सबसे बड़ी गलती थी। इसके नतीजे आगे जाकर गलत निकलेंगे।" तानाशाही के वह जबरदस्त विरोधी थे। चुनाव आयोग को निष्पक्ष व प्रभावी बनाए जाने पर वह सदैव बल देते रहे। उनका मानना था कि निष्पक्ष चुनाव लोकतंत्र की आत्मा है। इस दृष्टि से वह भारतीय चुनाव प्रक्रिया में व्याप्त विसंगतियों के प्रति चिंतित रहते थे। उन्होंने भारत के चुनाव आयोग को इस संदर्भ में कुछ सुझाव भी भेजे थे। देश के विकास के लिए जनसंख्या पर नियंत्रण आवश्यक मानते थे वह और उन्होंने देश को दुर्दशा से उबारने में जन्म दर को कम करने पर बल दिया। जनसंख्या नियंत्रण का माध्यम भी वह सरकारी आतंक नहीं बल्कि जन–चेतना को मानते थे। उन्होंने धर्म और राजनीति को अलग करने का सुझाव दिया था। उनका मानना था कि धर्म के आधार पर गठित दलों को राजनीति में प्रवेश की इजाजत नहीं देनी चाहिए।

देश में मिशनरियों की बढ़ती गतिविधियों के बारे में चौधरी साहब ने चेतावनी देते हुए कहा था कि यदि पूर्वी राज्यों में मिशनरियों पर समय रहते रोक नहीं लगायी गयी, तो वह दिन दूर नहीं, जब वहाँ से भी अलगाववाद की आवाजें उठने लगेंगी। भ्रष्टाचार के संदर्भ में उनका कहना था कि भ्रष्टाचार सदैव ऊपर से नीचे की ओर चलता है। यदि शीर्ष नेतृत्व यानी ऊपर के लोग ईमानदारी का आचरण करें, तो नीचे के लोगों में स्वतः ईमानदारी आ जायेगी।

भाषा के मामले पर उनका स्पष्ट विचार था कि जिस देश की एक भाषा नहीं होगी, वह देश राष्ट्रीयता के तौर पर मजबूत नहीं रह सकता। उनके मन में सभी भाषाओं के लिए सम्मान था, लेकिन वह राष्ट्र को एकता के सूत्र में पिरोने के लिए हिंदी को पूर्ण राष्ट्र भाषा का दर्जा दिये

जाने के पक्षधर थे। उनका कहना था कि "जब तक सरकारी कामकाज में हिंदी का प्रयोग अनिवार्य नहीं बनाया जायेगा, तब तक राष्ट्रीय एकता के धागे मजबूत नहीं होंगे। "काले धन में वृद्धि तथा इसे कैसे बाहर निकाला जाए" नामक शीर्षक से उन्होंने १९६७ में एक लेख लिखा था जिसे उन्होंने अपने मुख्यमंत्रित्व काल में देश के विभिन्न राज्यों के मुख्यमंत्रियों को भेजा था। इस लेख में उन्होंने जो सुझाव दिये, वह आज भी प्रासंगिक हैं।

उनके आचरण में धर्म का ढोंग नहीं बल्कि उसका यथार्थ दृष्टि गोचर होता था। उनके चरित्र और ईमानदारी पर उनका बड़े से बड़ा विरोधी भी उंगली न उठा सका। मौजूदा राजनीतिक जीवन में जिन गुणों का सर्वथा अकाल दिखाई देता है, चौधरी साहब के पास उन गुणों का अपूर भंडार था। अपनी योग्यता, सूझबूझ और राजनीतिक पकड़ के बलबूते शीर्ष पर पहुँचने वाले चौधरी साहब एक कुशल राजनीतिज्ञ ही रहे हों, ऐसी बात नहीं, बल्कि वह एक समाज सुधारक, चिंतक, यथार्थवादी दृष्टा, अर्थशास्त्री और विचारक होने के साथ–साथ देश के बहुसंख्यक किसानों, गरीबों, शोषित–पीड़ितों, कमजोर वर्गों के मसीहा थे, जो सदैव उनकी मुक्ति तथा समृद्धि के लिए सोचते–लिखते और संघर्ष करते रहे। दरअसल डॉ. राममनोहर लोहिया के बाद चौधरी साहब देश की राजनीति के अकेले ऐसे नेता रहे जिन्होंने पिछड़ी जातियों में राजनीति में हिस्सेदारी का एहसास जगाया। उन्हें सत्ता के नये शक्ति केंद्र के रूप में उभारा। इसके परिणामस्वरूप हिंदी भाषी क्षेत्रों में विपक्ष को सबल आधार मिला और छठे दशक के उत्तरार्द्ध में उत्तर भारत के कुछ राज्यों में संविद सरकारें अस्तित्व में आईं। वर्तमान में पिछड़ी जातियों की राजनीति में व्यापक हिस्सेदारी और शीर्ष नेतृत्व तक पहुँच इसका ज्वलंत प्रमाण है।

चौधरी साहब को जोड़–तोड़ की राजनीति से सख्त परहेज था। उन्हें जो सही लगा उसे करने और कहने में उन्होंने कभी लाग–लपेट से काम नहीं लिया। दांव–पेंच और स्वार्थ की राजनीति उन्हें कभी रास नहीं आई। ईमानदारी और निर्भीकता के कारण वह बड़े से बड़े व्यक्ति का विरोध करने से भी नहीं हिचकिचाए। यही वजह रही कि जब–जब चौधरी साहब को सत्ता के करीब आते देखा, अभिजात्य वर्ग ने, जिनका आर्थिक–सामाजिक रूप से आधिपत्य कायम था, उनका लगातार विरोध किया तथा उनके विरुद्ध प्रचार भी किया। इसके साथ ही स्वार्थी और सत्तालोलुप प्रतिगामी ताकतों ने एकजुट होकर उन पर हमला किया। यही नहीं चौधरी साहब पर कभी जातिवादी होने, कभी हरिजन विरोधी, तो कभी मुस्लिम विरोधी और कभी धनी किसानों का पक्षधर होने का आरोप भी लगाया गया। किंतु वह इससे कभी विचलित न हुए और उन्होंने शोषित–पीड़ित तबकों

तथा किसानों की भलाई के लिए संघर्ष जारी रखा। उनके इसी संघर्ष का प्रतिफल है कि आज तकरीब देश के सभी राजनीतिक दल, जो पिछड़ों और किसानों के नाम से परहेज करते थे, किसान और पिछड़ों की बात करने लगे हैं।

उन्होंने व्यस्तता के बावजूद देश की सम–सामयिक, ज्वलंत समस्याओं और भिन्न–भिन्न विषयों–मुद्दों पर लेख लिखे और विचार प्रकट किये, वह आज भी प्रासंगिक हैं। उन्होंने पुस्तकें भी लिखीं। इनमें अधिकांश पुस्तकों के हिंदी संस्करण भी प्रकाशित हो चुके हैं। गौरतलब है कि इन पुस्तकों में इकोनॉमिक नाइटमेयर ऑफ इंडियाः इट्स कॉजेज एंड क्योर की तो विदेशी अर्थशास्त्रियों ने भूरि–भूरि प्रशंसा की है और अर्थशास्त्र में इसे मील के पत्थर की संज्ञा दी है। उल्लेखनीय है कि यह पुस्तक अमेरिका के हार्वर्ड विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र के पाठयक्रम में शामिल है। अनेक विषयों पर उनके लिखे लेख समय–समय पर दैनिक समाचार पत्रों में प्रकाशित भी हुए। उनके द्वारा लिखी पुस्तकें और लेख जीवंत प्रमाण हैं कि आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक विषयों मुद्दों पर उनके विचार कितने गम्भीर और व्यापक थे और वह कोरे राजनेता ही नहीं, एक चिंतक, विचारक और लेखक भी थे।

अध्ययन और लेखन से जीवन के अंतिम सोपान तक जुड़े रहने वाले चौधरी साहब कर्म और चिंतन के धरातल पर समान रूप से सक्रिय राजनेता थे। उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विभिन्न पहलुओं के बारे में देश के जन–मानस को जानकारी हासिल हो सके, यही इस पुस्तक का अभीष्ट है। इस पुस्तक में राष्ट्र के महामहिम प्रथम पुरुष, मान्य गणमान्य व्यक्तियों, राजनीतिज्ञों, समाज सेवियों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, अर्थशास्त्री, शिक्षाविद, न्यायविद्, संसदविद, पत्रकार, साहित्यकार, पूर्व

प्रशासनिक अधिकारियों, चिकित्सक, चौधरी साहब के परिजनों, उनके अनुयायियों, एवं उनके जीवन काल में, विभिन्न क्षेत्रों में लंबे समय तक उनसे जुड़े रहे कुछ प्रमुख व्यक्तियों आदि के संस्मरण, वर्तमान तथा पूर्व में किए साक्षात्कार के समय व्यक्त उनके विचार, लेख एवं भाषणों को संकलित किया गया है। मेरा विश्वास है कि यह पुस्तक चौधरी साहब के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का मूल्यांकन करने में उपयोगी सिद्ध होगी।

नई दिल्ली — **ज्ञानेन्द्र रावत**
मार्च ३, १९९५

अनुक्रम

अध्याय			पृष्ट
	प्रकाशक की ओर से		iii
	प्रस्तावना		vii
	प्रथम संस्करण की प्रस्तावना		xv

भाग १: व्यक्तित्व और चरित्र

१	जीवंत और ऊर्जावान व्यक्तित्व	डॉ. शंकर दयाल शर्मा	३
२	खूबियाँ ही खूबियाँ थीं उस इंसान में	ज्ञानी जैल सिंह	९
३	एक आदर्श पुरुष थे वह	पी. वी. नरसिम्हा राव	१३
४	एक आडंबरहीन व्यक्तित्व	जस्टिस एच. आर. खन्ना	१५
५	कथनी और कर्म के समन्वय - पुरुष	प्रो. जे. डी. सेठी	१७
६	इस युग के भीष्म	मधुकर दिघे	२१
७	युग-पुरुष चौधरी चरण सिंह	देवीदास आर्य	२६
८	हमदर्द और नेक दिल इंसान	धनिक लाल मंडल	२९
९	एक सादगी पसंद प्रधानमंत्री	इंद्र कुमार गुजराल	३२
१०	उन्होंने देश के दर्द की आवाज पर जी ज़िंदगी	हेमवती नंदन बहुगुणा	३५
११	चौधरी चरण सिंह: एक अद्वितीय व्यक्तित्व	चंद्रजीत यादव	४१
१२	अक्षुण्ण जिजीविषा के धनी	भगवतीचरण वर्मा	४५
१३	पति की कहानी पत्नी की जुबानी	गायत्री देवी	५२
१४	एक महान व्यक्तित्व: एक आदर्श पिता	वेदवती	५७
१५	हिमालय सा अडिग और गंगा की तरह पवित्र	डॉ. जे. पी. सिंह	६०

१६	गरीब ने देखी उनमें अपने रहनुमा की तस्वीर	डॉ. स्वरूप सिंह	६५
१७	रहमदिल इंसान थे वह	करतार सिंह	६८
१८	असहमत होने पर भी उनकी कदर करते थे	सी. राजेश्वर राव	७९
१९	एक दृष्टि संपन्न जननेता	उदयन शर्मा	८१
२०	एक विरोधी की नजर में चौधरी चरण सिंह	प्रताप कुमार टंडन	८९
२१	उन्होंने की थी समता के विचार को जनाधार देने की पहल	सुरेन्द्र मोहन	९५
२२	वह आजीवन किसान ही रहे	रघुवर दयाल वर्मा	१०१
२३	सात्विक और दृढ़ व्यक्तित्व का राजनेता	शिवकुमार गोयल	१०४
२४	नैतिक मूल्यों की स्थापना के पक्षधर	बलवंत सिंह रामूवालिया	१०८
२५	अंतरंग परिचय	भास्कर	११३
२६	संकल्पों के धनी	डॉ. इर्तिजा हुसैन	१२४
२७	कुछ अनछुए पहलू	तिलक राम शर्मा	१२८
२८	स्मृति शेष!	जयपाल सिंह	१३३
२९	बौद्धिक मूल्यांकन की कसौटी	भोला शंकर शर्मा	१४५
३०	भारत-निर्माण के चिंतक	सूरज भान दहिया	१५३
३१	पिछड़ों-किसानों के अप्रतिम योगदाता	अजय सिंह	१६५

भाग २: राजनीति

३२	हमें मिली उनसे संघर्ष की प्रेरणा	चौधरी देवीलाल	१७३
३३	कृषक लोकतंत्र के पक्षधर	मधु लिमये	१७६
३४	किसान दिवस की उनकी संकल्पना	मधु दण्डवते	१८१
३५	यथार्थवादी राजनेता थे वह	प्रो. बलराज मधोक	१८३
३६	एक सार्थक बहस के जन्मदाता	लाल कृष्ण आडवाणी	१८७
३७	ग्राम देवता थे चौधरी चरण सिंह	चौ. कुम्भाराम आर्य	१८९

३८	उन्होंने की थी समता के विचार को जनाधार देने की पहल	सुरेन्द्र मोहन	१९२
३९	राजनीतिज्ञ, समाज सुधारक व अर्थशास्त्री का समन्वित स्वरूप	नाथूराम मिर्धा	१९८
४०	संघर्ष ही उनकी जीवन-शक्ति था	डॉ. नत्थन सिंह	२०३
४१	सर्वहारा के प्रति प्रतिबद्ध थे चौधरी चरण सिंह	परिमल दास	२०९
४२	अल्पसंख्यकों के सच्चे हमदर्द	रशीद मसूद	२१२
४३	सामाजिक परिवर्तन के प्रवर्तक	रामविलास पासवान	२१६
४४	सामाजिक क्रांति के जनक	अजय सिंह	२१८
४५	अभिजात्यों के लिए वह उपेक्षित ही रहे	डॉ. प्रेम सिंह	२२२
४६	सामाजिक उत्थान के लिए समर्पित व्यक्तित्व	राम नरेश यादव	२२८
४७	ग्रामीण राजनीति के युग पुरुष	राकेश कपूर	२३३
४८	दलितों के हितैषी: चौधरी चरण सिंह	डॉ. राज सिंह राणा	२३७
४९	दिल्ली में देहात का खामोश कदम	श्याम नंदन मिश्र	२४१
५०	समर्थ राजनीतिक-चिंतक	डॉ. सोमनाथ शुक्ल	२४५
५१	संदेश ही पुरुषार्थ	डॉ. एल. एम. सिंहवी	२५३
५२	चौधरी चरण सिंह की किसान राजनीति	विनय दीक्षित	२५९
५३	उन्होंने पुलिस की छवि को सुधारा	जे. एन. चतुर्वेदी	२६४
५४	सर्वप्रथम उन्होंने ही मुझे वित्तमंत्री बनाया था	नारायण दत्त तिवारी	२७५
५५	वे अपने कार्यकर्ता को पूरा सम्मान देते थे	ठाकुर कुशल पाल सिंह	२८१

भाग ३: आर्थिक और सामाजिक नीतियाँ

५६	गाँधीवादी अर्थनीति के प्रतिपादक	मुलायम सिंह यादव	२९१
५७	प्रेस की आजादी के पक्षधर	कुलदीप नैयर	२९५

५८	उनका सपना था गाँव, कृषि और किसान की बहबूदी	राम कृष्ण हेगड़े	२९७
५९	रोजगारपरक व्यवस्था के पक्षधर	कैलाश नाथ सिंह	२९९
६०	एक दृष्टा थे चौधरी चरण सिंह	डॉ. सुब्रह्मण्यम स्वामी	३०५
६१	जैसा मैंने उन्हें जाना	ए. नीललोहितदास नादर	३०७
६२	नेहरू बनाम चरण सिंह	सत्यपाल मलिक	३११
६३	आर्थिक व राजनीतिक विचारधारा	डॉ. गंगाधर अग्रवाल	३१७
६४	आर्थिक विकास की नवीन प्राथमिकताएँ	डॉ. डी. एस. अवस्थी	३२५
६५	समाजवादी विचारधारा और चौ. चरण सिंह	डॉ. धर्मचंद्र विद्यालंकार	३३५
६६	भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था एवं चौधरी चरण सिंह की सार्थकता	प्रो. एस. डी. चमोला	३४२
६७	चौधरी चरण सिंह	सर मार्क टली	३५१

भाग १
व्यक्तित्व और चरित्र

१
जीवंत और ऊर्जावान व्यक्तित्व
डॉ. शंकर दयाल शर्मा*

चौधरी चरण सिंह उन भारतीय विभूतियों में से थे जिन्होंने अपनी कर्मठता, लगन और आम लोगों के विकास के प्रति समर्पण के कारण समाज में अपना एक अलग स्थान बनाया। लोकप्रियता की ऊँचाइयों पर पहुँच कर भी वे खेत की माटी और भूमि की गंध को नहीं भूले। जीवन भर एक संघर्षशील नेता के रूप में वे भारतीय ग्रामीण जीवन के उत्थान और गाँवों की प्रगति के लिए जूझते रहे।

चौधरी चरण सिंह का जन्म एक ऐसे परिवार में हुआ था जिसने सदैव ही भारतीय अस्मिता के लिए संघर्ष किया। उनके पितामह श्री बादाम सिंह १८५७ में अंग्रेजों के खिलाफ राजा नाहर सिंह के सहयोगी रहे और बाद में जब राजा नाहर सिंह के राज्य को अंग्रेजों ने अपने साम्राज्य में शामिल कर लिया तो उन्हें यमुनापार बुलंदशहर जिले के भटौना गाँव में शरण लेनी पड़ी। बाद में वे नूरपुर पहुँचे। यहाँ श्री चरण सिंह के परिवार को गाँव वालों ने खेती के लिए कुछ जमीन प्रदान की। चौधरी चरण सिंह ने अपने लेखन में कई स्थानों पर उस स्थिति का ज़िक्र किया है, जब वे पाँच साल के थे और अपने पिता के साथ अपने खेतों में काम करते थे। बचपन से ही इस अनुभव का उन पर उत्कट प्रभाव पड़ा। २५ दिसम्बर, १९७७ को महाराजा सूरजमल के शहीदी दिवस पर एक भाषण में उन्होंने कहा था–

"मेरे संस्कार उस गरीब किसान परिवार के संस्कार हैं जो धूल और कीचड़ के बीच एक छप्परनुमा झोपड़ी में रहता है। मैंने अपना बचपन उन किसानों के बीच बिताया है जो खेतों में नंगे बदन अपना पसीना बहाते हैं।"

---

* शंकर दयाल शर्मा (१९१८–१९९९) भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेता और वकील। मध्य प्रदेश में मंत्री (१९५२–७१), कांग्रेस के अध्यक्ष (१९७२), प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी के अधीन केंद्रीय कैबिनेट मंत्री (१९७४–७७), आंध्र प्रदेश, पंजाब और महाराष्ट्र के राज्यपाल १९८७ में भारत के आठवें उप–राष्ट्रपति रहे। भारत के नौवें राष्ट्रपति (१९९२–१९९७), चार प्रधानमंत्रियों के साथ काम किया – पी.वी. नरसिम्हा राव, अटल बिहारी वाजपेयी, एच. डी. देवेगौड़ा और आई.के. गुजराल।

अपने प्रारंभिक जीवन में ही चौधरी साहब ने देश के उत्थान में गाँवों के किसान के निर्णायक महत्व को पूरी तरह समझ लिया था। स्वयं को इस ध्येय के प्रति समर्पित करके उन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त करने का संकल्प लिया। लखनऊ विश्वविद्यालय से कानून की डिग्री लेकर उन्होंने गाजियाबाद में १९२८ में प्रैक्टिस शुरू की। यही वह समय था जब पूरा देश महात्मा गाँधी के नेतृत्व में विदेशी दासता से मुक्ति पाने का प्रयास कर रहा था। महात्मा गाँधी के आह्वान पर चौधरी चरण सिंह भी इस लड़ाई में कूद पड़े। फलस्वरूप, नमक सत्याग्रह में वे जेल गए, १९४० में व्यक्तिगत सत्याग्रही के रूप में गिरफ्तार हुए और १९४२ के "भारत छोड़ो आंदोलन" में भी वे कैद किए गए। इस दौरान वे कांग्रेस पार्टी के संगठन कार्यों से भी जुड़े रहे। कठोर संघर्ष और कष्टमय राजनीतिक अनुभवों के पश्चात् भी उनके मन में किसी तरह का कोई दुराव–छुपाव नहीं था। उनकी निर्भीकता और साफगोई हमारे यहाँ के आम किसानों के चरित्र का प्रतिनिधित्व करती है। उनके ये शब्द विशेष उल्लेखनीय हैं–

> "खेती एक ऐसा व्यवसाय है जहाँ प्रकृति के साथ संघर्ष में एक किसान को धैर्य एवं अध्यवसाय के पाठ रोजाना पढ़ने पड़ते हैं। फलतः उसमें दृढ़ता और सहनशीलता उत्पन्न हो जाती है। इससे एक ऐसे चरित्र का निर्माण होता है जो अन्य किसी व्यवसाय में नहीं हो सकता।"

भारतीय किसानों के लिए चौधरी साहब ने जो कुछ भी किया, उसका एक ऐतिहासिक महत्व है। १९३७ में वे पहली बार बागपत – गाजियाबाद क्षेत्र से तत्कालीन संयुक्त प्रांत की धारा सभा के लिए चुने गए। उस समय उनकी आयु ३५ वर्ष की थी। ३१ मार्च और १ अप्रैल, १९३८ के "हिन्दुस्तान टाइम्स" में "कृषि विपणन" शीर्षक से उनका एक लेख दो किश्तों में प्रकाशित हुआ। इस लेख में गाँव और कृषि की समस्याओं के प्रति उनकी गहरी समझ स्पष्ट रूप से उजागर होती है। इस लेख के प्रकाशन के बाद पंजाब में तत्कालीन कृषि मंत्री सर छोटूराम ने मंडी समिति ऐक्ट पास करवाया था। संयुक्त प्रांत में भी चौधरी साहब इस तरह का बिल रखना चाहते परंतु तभी धारा सभा भंग कर दी गई, लेकिन उन्होंने १९३९ में धारा सभा में ऋण निर्मोचन विधेयक पास करा लिया। इस विधेयक के पारित होते ही उत्तर प्रदेश के लाखों गरीब किसानों को ऋण से मुक्ति मिल गई थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उत्तर प्रदेश सरकार ने १९५२ में जो जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार विधेयक पारित किया था, उसे तैयार करने का दायित्व भी मुख्यमंत्री गोविंद बल्लभ पंत ने चौधरी साहब

को ही सौंपा था। इसी प्रकार चौधरी साहब ने १९५३ में "चकबंदी कानून" तथा १९५४ में "भूमि संरक्षण कानून" बनवाया। इससे कृषि को वैज्ञानिक स्वरूप प्राप्त करने में सहायता मिली।

चौधरी साहब वर्ग भेद और जात–पात के विरोधी थे और वे सभी वर्गों को समानता का दर्जा दिए जाने और सर्वधर्मसमभाव के पक्षधर थे। सविनय अवज्ञा आंदोलन में गिरफ्तारी से रिहा होने के बाद जब सन् १९३३–३४ में महात्मा गाँधी ने सामाजिक न्याय का अपना कार्यक्रम चलाया, तो गाजियाबाद अंचल में इसे संचालित करने की बागडोर चौधरी चरण सिंह ने ही संभाली। उन्होंने अपनी पुस्तक "इकोनॉमिक नाइटमेयर ऑफ इंडियाः इट्स कॉजेज एंड क्योर" में जाति प्रथा की बुराई का ज़िक्र करते हुए लिखा है कि–

> "जाति प्रथा के कारण ही भारत के विभिन्न धार्मिक समूह सामाजिक और राजनीतिक रूप से एक दूसरे के समीप नहीं आ सके तथा एक सुदृढ़ समाज का निर्माण नहीं हो सका।"

चौधरी चरण सिंह ने राजनीति के साथ–साथ एक स्वतंत्र विचारक और मौलिक लेखक के रूप में भी अपनी प्रतिभा दिखाई। आर्थिक और राजनीतिक मामलों में वे महात्मा गाँधी को अपना गुरू मानते थे। इसीलिए उनका आर्थिक चिंतन गाँधीजी के अधिक करीब दिखाई पड़ता है। उनकी आर्थिक नीति ग्रामोन्मुखी थी। चौधरी साहब ग्राम्य विकास के लिए कुटीर एवं लघु उद्योगों को अत्यंत महत्वपूर्ण मानते थे और अर्थव्यवस्था के विकेंद्रीकरण की बात कहते थे। सन् १९८२ में लिखे अपने एक लेख में उन्होने स्पष्ट रूप से लिखा था कि–

> "गरीबी से बचकर समृद्धि की ओर बढ़ने का एक मात्र मार्ग गाँव तथा खेतों से होकर गुजरता है।"

इस बारे में दो राय हो ही नहीं सकती कि देश के किसानों में नई जागृति पैदा करने, उनमें आत्म–सम्मान और आत्म गौरव की भावना जगाने तथा उन्हें सामाजिक दृष्टि से महत्व प्रदान करने हेतु चरण सिंह जी ने अथक एवं सफल प्रयास किए। उनके नेतृत्व और संगठनात्मक प्रयासों के कारण किसान और पिछड़े वर्ग के लोग संगठित होकर देश की मुख्य धारा में आ गए।

चौधरी साहब की सबसे बड़ी चिंता यही थी कि लोगों में व्याप्त गरीबी को किस प्रकार दूर किया जाए। जीवनपर्यंत वे इन्हीं प्रयासों में लगे रहे। देश के राजनेताओं को भी वे इस बारे में निरंतर सचेत करते रहे। जुलाई,

१९७९ में प्रधानमंत्री का पद ग्रहण करने के बाद चौधरी साहब ने कहा थाः

> "इस देश के राजनेताओं को याद रखना चाहिए कि (उनके लिए) इससे अधिक देशभक्तिपूर्ण उद्देश्य और कुछ नहीं हो सकता कि वे यह सुनिश्चित करें कि कोई भी बच्चा भूखे पेट नहीं सोयेगा, किसी भी परिवार को अपनी अगले दिन की रोटी की चिंता नहीं होगी तथा कुपोषण के कारण किसी भी भारतीय के भविष्य और उसकी क्षमताओं के विकास को अवरूद्ध नहीं होने दिया जाएगा।"

स्वतंत्रता सेनानी, प्रशासक, प्रसिद्ध संसदविद केंद्र और राज्य में मंत्री के रूप में तथा अंततः भारत के प्रधानमंत्री के गौरव पूर्ण पद पर कार्य करते हुए चौधरी चरण सिंह ने हम सबके मानस पटल पर अमिट छाप छोड़ी है।

चौधरी चरण सिंह जी की जो बात मुझे सबसे अधिक प्रभावित करती थी, वह यह कि वे हमारे देश की जमीन से जुड़े हुए थे। उन्हें इस देश की अस्मिता की गहरी पहचान थी तथा यह उनके व्यवहार और चिंतन में लगातार व्यक्त भी होती रही। सरल वेशभूषा, सादगीपूर्ण जीवन तथा सहज व्यवहार अंत तक उनके जीवन का अभिन्न अंग रहा, भले ही वे देश के कितने भी महत्वपूर्ण पद पर क्यों न रहे हों। 'उनसे मिलकर बातचीत करने में एक आत्मीयता का एहसास होता था। वे अत्यंत खुले चरित्र के व्यक्तियों में से थे। वे मन में किसी भी तरह का दुराव–छिपाव नहीं पालते थे। वे जो कुछ भी सोचते थे, वही कहते थे और जो कुछ कहते थे, वही करते भी थे। चौधरी साहब एक निर्भीक चरित्र वाले साहसी व्यक्ति थे। अपनी बात को कहने में न तो वे लाग–लपेट का सहारा लेते थे और न ही हिचकते थे। वे बहुत ही स्पष्ट बात कहते थे। उनकी यह निर्भीकता और साफगोई हमारे यहाँ के आम किसानों के चरित्र का प्रतिनिधित्व करती थी। इसलिए मैं उन्हें देश की जड़ों से जुड़ा हुआ राजनेता मानता हूँ।

चौधरी चरण सिंह एक प्रमुख स्वतंत्रता सेनानी थे। हमारी आजादी की लड़ाई के दौरान जितने भी प्रमुख आंदोलन हुए, उन सभी में उन्होंने बढ़–चढ़कर भाग लिया था। आजादी की लड़ाई के एक सच्चे सिपाही की तरह वे राष्ट्र की सेवा के लिए कुछ भी त्याग करने को हमेशा तत्पर रहते थे। वे सही अर्थों में गरीब किसानों के महान शुभचिंतक थे। उनमें गाँव तथा कृषि की समस्याओं की गहरी समझ थी। इसलिए उनके आर्थिक चिंतन में किसानों की व्यवहारिक समस्याएं तथा उनकी स्थितियों के प्रति चिंता साफ–साफ झलकती थी। जब भी चौधरी साहब को अवसर मिला, वे किसानों के हित में कदम उठाने में कभी नहीं चूके।

उत्तर प्रदेश में सन् १९५२ में पारित जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार विधेयक की मुख्यमंत्री गोविन्द बल्लभ पंत जी तथा अन्य लोगों ने काफी प्रशंसा की थी। अमरीकी अर्थशास्त्री वुल्फ ए. लैडजिंस्की ने भारत के योजना आयोग को प्रस्तुत एक रिपोर्ट में इस विधेयक की जो प्रशंसा की थी, उसे मैं चौधरी साहब की प्रशंसा ही मानता हूँ। लैडजिंस्की ने कहा था, "वास्तव में.......उत्तर प्रदेश....... एक ऐसा राज्य है, जहाँ बहुत सोचा–समझा व व्यापक कानून पारित किया गया है और इसे असरदार ढंग से लागू किया गया है। वहाँ लाखों काश्तकारों को, जो जमीन से बेदखल कर दिए गए थे, उनके अधिकार वापस दिए गए हैं"। इस क्रांतिकारी विधेयक ने पूरे देश के लिए प्रेरणा का काम किया। सही मायने में भारतीय किसानों को ऐसे नेतृत्व की जरूरत थी, जिसके संकेत पर किसान कृषि के क्षेत्र में विज्ञान और तकनीक को अपना सकें। चौधरी चरण सिंह के रूप में उन्हें ऐसा ही नेतृत्व मिला।

केवल इतना ही नहीं, बल्कि चौधरी साहब ने भारतीय किसानों तथा पिछड़ी जातियों में राजनीतिक चेतना जागृत करने का अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य किया। चौधरी साहब दलितों के हिमायती थे। उन्होंने अपने मुख्यमंत्रित्व काल में इस वर्ग को पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिया और उन्हें राजनीति में आगे लाए।

उन्होंने देश की आर्थिक स्थितियों पर कई पुस्तकें तथा अनेक लेख लिखें हैं, जिनमें उन्होंने स्वतंत्र रूप से अपनी बातें कही हैं। उन्होंने सन् १९८२ में लिखे अपने लेख "भारत का बिगड़ता स्वरूप" में स्पष्ट रूप से लिखा था कि हमें ग्रामीण क्षेत्रों को प्राथमिकता तथा कृषि को केंद्र बनाकर कुटीर उद्योग तथा कृषि की ओर वापस लौटना होगा"। आजादी के पहले अंग्रेजी शासन ने भारत की अर्थव्यवस्था के आधार, कृषि और कुटीर उद्योग– दोनों को तोड़ कर देश को कमजोर किया था। चौधरी साहब इसी दुर्बलता को समाप्त करके भारतीय अर्थव्यवस्था को पुनः सुदृढ़ और प्रगतिशील बनाना चाहते थे। चौधरी साहब चाहते थे कि किसानों का शोषण जनतांत्रिक तरीके से समाप्त किया जाए तथा गाँधीवादी तरीके से देश का विकास किया जाए।

आर्थिक विषय के साथ–साथ उन्होंने देश की सामाजिक और राजनीतिक समस्याओं पर भी अपने विचार व्यक्त किए। चौधरी साहब जाति प्रथा को एक सामाजिक बुराई मानते थे। पंडित नेहरू को २६ मई, १९५४ को लिखे एक पत्र में चौधरी साहब ने कहा था कि "इसने (जाति प्रथा ने) न केवल हमारे सार्वजनिक जीवन की उच्चतम पहुँच तक प्रहार किया है, बल्कि सेवाओं को भी प्रभावित किया है। इससे विभेद और

अन्याय बढ़ता है। इससे विकृतियां बढ़ती हैं, आदमी के दिल और दिमाग में संकीर्णता आ जाती है तथा दोषारोपण और प्रतिदोषारोपण का दुष्चक्र पैदा हो जाता है और समाज में अविश्वास तथा संदेह की भावना भर जाती है"। चौधरी साहब की इस चेतावनी को याद रखने की जरूरत है।

चौधरी चरण सिंह जी की एक और बात जो मुझे अपील करती है, वह यह है कि वे अपने उसूलों पर अडिग और अटल रहते थे। उनकी ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा जगजाहिर थी। इसी कारण उनके व्यक्तित्व में एक प्रकार की विलक्षण दृढ़ता थी। नैतिक मूल्यों से वे हमेशा जुड़े रहे और इसलिए वे इतने अच्छे प्रशासक भी सिद्ध हो सके। आरंभ से ही उनकी छवि एक कर्मठ, कुशल और सत्यवादी नेता के रूप में बन गई थी। वे जिस–जिस पद पर रहे, वहाँ–वहाँ उन्होंने अपने व्यक्तित्व की छाप छोड़ी। वे इतने गतिशील ऊर्जा के धनी थे कि उनकी उपस्थिति से ही संबद्ध विभाग को उचित दिशा मिल जाती थी।

मैं ऐसे महान देशभक्त के जीवंत और ऊर्जावान व्यक्तित्व के प्रति अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

२
खूबियाँ ही खूबियाँ थीं उस इंसान में
ज्ञानी जैल सिंह*

चौधरी चरण सिंह एक स्वतंत्रता सेनानी और महान देशभक्त थे। वह इतिहास पुरुष थे। शेख फ़रीद ने कहा है—

> जैसी लागी पेड़ पै, जो तैसी निबहै ओर।
> हीरा किसका बापरा, पुजे न रतन करोर।।

अर्थात् जिन लोगों की ज़िंदगी में कुछ आर्दश बन जाते हैं और वह जड़ से लेकर आखिरी पत्ती—पत्ती तक खत्म नहीं हो जाते, उनको निभा देते हैं, तो उनके मुकाबले में हीरा तो क्या, करोड़ों रत्न भी नहीं पहुँचते।

चौधरी चरण सिंह जी का जीवन, उनका देशभक्ति का जज़्बा, उनकी ईमानदारी एक मिसाल थी। वह हमेशा गरीब लोगों के कल्याण के लिए चिंतित रहते थे। आज चौधरी साहब हमारे बीच नहीं हैं। हमें उनकी खूबियों से प्रेरणा लेनी है। भारतवर्ष के चेहरे पर रौनक नहीं आ सकती, जब तक भारत के किसान के चेहरे पर रौनक नहीं आती। वह रौनक कैसे आएगी, उसकी मायूसी कब मिटेगी, इसके लिए हमें सोचना होगा।

किसान ट्रस्ट जिसके चौधरी साहब संस्थापक अध्यक्ष थे, उनका जन्म दिन मनाता है। लेकिन मेरा मानना है कि चौधरी साहब का जन्म दिवस देश की हर ग्राम पंचायत को मनाना चाहिए। वह पंचायतें चाहे किसी भी पार्टी की क्यों न हों, मैं समझता हूँ कि वह चौधरी साहब को उस दिन जरूर याद करेंगी।

यहाँ एक वाकया बताना चाहता हूँ। चौधरी साहब के जन्म—दिन पर आने के लिए मुझे संसद सदस्य श्री सत्यप्रकाश मालवीय जी से निमंत्रण मिला। उन्होंने आकर मुझसे कहा, तो मैंने तत्काल निमंत्रण स्वीकार कर लिया। उन्होंने अखबार में भी मेरा नाम दे दिया, वह छप भी गया।

---

* ज्ञानी जैल सिंह (१९१६—१९९४) राजनीतिज्ञ, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस। पंजाब के मुख्यमंत्री (१९७२—७७) तथा प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी के अधीन केंद्रीय गृह मंत्री (१९८०—८२)। भारत के सातवें राष्ट्रपति (१९८२—१९८७), उनका कार्यकाल ऑपरेशन ब्लू स्टार और इंदिरा गाँधी की हत्या की दर्दनाक घटनाओं से चिह्नित रहा।

अखबार पढ़ने के बाद कुछ दोस्त मेरे पास आए और बोले, "आप इस जन्म–दिवस समारोह में जा रहे हो", मैंने कहा, "हाँ जा रहा हूँ। उन्होंने कहा, "चौधरी साहब के जन्म–दिन पर क्यों जा रहे हो।" मैंने कहा कि "मैं जा रहा हूँ।" तब वे बोले कि "आप तो किसी पॉलिटिकल पार्टी के फंक्शन में जाते नहीं हो।" तब मैंने कहा, "इसका आयोजन एक संस्था कर रही है, जिसका नाम 'किसान ट्रस्ट' है। उसमें सभी लोग जाएंगे। मेरा ख्याल है उसमें मुझे भी जाना चाहिए। जो लोग चौधरी साहब के निकट संपर्क में रहे हैं, जानकार हैं, या उनके साथ काम किया है, उन सभी को उसमें जाना चाहिए। इसमें बुराई क्या है।" इस पर मेरे एक नजदीकी मित्र, जो हर बात से परिचित हैं, ने कहा, "आपको मालूम है कि आपके खिलाफ जो मुकदमे रजिस्टर हुए थे, वह सब चौधरी साहब ने ही करवाये थे।" मैंने कहा, "मुझे याद है, चौधरी साहब उस समय गृहमंत्री थे, उनके पास अर्जी गई, उन्होंने आदेश कर दिए।" अंततः मैंने अपने मित्र से कहा कि मैं तो उस जन्म–दिन वाले कार्यक्रम में जरूर जाऊँगा।

मुझे याद आया कि उस समय (आपातकाल के बाद) पंजाब में मेरे खिलाफ ४–५ मुकदमे दर्ज हो गए थे। चौधरी साहब के हुक्म से ही मेरी वजारत टूट गई थी, क्योंकि हम आपातकाल के समर्थक थे, अतः वजारत टूटनी ही थी। मैंने तब एक पत्र प्राइम मिनिस्टर मोरारजी भाई को लिखा। मैं जाकर उनसे मिला। पत्र में मैंने लिखा था, "मोरारजी भाई, मैं आपसे यह कहना चाहता हूँ कि जब देश आजाद हुआ, तब से लेकर अब तक जो लोग डिप्टी मिनिस्टर, मिनिस्टर रहे, उनकी जायदाद की जाँच करवा लीजिए। अगर पाँच गुना–दस गुना हो गई हो, तो माफ कर दीजिए। मेरी भी जायदाद की जाँच करवा लीजिए, यदि दुगुनी भी हो गई हो, तो सजा दे दीजिए।" तब उन्होंने कहा, आप चौधरी चरण सिंह से मिल लीजिए। मैंने कहा कि वह तो आपके गृहमंत्री हैं। तब मोरारजी भाई ने कहा कि यदि आपको कोई परेशानी हो, तो आपको मैं मिलवा दूंगा। इस पर मैंने कहा कि मैं उनसे खुद जाकर मिल लूंगा, क्योंकि वह भी गाँव के हैं, मैं भी गाँव का हूँ, कोई परेशानी नहीं होगी।

अगले दिन मैं उनसे मिलने गया। वह ब्रेकफास्ट कर रहे थे। मुझसे भी कहा लेकिन मैंने कहा मैं तो ब्रेकफास्ट करके आया हूँ। हम आकर ऑफिस में बैठ गए। मैंने उन्हें अपनी अर्जी दी। उन्होंने पढ़ी और बोले कि अब आपको कुछ तकलीफ हो रही है। आप लोगों ने हमारे साथ क्या किया था। मैंने कहा कि चौधरी साहब मैंने तो आपके साथ कुछ नहीं किया। वे बोले, "आप लोगों ने १९ महीने हम लोगों को जेल में रखा।" तब मैंने कहा कि मैंने तो केवल चन्द्रशेखर जी को ही जेल के अंदर

रखा था। आप उनसे पूछ लीजिए, यदि वह कहें तो मुकदमा दर्ज करवा दीजिए। चौधरी साहब बोले कि इमरजन्सी इंदिरा जी ने लगायी थी, आप थे न उनके साथ? मैंने कहा, 'हाँ' तो बोले–आपका भी इरादा था। मैंने कहा– हाँ मैं समझता था कि आप लोग बदनामी फैला रहे हैं, आपको पकड़ना चाहिए, तो वे बोले कि ठीक है।

मैंने कहा कि चौधरी साहब यह ठीक नहीं हुआ। हमने आपके खिलाफ मुकदमा तो दर्ज नहीं किया था। हमने तो आपको एन. एस. ए. के तहत अंदर किया था, तो बोले–ऐसे ही कर दें। मैंने कहा कि चौधरी साहब आप हमको २४ महीने रखिए। आप तो उन्नीस महीने ही रहे। बोले इसका क्या नतीजा होगा? मैंने कहा कि– चौधरी साहब, नतीजा तो सामने है। हमने आपको १९ महीने अंदर रखा था। आप गृहमंत्री बन गए। आप हमें २४ महीने अंदर रख लीजिए। जहाँ आप बैठे हैं वहाँ हम लोग और जहाँ मैं बैठा हूँ, वहाँ आप बैठे होंगे लेकिन चौधरी साहब ने मेरी बात का बुरा नहीं माना और बोले– भई, मैं पंजाब गवर्नमेंट से बात करूँगा कि वह कोई झूठा मुकदमा न बनाए। इसके बाद हम लोग दूसरी बातें करने लगे। अनाज के भाव के बारे में मेरी व चौधरी साहब की एक राय हुआ करती थी।

एक बात और बताना चाहता हूँ, चौधरी साहब ने गृहमंत्री के नाते राज्यों की विधानसभाएँ भंग कर दी थीं। बाद में जब वह प्रधानमंत्री बने तब हम लोग उनकी मीटिंगों में जाया करते थे। उम्मीद थी कि समर्थन बना रहेगा। लेकिन उस स्पष्ट आदमी को क्या कहूँ कि वह समर्थन लेने को तैयार नहीं। वह कहते थे कि हमें तुम्हारा समर्थन नहीं चाहिए, जबकि समर्थन की उन्हें जरूरत थी लेकिन वह अपने उसूलों पर डटे थे। कुल मिलाकर मैं कहना चाहता हूँ कि वह राजनीतिज्ञ ही नहीं बल्कि एक बहुत बड़े इंसान भी थे।

इत्तेफाक की बात कि चुनावों के बाद मैं गृहमंत्री बन गया। जो उनका सरकारी पी. ए. था, वह मेरा भी पी. ए. था। मेरे आदमियों ने मुझसे कहा कि यह तो जनता सरकार का पिट्ठू है। इसको हटाओ, लेकिन मैंने यह समझकर कि अच्छा आदमी है, ईमानदार है, उसे रहने दिया। जब विधानसभाओं को भंग करने का सवाल आया तो मैंने उससे कहा कि सरकार ने नौ विधानसभाएँ भंग करने का फैसला किया है, ऑर्डिनेंस तैयार कीजिए। तब उसने कहा कि अभी लाया। मैं समझता था कि कॉन्सटीट्यूशन आदि के हवाले से देखने के बाद ऑर्डिनेंस बनाने में समय लगेगा, लेकिन वह तो तुरंत एक उसी ऑर्डिनेंस की कॉपी ले आया जो चौधरी साहब ने अपने समय में विधानसभाओं को भंग करने के लिए तैयार करवाया था। जब मैंने उसको देखा तो वह बहुत बढ़िया इबारत में

तैयार किया हुआ था। बस उसमें राज्यों के नाम बदलने थे। बाकी उसमें कहीं भी कोई कमी नहीं थी, क्योंकि वह चौधरी साहब ने बनवाया था।

जब यह बात संसद की कार्यवाही में आ गई और मैं लोकसभा जा रहा था, तो चौधरी साहब मुझे बीच में मिल गए। बोले वाह! हमने भी नौ ही तोड़ी थीं और आप भी नौ ही तोड़ रहे हो। तब मैंने कहा, चौधरी साहब, मैं इसका जवाब लोकसभा में ही दूंगा। जब लोकसभा में मैंने अध्यादेश पेश किया, तो कहा कि हम जनता सरकार की हर बात रद्द नहीं करेंगे। उन्होंने कुछ ऐसी रवायत पैदा की हैं, जिन पर हम भी अमल करेंगे। मैं यह जानता हूँ कि वह मजाक को मजाक समझते थे, असलीयत को असलियत इतनी खूबियां थीं उस इंसान में वह किसी बात पर वक्त निकालने के लिए डिप्लोमेसी नहीं करते थे। वह बहुत साफ दिल के थे। उनकी ज़िंदगी हमारे लिए एक मिसाल है।

मुझे नागपुर अधिवेशन में चौधरी साहब का प्रेरणादायक भाषण सुनने का मौका मिला था। उस समय मैं भी सांसद था व कांग्रेस कार्य—समिति का सदस्य भी। अधिवेशन में पंडित जी ने प्रस्ताव जो सहकारी खेती पर था, पेश किया। चौधरी साहब ने उसका जोरदार विरोध किया। विरोध के पक्ष में तर्क और तथ्य के साथ देश की स्थिति का भी उन्होंने हवाला दिया। चौधरी साहब के एक घंटा के धारा प्रवाह भाषण को पंडित जी ने बड़े ध्यानपूर्वक सुना और वे मुस्कराएं। मैं तो चौधरी साहब के भाषण को सुन कर मंत्रमुग्ध हो गया। पंडित जी के प्रस्ताव पेश करते समय अधिवेशन के पंडाल में जो धड़ाधड़ तालियाँ बज रहीं थीं, चौधरी साहब के भाषण के बाद ऐसा लगता था कि पासा ही पलट गया है। पंडित जी ने भोजनावकाश के बाद चौधरी साहब की बात का उत्तर दिया। हम लोगों को तो पंडित जी का उनकी बात से सहमत न होते हुए भी समर्थन करना पड़ा, क्योंकि पंडित जी की पर्सनैलिटी का असर ही ऐसा था। हाँ, इतना मैं जरूर कहूँगा कि यदि पंडित जी की जगह मैं होता, तो चौधरी साहब के सामने अपना बचाव नहीं कर पाता।

मेरा कहना है कि किसी भी पार्टी में रहो, कभी यह नहीं भूलना चाहिए कि हम देश के लिए हैं, देश हमारे लिए नहीं। पार्टी देश के लिए, देश पार्टी के लिए नहीं। जब देश के लिए पार्टी कुरबान होने को तैयार नहीं तो पार्टी के लिए देश को कुरबान क्यों किया जाय? हमें गर्व है कि ऐसे महापुरुष ने इस जमीन पर जन्म लिया। ऐसे महापुरुष के बताए रास्ते पर चलने का संकल्प लें, यही उनके प्रति हमारी श्रद्धांजलि होगी।

३

एक आदर्श पुरुष थे वह

पी. वी. नरसिम्हा राव*

भारत के महान पुत्र चौधरी चरण सिंह जी को लोग "चौधरी साहब" के नाम से स्नेह एवं सम्मान देते थे। २३ दिसम्बर के ही दिन सन् १९०२ में चौधरी चरण सिंह जी का जन्म मेरठ जिले के एक छोटे से गाँव में हुआ था।

चौधरी साहब गाँधी जी के सिद्धांतों के कड़े अनुपालक रहे। उनके जीवन का उद्देश्य गाँधीवादी दर्शन के अनुरूप अनेकानेक ग्रामीण भारतीयों को कुटीर उद्योग एवं कृषि के द्वारा आगे बढ़ाना था। उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलन में उनका सर्वाधिक योगदान रहा और इसी के चलते देश में जमींदारी उन्मूलन तथा भूमि सुधार कार्यक्रमों को एक नई दिशा मिली। चौधरी साहब महसूस करते थे कि खेती पर काश्तकारी की व्यवस्था रहने से उसका विकास नहीं हो सकता बल्कि खेती पर मालिकाना हक़ मिलने मात्र से ही भारतीय किसान एंव खेतिहर मजदूर देश के आर्थिक विकास में उत्साही भागीदार की भूमिका निभा सकते हैं। इस दिशा में जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार के नए तरीकों से ही गरीब खेतिहरों को सामाजिक न्याय मिल सकता है।

चौधरी साहब ने अनेक पुस्तकें लिखीं, जिनमें ग्रामीण औद्योगीकरण एवं ग्रामोन्मुखी स्वायत्तशासी व्यवस्था के सिद्धांत पर बल दिया। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु उन्होंने तकनीकी सुधारों पर भी बल दिया। वह एक महान देशभक्त थे, जो गरीबी हटाने, भुखमरी एवं बीमारी को समाप्त कर भारतीय अवाम के हितों के लिए अथक प्रयत्न करते रहे।

चौधरी साहब आदर्श पुरुष थे। उन्होंने सिद्धांतों के लिए किसी से समझौता नहीं किया। ऐसे अनेक लोग थे जिनसे आपका कभी तालमेल नहीं हो सका, किंतु लोकतांत्रिक व्यवस्था में मतभेद रखना उसका मूल

---

* पामुलापर्ती वेंकट नरसिम्हा राव (१९२१–२००४), राजनीतिज्ञ, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस। आंध्र प्रदेश के करीमनगर के पास जन्मे, राज्य विधायक (१९५७–७७) और मुख्यमंत्री (१९७१–७३)। १९७७ में लोकसभा के लिए चुने गए, १९८०–८४ विदेश मंत्री, १९८६, १९८८–८९ गृह मंत्री रहे। १९९१ में भारत के नौवें प्रधानमंत्री। उनका कार्यकाल (१९९१–९६) भारत के दूरगामी नव–उदारवादी आर्थिक परिवर्तन द्वारा चिह्नित था। २०२४ में मरणोपरांत भारत रत्न से सम्मानित किया गया।

तत्व है। जो लोग चौधरी साहब से मतभेद भी रखते थे, वह भी उनके उद्देश्य के प्रति समर्पण एवं ईमानदारी का लोहा मानते थे।

भारत के इस महान सपूत का उज्ज्वल चरित्र ही सभी पवित्र कार्यों का आधार था। उनके चरित्र एवं जीवन की मूल अवधारणा ही ग्रामीण अर्थनीति एवं ग्रामोन्मुखी विकास के रास्ते को आगे बढ़ाने की थी। उनकी देशभक्ति में पवित्रता हमें अनवरत् प्रेरणा देती रहेगी।

४

एक आडंबरहीन व्यक्तित्व

जस्टिस एच. आर. खन्ना*

१९७७ में चौधरी चरण सिंह के निकट संपर्क में आने के बाद मुझे उनके अगाध स्नेह की छत्रछाया में काम करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। हालाँकि एक–दो अवसरों पर चौधरी साहब को मुझसे शिकायत भी हुई थी लेकिन उन्होंने कभी इस बात को वजन नहीं दिया, न ही मेरे प्रति अपने स्नेह में कमी आने दी। दिल और दिमाग, दोनों स्तरों पर उनमें बहुत सी और बेहतरीन खूबियां थी। उनका स्मरण करते हुए मैं उनके व्यक्तित्व के ऐसे तीन या चार पहलुओं को उजागर करना चाहूँगा।

चौधरी साहब एक विलक्षण क्षमता वाले व्यक्ति थे। यद्यपि उन्होंने भारत के सर्वोच्च पदों यथा–उत्तर प्रदेश में मुख्यमंत्री के रूप में, केंद्र में गृहमंत्री व वित्तमंत्री के रूप में और अंततः भारत के प्रधानमंत्री के रूप में देश की सेवा की, फिर भी कभी आर्थिक या अन्य किसी प्रकार के लालचों से पथभ्रष्ट नहीं हुए। वे भ्रष्टाचार, खास तौर पर राजनीतिक भ्रष्टाचार के प्रबल दुश्मन थे और इस रूप में उन्होंने अपनी भरपूर कोशिशों को जीते–जी जारी रखा। आशय यह कि चौधरी साहब राजनीति में फैले भ्रष्टाचार के खात्मे के लिए दृढ़ संकल्पी व्यक्ति थे। लोकपाल बिल उनकी निगरानी और प्रयास के फलस्वरूप तैयार हुआ तथा संसद में पेश किया गया था, जो एक छोटी सी बहस के बाद चयन समिति द्वारा पारित करने के उद्देश्य से स्वीकृत हो गया था। इस बिल को जल्दी–से–जल्दी पारित करवाने और लागू करवाने की चौधरी साहब की व्यक्तिगत रूप से प्रबल इच्छा थी, इसलिए वह चाहते थे कि बिल को जितना जल्दी हो, कानूनी जामा पहनाया जाए लेकिन तभी कुछ दूसरी घटनाओं के कारण व्यवधान की स्थिति उत्पन्न हो गई और संसद के भंग होने के साथ ही सब किया धरा अधूरा ही रह गया। सत्तासीन होने वाली बाद की पार्टियों ने उस

---

* हंस राज खन्ना (१९१२–२००८), पंजाब उच्च न्यायालय और दिल्ली उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और बाद में सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्त। एडीएम जबलपुर बनाम शिवकांत शुक्ला, कालका रेलवे स्टेशन पर गोलीबारी और उड़ीसा में श्री बीजू पटनायक और अन्य मंत्रियों के खिलाफ आरोपों जैसे महत्वपूर्ण मामलों की जाँच के लिए उल्लेखनीय।

बिल को बिल्कुल अनमने और बिना किसी गंभीर प्रयास के संसद में रखा जरूर लेकिन एक कानून के रूप में बिल पारित करवाने की ऐसी कोशिश कभी नहीं हुई, 'जैसी कि चौधरी साहब ने की थी।'

उनके व्यक्तित्व का दूसरा पहलू भी इतना ही दृढ़ व उज्ज्वल है। उनके समय में जबकि कुछ बड़ी राजनीतिक हस्तियों की छवि विभिन्न कांडों में शरीक होने के कारण मलिन हो रही थी, तब भी चौधरी साहब का उदाहरण ताजी हवा के झोंके की तरह हमारे वातावरण में मौजूद रहा, और है।

चौधरी चरण सिंह की दूसरी बड़ी खूबी थी– सादा जीवन आडम्बर और पाखंड रहित। वे न कभी गर्वोन्मत हुए, न ही उन्हें पद का अहंकार था। एक अवसर पर चौधरी साहब नंगे पाँव मेरी कार के दरवाजे तक आए, तो मुझे काफी उलझन की स्थिति का सामना करना पड़ा था। अपने निवास पर वह फर्श पर ही बैठकर अपना लेखन–पठन का कार्य करते थे। जहाँ उनके सामने केवल एक छोटा सा डेस्क होता था, कुर्सी या मेज नहीं। यहाँ तक कि बैठक कक्ष में भी साधारण दर्जे का सोफा सेट, स्वामी दयानंद,स्वामी विवेकानन्द, गाँधी जी और सरदार पटेल सहित तीन या चार पोट्रेट दीवारों पर टंगे होते थे।

चौधरी साहब हिन्दू समाज की जाति व्यवस्था के कट्टर आलोचक थे। उनके अनुसार जातिवादी तत्वों ने हमारे समाज को सर्वाधिक क्षति पहुँचाई है और हमारी राजनीति के लिए यही अच्छा होगा कि जितनी जल्दी हो, जातिवाद को निर्मूल कर इसके कीटाणुओं को फैलने से रोकें। एक बार एक वरिष्ठ पत्रकार, जो उनके चुनावी दौरे के समय चौधरी साहब के साथ था, इस बात से विस्मित था कि तीन या चार दिनों के दौरान उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में चौधरी साहब ने जहाँ–जहाँ भी जन–सम्बोधन किया, उन्होंने एक बार भी 'जाट कार्ड' का इस्तेमाल नहीं किया या कहीं भी जातिवादी आधार पर वोट पाने की जुगत नहीं बिठाई।

यद्यपि उन्होंने कभी औद्योगीकरण का विरोध नहीं किया और न ही वे देश के विकास के लिए उद्योगों की आवश्यकता से इंकार करते थे, लेकिन वह महसूस करते थे कि हमारी ग्रामीण और कृषि अर्थव्यवस्था के समुन्नत विकास के प्रयासों के बगैर सफलता संदिग्ध है। अपनी ओर से चौधरी साहब ने हमेशा ही हमारी अर्थव्यवस्था की खामियों, खाइयों और असन्तुलन को पाटने की भरपूर कोशिश की थी और विकास कार्यक्रमों को निर्धारित किया था।

चौधरी साहब को याद करते हुए उनको विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए मैं अंत में यही कहना चाहूँगा कि चौधरी चरण सिंह वस्तुतः किसानों के मसीहा थे।

५

कथनी और कर्म के समन्वय - पुरुष

प्रो. जे. डी. सेठी*

चौधरी साहब से मेरा रिश्ता सियासी नहीं था। मेरी उनसे विभिन्न मुद्दों पर घंटों बात होती थी। आर्थिक स्थिति पर हो, चाहे देश के सियासी हालात पर हो, उनसे अक्सर बहस–मुबाहिसे होते रहते थे। लेकिन मेरा उनसे किसी पार्टी या गुट के किसी नुमाइन्दे के रूप में कोई रिश्ता नहीं था।

मैं उन तीन–चार बातों को तो, जिन्हें मैं समझता हूँ कि आमतौर पर लोग नहीं जानते हैं, उन्हें बताना चाहता हूँ। कृषि और देश के आर्थिक हालात के बारे में ही नहीं बल्कि हिन्दुस्तान के अनेक अनबुझे पहलुओं के बारे में भी उनकी सोच थी और उनके बारे में उन्होंने अपनी एक स्पष्ट एवं आदर्श नीति बनाई। बहुतेरे लोग उनसे, उनकी किसी बात से, सहमत नहीं होते थे, यहाँ तक कि मैं भी किसी–किसी मुद्दे पर उनसे सहमत नहीं रहा करता था, लेकिन उन मुद्दों पर उनसे घंटों बहस होती थी। यह इस बात का प्रमाण है कि वह किसी भी मुद्दे पर बहुत चिंतित रहते और उस पर बहस करते थे। हिन्दुस्तान की राजनीति में मैंने उनके अलावा कोई राजनेता ऐसा नहीं देखा, जो किसी भी सवाल पर उसके हल खोजने के लिए खुद घंटों बहस करता हो।

चौधरी चरण सिंह ऐसे नेता थे, जिन पर जनता का भरोसा था। वे तबके, जिनके अधिकारों के लिए वह लड़ाई करते रहे, उन्हें अपना मसीहा मानते थे। वह एक बुद्धिजीवी ही नहीं, लेखक और चिंतक भी थे। यह बात चौधरी साहब द्वारा "भारत की भयावह आर्थिक स्थितिः कारण और निदान" नामक पुस्तक से प्रमाणित होती है। इस किताब के एक–एक पन्ने पर उन्होंने जो सवाल उठाए हैं और उसके निदान की दिशा में जो सुझाव दिए हैं, उनके बारे में मुझसे बहस की। कुछ ऐसी गलतियां थीं जो उस पुस्तक में नहीं आनी चाहिए थीं, उन्होंने उनके बारे में उस विषय के कई

---

* जय देव सेठी (१९२४–२०००), प्रोफेसर, दिल्ली स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स १९५५– सदस्य, भारतीय योजना आयोग। गाँधीवादी विद्वान। कई पुस्तकों के लेखक – भारत की स्थैतिक शक्ति संरचना १९६९, संकट में भारत १९७५, गाँधी आज १९७९, महात्मा गाँधी का राजनीतिक दर्शन १९८१, आदि।

प्रमुख जानकारों से बात की और जब संतुष्ट हो गए, तब उसमें से वे बातें हटाईं, तब पुस्तक छपवाई। मुझे दुःख इस बात का है कि ऐसे महान नेता की पुस्तक, जो हिन्दुस्तान की आर्थिक नीति का और उसके समाधान के तरीकों का खुलासा करती है, देश में कम पढ़ी जाती है जबकि विदेशों में ज्यादा पढ़ी जाती है। और जहाँ तक मेरी जानकारी है, वह पुस्तक कई विदेशी विश्वविद्यालयों के अर्थशास्त्र के पाठ्यक्रम में भी लागू है।

वह सरल, साफ दिल और सादगी पसंद इंसान थे। आजकल देश में ऐसे नेताओं की कमी नहीं है, जो खादी तो पहनते हैं लेकिन उनके दिल साफ नहीं होते। यहाँ एक घटना का ज़िक्र करना चाहता हूँ: एक बार बातचीत करने के बाद उन्होंने मुझसे कहा कि भाई सेठी, खाना खाकर जाना। खाने में सादगी का नमूना देखिए, जब खाना आया तो थालियों में एक दाल, एक सब्जी, दो चपाती और प्याज थी। कुल तीन थालियां थीं, जिनमें एक बड़ी और दो छोटी थाली थीं। उन्होंने (श्रीमती गायत्री देवी से) कहा कि, "अरे भाई, दो थाली बड़ी रख देतीं, यह मेहमान हैं।" इस पर श्रीमती गायत्री देवी ने कहा कि "घर में बड़ी थाली दूसरी हो तो दूँ।" मेरा यहाँ यह कहने का मतलब यही है कि इतने बड़े नेता होने के बावजूद उनके यहाँ दो बड़ी थालियां नहीं थीं। यह सादगी नहीं तो और क्या है।

वह कितने स्पष्टवादी थे, इसका एक उदाहरण बताता हूँ। मैंने उनसे एक बार कहा कि "आपने हरियाणा चुनाव में अमुक गलत आदमी को चुनाव का टिकट दे दिया। आपका वह रिश्तेदार है, वरना तो किसी भी कीमत पर टिकट के काबिल नहीं था। उसे आपको टिकट नहीं देना चाहिए था। यह बात मैं आपसे इसलिए नहीं कह रहा हूँ कि मुझे कुछ चाहिए, मुझे कुछ नहीं चाहिए। लेकिन इससे आपकी और आपकी पार्टी की साख गिरती है।" इस बात पर मेरी उनसे काफी तकरार हुई। इस बीच उनकी आँखों से टप टप आंसू गिरने लगे। मैंने कभी भी उन्हें रोते हुए नहीं देखा था। इसके बाद रुंधे गले से उन्होंने मुझसे कहा, "सेठी, तुम भी मेरे ऊपर आरोप लगाते हो कि मैंने ऐसा किया है। यह झूठ है कि मैंने अपने रिश्तेदार को टिकट दिया। मैंने उसकी कभी सिफारिश नहीं की। जबकि सच यह है कि वह पार्टी के लोगों का फैसला था, मेरा नहीं। पार्टी के लोगों की वजह से वह टिकट ले गया, मेरी वजह से नहीं।"

एक बार की बात है कि मैं और पत्रकार श्री कुलदीप नैय्यर उनके निवास पर गए थे। मैंने चौधरी साहब से मजाक में कहा, "चौधरी साहब, आप पक्के आर्यसमाजी हैं। हमें यहाँ घंटों बिठाए रखते हैं, लेकिन कभी आपने हम लोगों से चाय तक के लिए नहीं पूछा। आपको अतिथि सत्कार भी नहीं आता। क्या बात है?" तो हैरान होकर उन्होंने हमसे कहा कि,

"भई, मुझे तो कभी ख्याल ही नहीं आया कि आप लोगों को मुझे कभी चाय आदि भी पिलानी चाहिए। यहाँ तो सभी आते हैं। मैं तो किसी को भी चाय नहीं पिलाता।" इस पर हमने उनसे कहा कि ऐसी बात है तो कल से हम लोग नहीं आयेंगे। यह तो हुई मजाक की बात। इसके बाद तो हम लोग जब भी पहुँचते थे, उन्हें यह मालूम रहता था कि हम एक बजे आ रहे हैं, तो वह पौने एक बजे ही कह देते थे कि "भई वह आ रहे हैं, उनके लिए चाय रख दो।" इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि वह दिखावा नहीं करते थे और न उसे पसंद करते थे। यह सादगी की चरम सीमा थी। ऐसा था उनका सादगी भरा जीवन, जिसकी मिसाल नहीं मिलती।

एक बार वृंदावन (मथुरा जिले) में लोकदल का अधिवेशन हो रहा था। वह वहाँ मुझे भी साथ ले गए थे। वहाँ मैंने उनसे कहा कि "चौधरी साहब यहाँ श्रीकृष्ण जी का बहुत खूबसूरत मंदिर है। चलिए वह मंदिर देखकर आते हैं।" वह बोले "भाई सेठी, मैं ठहरा आर्य समाजी। मैं मंदिर–वंदिर नहीं जाऊँगा। यदि मैं मंदिर गया तो लोगों के दिमाग में गलतफहमी पैदा होगी।" तब मैंने कहा कि "साहब, हमें तो कोई ऐतराज नहीं है, हम चाहे आर्य समाजी हों या सनातन धर्मी, चाहे वह मंदिर हो, मस्जिद हो, गिरिजाघर हो या गुरुद्वारा, मेरे ऊपर तो कोई फर्क नहीं पड़ता। लेकिन देखना तो चाहिए कि इसके अंदर क्या है।" उन्होंने कहा कि "भाई मैं आपके साथ गया तो गलतफहमी भी होगी और लोग यह कहेंगे कि मैं आर्य समाजी होते हुए मूर्ति पूजा करने गया।" तब मैंने कहा कि "चौधरी साहब यदि आप मंदिर में जाएंगे तो यह कोई छोटेपन की बात तो नहीं होगी, और कोई यह भी नहीं कहेगा कि आप मंदिर गए। यह तो आपका बड़प्पन ही होगा।" तब कहीं जाकर उन्होंने कहा कि "लो चलते हैं।" हम चल दिये। यह स्वाभाविक ही था कि चौधरी साहब जहाँ कहीं जाते, वहाँ उनके समर्थक, अनुयायी, नेता, सांसद व विधायक वहीं जाते। नतीजतन पूरा काफिला मंदिर के लिए चल पड़ा।

मंदिर में पहुँचते ही एक अभूतपूर्व नजारा मुझे देखने के लिए मिला। वह यह कि मैंने तो भगवान के सामने पहुँचकर, जैसा कि अक्सर करते हैं, झुक कर हाथ जोड़ कर प्रणाम किया लेकिन देखते क्या हैं कि चौधरी साहब ने मंदिर में मूर्ति के सामने पहुँचते ही हाथ जोड़ दिए। बाहर आकर मैंने पूछा कि "चौधरी साहब आपने मंदिर में मूर्ति के सामने हाथ जोड़कर प्रणाम क्यों किया।" तब उन्होंने कहा कि "भाई दिल की बात है, खुद–ब–खुद हाथ उठ गए और उनको नमन करने के लिए जुड़ गए। इसमें मेरा क्या कसूर है। सच तो यह है कि दिल–दिमाग मेरा कहीं भी हो लेकिन वहाँ अकस्मात ऐसा हो गया। जबकि मैं मूर्ति पूजा में विश्वास

नहीं करता लेकिन वहाँ का वातावरण ही ऐसा था और मेरे ऊपर प्रभाव ही ऐसा पड़ा कि मुझसे रहा नहीं गया। मुझे ऐसा महसूस हुआ कि यहाँ तो झुकना ही चाहिए, भले ही मेरी आकांक्षा कुछ भी हो रही हो।" इसलिए मेरा कहना है कि वह दिल के साफ आदमी थे और हमेशा साफगोई से ही बात करते थे।

उनका हमेशा यह मानना था और वह इस बात पर सदैव बल देते रहे कि खेती या गाँव हिन्दुस्तान में तब तक पनप नहीं सकते, जब तक गाँवों में कुटीर उद्योग नहीं लगाए जाते। कृषि पर आप कितना भी खर्च कर लें, उसको कितनी भी प्रमुखता दें, वह उतने लोगों को रोजगार नहीं दे सकती जितनी कि अपेक्षा की जाती है। यह तब तक संभव नहीं है जब तक कि गाँवों में छोटे–छोटे उद्योग न लगाये जाएं, जिससे लाखों लोगों को रोजगार मिलेगा और उनका दिन–ब–दिन विकास होगा। महात्मा गाँधी और चौधरी साहब ने हमेशा गाँव को इकाई माना। जब तक हम गाँव को इकाई नहीं मानेंगे तब तक गाँव में रहने वाले, खेती से जुड़े किसान–मजदूर, दस्तकारी से जुड़े दस्तकार, आत्मनिर्भर नहीं हो सकते। उनका कहना था कि जो चीज हाथ से बनाई जा सकती है, उसे मशीन के जरिये न बनाया जाए। जो चीज कुटीर उद्योग–धंधों के जरिये बनाई जा सकती है, उसे भारी यानी बड़ी मशीनों के जरिये न बनाया जाए, जब तक इस तरह की नीति नहीं बनाई जाएगी, देश का विकास संभव नहीं। यही उनका आर्थिक दर्शन था।

६
इस युग के भीष्म
मधुकर दिघे*

सन् १९७४ में सोशलिस्ट पार्टी और भारतीय क्रांति दल, जिसके नेता चौधरी चरण सिंह थे, का एकीकरण होकर भारतीय लोकदल बना था। इसके बाद हम लोग चौधरी साहब के साथ, उनके नेतृत्व में, भारतीय लोकदल के कार्यकर्ता के रूप में काम करते रहे। वैसे मैं चौधरी साहब के संपर्क में, प्रथम बार, सन् १९६७ में ही आ गया था। गोरखपुर के पिपराईच क्षेत्र से उत्तर प्रदेश विधानसभा के लिए मैं सन् १९६७ के चुनाव में जीत गया था। सन् १९६४ से १९६६ के अंत तक मैं उत्तर प्रदेश की सोशलिस्ट पार्टी तथा बाद में संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी का राज्य सचिव रहा और इस कारण उत्तर प्रदेश में होने वाली राज्य स्तर की सभी घटनाओं से मेरा सीधा संपर्क था। विधानसभा का गठन होते ही हम लोगों ने इस बात का अनुमान लगा लिया था कि कांग्रेस दल बहुत ही अल्प बहुमत में है और उसमें अंतर्विरोध भी व्याप्त हैं, इस स्थिति का लाभ उठाया जा सकता है। कांग्रेस की सरकार, चंद्रभानु गुप्त के नेतृत्व में बन चुकी थी। चौधरी साहब के साथ सरकार के गठन के समय स्पष्ट रूप से अन्याय किया गया था और उत्तर प्रदेश की राजनीति में उनके कृषक प्रवक्ता व नेता बनने के व्यक्तित्व को अंकुश लगाने और संभवतः अपमानित करने का प्रयत्न किया गया था।

इस स्थिति का लाभ और समाजवादी नेताओं को अपने प्रयत्नों में सफलता तब मिली, जब चौधरी साहब अपने सोलह सहयोगियों के साथ कांग्रेस छोड़कर संयुक्त विधायक दल में शामिल हो गए। फलस्वरूप चंद्रभानु गुप्ता ने अपने दल की सरकार का इस्तीफा दे दिया। रामचन्द्र विकल उस समय संयुक्त विधायक दल के नेता थे। चौधरी साहब के लिए उन्होंने अपने पद से इस्तीफा दे दिया और हम लोगों ने सर्वसम्मति से चौधरी साहब को संविद का नेता चुन लिया।

आजादी के बाद यह प्रथम अवसर था, जब उत्तर प्रदेश में गैर–कांग्रेसी

---

* मधुकर दिघे (१९२०–२०१४), राजनीतिज्ञ, १९९०–१९९५ राज्यपाल, मेघालय। उत्तर प्रदेश में राम नरेश यादव मंत्रालय में कैबिनेट मंत्री (१९७७–७९)।

सरकार का गठन हुआ था और चौधरी साहब उस सरकार के प्रथम मुख्यमंत्री बने थे। मैं सरकारी पक्ष का सचेतक था। मेरे 'मेडन स्पीच' से प्रभावित होकर तथा विधानसभा में मेरी लगन को देखकर चौधरी साहब बहुत खुश हुए। उन्होंने मुझे अनेक बार बुलाकर एक विधायक के कर्तव्यों के साथ–साथ, सरकारी पक्ष के विधायक और विरोध पक्ष के विधायक में क्या फर्क होता है, यह समझाया क्योंकि हम लोग सदन में कभी–कभी सरकारी पक्ष में रहते हुए भी सरकार की आलोचना कर देते थे। वे इस पर नाराज भी हो जाते थे लेकिन उनकी नाराजगी भी क्षणिक ही होती थी। लेकिन जिनकी इच्छा उनसे समझने और अपनी गलती स्वीकार करने की होती थी, उसे वे डांटते जरूर पर समझाते भी थे। ऊपर से जितने वे कठोर लगते थे, उतने ही बालक समान मृदु स्वभाव के भी थे–एकदम ग्रामीण बूढ़े व्यक्ति जैसे। लेकिन जो बात मैं मुख्यतः बताना चाहता हूँ, वह यह नहीं कि उनकी राजनेता या समाजनेता के रूप में क्या छवि थी, वरन् वे कितने कुशल एवं दृढ़ प्रशासक थे।

उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ जिले में एक घटना हो गई थी, हत्या के साथ–साथ एक महिला को रस्सी से बांधकर कुएँ में लटका दिया गया था। घटना के पीछे जिन लोगों का हाथ था, वे केवल भूतपूर्व जमींदार और धनी व्यक्ति ही नहीं थे बल्कि कांग्रेसी नेता भी थे। स्वाभाविक तौर पर जैसा हुआ करता है, जिले के स्थानीय अधिकारी व पुलिस कर्मचारी संबंधित गुनहगारों को बचाने और उनकी गिरफ्तारी की कार्यवाही करने में कोताही बरत रहे थे। वस्तुतः उन्हें काफी अंश तक छूट भी दिए हुये थे। मैंने सरकारी पक्ष के एक जिम्मेदार पदाधिकारी सचेतक होने के बावजूद विधानसभा में सरकार और गृह विभाग की, जो मुख्यमंत्री का ही महकमा था, कड़ी आलोचना कर दी। मुख्यमंत्री चौधरी चरण सिंह ने एक बार कड़ी निगाह से, भृकुटि ताने, मेरी तरफ देखा परंतु केवल इतना ही कह कर कि सरकार वस्तुस्थिति की जानकारी करने के बाद ही किसी निर्णय पर पहुँचेगी, उस प्रश्न को टाल कर दूसरे विषयों पर बोलने लगे। मुझे एक बार गुस्सा भी आया और मैंने अपने कई मित्रों से कहा भी कि क्या संविद की सरकार का रवैया भी वैसा ही होगा जैसे कांग्रेसी सरकारों का सामान्यतः हुआ करता है? मैं सरकार के रवैये से दुःखी था।

लगभग तीन बजे मुझे मुख्यमंत्री ने अपने कक्ष में बुलवाया। मैं समझ गया था कि चौधरी साहब अवश्य ही मेरे भाषण का और जो मैंने सरकार की आलोचना की है, उसी पर विरोध और गुस्सा जाहिर करेंगे। परंतु कक्ष में पहुँचते ही उस समय मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा, जब मैंने उनके कक्ष में मुख्यमंत्री के अलावा गृह–सचिव और मुख्य सचिव को भी

बैठे हुए देखा। चौधरी साहब ने मुख्य सचिव और गृह सचिव को संबोधित करते हुए कहा, "यह दिघे संयुक्त विधायक दल का सचेतक है, नया है परंतु अच्छा विधायक है। प्रतापगढ़ की घटना के संबंध में यह जो भी सूचना दे सकें, उसकी जानकारी इनसे कर लो और खुद भी घटना की जाँच करके कल ही मुझे सारी स्थिति से अवगत करा दो।" दो–टूक बात कर, मैं उनके कक्ष से बाहर आया और घटना के संबंध में मुझे जो भी जानकारी थी, वह मैंने उन अधिकारियों को दे दी। दूसरे दिन विधानसभा में बगैर किसी का नाम लिए चौधरी साहब ने सूचना दी कि जिले के जिलाधिकारी और पुलिस अधीक्षक को २४ घंटे के अंदर बुला लिया गया है और आवश्यक कार्यवाही की जा रही है। दूसरे ही दिन ज्ञात हुआ कि उन अफसरों का तबादला हो गया है। मैं अपनी विजय पर खुश तो था ही परंतु मुझे चौधरी साहब की प्रभावशाली कार्यशैली व एक कुशल प्रशासक द्वारा दृढ़ता के साथ अपने फैसले को कार्यान्वित करने की क्षमता ने सबसे अधिक प्रभावित किया था।

सन् ७७ में वही अनुभव मुझे उत्तर प्रदेश के वित्त व संसदीय कार्यमंत्री होने पर काम आया। उनकी शिक्षा का ही परिणाम था कि वे दिल्ली में रह कर भी रामनरेश यादव के मंत्रिमंडल में, सबसे अधिक मुझसे ही प्रसन्न रहते थे और यही कारण था कि जब बनारसी दास जी के नेतृत्व में मंत्रिमंडल का पुनर्गठन हुआ तो मुझे अकेले को ही बनारसी दास जी के साथ मंत्री पद की शपथ लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। बाकी अन्य सभी विभागों के मंत्री एक सप्ताह बाद बनाए गए थे चौधरी साहब एक कुशल प्रशासक ही नहीं थे, उनकी छवि एक ईमानदार व्यक्ति की भी थी। सन् ६७ में जब तक वे उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री थे, तब तक संपूर्ण प्रदेश के सरकारी कर्मचारियों में एक भय व्याप्त था कि हमने घूस ली, तो हम बख्शे नहीं जाएंगे। यहाँ तक कि लोगों में खौफ बना रहता था कि टिकट खिड़की पर टिकट देने वाला बाबू भी भीड़ से बुलवाकर टिकट खरीदने वाले का बकाया, यदि भूल से छूट गया हो, तो वापस करता था। लोगों में यह आम धारणा बन गई थी एवं इस प्रकार की अफवाहें प्रचारित थीं कि चौधरी साहब भेष बदलकर किसी भी स्थान पर कभी भी आ सकते हैं। ऐसी हालत में स्वाभाविक था कि सभी लोग अपने–अपने काम पर मुस्तैद रहते थे। और, भ्रष्टाचार पर थोड़ा ही क्यों न हो, अंकुश लग गया था।

गन्ने के दाम में वृद्धि हो जाने के कारण भी किसानों में संतोष था। मैं इसलिए प्रसन्न था कि गोरखपुर के गन्ना उत्पादक कृषकों के संघर्ष के फलस्वरूप ही मुझे विधानसभा में अच्छे बहुमत से जीतकर आने का मौका मिला था। मेरा विधानसभा क्षेत्र गन्ना उत्पादकों का ही क्षेत्र था।

एशिया की सबसे बड़ी चीनी मिल "सरैया फैक्ट्री" सरदार नगर तथा एक अन्य पिपराइच शुगर मिल मेरे कार्य क्षेत्र के अंतर्गत ही पड़ती थीं। गोरखपुर जनपद में और भी कई चीनी मिलें थीं और मेरा उनसे एक मजदूर कार्यकर्ता के नाते तथा गन्ना उत्पादकों के लिए किए जाने वाले संघर्ष के नाते सीधा संबंध था। अतः मेरे लिए स्वाभाविक था कि मैं मुख्यमंत्री चौधरी चरण सिंह का प्रशंसक बनता। वैसे केवल एक विधायक के नाते ही मेरा उनसे संबंध था। एक प्रकार से मुझे उनसे भय भी लगता था, क्योंकि उनकी गंभीर मूर्ति, उनकी कार्यशैली और ऊपर वर्णित उनके कार्यों से उनमें एक सम्मानित बुजुर्ग व्यक्ति की ही छवि दिखाई देती थी। हम समाजवादियों में व्यक्तिगत संपर्क बढ़ाने और काम के अतिरिक्त नेताओं से संबंध बनाने की आदत बहुत कम थी। मुझे तो और भी अधिक संकोच लगता था।

समाजवादियों की उनसे लगान के प्रश्न पर लड़ाई भी ठन गई थी। संभवतः यह भी कारण रहा हो कि हम उन्हें "कुलक पक्षपाती" (बड़े किसानों का पक्षधर होना) मानते थे और उस दृष्टि से हमारे लिए वे दकियानूसी भी थे। परंतु सन् ७४ आते–आते हम लोगों की यह धारणा बदल गई थी। उनका यह मानना था कि "जमींदारी उन्मूलन" तथा "अधिकतम जोत सीमा कानून" के बाद बड़े–छोटे किसानों में भेदभाव न किया जाय। स्ट्रेटेजीकली (व्यूह रचना की दृष्टि से) हमें भी वह उचित ही लगा। इसके अतिरिक्त ६–७ वर्षों के अंतराल में उनके विचारों में भी काफी परिवर्तन आ गया था। अब कांग्रेस संगठन तथा कांग्रेस कल्चर से उनका दुराव उनके अपने ही अनुभव से बढ़ गया था। हम लोगों के स्वभाव में भी अंतर आ गया था।

सन् ७४ की विधानसभा में चौधरी साहब विपक्ष के नेता थे और मैं भारतीय लोकदल विधान मण्डल दल का सचिव। अब रोजमर्रा के काम के लिए मुझे उनके पास जाना पड़ता था। मेरा संकोच मिट रहा था। उनके बारे में मेरी धारणाएं बदल रही थीं। मैं बार–बार सोचता था कि ऊपर से रूक्ष दिखने वाला यह व्यक्ति इतना मोम–दिल कैसे हो सकता है।

वह अपनी बात थोपते कभी नहीं थे। उन्होंने नियम–कानून के अतिरिक्त सद्व्यवहार की अनेक बातें हमें समझायी थीं। वे भ्रष्टाचार, बेईमानी और गरीबों, विशेष तौर पर ग्रामवासियों, पर होने वाले अत्याचार पर क्षुब्ध होते थे और कई उपायों पर विचार भी करते थे, साथ ही दयालु भी थे। उनके इसी स्वभाव का फायदा चतुर चालाक लोग बहुत उठाते थे। उनके विरुद्ध आरोप लगाने वाले भी उनसे कई बार लाभ उठा ले गए।

सन् ७७ से ७८ तक के दौरान जब मैं उनसे अधिक संपर्क में आ गया

था, तो मैंने उनसे एक बार सहज तौर पर कहा, “चौधरी साहब क्या बात है, भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य का फायदा अधिकतर दुर्योधन और कौरव ही क्यों उठाते हैं?” चौधरी साहब गंभीर हो गए, मेरे प्रश्न का आशय वे समझ गए थे। मैंने प्रश्न तो कर दिया था और थोड़ा घबराया भी था परंतु मैं आश्चर्य चकित था, जो उन्होंने मुझसे कहा। चौधरी साहब ने कहा ”मैं भी तो कांग्रेस से चिपका रहा, गाँधी जी के मरने के बाद भी इतने वर्षों तक, मुझे तो बहुत पहले ही कांग्रेस छोड़ देनी चाहिए थी, पर मैं चिपका रहा, शायद नमक की वजह से। अब से बहुत पहले ही देश को बदलने, कृषकों के हित में, गरीबों के हित में, गाँधी के सपनों का देश बनाने का मौका मिल गया होता”, यह एक स्वीकारोक्ति थी, इस युग के भीष्म की।

७

युग–पुरुष चौधरी चरण सिंह

देवीदास आर्य*

उन दिनों चौधरी साहब उत्तर प्रदेश में कांग्रेसी सरकार में स्वायत्त शासन मंत्री थे। मैं जनसंघ से कानपुर नगर महापालिका का पार्षद तथा आर्य समाज का अध्यक्ष था। मुझे ज्ञात हुआ कि उत्तर प्रदेश की कांग्रेसी सरकार में केवल चौधरी साहब ही एक मात्र आर्य समाजी हैं। चौधरी साहब के कानपुर आगमन पर मैंने उनसे आर्य समाज के वार्षिकोत्सव कार्यक्रम में मुख्य अतिथि बनने का आग्रह किया, जिसे चौधरी साहब ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। आर्य समाज, गोविन्द नगर में आयोजित वार्षिकोत्सव की जो प्रचार सामग्री वितरित की थी उसमें चौधरी साहब के मुख्य अतिथि के रूप में आने की सूचना थी। नगर के कुछ अति उत्साही कांग्रेस जनों को चौधरी साहब का मेरे कार्यक्रम में आना नागवार तथा अप्रिय लगा। एक कांग्रेसी मित्र ने चौधरी साहब को निष्ठावान कांग्रेसी होने के अधिकार से टेलीफोन किया तथा उनसे कहा कि "आप इस जनसंघी कार्यक्रम में न आएं, यही कांग्रेस पार्टी के हित में होगा।" चौधरी साहब ने उनसे उनकी उम्र पूछी तथा उम्र पूछने के पश्चात् उन्हें फटकारते हुए कहा कि "जितनी तुम्हारी उम्र है, उतने दिनों से मैं राजनीति कर रहा हूँ। मैं किसी राजनीतिक सम्मेलन में नहीं आ रहा हूँ, धार्मिक सभा में आ रहा हूँ। यह कोई आवश्यक नहीं कि कानपुर के आर्य समाजियों का राजनीतिक दृष्टिकोण मेरे राजनीतिक दृष्टिकोण से मेल खाए। तुम धर्म को राजनीति में मत घसीटो", यह कह कर चौधरी साहब ने गुस्से में टेलीफोन पटक दिया। चौधरी साहब का उग्र रूप देखकर वह कांग्रेसी मित्र सहम गए।

निश्चित तिथि व समय पर चौधरी साहब सर्वप्रथम मेरे निवास स्थान पर पधारे। तत्पश्चात् समीपवर्ती सभा स्थल में चौधरी साहब ने यह घटना मंच से बताई, तो जनमानस चौधरी साहब की सदाशयता एवं उदार हृदयता के प्रति श्रद्धावनत हो गया।

---

* देवीदास आर्य (१९२२–), पत्रकार, आर्य समाजी। जनसंघ में सक्रिय। कानपुर में केंद्रीय आर्य सभा के प्रमुख।

मैं स्वयं उनसे इतना प्रभावित हुआ कि राजनीतिक भिन्नता होते हुए भी, अंतिम समय तक उनके सानिध्य में रहा तथा उनसे मार्ग दर्शन प्राप्त करता रहा।

राजनीति में चौधरी चरण सिंह जी की ठीक वही भूमिका रही, जो प्राचीन काल में चाणक्य की रही। अतः चौधरी साहब को आधुनिक चाणक्य कहने में किंचित भी अतिश्योक्ति न होगी। वह आजीवन चाणक्य की तरह तानाशाही की जड़ों में मट्ठा डालने की प्रक्रिया की ओर अग्रसर रहे।

मैं व्यक्तिगत रूप से चौधरी साहब का और उनकी नीतियों का प्रशंसक रहा हूँ, विशेष रूप से उनके स्वदेशी विषयक विचारों का हार्दिक सम्मान करता रहा हूँ। आज तक किसी प्रशासक का ग्रामोत्थान की तरफ ध्यान नहीं गया था। या यह कहना उचित होगा कि मूल की तरफ किसी का ध्यान ही नहीं गया। चौधरी साहब ने गाँधी जी की नीतियों के आधार पर ग्रामोत्थान का जो बीड़ा उठाया था, उसकी मैं हार्दिक प्रशंसा करता हूँ। सही रूप में अगर देशभक्ति या स्वदेशी की भावना कहीं जन्म ले सकती है, तो वह ग्राम विकास द्वारा ही संभव है। यही सच्ची देशभक्ति का उदाहरण है।

ग्रामोत्थान के अपने ध्येय और आदर्श की प्राप्ति के लिए चौधरी चरण सिंह ने जो प्रयत्न किए थे, वे विचारणीय हैं। उनका ध्येय–समर्पण अनुकरणीय है। वह भारतीयता को जिस ढंग से संगठित करने के लिए प्रयत्नशील रहे, उससे अन्य राजनीतिक नेताओं को शिक्षा लेनी चाहिए। जो लोग उनके सिद्धांतों से सहमत नहीं थे, वे भी उनकी देशभक्ति पर शंका नहीं कर सकते। उन्होंने "सादा जीवन उच्च विचार" की सूक्ति को कार्यरूप में परिणित करके एक उदाहरण पेश किया। भारत के गौरवमय अतीत का चित्र आँखों के सामने रखकर बाद की परिस्थिति में जो दुर्दशा हुई, उससे ऊपर उठकर, उसे फिर से गौरवपूर्ण स्थान पर स्थापित करना ही उनका महान व्रत था।

चौधरी साहब का जीवन खुली किताब था, जिसे सब पढ़ सकते थे। हो सकता है आप कई मुद्दों पर उनसे सहमत न हों, पर इसका कोई महत्व नहीं, महत्व तो इस बात का है कि हम उनमें एक ऐसे व्यक्ति और चरित्र का दर्शन पाते थे जो निष्कलंक, निःस्वार्थ और निर्भय रहा। जब अन्य नेतागण नई योजनाओं, औद्योगीकरण, जीवन स्तर, विदेशी संबंध आदि की बातें कर रहे थे, चौधरी साहब अनुशासन, शक्ति, निर्भयता, चरित्र निर्माण, निःस्वार्थ सेवा, ग्रामोत्थान तथा गतिशील देश भक्ति की शिक्षा दे रहे थे, जिसके बिना उपरोक्त लक्ष्य–भारत का भविष्य उज्ज्वल बनाना कदापि संभव नहीं है।

चौधरी चरण सिंह का प्रारंभिक जीवन 'आर्य समाज' आंदोलन से प्रभावित रहा। वह अपने सार्वजनिक जीवन को आर्य समाज की देन मानते थे। वह महर्षि दयानंद के अनन्य भक्तों में से थे। उनके जीवन के प्रत्येक पहलू पर आर्य समाज की गहरी और अमिट छाप थी। उन्हीं के शब्दों में "देश सेवा के क्षेत्र में आने के लिए आर्य समाज मेरा प्रथम सोपान है।" चौधरी साहब आर्य समाज गाजियाबाद के कई वर्षों तक अध्यक्ष रहे। "आर्य समाज मेरी माँ है, महर्षि दयानंद मेरे गुरु हैं" यह उद्‌गार उन्होंने लाखों के जन समूह के बीच फूलबाग, कानपुर में आर्य समाज शताब्दी महोत्सव के अवसर पर निःसंकोच कहे थे। लाला लाजपतराय ने भी यही भावना व आदर आर्य समाज को दिया था।

चौधरी साहब स्पष्ट वक्ता थे। उनकी स्पष्टवादिता व निर्भीकता का उदाहरण आपातकाल के दौरान विधानसभा में साढ़े तीन घंटे लम्बा दिया गया ओजस्वी भाषण था, जिसने कांग्रेसी तानाशाही की धज्जियां उड़ा दी थीं और वही निर्भीकतापूर्ण भाषण कांग्रेसी तानाशाही के ताबूत में एक कील साबित हुआ।

चौधरी साहब का जीवन चरित्र भविष्य में शोध का विषय होगा। आगामी युग उनके द्वारा किए गए सकायों का सदा–सर्वदा ऋणी रहेगा।

८

हमदर्द और नेक दिल इंसान

धनिक लाल मंडल*

भारत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री चौधरी चरण सिंह स्वभाव से ही अत्यंत मृदु, विनम्र और सरल सहज प्रकृति के इंसान थे। धोती–कुर्ता और टोपी–यह वेश–भूषा उनके सादा जीवन की पहचान थी। उनका रहन–सहन खान–पान और सोच यह सब कुछ इस तथ्य को रेखांकित करते थे कि वह जमीन से जुड़े हुए थे। ग्रामीण परिवेश में जन्मे–पले होने के कारण वह ग्रामीणों की तकलीफों, दुःख –दर्द और समस्याओं से भली–भाँति परिचित थे। अभावग्रस्त एवं दलितों–शोषितों के प्रति हमदर्दी और संवेदनशीलता उनके चरित्र की प्रमुख विशेषता थी। अतः उन्होंने सदैव विपन्न ग्रामीणों के कल्याण–उत्थान की बात सोची और जो कुछ उनसे बन पड़ा, उनके लिए किया भी। यही वजह है कि वह महान किसान नेता के रूप में प्रतिष्ठित हुए।

चौधरी चरण सिंह जी राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के चिंतन व दर्शन से बहुत प्रभावित थे। गाँधी जी का विचार था कि भारत के स्वतंत्र होने के पश्चात् दलितों और दीन–दुखियों के कष्टों का निवारण हो जाएगा, उनकी आँखों के आँसू पुंछ जाएंगे और आजादी की सुबह के साथ ही भारत के कोटि–कोटि गरीबों के लिए एक नए युग का सूत्रपात होगा, जिसके फलस्वरूप हर भारतीय को पेट भर रोटी, तन ढ़कने को कपड़ा और सिर छिपाने के लिए छत का आश्रय मिल सकेगा। सैकड़ों वर्षों से पीढ़ी दर पीढ़ी पराधीन– जीवन बिताने के कारण जो मायूसी उनके चेहरों पर छाई थी, वह छंट कर सुखद मुस्कान में बदल जाएगी। संभवतः गाँधी जी के अनुयायी होने के नाते चौधरी चरण सिंह जी का भी यही सपना था कि स्वतंत्र भारत के लोग फटेहाल न रहकर शीघ्र ही सुखी जीवन यापन करने लग जाएंगे। परंतु जब उनका यह स्वप्न पूरा नहीं हुआ तो उनका चिंतित हो उठना स्वाभविक था। इस संबंध में उन्होंने अपनी चिंता का कई स्थानों पर उल्लेख किया है।

---

* धनिक लाल मंडल (१९३२–२०२२), राजनीतिज्ञ। बिहार विधानसभा के सदस्य (१९६७–१९७४), अध्यक्ष (१९६७–६९), राज्य गृह मंत्री (१९७७–७९)। हरियाणा के राज्यपाल (१९९०–१९९५)।

वह एक अत्यधिक जागरूक व्यक्ति थे। भारतीय सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों से बखूबी वाकिफ थे वह और उन्हें इस बात का आभास था कि भारत के कोटि–कोटि निर्धन व विपन्न लोगों की दशा को कैसे सुधारा जा सकता है। उनका मानना था कि स्वतंत्र भारत को निर्धनता, बेरोजगारी, अपूर्ण रोजगार और विभिन्न वर्गों की आय में भारी असमानता, इत्यादि समस्याएं ब्रिटिश सरकार से विरासत में मिली थी। उन्हें खेद था कि आजादी के बाद कई दशक बीत जाने पर भी सरकार इन समस्याओं का समाधान नहीं कर सकी बल्कि इन समस्याओं में भ्रष्टाचार की समस्या का और इजाफा हो गया। चौधरी चरण सिंह जी का मानना था कि यह तत्कालीन सरकार और नेताओं की गलत नीतियों और वरीयताओं के परिणामस्वरूप ही उक्त समस्याओं का समाधान नहीं हो सका। सरकार ने इस तथ्य को दरगुजर कर दिया कि भारत के ज्यादातर लोग झुग्गी–झोपड़ियों और कच्चे मकानों में रहते हैं। सरकार ने हमारे देश की सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर नीतियाँ तैयार नहीं कीं बल्कि विदेशी नीतियों को भारत पर थोपने का प्रयास किया।

चौधरी चरण सिंह जी का अभिमत था कि स्वतंत्रता के तुरंत पश्चात् भारत सरकार द्वारा जो औद्योगिक नीति अपनाई गई. उसके ही गलत नतीजे देश की गरीब जनता को भुगतने पड़े। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी चाहते थे कि खेती–किसानी और घरेलू उद्योगों को भारी उद्योगों की तुलना में अधिमान दिया जाए परंतु गाँधी जी की इन नीतियों को अस्वीकार कर दिया गया। यद्यपि १९५५ में कांग्रेस ने समाजवाद का नारा तो दिया परंतु कुटीर उद्योगों की तरफ समुचित ध्यान न देकर बड़े उद्योगों को ही प्रोत्साहन दिया। गाँधी जी चाहते थे कि राष्ट्र ऐसी नीति अपनाएं जो ग्राम–केंद्रित हो और सर्वाधिक निर्धन और कमजोर लोगों को ध्यान में रखकर तैयार की गई हो परंतु हुआ उसके विपरीत।

गाँधी जी समाज के निचले और जमीन से जुड़े हुए वर्ग को ध्यान में रखकर योजनाएं तैयार करने की बात कहा करते थे। चौधरी चरण सिंह जी का भी यही मत था कि भारत का हित साधन खेती–किसानी और ग्राम्य–कुटीर व लघु उद्योगों को प्रोत्साहन देकर किया जा सकता है, ताकि जन–सामान्य को खाने के लिए अन्न और पहनने के लिए कपड़ा उपलब्ध हो और अधिकाधिक लोगों को काम मिल सके।

चौधरी साहब की राय में भारत की परिस्थितियों को देखते हुए स्थानीय कारीगरी और कच्चे माल पर आधारित छोटे उद्योगों को प्रोत्साहन देकर उनके माध्यम से ज्यादा से ज्यादा लोगों को रोजगार मुहैया किया जाता, तत्पश्चात् भारी उद्योगों को लगाया जाता तो श्रेयस्कर होता परंतु सरकार

ने ऐसा नहीं किया। इसका मुख्य कारण था कि तत्कालीन नीति–निर्धारक ग्रामीण भारत की वास्तविक परिस्थितियों और समस्याओं से पूरी तरह परिचित नहीं थे। इसलिए उन्होंने 'को–ऑपरेटिव फार्मिंग का नारा भी दिया था। इस बारे में चौधरी जी का मत था कि 'को–ऑपरेटिव फार्मिंगः भारतीय कृषि के परिदृश्य तथा ग्रामीण कृषक समाज के अनुकूल नहीं है। व्यापक पैमाने पर सहकारी कृषि का अर्थ है कृषि का मशीनीकरण।

चौधरी साहब के विचार में, भारतीय संदर्भ में, यह सरासर गलत धारणा थी कि 'सहकारी–कृषि' से उत्पादन में वृद्धि होती है। हाँ, अन्य देशों की बात और है। जहाँ तक भारतीय क्षेत्रों की विविध प्रकार की मृदाओं (मिट्टी), जलवायु और वर्षा आदि का प्रश्न है, उनके दृष्टिगत मशीनों द्वारा खेती से प्रति व्यक्ति उत्पादन नहीं बढ़ेगा, बल्कि कम होगा। उन्हें खेद था कि भारतीय अर्थशास्त्रियों और योजना तैयार करने वालों ने देश में प्रचलित परिस्थितियों का ध्यान नहीं रखा। भारत में कृषि भूमि कम है और आबादी सघन। अतः हमें प्रति एकड़ उपज बढ़ाने की आवश्यकता है, जबकि अमरीका, कनाडा, आस्ट्रेलिया और ऐसे ही दूसरे देशों में बड़े पैमाने पर मशीनों द्वारा बेहतर परिणाम प्राप्त किए गए हैं। वहाँ प्रचुर मात्रा में कृषि भूमि उपलब्ध होने के कारण प्रति व्यक्ति उपज बढ़ जाती है।

चरण सिंह जी इस बात से भी भली–भाँति परिचित थे कि मानव और पशु–श्रम के स्थान पर पैट्रोल तथा डीजल शक्ति के प्रयोग से हमारी अर्थव्यवस्था पर बहुत दुष्प्रभाव पड़ेगा। बेरोजगारी हद से ज्यादा बढ़ जाएगी। भारत में ऐसी परिस्थितियां नहीं हैं कि कृषि के मशीनीकरण के फलस्वरूप बहुत बड़ी तादाद में जो लोग बेरोजगार हो जाएंगे, उन्हें उद्योगों अथवा अन्य सेवाओं में खपाया जा सके।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतीय कृषि अर्थशास्त्र संबधी चौधरी चरण सिंह जी की दृष्टि अत्यंत पैनी थी। यदि उनके विचारों को विभिन्न योजनाएं तैयार करते समय ध्यान में रखा जाता तो निश्चय ही कृषकों व कृषि मजदूरों का पर्याप्त हित–साधन हो सकता था। उम्र के आखिरी हिस्से में उन्हें भारत के प्रधानमंत्री के पद पर आसीन होने का सुअवसर अवश्य मिला, परंतु इस पद पर उनका कार्यकाल इतना थोड़ा था कि वह अपने इन विचारों को कार्यान्वित नहीं कर सके। उनके द्वारा लिखित अनेक पुस्तकें ऐसी हैं, जिनमें भारतीय कृषि तथा अर्थव्यवस्था संबंधी उनके बहुमूल्य विचार दर्ज हैं, जिनसे लाभान्वित हुआ जा सकता है। उनके विचार सदैव दलितों–शोषितों व अभावग्रस्त किसान व कृषि मजदूरों के हित साधन की दिशा में संचालित थे। वह ग्रामीण एवं कृषक समाज के मध्य सदैव हमदर्द व नेक इंसान के तौर पर स्मरण किए जाते रहेंगे।

१

एक सादगी पसंद प्रधानमंत्री

इंद्र कुमार गुजराल*

मैं अपने को इस बारे में सौभाग्यशाली मानता हूँ कि मुझे अपनी ज़िंदगी का कुछ हिस्सा चौधरी साहब के साथ गुजारने और काम करने का मौका मिला। वह युग १९६७ के दौर का था, जब उत्तर प्रदेश में संविद सरकार बनी थी और चौधरी साहब उस सरकार के मुख्यमंत्री थे। उस समय मैं केंद्र सरकार में मंत्री था। यह वह समय था जब देश में एक पार्टी की सरकार का युग समाप्त हो रहा था। या यूं कहें कि अन्य पार्टियों द्वारा सत्ता में आने का युग शुरू हो रहा था। चौधरी साहब ने तब जो बात उठाई थी, वह बुनियादी तौर से बिल्कुल सही थी। उनका कहना था कि किसान को या जमीन पर काम करने वाले, खेती करने वालों को देश के विकास का लाभ हर हालत में बराबर मिलना चाहिए। उस चुनाव में और उसके बाद हुए चुनावों में चौधरी साहब की बात जनता ने गौर से सुनी और चुनावों में उनकी बात का असर भी हुआ।

१९७७ में केंद्र में जनता पार्टी की सरकार बनी। उस समय मैं रूस में भारत का राजदूत था। उस समय मैं चौधरी साहब से मिलने आया था। मेरी उनसे भेंट हुई और उस बीच लम्बे समय तक मेरी उनसे बातचीत हुई। उस बातचीत में भारत–रूस मामलों का ज़िक्र भी आया कि हमारे और रूस के संबंध कैसे हों, आदि–आदि मसलों पर लम्बा विचार–विमर्श चला। फिर जब १९७९ में चौधरी साहब प्रधानमंत्री बने, तब चौधरी साहब ने मुझे मास्को से हिन्दुस्तान बुलाया और कहा कि आप राजदूत का ओहदा छोड़कर उनकी कैबिनेट में सूचना प्रसारण मंत्री बन जाएं। मैं उनकी इस मेहरबानी से एकटक भौचक–सा रह गया और इस बात के लिए मैंने उनका शुक्रिया अदा किया कि आपने मुझे इस लायक समझा कि मुझे अपनी कैबिनेट में मंत्री बनाएं। उस वक्त

---

* इंद्र कुमार गुजराल (१९१९–२०१२), राजनीतिज्ञ। भारत के प्रधान मंत्री (१९९७–९८)। इंदिरा गाँधी के मंत्रिमंडल में विदेश, जल संसाधन, संचार और संसदीय मामले, सूचना और प्रसारण, निर्माण और आवास, और योजना मंत्री। यूएसएसआर में भारत के राजदूत।

मैंने चौधरी साहब से यह गुजारिश की थी कि वह यह रद्दोबदल चुनाव के बाद ही करें तो ज्यादा मुनासिब होगा, लेकिन चुनावों के बाद तो एकदम स्थिति ही बदल गयी।

चौधरी साहब में बहुत–सी विशेषताएं थीं। वह जो भी बात कहते थे, साफगोई और ईमानदारी से कहते थे, भले ही उस बात का ताल्लुक दूसरे देशों से ही क्यों न हो। उनके अंदर कोई दुराव व छिपाव नहीं था और न उनकी बात के दो अर्थ हुआ करते थे। चौधरी साहब की जो सबसे बड़ी विशेषता थी, वह उनकी देशभक्ति थी। वह चाहे वैदेशिक मामलों के बारे में हो या देश के अंदरूनी मामलों में या फिर और किसी बारे में, सबमें उनकी देशभक्ति की झलक हमेशा मिलती थी।

उन्होंने अपनी पूरी ज़िंदगी जिस सादगी से जी, उसकी मिसाल मिलनी मुश्किल है। मुझे उन्हें देखकर यह ताज्जुब होता था कि एक मुल्क का प्राइम मिनिस्टर इतनी सादगी से भी रह सकता है। एक छोटे से कमरे में जमीन पर बिछी दरी पर तकिये के सहारे डेस्क के सामने बैठकर देश के हर मसलों को सुलझाना, वहीं बड़े–से–बड़े और छोटे–से–छोटे आदमी से मुलाकात करना, अपनी कदर वही बनाए रखना, इससे उनकी इज्जत भी बढ़ती थी और तौकीर भी। इससे आने वाला उनके कदमों को देखने और यह सोचने पर मजबूर हो जाता था कि दुनिया के इतने बड़े मुल्क का प्राइम मिनिस्टर ऐसा है जिसमें बनावट का नामो–निशान नहीं है और इस सबसे बड़ी बात यह कि यह इंसान हमसे कद में कितना ऊँचा और बड़ा है।

होशियार और चालाक लोग कुछ भी कहें और खुद को कितना भी बड़ा राजनीतिज्ञ व कूटनीतिज्ञ समझें तथा यह समझते रहें कि वे कूटनीतिक बातें कितने उलझावपूर्ण तरीके से करते हैं, लेकिन इसमें कोई दो राय नहीं है कि उनकी सादगी, ईमानदारी का तरीका एक नए ढंग के नेतृत्व का था। दरअसल यहाँ विचार यह करना है कि नेता किसे कहते हैं। हमारे यहाँ एक तरह का रिवाज बन गया है कि जो भी आदमी एक बार कुर्सी पर बैठ गया, वह नेता बन जाता है, लेकिन नेता में जो विशेषता होती है, उससे वह मीलों दूर होता है। नेता वह होता है, जिसमें डगर से हटकर सोचने की हिम्मत हो, जो लहर के साथ न बहकर सही को सही व गलत को गलत कहने की सामर्थ्य रखता हो। यह गुण, इसे विशेषता भी कह सकते हैं, चौधरी चरण सिंह में थी। उनके बताए रास्ते आज भी हमारी रहनुमाई कर रहे हैं।

यहाँ यह बात गौर करने लायक है कि चौधरी साहब के आने से पहले कोई पार्टी किसानों की बात नहीं करती थी। आज कोई भी पार्टी

अपने चुनाव घोषणा पत्र तक में किसानों की बात जोड़ना नहीं भूलती। यह सब चौधरी साहब का ही करिश्मा है। उनके केंद्र में आने से पहले बनीं योजनाओं में जाहिरा तौर पर किसानों के लिए ६० फीसदी रकम खर्च करने की बात कह पाना किसी भी मेम्बर के बस की बात नहीं थी। चौधरी साहब के बाद बनी योजनाओं में भले ही वह चाहे झूठे को ही कहा गया हो, खेती, गाँव और देहात के लिए ६० फीसदी बजट की रकम खर्च करने की बात जरूर कही जाती है। यह इस मुल्क के लिए चौधरी साहब की बहुत बड़ी देन है। उनके बताए रास्ते पर चलें और उनकी देशभक्ति, ईमानदारी, सादगी और जनता से प्यार करने की उनकी प्रवृत्ति को अपने जीवन में अंश मात्र भी उतार सकें, यही उनको हमारी सबसे बड़ी श्रद्धांजलि होगी।

१०

उन्होंने देश के दर्द की आवाज पर जी ज़िंदगी

हेमवती नंदन बहुगुणा*

चौधरी चरण सिंह एक महान स्वतंत्रता सेनानी और एक कुशल प्रशासक थे। वह लोकदल के संस्थापक अध्यक्ष थे। भारत की रीढ़—गाँव की आवाज थे। गाँव के उस दुःख—दर्द और गाँव की उस आवाज को आंदोलन बनाने का काम स्वराज संग्राम से पहले और बाद में वह लगातार करते आए थे।

महात्मा जी ने कहा कि भारत गाँवों में रहता है। चौधरी चरण सिंह जी ने जन्म से यह समझा कि गाँव के कष्ट क्या हैं। गाँव और एक गरीब परिवार में जन्म लेने के कारण गाँव की समस्याओं से उनका जीवंत संबंध रहा। चौधरी चरण सिंह का भारत के बुनियादी सवालों से संबंध किताबी नहीं, बल्कि उस ज़िंदगी का है, जो वह जिये, उस जन्म का है, जो गाँव की माँ की गोद में हुआ।

उन्होंने शिक्षा गाँव के धूल—धूसरित बालकों के साथ पाई, इसलिए गाँव के दर्द और वेदना के साथ उनका संस्कार और विचार का संबंध रहा और दर्शन का भी। इसीलिए महात्मा जी ने जब स्वराज संग्राम की दुन्दुभी बजाई, हिन्द—स्वराज में गाँव के उस दुःख दर्द की कल्पना को साकार स्वरूप देने और उसका निराकरण करने की चेष्टा की तथा जब स्वयं महात्मा गाँधी गाँव का बाना पहन कर देश की बानी बोलने लगे, तो बरबस नौजवान चरण सिंह उनके छाते के नीचे आकर स्वतंत्रता संग्राम का सैनिक बन गया।

चौधरी साहब के जीवन की एक लंबी कहानी है। उन्हें जन्म का कोई लाभ नहीं मिला। उन्हें गाँव के वातावरण, अपने माता—पिता का जबरदस्त लाभ इस दिशा में अवश्य मिला, क्योंकि इससे उनकी समझ बनी और ऐसी समझ बनी, जो हर मौके पर सटीक सिद्ध हुई।

---

* हेमवती नंदन बहुगुणा (१९१९—८९), राजनीतिज्ञ, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और जनता पार्टी। उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री (१९७३—१९७५), केंद्रीय वित्त मंत्री (१९७९), संचार मंत्री (१९७१—१९७३) और पेट्रोलियम और रसायन मंत्री (१९७७—१९७९)।

चौधरी चरण सिंह पग–पग पर संघर्ष के साथ आगे बढ़े। उत्तर प्रदेश के गाजियाबाद नगर का एक साधारण वकील, आर्य समाज के मंच से सामाजिक कुरीतियों और जात–पांत के विरुद्ध लड़ने वाला एक नौजवान, स्वराज संग्राम व असहयोग आंदोलन में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लेने वाला उत्साही नवयुवक 'जो घर फूंके अपना, चले हमारे साथ' की नीति पर चलने वाला नौजवान चरण सिंह, जिसका चरित्र ही धन रहा हो, संघर्ष – पथ पर धीरे–धीरे आगे बढ़ते हुए वह जिला परिषद के सदस्य, उपाध्यक्ष और उत्तर प्रदेश विधानसभा के सदस्य बन गए।

कांग्रेस के अंदर भिन्न–भिन्न पदों पर रहते हुए पहली बार उनकी चमक और प्रतिभा तब निखरी जब १९३७ में विधानसभा सदस्य के रूप में उन्होंने यह प्रस्ताव पेश किया कि सरकारी सेवाओं में ५० प्रतिशत स्थान ग्रामीण बच्चों, लड़के और लड़कियों के लिए आरक्षित कर दिए जाएं। उनका यह प्रस्ताव भले ही स्वीकार नहीं हो सका लेकिन इस प्रस्ताव को 'हिन्दुस्तान टाइम्स' ने प्रमुखता से प्रकाशित किया।

चौधरी साहब का यह प्रस्ताव उस उपनिवेशवादी संस्कृति के साथ मेल नहीं खाता था जिस उपनिवेशवादी संस्कृति में हमारी शिक्षा ढली, पली और बढ़ी और आज भी पल रही है। जिस शिक्षा के आधार पर हमारे देश के प्रशासन तंत्र में जाने वालों की संरचना होती है। स्पष्ट है कि कांग्रेस आंदोलन में भी वर्ग की दृष्टि से चूंकि शहरी प्रभाव ज्यादा था, इसलिए शहरों के भद्र लोगों को और मैकाले की शिक्षा पद्धति वाले नेतृत्व को चौधरी साहब की यह बात कैसे स्वीकार होती। लेकिन चौधरी चरण सिंह अपनी बात पर अटल रहे।

कानपुर के डॉ. जवाहर लाल रोहतगी भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के अग्रणी सेनानी रहे हैं। चौधरी साहब ने जब यह प्रस्ताव विधानसभा में रखा था, तब उन्होंने चौधरी साहब से कहा था कि "अरे भाई चरण सिंह, यदि तुम्हारे इस प्रस्ताव को मान लिया गया, तो फिर गाँव की खेती कौन करेगा।" इस पर चौधरी साहब ने तत्काल जवाब दिया कि "डाक्टर साहब, जब तक प्रशासन के साथ गाँव का बच्चा नहीं जुड़ेगा, तब तक स्वराज आकर भी लुटा–लुटा सा रहेगा।" वर्तमान में चौधरी साहब का उपरोक्त कथन सार्थक सिद्ध होता है।

हमारे प्रशासकों ने भारत को किताबों में पढ़ा है लेकिन चौधरी चरण सिंह ने भारत को जन्म से रहकर जुड़कर पढ़ा। गाँव की धूल, कीचड़, माटी, लहलहाते खेतों, तो कभी अवर्षण के कारण सूखी जमीन ने उनको ऐसी अमूल्य दृष्टि दे दी, जिसके चलते, चरण सिंह अंततोगत्वा चौधरी चरण सिंह बन गए।

चौधरी चरण सिंह एक व्यक्ति नहीं विचार थे, एक आंदोलन थे, बल्कि एक ऐसा समर्पित जीवन थे, जिसके अंदर गाँव और भारत का दर्द छुपा हुआ था।

सन् १९३७ में ही चौधरी चरण सिंह ने उत्तर प्रदेश विधानसभा में मंडी कानून बनाने संबंधी प्रस्ताव पेश किया। इस संदर्भ में उनका कहना था कि किसान जब अपना उत्पादन बाजार में ले जाता है तो लुट जाता है। इसलिए मंडी कानून बनाना आवश्यक है, जिसके तहत रेगूलेटेड मंडियां बनानी होंगी। इस प्रस्ताव को भी अखबारों ने प्रमुखता से छापा था। इस पर जब सर छोटू राम की दृष्टि पड़ी तो उन्होंने चौधरी चरण सिंह के उस विधेयक, जो मंडी कानून बनाने हेतु विधानसभा में पेश किया गया था, और मंजूर नहीं हुआ था, को मंगाया और पंजाब में १९३७ में मंडी कानून लागू कराया। उत्तर प्रदेश की बदकिस्मती रही कि सन् १९६२ तक कांग्रेस के अंदर जो एक वर्ग विशेष का प्रभाव रहा, जिसमें ग्रामीण जीवन से संबंधित प्रश्नों और समस्याओं के प्रति नासमझी प्रभावी रही, यह कानून बनने में देर हुई। इस दिशा में बाद में विश्व बैंक की सलाह पर केंद्र सरकार ने इसको लागू किया। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि अंततोगत्वा कानून तो बनाना ही पड़ा, यदि चौधरी साहब की बात को पहले ही मान लिया जाता, तो बात ही कुछ और होती। यह कहावत कि "घर का जोगी जोगना, आन गाँव का सिद्ध" यहाँ पूरी तरह चरितार्थ होती है।

स्वराज की लड़ाई के दौरान १९४१ में जब वह बरेली जेल में थे, तब उन्होंने शिष्टाचार की शिक्षा देते हुए अपने बच्चों को कुछ पत्र लिखे थे, जो बाद में 'शिष्टाचार' शीर्षक के अंतर्गत पुस्तक के रूप में कुछ बरस पहले ही प्रकाशित हुई। इस पुस्तक में उन्होंने माता–पिता के साथ कैसे संबंध हों, गुरु के साथ कैसे संबंध हों, बड़े–छोटों के बीच आदर का क्या मापदण्ड हो, खान–पान में क्या दोष हैं, किस तरह का जीवन चरित्र है, का खुलासा किया है। इस संदर्भ में मेरी मान्यता है कि वर्तमान में पाश्चात्य सभ्यता का जो प्रभाव भारतीय जन–जीवन पर पड़कर हमको डिस्को डांसर व ट्विस्ट डांसर बना रहा है, और जिस तरह हमारे देश में भाई–भाई, माता–पिता, पति–पत्नी के रिश्तों में जो एक अभारतीय प्रभाव हल्के–हल्के प्रवेश कर रहा है, उसके विरुद्ध एक चेतना का परिचय चौधरी साहब सन् १९४१ में बरेली जेल में ही दे चुके थे।

आजादी के बाद चौधरी साहब समय–समय पर पंडित जवाहर लाल नेहरू की प्रशासनिक अक्षमता के बारे में और उसके कारण बताते हुए

मुझसे कहते कि "बहुगुणा, जिस आदमी ने सफलता के साथ स्थानीय निकायों का संचालन नहीं किया हो, उससे राष्ट्र के कुशल संचालन की अपेक्षा कैसे की जा सकती है।" उनकी मान्यता थी कि पटे–पदे आदमी मंजता है। उसकी प्रतिभा मुखर भी होती है और निखरती भी जाती है।

चौधरी चरण सिंह की बहुमुखी प्रतिभा से प्रभावित होकर ही पंडित गोविन्द बल्लभ पंत ने सन् १९४६ में उन्हें पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी बनाया। उत्तर प्रदेश के राजनीतिक नेताओं में तीन नाम ऐसे हैं जिन्होंने अपना राजनीतिक जीवन पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी से शुरू किया। वह हैं श्री लाल बहादुर शास्त्री, चौधरी चरण सिंह और श्री चन्दभानु गुप्त। वर्तमान में जब मैं देखता हूँ कि आज देश के लोग सहसा मंत्री और प्रधानमंत्री बन जाते हैं तो आश्चर्य होता है कि इनको चौधरी साहब और शास्त्री जी का अनुभव कहाँ से मिलेगा।

यही नहीं, उत्तर प्रदेश के केशव देव मालवीय, अजित प्रसाद जैन रहे हों, या आत्माराम गोविन्द खेर रहे हों, मैं तो बहुत छोटा आदमी हूँ, यानी मेरी पीढ़ी में मेरे भी जैसे लोग रहे हों, पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी से ही हम लोगों ने जीवन शुरू किया और धीरे–धीरे आगे बढ़ते गए।

चौधरी साहब बढ़ते गए, बढ़ते गए। वह उत्तर प्रदेश सरकार में मंत्री, प्रदेश के मुख्यमंत्री, केंद्र में गृहमंत्री, वित्तमंत्री और बाद में प्रधानमंत्री बने। चौधरी चरण सिंह के जीवन की एक लंबी कहानी है संयम और संघर्ष की, एक लंबी कहानी है देश की असल शक्ल समझने की। असली भारत समझने की। असली भारत वह है जो गाँव में रहता है। क्योंकि देश के 84 फीसदी लोग गाँव में रहते हैं। इसीलिए मैं अक्सर कहता हूँ कि देश का कैसा दुर्भाग्य है कि ८४ फीसदी लोगों के रहन सहन, खान–पान, पहनावे दुख–दर्द का एक फीसदी भी हमारे शासक, प्रशासक और समूचे राजतंत्र पर कोई असर नहीं है। चौधरी चरण सिंह ने वह जहाँ कहीं भी रहे, उस प्रभाव को बनाए रखा।

प्रशासक की कुर्सी पर बैठकर, विधानसभा के वातावरण और उपनिवेशवादी तंत्र का साथ होने के बावजूद, वह अपने बुनियादी विश्वासों को भी, चाहे वह उनके व्यक्तिगत जीवन से संबंधित रहे हों या आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रश्नों से संबंधित रहे हों, इतना सुघड़ बना चुके थे कि उन पर कालिमा नहीं चढ़ पाई।

चौधरी साहब ने सदैव दस्तकारों को प्रोत्साहन दिए जाने पर बल दिया। इस संदर्भ में उन्होंने मुझसे, कई बार कहा कि "अंग्रेजी राज में दस्तकार काश्तकार बना।" आजादी के बाद देश के नेताओं द्वारा भारी उद्योगों को प्रथम स्थान देने की नीति के विरोध में चौधरी साहब गाँधी

जी के रास्ते के ज्यादा निकट थे। उनका कहना था कि खेती पर लगे लोगों की संख्या घटाओ—दस्तकार बढ़ाओ।

चौधरी साहब के संबंध में औद्योगिक नीति और आधुनिकता को लेकर एक वर्ग विशेष द्वारा सुनियोजित षडयंत्र के तहत अक्सर दुष्प्रचार किया जाता रहा है। उन पर यह आरोप भी लगाया जाता है कि वह उद्योगों के खिलाफ रहे। जबकि असलियत यह है कि वह बुनियादी उद्योग, भारी उद्योग, मंझोले उद्योग और ग्राम उद्योग, किसी के खिलाफ नहीं थे। उन्होंने कभी यह नहीं कहा कि लोहा छोटे उद्योग द्वारा बनाया जाए, जबकि चीन में माओत्सेतुंग ने कहा भी था। उनका मानना था कि देश का विकास तभी संभव है जब देश का अपने संसाधनों द्वारा नीचे से निर्माण किया जाए। इस विषय में महात्मा गाँधी और बिनोवा जी का यही मत था।

सच तो यह है कि कल्पना जगत में नहीं वरन् वास्तविक जगत का एक नेता भारत के स्वराज की बेड़ियों को काटने के लिए जीवन की आखिरी सांस तक निरंतर परिश्रम, संघर्ष करता रहा लेकिन इस सबके बाबजूद चौधरी साहब पर अक्सर प्रतिक्रिया वादी होने और किसानों का पक्षधर होने का आरोप लगाया गया। इस संदर्भ में मेरा कहना है कि यूरोपीय इकोनॉमिक कम्युनिटी में चौधरी चरण सिंह नेता तो नहीं रहे, जापान में उनकी नहीं चलती। फिर, जापान सरकार वहाँ धान पैदा करने वाले को अंतर्राष्ट्रीय मूल्यों से तीन गुणा पैसा क्यों दिलाती है? धान से निकले चावल को सुअर के खाने के लिए जिसका मांस जापानी लोग खाते हैं, आधे दाम पर क्यों बिकवाती है? युरोपियन इकनॉमिक कम्युनिटी का तो यह हाल है कि १९८० में उनका कृषि और पशुधन विकास के ऊपर सबसे नीचे ६ बिलियन डालर खर्च होता था और अब १९८६ में यह बढ़ कर २०.६ बिलियन डालर हो गया है। आज इन देशों की स्थिति वैसी नहीं है जैसी कि द्वितीय महायुद्ध में थी, आज वह कृषि तथा पशुधन के मामले में संपन्न और समर्थ हैं और वह हर बड़ी से बड़ी समस्या का सामना करने में सक्षम हैं। यह उस हालत में है जबकि बर्तानिया में, फ्रांस में, जर्मनी में, रूस और अमेरिका में कृषि पर लगे लोगों की संख्या नगण्य है।

चौधरी साहब पर महिला, हरिजन और मुस्लिम विरोधी होने का भी आरोप लगाया जाता है। यह आरोप उसी शोषक वर्ग द्वारा लगाए जाते रहे हैं, जो समझता है कि यदि चौधरी चरण सिंह की नीतियाँ इस देश में लागू हो गईं तो सभी मोर्चों पर उनका वर्चस्व खत्म हो जाएगा। चौधरी साहब ने समय—समय पर इन आरोपों को गलत साबित किया। उन्होंने हरियाणा में श्रीमती चन्द्रावती को पुरुषों के होते हुए विधानसभा में विरोधी दल की नेता बनाया, उत्तर प्रदेश और बिहार में हरिजनों को विधानसभा

में उपसभापति बनाया। उनके इस निर्णय से पार्टी के लोग काफी नाराज हुए पर उन्होंने इसकी कोई परवाह नहीं की। सन् १९८० में लोकसभा और विधानसभा चुनावों में मुसलमानों को दिए टिकटों की संख्या उनके मुस्लिम विरोधी होने के आरोप को झूठा साबित करती है।

राष्ट्र की एकता, अखंडता, भाषा, धर्म, जाति, सांप्रदायिकता और नीतिगत प्रश्नों पर चौधरी साहब की स्पष्ट मान्यताएं थीं। ऐसी बात नहीं कि इन पर वह बोले नहीं। समय–समय पर उन्होंने इन मुद्दों पर स्पष्ट राय भी व्यक्त की, भले ही उन्हें उसका खामियाजा क्यों न उठाना पड़ा हो। मेरा कहना है कि उनके अनुयायियों ने उन्हें समझने में भूल की है और उनकी नीतियों, विचारों के प्रचार व प्रसार में जो कमी की है, उससे राष्ट्र को बड़ी हानि उठानी पड़ी है।

चौधरी साहब का व्यक्तित्व ऐसा रहा कि उनके मानने वाले लोगों के मन में उनके लिए सदैव सम्मान रहा। इसमें कोई दो राय नहीं कि उन्हें जनता का भरपूर प्यार मिला और वह हमारे सदैव प्रेरणा स्रोत और पथ प्रदर्शक रहेंगे।

११
चौधरी चरण सिंहः एक अद्वितीय व्यक्तित्व

चंद्रजीत यादव*

चौधरी साहब से मेरी पहली मुलाकात सन् १९५७ में हुई, जब मैं पहली बार उत्तर प्रदेश विधानसभा में आजमगढ़ से चुनकर आया था। उस समय चौधरी साहब उत्तर प्रदेश के राजस्व मंत्री थे। मैं विरोधी दल का सदस्य था। विधानसभा में मेरे एक भाषण के बाद चौधरी साहब से मेरी मुलाकात विधानसभा की लॉबी में हो गई। उन्होंने मेरी ओर बड़े प्यार और गंभीरता से देखकर कहा, "तुम बहुत अच्छा बोलते हो। चलो मेरे साथ" और मेरी उंगली पकड़ कर वह विधानसभा में अपने कमरे में ले गए। उन्होंने मुझसे कहा, "तुम्हें कांग्रेस में होना चाहिए था, तुम गलत जगह हो।" उनकी इस बात में उनकी स्पष्टवादिता और अपनत्व दोनों झलक रही थी।

१९६७ तक मैं उत्तर प्रदेश विधानसभा का सदस्य था। इस दौरान अक्सर चौधरी साहब से मेरी मुलाकात और बात होती रहती थी। उन्होंने मुझे एक पुस्तक दी जिसमें उन्होंने भारत की कृषि व्यवस्था और किसानों की स्थिति का बड़ा वास्तविक और सजीव चित्रण किया था। उस समय चौधरी साहब एक विख्यात किसान नेता के रूप में अपनी धाक जमा रहे थे। विशेष रूप से सहकारी खेती के खिलाफ वह अकाट्य तथ्य के साथ अपनी बात कह रहे थे। इस प्रश्न पर वह जवाहर लाल जी से भी टकरा रहे थे। यह वह समय था जब जवाहर लाल जी के खिलाफ किसी भी कांग्रेसजन को क्या, राष्ट्रीय स्तर के कांग्रेस नेता का भी मुँह खोलना बहुत कठिन काम था। लेकिन चूंकि चौधरी साहब अपने विश्वास में दृढ़ थे और उनका विश्वास था कि सहकारी खेती किसानों को गुलाम बना देगी, कृषि पैदावार में वृद्धि नहीं होगी, नौकरशाही के हाथों में जाकर तबाह हो जाएगी, इसलिए वह उसका विरोध कर रहे थे। इसके लिए उन्होंने बड़ा चिंतन और अध्ययन किया था। किसानों की वास्तविक ज़िंदगी और गाँव की स्थिति को उनसे बेहतर कम लोग जानते थे।

---

* चंद्रजीत यादव (१९३०–२००७), राजनीतिज्ञ, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, जनता पार्टी और जनता दल। आजमगढ़, उत्तर प्रदेश से लोक सभा सदस्य (१९६७–७७)। १९८०–८४ और १९९१–९६ में पुनः निर्वाचित हुए।

एक बार एक रूसी विद्वान लखनऊ आए। वह भारत की कृषि व्यवस्था और भूमि सुधार पर अध्ययन कर रहे थे। उनकी बड़ी इच्छा थी कि चौधरी साहब से भेंट हो जाए। समय लेकर मैं उन्हें अपने साथ चौधरी साहब के पास ले गया। लगभग एक घंटे की वार्ता के दौरान चौधरी साहब रूस की सहकारी खेती और राजकीय फार्मों की दुर्गति पर उन सज्जन से बात करते रहे। भारत की कृषि व्यवस्था, किसानों की दयनीय स्थिति और कृषि सुधार तथा भूमि सुधार के बारे में अपने विचारों से भी उन्होंने उन्हें अवगत कराया। जब हम दोनों चौधरी साहब से मिलकर वापस आ रहे थे तो रूसी विद्वान ने मुझसे कहा कि चौधरी साहब की योग्यता और जानकारी का मैं लोहा मान गया हूँ। मुझे भारत में यह पहले राजनीतिज्ञ मिले हैं जिन्हें भारत की कृषि व्यवस्था और किसानों की समस्याओं का पूर्ण ज्ञान है। मैं उनसे पूरी तरह चाहे नहीं भी सहमत हूँ लेकिन उनकी विद्धता का लोहा अवश्य मानता हूँ।

चौधरी साहब से यदाकदा मेरी मुलाकात पिछड़े वर्गों के सम्मेलनों में भी होती रही। एक बार जब वह उत्तर प्रदेश में श्री जयराम वर्मा और श्री रामवचन यादव आदि को साथ लेकर पिछड़ा वर्ग सम्मेलन करने पर पूरे राज्य में निकले थे, तो उत्तर प्रदेश के कांग्रेस के नेतृत्व ने इन सम्मेलनों का जोरदार विरोध किया। उनका कहना था कि वह जातिवादी सम्मेलन था। इनसे जातिवाद बढ़ेगा और किसी कांग्रेस नेता को इसमें सम्मिलित नहीं होना चाहिए। इस प्रकार के परिपत्र सभी कांग्रेस कमेटियों को भेज दिए गए थे। यही नहीं सार्वजनिक रूप से भी इसकी घोषणा कर दी गई थी। मगर चौधरी साहब इसके सामने झुके नहीं और उन्होंने सम्मेलनों को रोका नहीं। अंततोगत्त्वा कांग्रेस नेतृत्व को ही झुकना पड़ा। कई सम्मेलनों में मैं उनके साथ सम्मिलित भी हुआ और उनमें बोला भी, यद्यपि हम लोगों की पार्टियाँ अलग–अलग थीं। परंतु मंच एक था, विचार और दृष्टिकोण समान था।

कई बार जब मैं चौधरी साहब से अकेले में मिलता था, वह अंतर्जातीय विवाह के ऊपर खूब खुलकर चर्चा करते थे और उसके महत्व पर जोर देते थे। वह अपने बेटे और बेटियों का भी अंतर्जातीय विवाह करने के पक्ष में थे। उनका यह भी ख़्याल था कि सरकार को योजना बनाकर अंतर्जातीय विवाह कानून को प्रस्तुत करना चाहिए। देश में जातिवाद समाप्त करने का वह उसे एक महत्वपूर्ण आधार मानते थे। किंतु विडंबना यह है कि ऐसे व्यक्ति जिसके मन में जातिवाद समाप्त करने की इतनी गहरी आकांक्षा थी, उसे निहित स्वार्थी तत्व और उनके समाचार–पत्र उन्हें जातिवादी कहने में भी थके नहीं।

चौधरी साहब जब केंद्र में आए, गृहमंत्री और बाद में प्रधानमंत्री बने, उस बीच कई बार मैं उनसे मिला और जब भी मैं उनसे मिलता था. उनके घर में, उन्हें अपने कमरे में जमीन पर गद्दे और तकिए के सहारे बैठकर काम करते देखा। वह बात करते हुए भी काम करते रहते थे। अपने पक्ष को देश के सामने रखने और अपने तर्क को शक्तिशाली बनाने के लिए वह आवश्यक आँकड़ों का भी सहारा लेते थे और उसे जुटाते रहते थे। उनके काम करने की पद्धति को एक तरह से हम ग्रामीण पद्धति कह सकते हैं। अपने घर पर काम करते समय कुर्सी, मेज, टाइपराइटर, कम्प्यूटर आदि उनके हथियार नहीं थे, उनकी लेखनी, कागज और आवश्यक पुस्तकें थीं। बात करते—करते वह कई बार भावुक हो उठते थे और उन्हें गुस्सा भी आ जाता था। यह दोनों स्थिति केवल इस बात की द्योतक थीं कि उनके दिल में कितना बड़ा दर्द था, देश के गरीबों और किसानों के लिए।

चौधरी साहब आर्य समाज से प्रभावित थे, इसलिए कई बार उनकी बातें ऐसी होती थीं जिससे लोग उन्हें सांप्रदायिक समझ बैठते थे। वह साफ—साफ बात करते थे। उन्होंने कभी भी इस बात को नहीं छिपाया कि उनके मन में सरदार वल्लभ भाई पटेल के लिए जवाहर लाल नेहरू से ज्यादा आदर था। उनका कहना था कि यदि सरदार वल्लभ भाई पटेल देश के पहले प्रधानमंत्री बनते, तो देश की यह दुर्गति नहीं होती। वह जवाहर लाल जी का अनादर नहीं करते थे। किंतु उनकी कई महत्वपूर्ण नीतियों से असहमत थे।

जब वह प्रधानमंत्री थे, उनसे मैं साउथ ब्लॉक में मिलने गया था। उन्होंने मेरे ऊपर व्यंग्य करते हुए कहा कि "आज मैंने तुम्हारे नेता के ऊपर एक बड़ी सख्त टिप्पणी लिखी है। पहले तो मैं समझ नहीं पाया कि मेरे नेता से उनका क्या तात्पर्य है।" उन्होंने अपने एक सहायक से एक कागज मंगवाया। एक पृष्ठ पर उस टिप्पणी को उन्होंने आलेखबद्ध कराया था जिसमें उन्होंने जवाहर लाल जी के बारे में कुछ सख्त बातें लिखी थीं, जिसे वह प्रधानमंत्री की एक महत्वपूर्ण फाइल का हिस्सा बनाना चाहते थे। मैंने उनसे बड़ी नम्रता से कहा कि हमारे देश की यह परंपरा है कि जो व्यक्ति स्वर्गवासी हो चुका होता है, उसके बारे में कोई निन्दा की बात अथवा अप्रिय बात नहीं कही जाती। मेरी बात सुनकर कुछ क्षणों के लिए वह खामोश हो गए और उसके तत्काल बाद उन्होंने कहा कि तुम ठीक कहते हो और मेरे सामने उसे फाड़कर रद्दी की टोकरी में डाल दिया। मैंने इस बात में उनका बड़प्पन भी देखा और उनकी गरिमा भी।

चौधरी साहब से कई प्रश्नों पर मेरा मतभेद हुआ। लेकिन वह मतभेद सैद्धांतिक था, व्यक्तिगत नहीं। उनका प्रेम मेरे प्रति सदैव बना रहा और

मेरे मन में उनके लिए असीम आदर। मेरी मान्यता है कि इस युग में चौधरी साहब से बड़ा और कोई किसान नेता हमारे देश में नहीं हुआ। मैं यह भी मानता हूँ कि वह केवल किसान नेता ही नहीं थे, इस देश के सभी गरीबों के नेता थे। उनके जीवन का लक्ष्य था गाँव की और देश की गरीबी मिटाना, देश को संपन्न बनाना, मूल्यों पर आधारित एक आदर्श समाज बनाना ताकि भारत विश्व का एक शानदार देश बन सके। ज्यों–ज्यों समय बीतता जाएगा, चौधरी साहब का व्यक्तित्व लोगों के दिलो–दिमाग में निखरता जाएगा।

१२

अक्षुण्ण जिजीविषा के धनी

भगवती चरण वर्मा*

जीवन के संघर्षों से जूझता हुआ कलकत्ता–बंबई आदि नगरों की धूल फांकता हुआ मैं कुछ साल पहले बंबई से लखनऊ 'नवजीवन' के प्रधान संपादक के रूप में आया था। 'नवजीवन' उन दिनों उत्तर प्रदेश का महत्वपूर्ण हिन्दी दैनिक था। पंडित जवाहरलाल नेहरू के सबसे अधिक विश्वस्त सहयोगी श्री रफी अहमद किदवई के हाथ में 'नवजीवन' की नीति थी और प्रकाशन एसोसिएटेड जर्नल्स के मैनेजिंग डायरेक्टर थे– श्री फिरोज गाँधी। राजनीति में अपने स्वार्थों को ध्यान में रखकर न जाने कितने समझौते करने पड़ते हैं, लेकिन एक सृजनात्मक साहित्यकार की हैसियत से समझौता करना मेरी प्रवृत्ति और प्रकृति में था। नौ–दस महीने तक दूसरों की नीतियों को ढोते–ढोते में तंग आ गया था। दिसम्बर १९४९ में मैंने 'नवजीवन' से त्यागपत्र दे दिया। उसके दो–एक महीने बाद ही मेरठ का वह हिन्दी साहित्य सम्मेलन हुआ था जिसमें मुझे चौधरी चरण सिंह के प्रथम दर्शन हुए थे। मेरठ हिन्दी साहित्य सम्मेलन से संबद्ध कवि–सम्मेलन जो देश की भावी गतिविधियों का प्रतीक था, का मैं सभापति था। पण्डाल खचाखच भरा था। हुल्लड़बाजी का जोर था। गाली–गलौज की बौछार थी। लेकिन नितांत निस्पृह–सा मैं उस सम्मेलन से निपट रहा था। मेरे अंदर भय अवश्य था कि कहीं मैं उखड़ न जाऊँ या वह कवि सम्मेलन न उखड़ जाए और एकाएक मैं चौंक उठा।

लगभग सात–आठ कार्यकर्ताओं के साथ एक व्यक्ति ने पण्डाल में प्रवेश किया, अचानक हुल्लड़बाजी बंद हो गई और वह व्यक्ति अपने साथियों के साथ श्रोताओं की अगली पंक्ति में बैठ गया या बैठा दिया गया। वहीं मुझे बतलाया गया कि वह व्यक्ति उत्तर प्रदेश सरकार के पार्लियामेंट्री सेक्रेटरी चौधरी चरण सिंह हैं।

---

* भगवती चरण वर्मा (१९०३–८१), उत्तर प्रदेश के प्रतिष्ठित हिंदी लेखक और उपन्यासकार। उल्लेखनीय साहित्यिक कृतियाँ – चित्रलेखा (१९३४) और अग्निपंख (१९४३)। साहित्य अकादमी पुरस्कार (१९५७) और पद्म भूषण (१९६१) से सम्मानित। अध्यक्ष, अखिल भारतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन (१९६५)। १९६८ में उपन्यास 'परिणीता' के लिए सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार से संन्नित किए गए।

दुबला–पतला आदमी, वैसे ऊपर से व्यक्तित्व–विहीन दिखने वाला, खादी का कुर्ता–धोती, सिर पर गाँधी–कैप–लेकिन आवाज में एक तरह का तीखापन, व्यवहार में अधिकार की भावना।

नवजीवन से इस्तीफा तो दे दिया था लेकिन भविष्य की गतिविधियों के संबंध में एक तरह की लापरवाही से भरा अनिश्चय था। वैसे मेरे त्याग–पत्र के बाद उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री पं. गोविन्द बल्लभ पंत ने मुझे बुलाकर आश्वासन दिया था कि मुझे लखनऊ से बाहर वापस न जाने देंगे। अपने निजी सचिव द्वारा प्रदेश के डायरेक्टर ऑफ इन्फॉर्मेशन के पद का भी प्रस्ताव उन्होंने रखवाया था। उस प्रस्ताव को मैंने अस्वीकार कर दिया था। सरकारी नौकरियों की मैं कल्पना ही नहीं कर सकता था। मेरठ से मेरे लखनऊ लौटने के बाद पं. गोविन्द बल्लभ पंत ने मुझे फिर याद किया। उत्तर प्रदेश सरकार ने देश की स्वतंत्रता के बाद सर्वप्रथम देश के आर्थिक ढाँचे में आमूल परिवर्तन करने वाला जमींदारी उन्मूलन बिल हाथ में लिया था। पंत जी ने उसमें मेरा सहयोग चाहा, उस बिल के प्रचार तथा जानकारी देने का भार मेरे कंधों पर डालकर। सहयोग देने वाला पंत जी का प्रस्ताव मैंने स्वीकार कर लिया–उस बिल के प्रचार विभाग का गैर–सरकारी अध्यक्ष, कार्यकर्ता एवं सब कुछ बनकर छह महीने की अवधि के लिए। और उन्हीं दिनों मैं चौधरी साहब के निकट संपर्क में आया।

चौधरी चरण सिंह पार्लियामेंट्री सेक्रेटरी थे और पार्लियामेंट्री सेक्रेटरी के पद को मैं उपेक्षित समझता था। मैं राजनीतिक एवं प्रशासनिक मामलों में कोरा रहा हूँ। मैंने जीवन में साहित्य के सृजनात्मक पक्ष को ही महत्ता दी है, बाकी जो कुछ मेरे सामने आया, वह बड़े औपचारिक ढंग से जीवन के अध्ययन के क्रम में मैंने ग्रहण तो किया है, लेकिन मैं उसमें डूब नहीं सका। चौधरी चरण सिंह की देखभाल में यह प्रचार–व्यवस्था थी। यह प्रचार भार संभालने के दो दिन बाद मुझे चौधरी चरण सिंह से बातें करने का मौका मिला, यानी उनसे व्यक्तिगत संपर्क स्थापित हुआ। उसके बाद जो कुछ हुआ, वह तो बड़े स्वाभाविक रूप से हुआ, यानी हम दोनों के दृष्टिकोण अलग–अलग, कार्य करने के ढंग अलग–अलग। चौधरी चरण सिंह वैसे तो साधारण पार्लियामेंट्री सेक्रेटरी थे, लेकिन मुझे यह पता नहीं था कि जमींदारी उन्मूलन की क्रांतिकारी और मौलिक योजना उनके विभाग की उपज थी या उसमें उनका प्रमुख योगदान था।

स्वाभाविक रूप से उस व्यक्ति के पास एक सबल और न झुकने वाला अहं होना ही चाहिए था। मैं 'चित्रलेखा' एवं 'टेढ़े–मेढ़े रास्ते' उपन्यासों का लेखक, मन ही मन अपने को अमर साहित्यकारों की पंक्ति में समझने वाला व्यक्ति–किसी के आगे झुकना मेरी प्रकृति में ही नहीं था। छह महीने

के स्थान पर तीन महीने बाद ही मैंने पंत जी को अपना त्यागपत्र दे दिया। उनके बहुत आग्रह पर मैंने अपना त्याग–पत्र तो वापस ले लिया लेकिन दफ्तर में औपचारिक रूप से घण्टे आधे–घन्टे के लिए ही जाता था। मेरा काम चौधरी चरण सिंह के जिम्मे पड़ गया।

हम दोनों का वह प्रथम संपर्क गलतफहमियों से युक्त था। चौधरी साहब को साहित्य और कला में कोई विशेष रुचि नहीं थी। इसलिए यदि वह मुझे उतना बड़ा आदमी नहीं समझ सके, जितना बड़ा आदमी मैं अपने को समझा जाना चाहता था, तो उसमें चौधरी साहब का कोई दोष नहीं था; और मुझे राजनीतिक एवं प्रशासनिक मामलों में दिलचस्पी नहीं थी, इसलिए मैं उन्हें उतना महत्वपूर्ण राजनीतिज्ञ या प्रशासक नहीं समझ सका, तो इसमें मेरा भी दोष नहीं था। बहरहाल, इतना तय था कि इस तरह अलग होने के बाद मेरे अंदर चौधरी चरण सिंह के प्रति ना सौहार्द का भाव था, ना आदर का। चौधरी साहब के मन की बात तो मैं नहीं कह सकता, लेकिन इस संबंध में वह शायद मुझसे अधिक उदार थे, इसका पता मुझे कुछ महीनों बाद ही लग गया।

जमींदारी उन्मूलन बिल के पास होने के बाद ही चौधरी चरण सिंह पार्लियामेंट्री सेक्रेटरी के पद से उठकर मंत्रिमंडल में ले लिए गए और वित्तमंत्री बन गए। जमींदारियाँ तेजी के साथ गायब होने लगीं। ताल्लुकेदारी और जमींदारी परंपरा का महत्वपूर्ण सरकारी विभाग, कोर्ट ऑफ वाईस, खत्म कर दिया गया। कोर्ट ऑफ वाईस के मैंनेजरों की नौकरियां खत्म हो गईं। मेरे चचाजात छोटे भाई, दिवंगत श्री परमात्माशरण वर्मा भी कोर्ट ऑफ वार्ड्स के मैंनेजर थे–बड़े शानदार आदमी, सरकारी दबदबे में ताल्लुकेदारों का कान काटने वाले। वह एक दिन घबराये हुए मेरे यहाँ आए। चेहरे पर हवाइयां उड़ रहीं थीं। उन्होंने मुझे बताया कि कोर्ट ऑफ वार्ड्स के मैनेजरों को पी. सी. एम. का पद देकर कलेक्शन ऑफिसर बनाने की योजना चौधरी चरण सिंह ने बनाई है, लेकिन उन्होंने जिन मैनेजरों को इंटरव्यू में बैठने की अनुमति दी है, उनमें उनका नाम नहीं है। बदनाम और बेईमान समझे जाने वाले लोगों को अनुमति नहीं मिली है। मेरे भाई के खिलाफ यह गंभीर आरोप था।

मुझे आशा तो नहीं थी कि इसमें मैं अपने छोटे भाई की कुछ सहायता कर पाऊँगा, लेकिन मैंने तत्काल चौधरी साहब को फोन मिलाकर उनसे मिलने का समय माँगा। उन्होंने मुझे शाम का समय दिया। मैं शाम के समय चौधरी साहब के बंगले पर पहुँचा। बड़ी आत्मीयता के साथ वह मुझे मिले। फिर उन्होंने मुझसे पूछा– "कैसे कष्ट किया वर्मा जी? मैंने केवल इतना कहा– "मैं अपने छोटे भाई परमात्माशरण वर्मा" और इसके पहले

कि मैं अपनी बात पूरी करूँ, वह बोल उठे – "वह कोर्ट ऑफ वाईस का मैनेजर। निहायत बेईमान और भ्रष्ट आदमी है। मैंने उसे भले अफसरों की सूची में नहीं रखा है।" जैसे हरेक आदमी का नाम, उसकी योग्यता और अयोग्यता उन्हें हिफ्ज हो।

मैं भड़क उठा– "तो फिर आप उस पर बेईमानी और भ्रष्टाचार का मुकदमा चलाकर उसे जेल भेज दीजिए–मुझे प्रसन्नता होगी। लेकिन बिना सबूत के किसी आदमी की आजीविका छीनने का दण्ड देना तो मेरी समझ में आता नहीं। वैसे आप मिनिस्टर हैं।" चौधरी साहब कुछ सकपकाये, फिर कुछ बल लगाकर कहा– "सबूत तो किसी के खिलाफ कुछ नहीं है, लेकिन फलाँ डिप्टी मिनिस्टर ने मुझसे शिकायत की है।" मैंने तमक कर कहा–"फलाँ मिनिस्टर और उनके अगुवा फलाँ मिनिस्टर, दोनों ही निहायत बेईमान आदमी हैं। उनकी बात आप सही समझते हैं, और मैं आपसे कहूँ कि मेरा छोटा भाई बेईमान हो ही नहीं सकता, तो आप मेरी बात पर विश्वास नहीं करोगे।" चौधरी साहब कुछ सकपकाये, फिर उठते हुए उन्होंने कहा– "अच्छी बात है, आप जाइये, मैं इस पर विचार करूँगा।" मैं चला आया। तीसरे दिन मेरे भाई ने खबर दी कि उसे इंटरव्यू में सम्मिलित होने का सरकारी आर्डर मिल गया। यह खबर पाकर एकाएक चौधरी चरण सिंह मेरी नजर में बहुत ऊपर उठ गए।

हरेक आदमी का सत्ता के प्रति मोह रहता है–इस मोह के भटकाव से मैं भी नहीं बचा था। सन् १९५० में जब दिल्ली कॉन्सटिटुएंट असेंबली का काम समाप्त हो गया, तब फिर से पार्लियामेंट का काम आरंभ हुआ। प्रादेशिक विधानसभाओं से सदस्य कॉन्सटिटुएंट असेंबली में भेजे गए थे, वे वापस आ गए और उनके स्थान पर अन्य नामों के चुनाव का प्रश्न सामने आया। मैंने अपना नाम भी प्रत्याशी के तौर पर भेज दिया था। उत्तर प्रदेश की राजनीति में 'नवजीवन' के प्रधान संपादक की हैसियत से मेरा नाम आ चुका था। उत्तर प्रदेश से शायद सैंतीस या अड़तीस आदमी भेजे जाने वाले थे दो–ढाई सौ आदमी प्रत्याशी थे। उनके चुनाव का प्रश्न पार्लियामेंट्री बोर्ड के सामने आया। पार्लियामेंट्री कमेटी ने प्रत्याशियों की छँटनी आरंभ की, पैंतालीस नामों की तालिका तक पहुँचते–पहुँचते तो मेरा नाम था। फिर इसके बाद उन पैंतालीस नामों में चुनाव का क्रम आया। पार्लियामेंट्री बोर्ड के प्रत्येक सदस्य ने अपने–अपने अनुयायी चुन लिये। मैं किसी का अनुयायी था ही नहीं, मेरा नाम गायब हो गया। उसके बाद एक अजीब कटुता और विद्रोह का दौर आया मेरे ऊपर, जिसकी अलग कहानी है।

सत्ता का मोह मुझसे छूटा नहीं। सन् १९५२ के आम चुनाव के लिए,

प्रत्याशी के रूप में, मैंने फिर कांग्रेस पार्लियामेंट्री बोर्ड के सामने अपना आवेदन पत्र भेज दिया – हमीरपुर सीट के लिए। वहाँ मैंने कुछ समय तक वकालत की थी, वहीं मैंने 'चित्रलेखा' लिखना आरंभ किया था। बोर्ड के किसी सदस्य से मैं मिला नहीं, किसी से कुछ कहा नहीं। कौन–कौन बोर्ड का सदस्य है, इसकी जानकारी हासिल करने की भी मैंने जरूरत नहीं समझी। और एक दिन मुझे चौधरी चरण सिंह का फोन मिला। मैं उनके यहाँ गया। उन्होंने मुझे बताया कि सब स्थानों के नाम चुन लिए गए हैं – एक चुनाव क्षेत्र बचा है, मथुरा–आगरा तथा किसी एक और जिले के भागों का सम्मिलित चुनाव क्षेत्र। अगर मैं चाहूँ तो उस क्षेत्र का टिकट ले लूँ। वैसे अगर उस समय वह टिकट मैंने ले लिया होता, तो चुन लिया गया होता, लेकिन राजनीति से अलग का आदमी होने के कारण मैंने वह टिकट लेना अस्वीकार कर दिया– चौधरी साहब को बहुत–बहुत धन्यवाद देते हुए। उनसे बात करने पर मुझे यह आभास हुआ कि उन्होंने व्यक्तिगत रूप से हमीरपुर क्षेत्र से मेरे नाम का पूरा समर्थन किया था लेकिन जनतांत्रिक परंपराओं से विवश वह मेरा नाम स्वीकृत नहीं करा पाये थे।

आज जब सोचता हूँ तो लगता है कि शायद अंदर ही अंदर चौधरी चरण सिंह में एक तरह की सद्‌भावना आ गई थी मेरे प्रति या फिर उनमें न्याय के प्रति एक प्रबल भावना थी। चौधरी चरण सिंह के प्रति मुझमें एक तरह का आदर भाव जाग पड़ा – इस घटना के बाद। लेकिन फिर भी मैं चौधरी साहब से दूर ही रहा। कारण शायद यह था कि मेरे अंदर अहं का एक पागलपन हमेशा से रहा है और नियति के हिलकोरों में डूबता उतराता बड़े विवश ढंग से बह रहा था। १९५३ में मुझे आकाशवाण ी दिल्ली जाना पड़ा। वहाँ दो–चार बार इस्तीफे दिए और वापस लिये। सन् १९५६ में फिर लखनऊ लौटा और सन् १९५७ में आकाशवाणी से त्याग–पत्र देकर मैं सृजनात्मक साहित्य में लग गया।

मैं चौधरी चरण सिंह से घनिष्ठता का संबंध कभी स्थापित नहीं कर सका। हम दोनों के क्षेत्र एक–दूसरे से नितांत अलग, कहीं भी दोनों के स्वार्थों में सामंजस्य नहीं, न टकराहट का प्रश्न। एक–आध बार को छोड़कर मैं कभी उनके घर नहीं गया– मैंने कभी न उनसे कुछ माँगा, न चाहा। लेकिन वैसे मैंने हमेशा उन्हें अपना निकटस्थ समझा। इसका यह कारण था, मैंने यह अनुभव किया कि मेरी ही भाँति उनमें भी अहं का एक पागलपन है, और सच बात यह है कि अहं का यह पागलपन मुझे बड़ा प्यारा लगता है।

मुझे याद है भारत के उस समय के प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल

नेहरू से चौधरी चरण सिंह के मतभेद की बात। श्री जवाहरलाल नेहरू पर समाजवाद का गहरा रंग था और वह देश में को–ऑपरेटिव फार्मिंग पर जोर दे रहे थे। चौधरी चरण सिंह स्वयं किसान वंश के आदमी थे। उन्हें इस सामूहिक खेती पर सिद्धांततः विश्वास न था। मतभेद अधिक उभरा–पत्रों में इस मतभेद की बातें बढ़ा–चढ़ाकर छपीं। ऐसा लगता था कि चौधरी चरण सिंह कांग्रेस से अलग हो जाएंगे– कांग्रेस पर पंडित जवाहरलाल नेहरू का एकछत्र प्रभुत्व था। लेकिन ऐसा कुछ न हुआ। भारतीय वातावरण में यह सामूहिक खेती की परिकल्पना ही असंभव थी। मुझे आश्चर्य तो इस बात पर था कि चौधरी चरण सिंह को कांग्रेस के अंदर रहकर जवाहरलाल का खुल्लम–खुल्ला विरोध करने का साहस कैसे पड़ा, अन्य कांग्रेसी नेता तो गुलामी के बंधनों में जकड़े हुए थे। लेकिन चौधरी चरण सिंह का यह विरोध उनके लिए कांग्रेस में उन्नति करने के मार्ग में कुछ समय के लिए अवरोध ही रहा।

अपने ऊपर असीम विश्वास से युक्त, स्वभाव से शांत और संयत लेकिन न झुकने, न दबने वाली प्रवृत्ति से ग्रस्त, पंडित गोविन्द बल्लभ पंत के उत्तर प्रदेश से केंद्र में गृहमंत्री बन जाने के बाद चौधरी साहब ने राजनीतिक संघर्षों के क्षेत्र में प्रवेश किया। पंत जी के बाद डॉ. सम्पूर्णानंद प्रदेश के मुख्यमंत्री बने। डॉ. सम्पूर्णानंद एक सबल अहं से युक्त थे। स्वभावतः चौधरी चरण सिंह से उनकी नहीं बनी। सम्पूर्णानंद के मुख्यमंत्रित्व काल में उनसे मतभेदों के कारण चौधरी चरण सिंह ने प्रदेश के मंत्रिमंडल से त्याग पत्र दे दिया। उस त्यागपत्र की बात मैं केवल चौधरी साहब के दिलचस्प पहलू को प्रस्तुत करने के लिए लिख रहा हूँ।

मेरे एक मित्र हैं, पंडित बलभद्र प्रसाद मिश्र, जो किसी समय इलाहाबाद के दैनिक 'भारत' के प्रधान संपादक थे। लेकिन बाद में सूचना विभाग में डायरेक्टर के पद पर आ गए थे। पंडित बलभद्र प्रसाद का एक पहलू था – गो–पालन एवं गो–सेवा। एक दिन कुछ प्रफुल्लित, कुछ उत्तेजित से वह मुझसे मिले और उन्होंने मुझे सूचना दी कि उन्हें एक अच्छी दुधारू गाय मुफ्त में मिल गई है। उन्होंने बताया कि चौधरी चरण सिंह ने मंत्रिपद से त्यागपत्र देने के बाद उन्हें बुलाया। मिश्र जी से उन्होंने कहा, "मिश्र जी, मैंने मंत्रिपद से त्याग–पत्र दे दिया है। बंगला गया, नौकर–चाकर गए, मेरी गाय की देखभाल कौन करेगा। हमारे यहाँ गाय बेची नहीं जाती। इसलिए आप यह गाय ले जाइए, आप सुपात्र हैं।"

मैं पंडित बलभद्र प्रसाद मिश्र की बात सुनकर दंग रह गया। इतने लंबे काल तक उत्तर प्रदेश सरकार के विभिन्न विभागों में मंत्री रह कर भी वह अपने को गाय रखने में असमर्थ पा रहे थे। दूसरों से अपने लिए

लेना जैसे उनकी प्रकृति में न था। चौधरी चरण सिंह मेरी नजरों में बहुत ऊँचे उठ गए। इतना ईमानदार आदमी मैंने कभी न देखा था।

राजनीति में वह आर्थिक मामलों में बेईमानी कभी भी बर्दाशत नहीं कर सके। परिस्थितिवश समय–समय पर उन्हें इस तरह के आदमियों से समझौता करना पड़ा। उन्होंने अपनी पार्टियाँ बनाई अनेक घनिष्ठ सहयोगी उन्होंने बनाए लेकिन उनकी बेईमानियाँ जाहिर होते ही अपने सहयोगियों से वह हट गए। पार्टियों के लोगों ने उनका साथ छोड़ दिया।

गजब की प्राण–शक्ति मिली है उस आदमी को, जैसे अपने अहम् पर तथा अपनी योग्यता पर उसे असीम और अटूट विश्वास हो।

१३
पति की कहानी पत्नी की जुबानी
गायत्री देवी*

चौधरी साहब से हमारी शादी १९२५ में हुई। मैं उन दिनों जालंधर के कन्या महाविद्यालय में पढ़ती थी। शादी से पहले तो मैंने चौधरी साहब को देखा भी नहीं था, फिर उन दिनों ऐसा रिवाज भी नहीं था। परिवार के बड़े–बूढ़ों ने ही उन्हें देखा था। मुझे उनके बारे में थोड़ा बहुत बताया जरूर गया था कि वकालत पास कर चुके हैं और इन दिनों आगरा विश्वविद्यालय से इतिहास में एम.ए. कर रहे हैं। यह भी बताया गया था कि उनका घर गरीब है, लेकिन मैं राजी थी। एक खास वजह यह थी कि हमारा परिवार कुछ ज्यादा संपन्न न था, इसलिए हमारी बहनों को दुहाजु लड़के मिलते थे। गाँव वाले भी चिढ़ाया करते थे। मेरी जिद थी कि मैं कुँवारे लड़के से शादी करूँगी, दुहाजु से नहीं, सो चौधरी साहब के संबंध में यह शर्त भी पूरी हो जाती थी।

१९३० में हमने गाजियाबाद में रहना शुरू कर दिया। घर का माहैल बहुत ही राजनीतिक था। चौधरी साहब बार–बार आजादी की लड़ाई में जेल चले जाते थे। १९३०–१९३१ और १९३२, तीन सालों में तो जेल आना–जाना लगा ही रहता था। उसके बाद में जब गाँधीजी ने १९४२ में सत्याग्रह शुरू किया तब फिर लंबी जेल – यात्रा करनी पड़ी। जब चौधरी साहब जेल चले जाते थे तब मैं बच्चों की देखभाल तो किया ही करती थी साथ ही बीच–बीच में मैं भी सत्याग्रह में शामिल होती रहती थी। १९३१ में एक बार कलक्टर दफ्तर के सामने सत्याग्रह में मैंने भी हिस्सा लिया, बहुत से वालंटियर आए थे। मुझे भाषण देने के लिए कहा गया। औरतों के जत्थे की तरफ से मैंने भाषण दिया, उसके बाद पुलिस ने सत्याग्रहियों को पीटना शुरू कर दिया। सबको मार पड़ी लेकिन गिरफ्तारियाँ नहीं की गई। इस तरह से मेरा गिरफ्तार होने का पहला मौका ही बेकार चला

---

* श्रीमती गायत्री देवी (१९०५–२००२), राजनीतिज्ञ। ५ जून १९२५ को चौधरी चरण सिंह से विवाह हुआ। १९३० के दशक में अंग्रेजों के खिलाफ सत्याग्रह आंदोलन में भाग लिया और महिलाओं के जत्थों में भाषण दिए। १९६९ में इगलास (अलीगढ़) और १९७४ में गोकुल से विधायक चुनी गईं। १९८० में कैराना से लोकसभा के लिए चुनी गईं।

गया। बाद में चौधरी साहब बोले कि मैं तो जेल जाता ही रहता हूँ, अगर आप भी जेल चली गईं तो बच्चों की देखभाल कौन करेगा? इसलिए आप गिरफ्तारी मत देना। बात तो उनकी ठीक ही थी। उसके बाद से मैंने अपने गाँव भदौला में सिर्फ घर का ही कामकाज सँभाला। आंदोलन में शरीक रहने की वजह से चौधरी साहब का अपनी वकालत में ध्यान नहीं रहता था। घर का सारा खर्च गाँव की मदद से चल पाता था। गाँव से लगातार गेहूँ, घी, कपड़े–लकड़ी वगैरह लाती रहती थी।

जहाँ तक चौधरी साहब के जीवन की खास–खास तारीखों का सवाल है, एक खास घटना तो मुझे कभी नहीं भूलती। नागपुर में कांग्रेस का अधिवेशन चल रहा था। चौधरी साहब भी वहाँ गए हुए थे। जवाहरलाल नेहरू ने भारत में सहकारी खेती के लिए एक प्रस्ताव रखा। इस पर बोलने के लिए चौधरी साहब ने टाइम माँगा। उन्होंने बहुत अच्छा भाषण दिया और अपने भाषण में नेहरूजी की इस बात का जमकर विरोध किया। नेहरूजी नाराज हो गए और तभी से उन्होंने चौधरी साहब का विरोध करना शुरू कर दिया। १९६० में जब उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री चुने जाने का वक्त आया तब भी नेहरूजी ने चौधरी साहब के नाम का समर्थन नहीं किया। उन्होंने सी. बी. गुप्ता को मुख्यमंत्री बना दिया। इसके बाद की घटना में एक औरत (श्रीमती सुचेता कृपलानी) को मुख्यमंत्री बनाया गया। चौधरी साहब मंत्रीमंडल में जरूर रहे और जिस भी मंत्रालय में उन्होंने काम किया, वहाँ उन्होंने अपनी छाप छोड़ी।

चौधरी साहब के जीवन की एक और महत्त्वपूर्ण घटना है, उनके कांग्रेस छोड़ने के कुछ पहले की। सन् १९६७ के विधानसभा के चुनावों के बाद फिर से कांग्रेस विधायक दल के नेता के चुनाव का मसला उठा। चौधरी साहब ने सी. बी. गुप्ता के खिलाफ उम्मीदवारी की घोषणा कर दी। इंदिरा गाँधी उन दिनों प्रधानमंत्री थीं। उन्होंने चौधरी साहब से कहा कि आपके चुनाव में खड़े हो जाने से कांग्रेस में दो गुट हो जाएँगे। चौधरी साहब खुद भी कांग्रेस में दो गुट पैदा नहीं करना चाहते थे। उनसे कहा गया कि आप सी. बी. गुप्ता के नाम का समर्थन कर दीजिए, बाद में जब मंत्रीमंडल बनाया जाएगा तब आपकी भी राय ली जाएगी। चौधरी साहब की एक जिद थी कि जिन लोगों पर भ्रष्टाचार के आरोप हों, उन्हें मंत्री न बनाया जाए, खासतौर पर चौधरी साहब जयराम वर्मा और बनारसी दास गुप्त को मंत्री बनाए जाने के खिलाफ थे। ठाकुर साहब (दिनेश सिंह) ने वादा किया कि जैसा चौधरी साहब चाहेंगे, वैसा ही होगा। जब कांग्रेस विधायक दल के नेता का चुनाव हुआ, तब चौधरी साहब ने सी. बी. गुप्ता का नाम पेश किया, लेकिन जब मंत्रीमंडल बनाया गया, तब चौधरी साहब

से पूछा तक नहीं गया। चौधरी साहब ने लखनऊ से ठाकुर साहब को फोन करके कहा कि मैंने आपके कहने पर नाम वापिस लिया था, अब बताइए यह क्या हो रहा है? ठाकुर साहब सिर्फ वायदे करते रहे, चौधरी साहब ने काफी दिनों तक इंतजार किया।

बाद में चौधरी साहब ने गुप्ताजी से मुलाकात करके वायदा याद दिलाया। गुप्ताजी ने चौधरी साहब की बात मानने से साफ इनकार कर दिया। बोले कि आपके साथ जो भी समझौता हुआ हो, मैं उसमें शामिल नहीं था। अब आपकी जो इच्छा हो करो, उस रात चौधरी साहब काफी परेशान रहे, पूरी रात सोये भी नहीं। मैं बोली जब कांग्रेस में इतना अपमान होता है तो छोड़ क्यों नहीं देते? गाँव वाले भी यही कह रहे थे कि आप कांग्रेस छोड़कर अपनी पार्टी बनाएँ। अगले दिन वे हाउस में अलग जाकर बैठ गए? सहारनपुर के मंत्री ठाकुर फूलसिंह को पता लगा तो शाम को हमारे मालरोड़ वाले घर पर आए। उन्होंने चौधरी साहब से कहा कि आप को कांग्रेस नहीं छोड़नी चाहिए। मैंने जवाब दिया ठाकुर साहब अपमान भी तो नहीं सहना चाहिए।

अगले दिन बनारसी दास आए और हाउस में भी साथ–साथ रहे, तब मैंने अपने देवर मानसिंह से कहा कि आप इनके साथ रहना, क्योंकि लोग इनको बहका लेते हैं। उस दिन भी चौधरी साहब अलग बैठे। उसी दौरान गुप्ताजी ने अखबारों में बयान दे दिया था कि मैं जब तक कांग्रेस दल का नेता हूँ, तब–तक कोई अलग होने का साहस नहीं कर सकता। अगर कोई ऐसा करेगा तो मैं उसे कायर बना दूँगा। यह बात भी चौधरी साहब को बहुत बुरी लगी। बाद में अप्रैल १९६७ को गुप्ताजी की सरकार का बहुमत खत्म हो गया। उनके बाद चौधरी साहब ने विपक्षी दलों के साथ मिलकर सरकार बनाई। कांग्रेस को छोड़ते समय चौधरी साहब को काफी सदमा पहुँचा, क्योंकि वह शुरू से कांग्रेसी रहे और तन–मन से उसकी तरक्की में हिस्सा लिया।

चौधरी साहब अपने उसूलों के बहुत पक्के रहे हैं। इस मामले में वह किसी भी नेता की बात सुनने को तैयार नहीं होते थे। जिन दिनों वह उत्तर प्रदेश में कृषिमंत्री थे, तब पटवारियों ने हड़ताल कर दी। चौधरी साहब ने पटवारियों को हटाने का फैसला कर लिया। तब पंतजी (पं. गोविंद बल्लभ पंत) मुख्यमंत्री थे। पंतजी ने चौधरी साहब को ऐसा करने से रोका। बोले कि इतने पटवारियों को मत हटाओ, तुम्हें श्राप देंगे। चौधरी साहब ने जवाब दिया कि जिनका भला होगा दुआएँ भी तो देंगे। चौधरी साहब के इस कदम से किसान बहुत खुश हुए। इसी तरह जब जमींदारी खत्म करने के लिए चौधरी साहब ने कानून बनवाया तब भी

बड़े–बड़े कांग्रेसी नेताओं ने सलाह दी कि ऐसा न करें, पर चौधरी साहब ने किसी की सलाह न मानी। कांग्रेसियों में शुरू से ऐसा तबका था जो जमींदारों के पक्ष में रहता था। बाद में जब जमींदारी खत्म हुई तो पंतजी ने पहाड़ी इलाकों को अलग रखने में सफलता पा ली, क्योंकि वे खुद जमींदार थे और उनकी खुद की पहाड़ी इलाकों में बहुत सी जमीन थी।

चौधरी साहब को कामचोरी और रिश्वतखोरी से भी नफरत थी। रात देर तक काम करते थे। किसी की दखलंदाजी बर्दाश्त नहीं करते थे। मेरे राजनीति में आने के बाद भी कभी मेरी सलाह नहीं लेते थे। जब वह मुख्यमंत्री बने तो पूरे सूबे में बहुत खुशी मनाई गई। बेईमान लोग तो बहुत डर गए। मेरठ का एक किस्सा सुनने में आया कि एक थानेदार किसी से रिश्वत लेकर गया था। अगले दिन वह खुद ही रिश्वत वापस करने आया। जब उससे पूछा गया कि भाई ऐसा क्यों कर रहा है? तब उसने जवाब दिया कि चौधरी साहब मुख्यमंत्री बन गए हैं।

चौधरी साहब की एक कमजोरी रही कि उन्हें आदमियों की ठीक पहचान कभी नहीं हो सकी। जिस किसी ने भी उनके सामने दो–चार मीठी बातें बनाई, चौधरी साहब ने उसे ही सच मान लिया। चौधरी साहब के सीधेपन का बहुत लोगों ने फायदा उठाया। श्यामलाल यादव, असरार अहमद, नरेन्द्र सिंह, सत्यपाल मलिक, वीरेन्द्र वर्मा जैसे कितने ही नेता हैं– जिन्होंने समय पर चौधरी साहब का फायदा उठाया और बाद में उनको धोखा भी दिया।

जब जनता पार्टी बनी, उस समय बहुत से लोग चौधरी साहब को नेता मानने के लिए तैयार थे, मगर जे. पी. ने चन्द्रशेखर का नाम दे दिया। चौधरी साहब चाहते थे कि पीलू मोदी या राजनारायण को पार्टी अध्यक्ष बनाया जाए। पी.एन. लेखी ने चौधरी साहब से आकर कहा कि चन्द्रशेखर युवातुर्क के आदमी हैं और इंदिराजी से लड़ते रहे हैं, इसलिए आप उनके नाम का समर्थन कर दो। चौधरी साहब मान गए। मगर जब चुनाव का वक्त आया तब चन्द्रशेखर ने चौधरी साहब के समर्थकों के ८० नाम काट दिए। बाद में प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई ने बहुत खराब काम किए। चौधरी साहब की रैली हुई, उसे देखकर उनके विरोधियों को बहुत जलन हुई। अटल बिहारी वाजपेई और दूसरे कई नेता भी रैली में गए थे, लेकिन बाद में सबको डाँटा गया। चौधरी साहब के सारे विरोधी एक हो गए। इन सारी चिंताओं से चौधरी साहब को दिल का दौरा पड़ गया।

चौधरी साहब पर जातिवादी होने का आरोप लगाया जाता है, जबकि उन्होंने जाटों के लिए कुछ नहीं किया आज देश–भर में कौल, दीक्षित, भट्टाचार्य, यानी ब्राह्मणों का राज चल रहा है, तब कोई नहीं कहता कि

जातिवाद के लिए कौन जिम्मेदार है। इंदिरा गाँधी ने पढ़ाई में निकम्मे अपने लड़कों को राजनीति में आगे बढ़ाया, जबकि चौधरी साहब ने कभी भी अपने बेटी–बेटों को सत्ता में लाने की कोशिश नहीं की। लोगों ने अजीत सिंह के लोकदल में आने पर बहुत हल्ला किया, जबकि चौधरी साहब उन्हें राजनीति में नहीं लाए। अजीत सिंह को जनता राजनीति में लाई है, चौधरी साहब तो बीमार चल रहे थे।

चौधरी साहब के कुछ और विचारों को तोड़–मरोड़ कर पेश किया जाता है। कुछ लोग कहते हैं कि वह औरतों की हिमायत नहीं करते, उनका तो सिर्फ यही मानना है कि लड़कियों के लिए कुछ खास तरह के कार्य फायदेमंद हैं, जैसे डॉक्टरी, शिक्षिका आदि।

१४

एक महान व्यक्तित्व: एक आदर्श पिता

वेदवती*

चौधरी चरण सिंह, मेरे पिता का नाम लेते ही मन पर एक छवि चित्र की तरह घूम जाती है, वह है एक शांत, सौम्य व्यक्ति–सफेद खद्दर की धोती–कुर्ता पहने हुए जमीन पर बैठा हुआ, सामने रखे लकड़ी के डेस्क पर कोई किताब पढ़ रहा है या कुछ लिख रहा है। मैंने जब से होश संभाला, उनको दो रूपों में ही संतुष्ट और प्रसन्न देखा–एक उपरोक्त और दूसरा गाँव के गरीब किसान व मजदूरों के बीच में बैठकर ध्यान से उनकी बातें सुनना, उनकी समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न करना। हम भाई–बहनों और अनेक रिश्तेदारों के बच्चों ने उनसे अत्यधिक स्नेह पाया। मारना तो दूर, कभी ऊँची आवाज भी नहीं सुनी उनकी। उनके प्यार की विशेषता थी कि बुआ, चाचा, मामा, मौसी सभी रिश्तेदार और उनके बच्चे, सबको अलग–अलग यही विश्वास था कि हमें उनका विशेष स्नेह प्राप्त है। लेकिन इस अथाह प्यार और स्नेह के साथ ही उन्होंने कभी अपने सिद्धांतों से समझौता नहीं किया। यह सिद्धांत दूसरों के लिए ही नहीं, स्वयं के लिए और परिवार के लिए भी दूसरों के समान ही थे।

अपने जीवन की एक घटना बताती हूँ, जिसमें उनके व्यक्तित्व और चरित्र के उस पहलू के दर्शन होते हैं, जिससे यह पता चलता है कि उनके कहने और करने में कोई अंतर नहीं था।

सन् १९५०, मई का महीना था। लखनऊ में बहुत गर्मी पड़ रही थी। मैंने पिताजी के पी. ए. को कूलर लगाने के लिए कहा। उन्होंने कहा कि चौधरी साहब से पूछ लीजिएगा, कहीं मना कर दें। पर मुझे विश्वास था कि मैं उनकी प्रिय बेटी हूँ, मेरी बात अवश्य मानेंगे। कूलर घर में आया। उसी शाम को विधानसभा से लौटते ही पिताजी ने पूछा कि यह क्या है और क्यों यहाँ रखा है? जब मैंने कहा कि गर्मी बहुत है, कल को कमरे में लग जाएगा, तो आपको भी बहुत अच्छा लगेगा।

---

* वेदवती (१९३१–२०१२), चौधरी चरण सिंह और गायत्री देवी की दूसरी संतान। उन्होंने १९५६ में लखनऊ से बीए और बीएड की पढ़ाई पूरी की, और डॉ. जय पाल सिंह से विवाह किया, जो एक सर्जन, शिक्षक और प्रतिष्ठित प्रशासक थे।

उन्होंने कुछ क्षण स्नेह से मुझे देखा और अंदर जाकर अपने कमरे में व्यस्त हो गए। दूसरे दिन सुबह मुझे आदेश मिला बेटी अपना सामान तैयार कर लो और गर्मियों की छुट्टियों में गाँव में अपनी दादी जी के पास जाकर रहो और देखो कि गाँव के लोग और तुम्हारे रिश्तेदार कैसे रहते हैं। तुम्हें तब पता चलेगा कि गर्मी किसे कहते हैं। मैं दो महीने गाँव में रही, जहाँ बिजली ही नहीं थी और कच्चा घर था।

दूसरी घटना बचपन की है। पिताजी जेल से छूटकर आए थे। हम दिल्ली में डॉ. स्वरूप सिंह जी के यहाँ थे। मेरी बड़ी बहिन ने शिकायत करते हुए कहा कि उसके पास दो ही साड़ियाँ हैं। अम्मा खरीद कर नहीं देती हैं। यह सुनकर उनके चेहरे पर जरा भी शिकन नहीं आई। प्यार से हँसकर कहा कि बेटी तुम बहुत भाग्यशाली हो। तुम्हारे पास दो साड़ियाँ हैं। हमारे देश में बहुत सी बेटियाँ ऐसी हैं, जिन पर एक भी साड़ी नहीं है। इससे पता चलता है कि वे हमेशा देश के गरीबों के बारे में ही सोचते रहते थे; और स्वयं ही नहीं, हमें भी उनसे दूर जाने देना नहीं चाहते थे। हम सब बच्चे हमेशा मोटा खद्दर ही पहनते थे।

सन् १९४३–४४ की बात है, घर की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी। बार–बार जेल जाने से वकालत छूट जाती थी। एक दिन हमारे मुंशी श्री शिवचरण जी ने हमारी अम्मा से कहा कि एक रईस व्यक्ति का मुकदमा है, पर चौधरी साहब ले नहीं रहे हैं। आप कह दें तो शायद ले लें। दूसरे दिन पिता जी कचहरी जा रहे थे, तब अम्मा ने ज़िक्र किया, तो कहने लगे कि हाँ मुकदमा है, पर मैं उसे नहीं लूंगा, क्योंकि वह झूठा है।

जब उत्तर प्रदेश में सभी पटवारियों को हटा दिया गया, तो बहुत से लोग आते थे अपनी नौकरी बहाल करवाने के लिए। तभी कुमाऊँ की तरफ की, एक पटवारी की पत्नी, अपने बच्चों सहित आई और कहा कि मेरे पति को न हटाइये, हम भूखों मर जाएंगे, हमारे पास और कोई आमदनी का स्रोत नहीं है। उसको फूट–फूट कर रोता देख पिताजी की आँखें भर आईं। वे उसको काफी समय तक आर्थिक सहायता देते रहे। जब इसका कारण पूछा तो कहा कि मुझे इससे व्यक्तिगत सहानुभूति है, इसलिए व्यक्तिगत रूप से सहायता कर रहा हूँ लेकिन कानून सबके लिए बराबर है, सबके साथ इसके पति को भी हटाया जाएगा।

सन् १९७९ में जब पिताजी प्रधानमंत्री थे, तो रोज की तरह जब हम शाम को उनके निवास स्थान पर गए, तो एक पूँजीपति का नुमाइंदा पसीना पोंछते हुए उनके कमरे से निकला। जब मेरे पति डॉ. जे. पी. सिंह ने पूछा, क्या बात है, तो उसने कहा कि आज मेरे साथ ऐसी आश्चर्यजनक घटना घटी है जो पहले कभी नहीं हुई और न मैंने सुनी

थी। पता चला है कि पिछली शाम को वे चौधरी साहब से मिलने गए थे, तो एक अटैची वहाँ छोड़ गए थे, जिसमें कुछ लाख रुपये थे। आज सुबह पी. ए. का फोन गया कि आपको चौधरी साहब ने बुलाया है और जब वे आए तो पिताजी ने उनको वह अटैची वापिस देकर कहा कि कल आप इसे भूल गए थे। उन्होंने कहा कि पिछली सरकार और इस सरकार के भी कुछ नेताओं के पास वह जाते रहे हैं और जब भी उन्हें दुबारा बुलाया गया, तो इसलिए कि जो आप छोड़ गए थे, वह कम है और इस बार भी यही सोचकर आए थे कि माँग ज्यादा की होगी, लेकिन जब वापिस लौटा दिए गए तो वह इस बात से अभिभूत थे कि चलो, आज एक ईमानदार के तो दर्शन हुए, काम न बना, न सही।

इन घटनाओं से पता चलता है कि उनके सिद्धांत अपने और दूसरों के लिए समान थे। ईमानदारी, मेहनत, सादगी का जीवन जीने की प्रेरणा दूसरों को देते थे, तो इन्हीं मूल्यों को अपने जीवन में भी अपनाया। यही कारण था कि उन्होंने कभी किसी का व्यक्तिगत काम नहीं किया, लेकिन फिर भी उनके रिश्तेदार और अनुयायी उनसे कभी नाराज नहीं हुए और प्रयत्न करते थे कि उनके किसी काम से पिताजी की छवि पर आँच न आये।

इन घटनाओं के अलावा और भी अनेक प्रसंग हैं, स्थानाभाव के कारण जिन्हें देना संभव नहीं है, पर उद्धृत संस्मरण ही मेरे पिताजी के व्यक्तित्व और चरित्र पर प्रकाश डालते हैं। अपने पिता सभी बच्चों को प्रिय होते हैं, पर वे हमारे सिर्फ पिता ही नहीं, आदर्श–पुरुष थे। हम ही नहीं, सभी रिश्तेदार और मित्र उनका आदर करते थे, पूजा की हद तक। वे हमारे आराध्य थे। सभी उनके बताये रास्ते का अनुसरण करने का प्रयास करते थे। विशेष बात यह थी कि जितना ही कोई व्यक्ति उनके करीब जाता था, उतना ही उनके प्रति आदर भाव बढ़ता था और दूरी कम होती थी।

अपनी असाध्य बीमारी में भी वह हमेशा देश के बारे में सोचते थे। रानी झाँसी का गाना गाया करते थे।

१५

हिमालय सा अडिग और गंगा की तरह पवित्र

डॉ. जे. पी. सिंह*

किसी गैर–पेशेवर लेखक के लिए संस्मरण लिखना एक दुःसाध्य कार्य है। यह कार्य तब और भी कठिन हो उठता है जब ऐसे व्यक्ति के बारे में लिखना हो, जिनके कदमों में वह परिवार के महज एक सदस्य की तरह अत्यंत विनयशील और श्रद्धापूरित भाव से बैठ चुका हो और कभी यह कल्पना तक न की हो कि ऐसा भी कोई समय आ सकता है, जब वह उन क्षणों की यादों को कागज पर उतार पायेगा। वैसे अगर मान लें कि यह सब उतना मुश्किल नहीं, तब भी चौधरी चरण सिंह के बहुमुखी और विलक्षण व्यक्तित्व से संबंधित प्रेरक घटनाएं इतनी हैं कि मन को सहसा घेर लेती हैं। इस सीधे–सादे, ईमानदार, सत्यनिष्ठ, गंभीर, शालीन और जन–जन के चहेते जनसेवी पुरुष के जीवन का हर एक दिन, उनके व्यक्तित्व की अलग–अलग झलकियाँ दिखाता था और अपने तमाम समकालीनों से वह ऊँचे नजर आते।

वह गंगा की तरह पवित्र, हिमालय की तरह अडिग और चट्टान की तरह मजबूत थे। भारत और भारत के गाँवों तथा इस तिमिराच्छन्न भूमि की निर्धन संतानों के प्रति अपनी अटूट निष्ठा से वह कभी विचलित नहीं हुए। अपने परिवार के सदस्यों के लिए वह हमेशा निकटतम होते, उनसे खुलकर बातचीत करते और हमदर्दी दिखाते। उनका हृदय हमेशा प्यार से लबालब रहता, लेकिन ऐसे प्यार के चलते ईमान के डिगने की तो बात दूर, कोई भी अनुचित कदम उठाने को वह तैयार नहीं थे। देशवासियों के पारिवारिक स्तर के एक हिस्से के रूप में ही वह अपने परिवार को देखते और चाहते थे। दिन के चौबीस घंटे वह पूरी गंभीरता से सोचा करते और उनकी समस्याओं

---

* डॉ. जय पाल सिंह (१९३०–९७), प्रसिद्ध सर्जन, चिकित्सा प्रशासक और केंद्रीय सरकार स्वास्थ्य सेवा दिल्ली के शिक्षक। आरएमएल अस्पताल दिल्ली के चिकित्सा अधीक्षक (१९८६–८९), मेडिकल कॉलेज रोहतक (पं. बी. डी. शर्मा पीजीआईएमएस) के निदेशक (१९८९–९२)। उन्होंने १९९२ से १९९५ तक वंचितों को निःशुल्क चिकित्सा सेवाएं प्रदान कीं। एसोसिएशन ऑफ सर्जन्स ऑफ इंडिया द्वारा डॉ. एस. रंगाचारी रिसर्च एंडॉमेंट अवार्ड (१९८६), और १९९१ में पद्म श्री से सम्मानित किए गए। चौधरी चरण सिंह की बेटी वेदवती के पति।

के हल के लिए प्रयासरत रहते। बहुमुखी व्यक्तित्व वाले ऐसे भव्य महापुरुष के बारे में अपनी व्यक्तिगत सीमाओं के प्रति मैं गहरे तौर पर सजग हूँ। भारत को उन्होंने पूज्य और पवित्र माँ के रूप में समझा, जिसकी खातिर बड़े से बड़ा त्याग भी उनके लिए तुच्छ था। गहरे चिंतन की लंबी से लंबी घड़ियाँ थीं और वही न्यूनतम था, जो वह देख पाते थे।

उनकी पारदर्शी मानसिक दृढ़ता का चित्रण इस घटना द्वारा किया जा सकता है। एक शाम देश के एक समृद्धिशाली परिवार का प्रतिनिधि उनसे मिलने आया और एक ब्रीफ केस वहीं छोड़ गया। पारिवारिक भेंट मुलाकात और कुछ मेडिकल चेक–अप के लिए और दिनों की तरह उस शाम भी, जब हम लोग वहाँ आए तो हमारी नजर उस ब्रीफकेस पर पड़ी। हमने तब यह पूछताछ की कि वह ब्रीफकेस किसका था। इसलिए कि चौधरी साहब के सादगीपूर्ण जीवन स्तर और उस कमरे के वातावरण का वह हिस्सा नहीं लग रहा था। उसे खोलने के लिए उनके सुरक्षा कर्मी (करतार सिंह) को जब बुलाया गया, तब पता चला कि उसमें तो नोटों की गड्डियां भरी थीं। मुलाकातियों के नामों की छानबीन से यह बात सामने आई कि वह ब्रीफकेस अमुक समृद्धिशाली व्यक्ति का था। चौधरी साहब ने बहुत ही शालीनता और संयम के साथ यह निर्देश दिया कि अगली सुबह उक्त सज्जन को बुलाया जाए और उनका ब्रीफकेस उन्हें वापस कर दिया जाए। अगली सुबह चौधरी साहब से मिलकर जब वह सज्जन निकल रहे थे, तब मैं गलियारे में था। मैं यह देखकर हैरान रह गया कि वह पतझड़ के पत्ते की तरह कांप रहे थे। वह यह आश्वासन चाहते थे कि उस घटना के फलस्वरूप उन पर अनिष्ट की गाज न गिरे। यह आश्वासन उन्हें फौरन मिल गया। उन सज्जन ने बाद में मुझे बताया कि "बड़ी कोठियों" में दाखिल होने का उन्हें विस्तृत अनुभव है, लेकिन यह अनुभव तो बड़ा असामान्य रहा; क्योंकि उन्हें यह समझ कर बुलाया गया था और अपना ब्रीफकेस वापस ले जाने के लिए कहा गया था कि शायद वह भूल से उसे छोड़ गए थे। आमतौर पर जब कभी वह "बड़ी" जगहों पर जाते थे, तो निरपवाद रूप से यह सुनने को मिलता था कि उतने बड़े धनी आदमी के लिए वह रकम बहुत छोटी थी और उससे तीन–चार गुना अधिक रकम की अपेक्षा की जाती थी। प्रसंगवश यह पहला अवसर था। जब हमने 500 रुपये का नोट देखा था। कितने ही वेतनभोगी लोगों ने उस समय तक इतने रुपये के नोट नहीं देखे थे। चौधरी साहब का भोलापन इस मामले में भी विलक्षण था, क्योंकि वह अलग–अलग रकमों के नोटों की पहचान नहीं कर पाये थे।

एक सबसे गंभीर मगर साथ ही साधारण–सा पाठ मुझे तब मिला था

जब चौधरी साहब बीमार थे। उस समय चिकित्सा विशेषज्ञ भीतर से या तो आतंकित थे या असुविधा महसूस कर रहे थे। इसलिए नहीं कि वह गंभीर रूप से बीमार थे बल्कि इसलिए कि वह एक वी. आई. पी. का इलाज कर रहे थे। एक दिन निरीक्षण का अपना काम जब मैंने पूरा कर लिया, तब चौधरी साहब ने अपनी सीधी–सादी जुबान में मुझसे कहा कि–"तुम लोग जिस तरह साधारण से साधारण रोगियों का निरीक्षण और इलाज बिना भावात्मक लगाव के करते हो, उसी तरह मेरा भी करो।

तभी तुम अपने पेशे और मरीज के साथ न्याय कर सकते हो।" उनकी इस सलाह से हम सभी चिकित्सकों का ध्यान अपने सफल और सही चिकित्सा कर्म के सीधे और संकरे पथ की ओर गया। इसने वी. आई. पी. लोगों के प्रति मेरे नजरिये को वह रूप दिया जिसमें ऊब और असुविधा की जगह सम्मान की भावना निहित थी। एक बार उन्होंने कहा था– "विमान चालक की क्षमता की परख इस बात से होती है कि विमान के संकटग्रस्त होने की स्थिति में वह कैसी प्रतिक्रियाएँ दिखाता है।" अपने पेशे के बारे में बहुत ही सरल भाषा में यह सीख मैंने एक ऐसे व्यक्ति से ग्रहण की जिसकी बुद्धिमत्ता हमेशा सरल शब्दों में व्यक्त होती थी।

चौधरी चरण सिंह को अपने जीवनकाल में अच्छे और बुरे दोनों तरह के दिन देखने पड़े थे। उनकी राजनीतिक सफलताओं, पराजयों और सन् १९७५ के आपातकालीन दौर के कारावास ने उनसे निपटने की उनकी क्षमता को समझने की अंतर्दृष्टि हमें प्रदान की। उनके आसपास के और परिवार के लोग जब उनकी राजनीतिक हार या कठिनाइयों के चलते उदासी में डूबे और बुझे–बुझे से रहते, तब जैसे उन्हीं के बीच से अपने चेहरे पर प्रफुल्लता और आत्मविश्वास लिए वह प्रकट होते और नैराश्य का अंधेरा देखते–ही–देखते दूर हो जाता। उनका अदम्य उत्साह, उनका आत्मविश्वास और उनकी आशावादिता ने कठिनाइयों पर विजय पाने में निरपवाद रूप से उनकी मदद की। इस तरह की सभी कठिनाइयों पर वह भारी पड़ते थे। वह एक ऐसे 'सेनाध्यक्ष' थे जिनकी सेना उनके नजरिये और प्रशिक्षण के जरिये उत्साह प्राप्त करती रहती थी। मुजफ्फरनगर के संसदीय चुनाव में उनकी एकमात्र विफलता ने उन्हें और भी अधिक दृढ़ संकल्पी बनाया। सन् १९८० में संसदीय चुनावों के परिणाम उनकी अपेक्षाओं के विरुद्ध गए थे, लेकिन उनके नजदीकी और परिवार के जो लोग बुरे परिणामों के चलते उत्साहहीनता महसूस कर रहे थे, वे चौधरी साहब को देखते या उनसे बातें करते ही प्रसन्न हो उठते थे।

चौधरी चरण सिंह एक स्वाभिमानी देशभक्त थे। वह भारत की पुरातन संस्कृति में आस्था रखने वाले व्यक्ति थे। उनकी वेशभूषा, उनका

खान–पान, उनकी भाषा और शिष्टाचार में भी भारतीयता की विशिष्ट छाप रहती थी। उनका विश्वास था कि सदियों पुराने ये मूल्य चिरंतन थे तथा हमारे ऋषियों के हजारों वर्षों के चिंतन पर आधारित थे। भारतीय शिष्टाचार तब तक ठीक से लिपिबद्ध नहीं था और न ही पर्याप्त रूप से प्रचारित था। एक जेलयात्रा के दौरान उन्होंने एक पुस्तक लिखी थी जो "शिष्टाचार" नाम से प्रकाशित हुई। राजस्थान के एक मित्र डाक्टर ने, जो सक्रिय राजनीतिक कार्यकर्ता भी हैं, एक बार चौधरी साहब से मिलने की इच्छा जाहिर की, जिसके लिए उन्होंने तुरंत स्वीकृति दे दी। जयपुर में वे मिले। समाचार–पत्रों आदि से मेरे मित्र की धारणा बन चुकी थी कि वह कड़वी जुबान बोलने वाले, सख्त, अड़ियल और मामूली वेशभूषा वाले कोई देहाती किस्म के आदमी होंगे। लेकिन बाद में उन्हीं मित्र ने उनके (चौधरी साहब) गहन चिंतन, भद्रता, मृदुभाषिता और राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मामलों में उनके विशद विश्लेषण की प्रशंसा करते हुए एक कविता लिख डाली। यह ठीक उसके विपरीत था जिसकी उन्होंने अपेक्षा की थी। वह तभी से चौधरी साहब के प्रशसंक और अनुयायी बन गए।

गरीबों के लिए चौधरी साहब की चिंता गहरी और स्थायी थी। केंद्रीय लोक निर्माण विभाग द्वारा, चौधरी साहब के सरकारी आवास १२–तुगलक रोड पर, निर्माण कार्य चल रहा था, जिसमें कुछ राजस्थानी मजदूर काम कर रहे थे। उन मजदूरों में कुछ महिलाएं भी थीं, जिनमें से एक महिला अपना बच्चा साथ लेकर आई थी। बच्चा बहुत ही दुर्बल था और किसी बीमारी का शिकार भी था। चौधरी साहब बच्चे के स्वास्थ्य की उपेक्षा देख मर्माहत हुए और उन्होंने इस बाबत पूछताछ की कि माँ अपने बच्चे की ठीक से देखभाल क्यों नहीं कर पा रही है। उन्होंने तत्काल बच्चे की दवा और पोषक आहार की व्यवस्था के लिए ५००/– रुपये दिए और कहा कि जब तक बच्चा ठीक नहीं हो जाता, तब तक उसकी माँ काम पर नहीं आये। भारतीय नारी जाति के प्रति उनकी सम्मान भावना अद्वितीय थी।

झाँसी की रानी के प्रति उनकी जो सर्वोच्च सम्मान भावना थी, वह सुविदित थी। उस महान देशभक्त और बहादुर योद्धा की प्रशंसा में वह गीत गुनगुनाने लगते थे। अपने परिवार की महिला सदस्यों पर वह विशेष स्नेह और अनुकंपा रखते थे। उनकी बेटियां और बहुएं समान रूप से उनकी आँखों की पुतलियाँ थीं। घोर श्रम और थकान वाले दिनों में भी वह अपनी बीमार बेटी की परिचर्या के लिए शक्ति और समय जुटा ही लेते थे। वह याद रखते थे कि रात में कितनी बार उसे खाँसी आई थी, क्योंकि रातभर वह जगते ही रहते थे। उनका विश्वास था कि नारियाँ अधिक भरोसेमंद होती हैं। उनके सम्मान के प्रति वह बहुत सजग रहते

थे। जो स्थान वे परिवार में रखती हैं, उसके अलावा वे राष्ट्र के निर्माण में भी महत्वपूर्ण योगदान करती हैं। उनका मानना था कि वह व्यवसाय जो भी चाहें, कर सकती हैं।

चौधरी साहब को हृदय रोग विशेषज्ञों ने रोज सुबह नियमित रूप से टहलने और टहलते समय एक डाक्टर साथ रखने की सलाह दी थी। चूंकि यह सरकारी जरूरत थी, इसलिए निजी स्टाफ के अधिकारियों ने तय किया कि समय की बचत और बेहतर निगरानी के लिए एक सरकारी वाहन मुझे लाने के लिए लोदी एस्टेट जाया करे, ताकि मैं तीन मूर्ति लॉन में टहलते समय चौधरी साहब के साथ रहूँ। एक दिन सुबह उन्होंने मुझे सरकारी कार से उतरते हुए देख लिया। अगली सुबह उनकी निजी कार मुझे लाने के लिए भेजी गयी। क्योंकि उनका विचार था कि वह सरकारी कार का दुरुपयोग था और वह कार्य सरकारी कामकाज का हिस्सा नहीं था। अवश्य ही उनकी समस्या हम समझ गए थे क्योंकि यह पहला अवसर नहीं था। उनकी इच्छाओं का तो हमेशा सम्मान किया जाता था। हमने उनके दृष्टिकोण को स्वीकार किया और उसे व्यवहार में लाना जारी रखा। ऐसे मामलों तक मैं उनकी मर्यादा का यह स्तर था।

सभी देवताओं के पैरों में कीचड़ लगी होती है। अक्सर यह देखा गया है कि निकट आने पर व्यक्तियों के कुछ ऐसे पहलुओं का पता चल जाता है, जो अच्छे नहीं होते। फिर भी चौधरी चरण सिंह के मामले में यह उक्ति मुझे मिथ्या लगी। उन्हें जिस तरह चित्रित किया जाता था, वह उससे कहीं महान थे। अत्यंत निकट से भी उनमें शिशु की तरह मुस्कान वाली छवि के दर्शन होते थे– सबको प्यार, सबका ध्यान! हर कोई समझता था कि चौधरी साहब उसका विशेष ख्याल रखते हैं। ऊपर दिए गए अपने वक्तव्य को मैंने सावधानी से निजी अनुभव की कसौटी पर तौला है और मुझे उम्मीद है कि चौधरी चरण सिंह के महान व्यक्तित्व के भीतर ठीक से झांकने की दृष्टि इससे सुलभ होगी। लेकिन अभिव्यक्ति की पूर्णता संभव नहीं है, क्योंकि "अगर संपूर्ण सत्य को लिपिबद्ध करने का गंभीर प्रयास किया गया तो अंग्रेजी भाषा का सहज लचीलापन अवरुद्ध हो जाएगा और कागज और मुद्रण की सीमाएं अनियंत्रित रूप से अस्त–व्यस्त हो जाएंगी" (इयान एड)। मुझमें न तो वैसी क्षमता है और न ही साहस कि इस तरह के प्रयास की धृष्टता करूँ। आदमी अपने वास्तविक जीवन में कितना ऊपर उठ सकता है, इसके बारे में पहले जो धारणा थी, उससे भी महान थे चौधरी साहब। निःसंदेह उनकी तुलना भारत के उन महान सपूतों से की जाएगी जिनकी जीवनियों से मैं अपने जीवन के निर्माणकारी दौर से ही गुजरता रहा हूँ।

१६

गरीब ने देखी उनमें अपने रहनुमा की तस्वीर

डॉ. स्वरूप सिंह*

किसी भी देश की राजनीति तभी अच्छी हो सकती है, जब उस देश के लोगों का चरित्र और उसके विचार अच्छे हों। यदि देश की जड़ें कट जाएँ और वहाँ के लोगों के दिमागों में अच्छे विचार न हों, तो उस देश की राजनीति के अच्छे होने की सारी संभावनाएं समाप्त हो जाती हैं। चौधरी चरण सिंह ऐसे ही विलक्षण राजनीतिज्ञ थे, जिनकी साफगोई, सादगी, ईमानदारी, सच्चरित्रता और सिद्धांतों के प्रति अटूट पक्षधरता के लिए उन्हें सदैव याद किया जाता रहेगा। वह व्यक्ति नहीं विचार थे। उन्होंने इस देश को गरीबी से निजात दिलाने के लिए एक वैचारिक दर्शन दिया। उनकी ईमानदारी की तो उनके विरोधी भी प्रशंसा करते हैं, जो उनके जीवन की अमूल्य निधि थी।

मुझे याद है कि एक बार उत्तर प्रदेश में विधानसभा का चुनाव हो रहा था। चौधरी साहब के नेतृत्व में १०९ लोग विधानसभा का चुनाव जीतकर आए थे और तकरीब १०० लोग ऐसे थे जो लगभग १००० या २००० वोटों के अंतर से विधानसभा का चुनाव हार गए थे। उस दौरान की बात है कि एक सज्जन रात में मेरे पास आए और मुझसे बोले कि एक व्यक्ति ने मुझसे कहा है कि यदि तीन–चार लाख रुपये तुम दे दो तो चौधरी साहब से तुम्हें उत्तर प्रदेश से राज्यसभा का मेंबर बनवा दूँगा। उस सज्जन को उस व्यक्ति की बात का विश्वास नहीं हुआ लेकिन उसे चौधरी साहब की बात का भरोसा था कि वह जो एक बार कह देते हैं, उसे करते जरूर हैं। उसी रात वह सज्जन मेरे पास आए और उपरोक्त पूरा वृत्तांत पलक झपकते ही उन्होंने मुझे सुना डाला। मैंने तत्काल चौधरी साहब को फोन किया और उन्हें बात बता भी दी। यह बात भी सच है कि उस समय चौधरी साहब को चुनाव के लिए धन की काफी जरूरत

---

* डॉ. स्वरूप सिंह (१९१७–२००३), शिक्षाविद और राजनीतिज्ञ, लोक दल। दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफेसर, प्रशासक, और बाद में कुलपति। हरियाणा से राज्यसभा सदस्य, केरल और गुजरात के राज्यपाल, संघ लोक सेवा आयोग के सदस्य।

थी। मैंने चौधरी साहब को यह भी बता दिया था कि वह सज्जन इस एवज में राज्य सभा का टिकट चाहते हैं। यह सुनते ही चौधरी साहब ने मुझसे कहा कि "डॉ. साहब मैं चुनाव हारूँ या जीतूँ, सौदा नहीं करूँगा। यह गलत बात है कि मैं यह वायदा करूँ कि मैं अमुक व्यक्ति को चुनाव जीतने के बाद राज्यसभा का मेंबर बनवा दूंगा।"

चुनावों में आदर्श आदि जीवन की सभी उच्च मान्यताएँ खो दी जाती हैं और व्यक्ति का केवल एक ही ध्येय होता है कि वह येन–केन प्रकारेण चुनाव जीत जाए। यहाँ मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि राजनीतिक जीवन में चुनाव ही तो सब कुछ नहीं होता, और भी बहुत कुछ महत्वपूर्ण होता है, जिसे तिलांजलि नहीं दी जा सकती। जिस आदमी में यह हिम्मत नहीं कि मैं इलैक्शन की परवाह नहीं करूँगा, जो ठीक है, वही करूँगा और उसे डंके की चोट पर कहने की हिम्मत भी है। दूसरे की गलत बात को गलत कह पाना बिरले के ही बस की बात है। यह गुण चौधरी साहब में था। वह सही को सही और गलत को गलत कहने में किंचित मात्र भी देर नहीं करते थे और बिना लाग–लपेट के साफ कह दिया करते थे। चाहे सामने वाले को वह बात बुरी ही क्यों न लग जाए। वह गलत बात होने पर अक्सर लोगों से कह दिया करते थे कि मैं तुम्हारी बात नहीं मानूँगा। मुझे याद है कि १९८४ के चुनाव के दौरान भी उनसे कुछ लोगों ने जनता को आश्वासन देने का अनुरोध किया था, लेकिन उन्होंने तुरंत उनकी बात नकारते हुए कहा था कि "तुम्हारी बात गलत है, यह देश हित में नहीं है, मैं ऐसा कदापि नहीं कर सकता।" ऐसे थे चौधरी चरण सिंह।

उन्होंने किसी से एक बार कुछ कह दिया, वह पत्थर की लकीर बन जाती थी। वह कहते थे कि आदमी की राजनीतिक और निजी ज़िंदगी में कोई फर्क नहीं है, दोनों एक हैं। जो दिल में हो, वहीं जुबान पर भी होना चाहिए। ऐसा न हो कि हम दिल में तो कुछ और रखें लेकिन जुबान से कहें कुछ और यानी दिल में कुछ और हुए अपनी जुबान से झूठे आश्वासन –दर–आश्वासन देते जाएं। यह कहाँ का न्याय है।

आज गरीब की सभी बात करते हैं, लेकिन क्या वजह थी कि गरीब आदमी को चौधरी साहब की बात पर भरोसा था। उसके दिल में चौधरी साहब के लिए अपार श्रद्धा थी और एक अटूट विश्वास था। इसकी प्रमुख वजह यही थी कि गरीब को भरोसा था कि इस इंसान के दिल में उसके लिए प्यार है, उसकी तकलीफों को दूर करने के लिए लड़ाई का जज़्बा है। गरीब किसान–मजदूर तो उनमें अपने रहनुमा की तस्वीर देखता था। चौधरी साहब किसी ऐसे व्यक्ति, जिसने सच्चाई और न्याय के लिए अपना सर्वस्व त्याग दिया हो, की बात सुनते थे, तो वह उसकी बहुत प्रशंसा

किया करते थे। जस्टिस खन्ना साहब की तो वह बहुत प्रशंसा करते थे और कहते थे कि "एक इंसान ऐसा भी है जिसने अन्याय के सामने झुकना गवारा नहीं किया। जस्टिस खन्ना उसकी मिसाल हैं।"

मेरी दृष्टि में चौधरी साहब केवल राजनीतिज्ञ ही नहीं थे बल्कि वह एक बेहतरीन इंसान थे। उनकी सादगी, ईमानदारी, बड़प्पन और सिद्धांतवादिता के बहुतेरे दृष्टांत हैं, उनकी स्मृति मात्र से ही मेरा मन भर आता है। ऐसे महापुरुष के जीवन से हम और देश के राजनीतिज्ञ कुछ सबक लें, उनके मार्ग पर चलकर देश को आगे बढ़ा सकें और उनके आदर्शों को अपने जीवन में उतार सकें, यही उनके प्रति हमारी विनम्र श्रद्धांजलि होगी।

१७

रहमदिल इंसान थे वह

करतार सिंह*

दिसम्बर १९६० में माननीय चौधरी साहब उत्तर प्रदेश सरकार में गृहमंत्री थे। तब उनकी सुरक्षा के लिए पुलिस अधीक्षक (सुरक्षा), लखनऊ की तरफ से माननीय गृहमंत्री जी के यहाँ पोस्टिंग के लिए एक बंद लिफाफा इंस्पेक्टर श्री गिरेन्द्र सिंह परमार व तत्कालीन हैड कांस्टेबल करतार सिंह (मुझको) को दिया था और साथ ही उनके समक्ष पेश होने को कहा गया था।

शाम के समय उपरोक्त यानी हम दोनों वह लिफाफा लेकर ३ लाप्लास, हजरतगंज के पीछे (लखनऊ), जहाँ माननीय चौधरी साहब प्राइवेट कोठी में रहते थे, पर पहुँचे। वहाँ पर माननीय चौधरी साहब के दामाद श्री एस. पी. सिंह जी से मुलाकात हुई। उस समय वे औरंगाबाद महाराष्ट्र में एस. पी. थे। उनसे फोर्स के नाते प्रार्थना की कि हमको चौधरी साहब से मिलाने की कृपा करें।

शाम का समय था, गाँव के लोगों से चौधरी साहब मिल रहे थे और भी कुछ नेता लोग बैठे थे। श्री एस. पी. सिंह ने उन तमाम लोगों के सामने चौधरी साहब को लिफाफा दिया और कहा, "पिता जी, ये आपकी सुरक्षा में आए हैं।" माननीय चौधरी साहब ने हम दोनों से बातचीत की और कहा कि "भाई, हमारे यहाँ किसान और गरीब आदमी आते हैं, इन्हीं की सेवा करनी है।" हमने कहा– "हुजूर का जो हुक्म।" इसके बाद माननीय चौधरी साहब ने लिफाफा हमको देकर कहा कि "आप लोग हमारे ऑफिस में पी. ए. साहब को यह लिफाफा दे दें और उन्हें बतला दें कि हमारी चौधरी साहब से मुलाकात हो गई है।" हमने वह लिफाफा पी. एस. श्री दीनदयाल साहब को दे दिया और बताया कि हमारी माननीय गृहमंत्री जी से मुलाकात गई है।

---

* करतार सिंह (१९३६–२००८) मथुरा उत्तर प्रदेश के एक किसान परिवार से थे और १९५७ में उत्तर प्रदेश पुलिस में पुलिसकर्मी दाखिल हुए। उन्होंने दिसंबर १९६० से मई १९८७ चौधरी चरण सिंह के निजी सुरक्षा अधिकारी के रूप में कार्य किया। करतार सिंह को चौधरी साहब के व्यक्तित्व और उनके मूल्यों की अंतरंग जानकारी थी।

दूसरे दिन प्रातः नियमानुसार ३ – लाप्लास पर मेरी ड्यूटी थी। वहाँ पर काफी तादाद में गाँव के किसान चौधरी साहब से मिल रहे थे। लगभग दस बजे जब चौधरी साहब विधानसभा जाने के लिए तैयार हुए, तो उनकी गाड़ी के चारों तरफ किसान खड़े हो गए और अपनी बातें बताने लगे। चौधरी साहब ने कहा कि "भाई, वापिस आकर फिर सुनेंगे। १० बजे मीटिंग है, देर हो रही है।" चौधरी साहब गाड़ी में बैठे और मैं ड्राइवर के साथ आगे की सीट पर बैठा। भीड़ काफी थी, मैंने कार का अपना दरवाजा बंद किया तो एक गाँव के किसान की उंगली गाड़ी के दरवाजे में आ गयी। वह चिल्लाने लगा। मैंने तुरंत ही दरवाजा खोला। उसकी उंगली दरवाजे में पिस गई थी, बस कटने से बच गयी। माननीय चौधरी साहब ने कहा कि "क्या ज्यादा चोट लगी है?" किसान ने कहा– "चौधरी साहब बच गयी।" गाड़ी विधानसभा के लिए चल दी। उस समय मुझे पसीना आने लगा और मन में सोचा कि अब नौकरी गयी। थोड़ी दूर जाकर माननीय चौधरी साहब ने मुझसे कहा– "लड़के, हमारे यहाँ बिना पढ़े गाँव के लोग, किसान, अधिकतर गरीब ही आते हैं, तो देख–भाल कर गाड़ी का दरवाजा बंद किया करो। आइन्दा ऐसी गलती नहीं होनी चाहिए।" तब कहीं मेरी जान में जान आई, क्योंकि चौधरी साहब बहुत सख्त माने जाते थे।

अक्टूबर १९७९ का महीना था। उस समय चौधरी साहब देश के प्रधानमंत्री थे और नई दिल्ली में तुगलक रोड स्थित १२ नम्बर की कोठी में रहते थे। एक दिन सुबह ९–१० बजे के आस–पास एक लम्बे–तगड़े बुजुर्ग कोठी पर चौधरी साहब से मिलने के लिए आये। उन दिनों सुरक्षा वाले चौधरी साहब से मिलने वालों को कोठी के सामने लॉन में बिठा देते थे और चौधरी साहब उन सबको संबोधित करते थे। लेकिन वह लम्बे–तगड़े बुजुर्ग सुरक्षा बलों से कह सुनकर कोठी में अंदर आ गए। मैं ड्यूटी पर था। मैंने बाबा से पूछा कि "आप कहाँ से आए हैं और किस काम से? इस पर उन्होंने कहा कि "मैं सिकन्दराबाद और भटौना (बुलंदशहर) के पास के एक गाँव का रहने वाला हूँ। जाखरिया मेरा नाम है।" इस पर मैंने कहा कि "ताऊ जी, आज चौधरी साहब जरूरी काम में लगे हैं, मिलने के लिए मना कर दिया है। इस पर ताऊ जाखरिया ने कहा कि "तू इतना चौधरी को बता दे कि ताऊ जाखरिया सिर्फ तुझे देखने आए हैं।" इस पर मुझे ताऊ की बात सुनकर रहा नहीं गया और उन्हीं के शब्दों को चौधरी साहब से मैंने कह दिया। इस पर चौधरी साहब झुंझलाये और कहा कि "मैं आज किसी से नहीं मिलूंगा।" मैंने सकुचाते हुए ताऊ जाखरिया से कहा कि उन्होंने मना कर दिया है, लेकिन आप

बैठें। इस पर ताऊ ने कहा कि मुझे कोई काम नहीं है, मैं तो इसे देखने चला आया हूँ। अच्छा तो अब मैं जगवीर को देखने अस्पताल में जाता हूँ। सुना है कि वह बीमार है। (श्री जगवीर सिंह, रक्षा राज्यमंत्री थे, और भटौना, बुलंदशहर के ही रहने वाले थे) इतना कहकर ताऊ ने अपनी लाठी उठाई और चल दिये।

थोड़ी देर के बाद जब चौधरी साहब ऑफिस चलने को तैयार हुए तब उन्होंने घंटी बजाई। मैं उनके पास अंदर गया, तब चौधरी साहब ने ताऊ जाखरिया को याद किया। इस पर मैंने बताया कि वह तो गुस्से में चले गए हैं। इतना सुनते ही चौधरी साहब ने तुरंत कहा कि "उन्हें देखो, मेरी गाड़ी ले जाओ और उन्हें लेकर आओ।" मैंने तुरंत चौधरी साहब की गाड़ी ली और डॉ. राम मनोहर लोहिया अस्पताल की तरफ चल दिया। क्योंकि ताऊ जी कह रहे थे कि मैं जगवीर को देखने अस्पताल जा रहा हूँ। मैंने नार्थ व साउथ ब्लॉक के बीच में चढ़ाई पर ताऊ जाखरिया को देखा, जो पैदल जा रहे थे। मैंने गाड़ी रोकी, ताऊ को गाड़ी में बिठाया और कहा कि चौधरी साहब आपको याद कर रहे हैं। इस पर ताऊ जी चुप हो गए और मैं उनको लेकर कोठी पर आ पहुँचा। चौधरी साहब कौली भरकर ताऊ जाखरिया से मिले और ४–६ मिनट उनसे बातें की, फिर अपने साथ गाड़ी में साउथ ब्लॉक (प्रधानमंत्री कार्यालय) तक बिठाकर लाये। चौधरी साहब ने मुझसे गाड़ी से उतरकर कहा कि "चौधरी साहब (जाखरिया ताऊ) को डॉ. राम मनोहर लोहिया अस्पताल पहुँचा दो।" मैं ताऊ को अपने साथ डॉ. राम मनोहर लोहिया अस्पताल ले गया और श्री जगवीर सिंह जी के कमरे में पहुँचा दिया। वापस आकर मैंने चौधरी साहब को जब रिपोर्ट दी, तब वह बड़े खुश हुए। ऐसे थे चौधरी साहब जो ताज़िंदगी भुलाये नहीं जा सकेंगे और उनके साथ बिताये क्षण ही मेरे जैसे व्यक्ति के लिए अमूल्य धरोहर हैं।

धैर्य एवं साहस की प्रतिमूर्ति

मुझे याद है कि श्री – श्री १००८ गुरुजी लालमन संत दयाल जी उर्फ मकरन्दी बाबा गाँव अनहटा, पो. बिठौली 'अजीतमल' जिला इटावा, श्रद्धेय चौधरी चरण सिंह के विचारों के बड़े ही प्रशंसक थे और कभी–कभी लखनऊ चौधरी साहब से मिलने के लिए भी आते रहते थे। हँसी–हँसी में एक दिन चौधरी साहब ने मकरन्दी बाबा से कहा कि हम तो राजनीति के दलदल में फँसे हुए हैं, नहीं तो आपकी तरह ही रहते। बाबा बहुत खुश हुए और कहा कि आप तो पहले से ही महान संत हैं। बाबा ने चौधरी

साहब से अपने यहाँ आने का कार्यक्रम बनाने को कहा। चौधरी साहब ने कहा कभी फुरसत होगी, तब देखेंगे।

अप्रैल सन् ७४ में मकरन्दी बाबा ने चौधरी साहब का प्रोग्राम कालेश्वर पचनंदा का बनवाया। चौधरी साहब प्रोग्राम के अनुसार सुबह ११ बजे कालेश्वर पचनंदा पहुँचे, जो यमुना नदी के पार था। वहीं पार्टी की एक पब्लिक मीटिंग भी थी, नाव से उस पार पहुँचना था। प्रोग्राम सुचारु रूप से समाप्त हो गया, फिर वापस उसी रास्ते मकरन्दी बाबा के गाँव अनहटा आना था।

नाव पचनंदा घाट पर खड़ी थी। घाट कच्चा था लेकिन वापसी में जहाँ नाव लगी थी, जगह कंकरीली थी और पानी बहुत गहरा था, क्योंकि वहाँ पर यमुना, बेतवा, चम्बल आदि पाँच नदियाँ मिलती हैं और पानी अथाह बह रहा था। चौधरी साहब जब मीटिंग से वापस हो रहे थे, तो उनके साथ काफी भीड़ थी। जैसे ही वे नाव में चढ़ने लगे, तो अधिकतर भीड़ उनकी ही नाव में चढ़ने लगी, नाव नदी किनारे रस्से से बँधी थी। अधिक लोगों के चढ़ जाने से नाव का संतुलन बिगड़ गया और नाव तिरछी हो गई, नतीजतन सब लोग नदी में गिर पड़े, हाहाकार मच गया। उस समय मैं और राजकिशोर सिंह, दो सुरक्षाकर्मी चौधरी साहब के साथ तैनात थे और हम दोनों ही साथ थे। मैंने स्थिति को देखते हुए राजकिशोर से कहा कि चौधरी साहब को पकड़ो, तभी चौधरी साहब ने कहा 'मैं बिल्कुल ठीक हूँ। और लोगों को बचाओ।' जो पुलिस वाले वर्दी में थे वे सब तुरंत नदी में कूद पड़े और सबको पानी से बाहर निकाल लिया गया। किनारा कंकरीला था, नाव व रस्से पकड रखे थे। नदी से बाहर आकर सबने चैन की साँस ली। कितने धैर्यवान थे चौधरी साहब? वे धैर्य एवं साहस से संकट की उस घड़ी में घबराए नहीं और सबका धीरज बँधाया। पानी से बाहर आते ही वे बोले, 'देख लो, कोई और दबा तो नहीं रह गया है।' सब पानी से भीगे हुए थे और कुछ के जूते आदि पानी में रह गए थे। बाहर आते ही बाद में बड़ी हँसी हुई और मकरन्दी बाबा शर्मिंदा हो गए, लेकिन चौधरी साहब ने सब हँसी में टाल दिया।

फिर दोबारा सावधानी से सब लोग कई नावों में चढ़े और तब यमुना का पचनंदा घाट पार किया। हम सब भीगे – भीगे मकरन्दी बाबा के गाँव आए और खाना आदि खाया। मकरन्दी बाबा ने कहा कि चौधरी साहब, आज की ग्रह ही खराब थी, सो टल गई। ईश्वर की बहुत बड़ी कृपा रही कि किसी को कुछ नहीं हुआ, सब कुशल रहे। उन्होंने पुनः कहा कि चौधरी साहब माफ करना, ऐसी गलती को। चौधरी साहब बोले कि इसमें आपका क्या दोष, ऐसा होना था, और हँस पड़े और लखनऊ

के लिए रवाना हो गए। ऐसे साहसी एवं धैर्यवान थे चौधरी साहब कि बड़ी–से–बड़ी मुसीबत को आसानी से झेल जाते थे।

और चौधरी साहब बाल-बाल बच गए

सन् १९७४ में यू. पी. असेंबली के चुनाव चल रहे थे। माननीय चौधरी चरण सिंह जी भारतीय लोक दल के राष्ट्रीय अध्यक्ष थे। वह अपनी पार्टी के प्रचार में पूरे उत्तर प्रदेश में कार द्वारा जन सभाएँ कर रहे थे।

एक दिन सुबह वह कार द्वारा बरेली से बहेड़ी के लिए रवाना हुए। बहेड़ी, काठगोदाम और बरेली के बीच में जनसभा को संबोधित करना था। बरेली से १५–२० कि. मी. दूरी पर माननीय चौधरी साहब की कार एक स्थान पर स्लिप हो गई और कार तुरंत ही सड़क पर चक्कर काटकर बरेली की तरफ मुड़ गई। ड्राइवर ने तुरंत ही कार को कंट्रोल में कर लिया। आस–पास खेतों में किसान काम कर रहे थे, उन्होंने शोर मचाया कि कार गिरी – गिरी......। इतने में मैंने कार का दरवाजा खोला और चौधरी साहब बाहर निकले। किसानों ने माननीय चौधरी साहब को पहचाना और कहा कि चौधरी साहब भगवान की बड़ी कृपा है कि आप बाल–बाल बच गए और कुछ नहीं बिगड़ा है। डी. एल. जेड कार के ड्राइवर बलदेव राज कोहली ने भी अपनी कार की रिपोर्ट दे दी कि 'सर' कार में कोई खराबी नहीं है और बिल्कुल ठीक है। इतने में बहेड़ी की तरफ से तीन–चार किसान एक जीप में आ रहे थे। माननीय चौधरी साहब को सड़क पर खड़े देख कर रुक गए, चौधरी साहब से मिले और बड़े प्रसन्न हुए कि आपके अच्छे दर्शन हो गए। उन्होंने चौधरी साहब से कहा कि हम आपकी मदद करना चाहते हैं। चौधरी साहब मुस्काराए और कहा कि नेकी और पूछ–पूछ। भाई हमारी तो पार्टी गरीब है जो सेवा करनी है, कर दो। किसानों ने कहा कि आप बताएँ किस रूप में सेवा करें। तो चौधरी साहब ने कहा कि आप अपना नाम पता आदि लिख दें और हमारा बहेड़ी का कैंडीडेट बेचारा गरीब है। इलैक्शन भर के लिए दो जीपों का उनके लिए प्रबंध कर दो। हम उनसे कह देंगे और वे आपके पास आकर जीप ले जाएँगे। फिर वे बहेड़ी के लिए रवाना हो गए। थोड़ी देर बाद चौधरी चूरामन सिंह जी के फार्म पर रुके और जनसभा को संबोधित किया।

इस प्रकार जनता का अपने नेता के प्रति प्रेम था और वह अपना सर्वस्व लुटाने को तैयार रहते थे। लोग माननीय चौधरी साहब के दर्शन कर बड़े ही प्रसन्न होते थे। लोकदल के केन्डीडेट मौलाना वहाँ से जीते

थे। माननीय चौधरी साहब के प्रति किसानों का अथाह प्रेम था। उन की जगह की पूर्ति कोई नेता नहीं कर सकता, क्योंकि उन्होंने प्रदेश में किसानों और गरीबों के लिए बड़े–बड़े कार्य किए जो पुश्त–दर–पुश्त याद रहेंगे।

अनुशासन व नियम-कानून के प्रेमी

मार्च सन् १९७७ में जनता पार्टी लोकसभा के आम चुनावों में कांग्रेस के मुकाबले बहुत बड़े बहुमत से जीत कर आई थी, तब श्री मोरारजी देसाई के नेतृत्व में जनता पार्टी की सरकार बनी थी। उस सरकार में माननीय चौधरी चरण सिंह गृहमंत्री बने थे। जनता पार्टी के उत्तर प्रदेश में ८५ में से ८५ सांसद जीत कर आए थे, जिनमें अधिकतर चौधरी साहब के समर्थक ही थे। उस समय नई दिल्ली में मंत्रियों की कोठी खाली नहीं थीं। कुछ दिनों के लिए शुरू में चौधरी साहब को १३ए, अकबर रोड, निवास मिला। बाद में ५ रेसकोर्स आवंटित हुआ और जून में वे उसमें पहुँच गए थे। माताजी वगैरह लखनऊ से सामान लेकर ५ रेसकोर्स में जून में ही आ गई थीं। मिलने वालों का ताँता लगा रहता था, जिनमें भारत सरकार के मंत्री, प्रदेशों के मुख्यमंत्री व मंत्री, राजदूत, बड़े–बड़े ऑफिसर, सांसद व विधायक आदि भी होते थे। तब अफसरों ने सुरक्षा का ख्याल रखते हुए मिलने वालों के लिए कुछ नियम व टाइम टेबिल बना दिया था। इसके बावजूद कुछ लोग, जो चौधरी साहब के नजदीकी थे, जबरन बिना टाइम के अंदर घुस जाते थे। इससे बड़ी परेशानी होती थी, क्योंकि मिलने वालों से सही समय पर नहीं मिल पाते थे तब चौधरी साहब ने मुझे कहा कि अपने सुरक्षा वालों से कहो कि बिना टाइम लिए कोई भी व्यक्ति अंदर न घुसे और मिलने वाले कक्ष में बैठा करें। मैंने खासकर मुख्य द्वार पर लगे सुरक्षा कर्मचारियों को हिदायतें दे दीं। एक दिन सुबह ८–९ बजे के बीच उत्तर प्रदेश के एक सांसद साहब मिलने आए और बिना समय लिए अंदर घुसने लगे तो सुरक्षाकर्मी ने उन्हें रोक कर विनम्र निवेदन किया कि अभी गृहमंत्री साहब स्नान कर रहे हैं, आप यहीं कक्ष में बैठें। एम.पी साहब माननीय चौधरी साहब के काफी नजदीक थे, वे सुरक्षाकर्मी को डाँटते हुए जबरन अंदर कोठी में घुस गए। यह बातें माननीय चौधरी साहब बाथरूम में ही सुन रहे थे। थोड़ी देर में यह सब बातें मेरे नोटिस में भी आईं। मैंने एम. पी. साहब से कहा कि वह ड्यूटी वाला तो माननीय चौधरी साहब द्वारा दिए गए हुक्म की तामील ही कर रहा है, आपने उसे सबके सामने डाँट दिया है, यह अच्छी बात नहीं है।

यह सब तो आप लोगों की सुविधा के लिए ही किया जा रहा है। अगर आप लोग ऐसा करेंगे तो काम कैसे चलेगा। थोड़ी ही देर में चौधरी साहब तैयार होकर मिलने के लिए अपने कमरे में बैठे और घंटी बजाई। मैं चौधरी साहब के पास गया तो उन्होंने यही बात छेड़ दी कि कौन साहब आए हैं। उन एम. पी. साहब को चौधरी साहब ने समझाया और कहा कि अभी तुरंत मानें कि मेरी गलती थी। एम. पी. साहब ने तुरंत ऐसा ही किया और उस कर्मचारी को कुछ राहत मिली। मामला सुलझ गया अन्यथा नियम और कानून का पालन नहीं हो सकता था। इससे दोनों का सम्मान बढ़ा और परंपरा को बल मिला। माननीय चौधरी साहब अनुशासन, नियम और कानून के बड़े पक्के थे। जब कोई भी व्यक्ति उनसे मिलने आता था तो बड़े अनुशासन से मिलते थे और वे मिलने वाले पर भी नजर रखते थे कि वह क्या गलती कर रहा है, बाद में उसे टोक भी देते थे।

पुलिस बल से विशेष लगाव

सन् १९७९ के दिसम्बर महीने की बात है। देश में लोकसभा के मध्यावधि चुनाव हो रहे थे। प्रधानमंत्री चौधरी चरण सिंह कलकत्ता के चुनावी दौरे पर थे। वे हवाई जहाज द्वारा कलकत्ता के दमदम हवाई अड्डे पर पहुँचे। वहाँ वी. आई. पी. लॉज पर पार्टी के कार्यकर्ता अपने नेता का बेसब्री से इंतजार कर रहे थे। चौधरी साहब के साथ पत्रकार, पुलिस के आला अफसर, जॉइन्ट डाइरेक्टर आई. बी. श्री सुभाष चन्द्र टण्डन, पी. एस. ओ. के रूप में मैं और अन्य लोग मौजूद थे, जो चौधरी साहब के साथ चल रहे थे। दाँये–बाँये वर्दीधारी पुलिसकर्मी अपनी ड्यूटी पर खड़े हुए थे। चलते समय माननीय चौधरी साहब ने मुझसे धीरे से कहा कि तेरे पुलिस वाले तो चुपचाप खड़े देख रहे हैं, कोई नमस्ते भी नहीं कर रहा है। चौधरी साहब की बातें पीछे खड़े श्री सुभाष टण्डन (जे. डी.) भी सुन रहे थे। तब मैंने चौधरी साहब से कहा, सर, ये सशस्त्र पुलिस के हैं, इस पर पीछे चल रहे टण्डन साहब मुस्काए और खुश हुए कि करतार सिंह ने अच्छा जवाब दिया है। श्री टण्डन ने चौधरी साहब को बताया कि श्रीमान जी, जो पुलिसवाला वर्दी में सुरक्षा ड्यूटी पर होता है और अपनी सावधान की पोजीशन में होता है, तो मान लिया जाता है कि वह वी. आई. पी. को सैल्यूट कर रहा है और अपनी सुरक्षा ड्यूटी भी दे रहा है। चौधरी साहब मुस्करा कर बोले कि मैं करतार सिंह से वैसे ही कह रहा था कि बेचारे ठण्ड चुपचाप खड़े हैं, हिल–डुल भी नहीं रहे हैं। इतने में वी. आई. पी. लॉज आ गया। वहाँ उपस्थित पार्टी कार्यकताओं एवं अन्य लोगों द्वारा

नारों तथा फूल—मालाओं से चौधरी साहब का गर्मजोशी से स्वागत किया गया। फिर कारों के काफिले के साथ अपने प्रोग्राम में चल दिए। उनके साथ गाड़ी में मैं बैठा हुआ था। कुछ देर बाद उन्होंने कहा, "देख, मैं तेरे सिपाहियों की नमस्ते जरूर लेता हूँ।

चौधरी साहब पुलिसवालों की ड्यूटी देख कर उनकी बड़ी प्रशंसा करते थे कि वह सर्दी, गर्मी और बरसात में अपनी ड्यूटी पर हर समय सतर्क रहते हैं, चाहे कितनी ही देर क्यों न हो जाए। वह कहते थे कि इनकी किसी त्यौहार आदि पर भी छुट्टी नहीं होती है, दिन—रात अपनी ड्यूटी देते रहते हैं। कभी—कभी यह भी कहते थे कि छोटे कर्मचारी की एक—दो बार तो गलती माफ हो सकती है, लेकिन बड़े अफसर की गलती माफ नहीं हो सकती है। जो अफसर बेईमान तथा भ्रष्ट होता है, उसे मैं कतई नहीं छोड़ता। ईमानदार के लिए हर सुविधा पहुँचाने को तैयार हूँ। पुलिस के प्रति उनके मन में हमेशा सहानुभूति थी। चौधरी साहब कहते थे कि पुलिसकर्मी दूसरों की अपेक्षा कम गलती करते हैं। अतः उन्होंने अपने गृहमंत्री व उप—प्रधानमंत्री एवं वित्तमंत्री के कार्यकाल में अपना पी. एस. राजा विजय करण (आई. पी. एस.) को रखा था।

वे समय के बड़े पाबंद थे

सन् १९८२ में लोकदल ने मिलकर राष्ट्रीय लोकतांत्रिक मोर्चा बनाया था जिसके तहत चौधरी चरण सिंह, तत्कालीन लोकदल के राष्ट्रीय अध्यक्ष एवं भाजपा के श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी ने देश के कुछ हिस्सों में जनसभाएँ की थीं।

उपरोक्त दोनों नेताओं ने एक प्रोग्राम पालघाट (केरल) में शायद अक्टूबर, १९८२ में बनाया था। दोनों दिल्ली से इण्डियन एयरलाइंस के जहाज द्वारा पहले कोयम्बटूर पहुँचे और रात्रि में विश्राम कोयम्बटूर किया। दूसरे दिन सुबह उन्हें कार द्वारा पालघाट के डाक बंगले में जाना था, जो वहाँ से तकरीबन 30 कि. मी. के आसपास था। जब चलने के लिए तैयार हुए तो भाजपा और लोकदल के कुछ कार्यकर्ता आ गए। चौधरी साहब कार की तरफ चलने लगे और उनके पीछे वाजपेयी जी चल रहे थे, साथ में कुछ कार्यकर्ता भी थे। सामने से तीन—चार लाला लोग आए और उन्होंने माननीय चौधरी साहब को नमस्ते किया। चौधरी साहब ने दोनों हाथ जोड़कर बड़े अदब से लाला लोगों की नमस्ते ली। फिर वह वाजपेयी जी से मिले और उनसे कहा कि हमारा परिचय चौधरी साहब से करा दो। इतने में भाजपा के कार्यकत्ताओं ने श्री अटल जी से धीरे से कहा

कि बड़े मिजाज हैं चौधरी जी के, तो अटल जी तुरंत ही बोले कि इसी का नाम तो चौधरी चरण सिंह है। कार्यकर्ता बड़े मुस्कराए। मैं (सिक्योरिटी ड्यूटी में) चौधरी साहब के साथ था और यह सब नजारे देख रहा था।

श्री वाजपेयी जी ने चौधरी साहब से कहा कि यह लाला लोग आपसे अपना परिचय करना चाहते हैं, हमारे परिचित व्यक्ति हैं। लालाओं ने कहा कि चौधरी साहब हम हिसार (हरियाणा) के रहने वाले हैं और यहाँ पर सूती कपड़ा मिल का हमारा धंधा चल रहा है। दूसरे दिन फिर कोयम्बटूर विश्रामगृह में आ गए थे। जब रात्रि के आठ बज गए थे तो चौधरी साहब ने मुझसे कहा कि खाना लगवा दो और वाजपेयी जी को बुला लो। खाना लग गया था और मैं वाजपेयी जी को खाने के लिए बुलाने गया और कहा कि चौधरी साहब खाने के लिए आपको याद कर रहे हैं। कार्यकर्ता उनके कमरे में थे तो उन्होंने कहा कि करतार सिंह, चौधरी साहब से रिक्वेस्ट कर लो कि वह थोड़ी देर बाद खाएँगे। मैंने माननीय चौधरी साहब को यह बात बतला दी। चौधरी साहब वक्त के बहुत ही पाबंद थे अतः वे खाना खाकर अपने कमरे में आराम के लिए चले गए। तीसरे दिन इण्डियन एयरलाइंस के विमान से वापस दिल्ली आ गए।

एक सहनशील व्यक्ति

फरवरी १९८५ में उत्तर प्रदेश और बिहार आदि प्रदेशों के विधानसभाओं के चुनावों में माननीय चौधरी साहब अपनी पार्टी लोकदल के प्रचार दौरे पर थे। मेरे ख्याल में १५ व १६ फरवरी को बिहार का चुनाव प्रचार करके माननीय चौधरी साहब का चुनाव प्रचार फिर पूर्वी उत्तर प्रदेश बनारस, गाजीपुर और बलिया आदि का था। १७ फरवरी की सुबह ८ बजे श्री कर्पूरी ठाकुर, जो बिहार प्रदेश लोकदल के अध्यक्ष और राज्य के पूर्व मुख्यमंत्री थे, ने चौधरी साहब से प्रार्थना करके एक प्रोग्राम पटना के पास ही मनेर क्षेत्र में सुबह ८ बजे का रख लिया था, जो बड़ा ही महत्त्वपूर्ण था। उसी दिन सुबह गाजीपुर (उ. प्र.) में भी प्रोग्राम लगा हुआ था। सर्किट हाऊस पटना से सामान सीधा पटना हवाई अड्डे एक सुरक्षाकर्मी के साथ, जो चौधरी साहब की सुरक्षा में था, भेज दिया गया था और हिदायत दी थी कि प्राइवेट प्लेन की ठीक तरह से सुरक्षा – जाँच आदि करके और सामान ठीक–ठाक करके बिल्कुल तैयार रखें। माननीय चौधरी साहब मनेर की जनसभा करके सीधे हवाई अड्डे प्लेन पर पहुँचेंगे। साथ में श्री कर्पूरी ठाकुर भी थे। मनेर की जनसभा को समाप्त करके चौधरी साहब पटना हवाई अड्डे को चलने को तैयार हुए तो अपने एक कार्यकर्ता ने

एक छोटी सी हाँडी में लड्डू दिए और कहा कि चौधरी साहब यह मनेर के लड्डू हैं जो दूर–दूर तक प्रसिद्ध हैं। हमने गाड़ी में लड्डू की हाँडी रख ली और सीधे हवाई अड्डे को चल दिए। पटना हवाई अड्डे पर ज्यों ही पहुँचे, तो मैंने अपने सुरक्षा कर्मी ए. एस. आई. श्री बाबूराम से पूछा कि बाबूराम सब ठीक–ठाक है। उन्होंने जवाब दिया कि सब ठीक है। माननीय चौधरी साहब ने कर्पूरी ठाकुर से विदा ली और प्राइवेट प्लेन के पायलट श्री बहादुर ने पटना हवाई अड्डे पर क्लियरेन्स माँगा और प्लेन को बनारस बाबतपुर हवाई अड्डे के लिए उड़ा दिया। प्लेन में हम चार व्यक्ति थे, पायलट बहादुर, माननीय चौधरी साहब, ए. एस. आई. बाबूराम और मैं उनका प्रमुख सुरक्षा कर्मी। प्लेन एक इंजन वाला था। प्लेन काफी नीचे जा रहा था। बक्सर के ऊपर जब प्लेन काफी नीचे जा रहा था तो ऐसा लगा कि इंजन बंद हो गया हो, तब मैंने कहा कि पायलट साहब क्या बात है? लेकिन फिर वही आवाज ठीक आने लगी। जब बक्सर पुल से गंगा नदी को आगे पार किया तो पायलट श्री बहादुर का वायरलैस के द्वारा बाबतपुर हवाई अड्डे से वार्तालाप होने लगा। श्री बहादुर को बाबतपुर (वाराणसी) हवाई अड्डे से कहा गया कि आप अपने प्लेन को ऊपर ले जाएँ, नीचे श्री चन्द्रशेखर साहब का हेलीकाप्टर जा रहा है। पायलट श्री बहादुर ने अपना प्लेन ऊपर कर लिया। उस समय माननीय चौधरी साहब अपनी किताब पढ़ने में व्यस्त थे। इतने में हवाई अड्डा आ गया। एयरक्राफ्ट काफी ऊँचा था, तो पायलट ने ऊपर हवाई अड्डे का एक चक्कर काटकर एयरक्राफ्ट को रनवे पर जैसे ही उतारा, एयरक्राफ्ट जोरों से हिलने और लड़खड़ाने लगा और वहाँ रनवे पर काफी दूर तक घिसटता हुआ चला गया। इंजन में से धुआँ निकलने लगा। मैं माननीय चौधरी साहब की बगल में बैठा था और उस समय मैंने चौधरी साहब को पकड़ लिया। उन्होंने किताब बंद करके कहा, 'क्या बात है?' मैंने कहा, 'बहादुर साहब जल्दी खिड़की खोलो।' पायलट ने तुरंत खिड़की खोल दी। चौधरी साहब और हम सब प्लेन से उतर कर काफी दूर खड़े हो गए। उस समय माननीय चौधरी साहब के एक हाथ में किताब व दूसरे में बेंत थी। उनके चेहरे पर किसी तरह की कोई घबराहट नहीं थी जबकि हम लोगों के तो होश उड़े हुए थे। इतने में फायर ब्रिग्रेड की गाड़ी आई और हम लोगों की तरफ अधिकारी ने इशारा करते हुए पूछा, सब ठीक है साहब? तब पायलट ने कहा कि हम लोग बिल्कुल ठीक–ठाक हैं, किसी को कुछ नहीं हुआ है, सब ईश्वर की कृपा है। तब फायर ब्रिग्रेड के अधिकारियों ने कहा साहब थोड़ा और पीछे हट जाएँ। जब फायर ब्रिग्रेड वालों ने एयरक्राफ्ट को ठीक तरह से देख लिया, तब हमने पायलट श्री

बहादुर से कहा कि अब हम अपना सामान निकाल लें। तब पायलट ने हमारा सारा सामान निकलवाया। इस समय चौ. साहब बोले कि 'अपने लड्डू भी निकाल लिए या नहीं'। मैंने देखा वे मुस्करा रहे थे। उनकी इस बात पर हम सब हँस पड़े। सब सामान उठाकर हम सब एयरपोर्ट टर्मिनल की तरफ चल दिए। वहाँ पर पार्टी के कार्यकर्ता और पुलिस वाले स्वागत के लिए आए हुए थे। खलबली मची हुई थी और एयरपोर्ट पर तो इमरजेन्सी जैसी लग गई थी। जैसे ही हम टर्मिनल पर पहुँचे, तो वहाँ पर एक हमारी जान–पहचान के सी.आई.डी (उ. प्र.) के डिप्टी एस. पी. श्री ताराशंकर पाठक मिले। उन्होंने कहा करतार सिंह क्या हो गया? मैंने कहा कि प्लेन में कुछ खराबी आ गई है लेकिन चौधरी साहब, हम लोग, सब बिल्कुल सुरक्षित हैं, किसी को कुछ नहीं हुआ है। यह जानकर कार्यकर्ता बहुत खुश हुए। नारेबाजी होने लगी। चौधरी साहब गाड़ी में बैठ गए और सीधे मीटिंग में चलने को कहा। दिन भर गाजीपुर में जनसभाएँ कीं। जब मीटिंग समाप्त करके बनारस सर्किट हाऊस की ओर शाम के समय कार से आ रहे थे, तो चौधरी साहब खुश मिजाजी में कबीर के दोहे गाने लगे–

> "राम भजे जा, काम करै जा, ना काहू का डर है।
> इस नगरी में सभी मुसाफिर, ना काहू का घर है।"

शाम को बनारस सर्किट हाऊस में आकर हमने विश्राम किया। फिर जगह–जगह से कुशलता जानने के लिए टेलीफोन आने लगे। सबसे पहले उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री एन. डी. तिवारी साहब का टेलीफोन आया और उन्हें राजी–खुशी बतला दी गई। फिर दूसरे दिन भी नियमानुसार प्रोग्राम चलता रहा, लेकिन माननीय चौधरी साहब सारे दिन हँसते बतियाते रहे। किसी प्रकार की उनके मन पर कोई घबराहट या चिंता नहीं दिखाई पड़ती थी। मैं मन ही मन कह रहा था कि कितना सहनशील है यह व्यक्ति।

१८

असहमत होने पर भी उनकी कदर करते थे

सी. राजेश्वर राव*

चौधरी चरण सिंह आजादी की लड़ाई के प्रमुख सेनानी थे। वह एक महान देशभक्त, राजनीतिज्ञ, चिंतक और विचारक थे। हिन्दुस्तान की एकता और अखंडता को बनाए रखने की बाबत वह हमेशा चिंतित रहते और किसी भी मुद्दे पर बिना किसी लाग–लपेट, हिचकिचाहट के अपनी राय दे देते थे। कोई कितना भी बड़ा आदमी, नेता क्यों न हो, उसके सामने अपनी बात रखने में वह कभी संकोच नहीं करते थे और कोई कितना भी बुरा क्यों न माने, साफ बात कहना उनकी प्रवृत्ति थी। इसकी सबसे बड़ी और अहम वजह यही रही कि वह एक सच्चे इंसान थे। उनका दिल साफ था और छल फरेब से उन्हें घृणा थी। साफ बात कहने का उन्हें नुकसान भी हुआ, लेकिन इसकी उन्होंने कभी कतई परवाह भी नहीं की।

मुझे याद आता है कांग्रेस का नागपुर अधिवेशन, उसमें पंडित जी (नेहरू जी) ने सहकारी खेती का एक प्रस्ताव रखा था, लेकिन चौधरी साहब (चरण सिंह जी उस समय कांग्रेस में ही थे) ने निर्भय होकर पंडित जी के सहकारी खेती के प्रस्ताव का पुरजोर विरोध किया। नतीजा यह कि वह प्रस्ताव पास ही नहीं हो सका। अपने विरोध के पीछे चौधरी चरण सिंह जी ने तर्क भी प्रस्तुत किये, जिन्हें सभी ने सराहा। यहाँ मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि निर्भयता उनकी विशेषता थी।

मुझे तकरीब पाँच–छह साल उन्हें बहुत करीब से देखने का मौका मिला। मुझे एक बार की बात याद आती है। उस समय चौधरी साहब प्राइम मिनिस्टर थे। मैं उनके पास वर्किंग क्लास का सवाल लेकर गया था। वर्कर्स की मांगे भी थीं। मैंने उनसे कहा था कि "चौधरी साहब आप प्राइम मिनिस्टर हैं, आपको यह मांगे मान लेनी चाहिए।" तब चौधरी साहब बोले कि "भई, गाँव में खेती पर काम कर रहे उस गरीब मजदूर को भरपेट रोटी तक नहीं मिलती, जबकि

---

* चंद्र राजेश्वर राव (१९१४–९४), राजनीतिज्ञ। तेलंगाना विद्रोह (१९४६–१९५१) में अहम भूमिका। महासचिव, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी सीपीआई (१९६४–९२)। उन्होंने सीपीआई की रणनीति और कार्यनीति को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी, जिसमें १९५१ में सोवियत संघ की यात्रा के दौरान स्टालिन के साथ हुई चर्चाएं भी शामिल हैं।

उसके मुकाबले शहर के मजदूर को तो काफी पैसा मिलता है।" तब मैंने उनसे कहा था कि आपके पूर्ववर्ती नेता मीठी–मीठी बातें करके वायदे करते रहे हैं। लेकिन कोई विश्वास नहीं करेगा कि चौधरी साहब ने मुझसे कहा कि "मैं कभी झूठ नहीं बोलूंगा। जो कर सकता हूँ, वही मैं कहूँगा। इसके अलावा कुछ नहीं।" यह दृष्टांत उनकी ईमानदारी का सबूत है।

वह किसान परिवार में पैदा हुए थे। इसलिए किसान, उसकी समस्याओं और उसके जीवन में आने वाली परेशानियों को वह बखूबी जानते थे। किसानों की भलाई के लिए उन्होंने जितना कुछ किया, वह एक मिसाल है। उसे भुलाया नहीं जा सकता। हमने भी किसान सभा बनाई। किसानों के लिए संघर्ष किया, जमींदारों–जागीरदारों के खिलाफ लड़ाई लड़ी लेकिन इसके बावजूद किसानों ने उन्हें ही अपना रहनुमा–मसीहा समझा–माना। चौधरी साहब जब प्राइम मिनिस्टर थे, उस दौरान मैं आंध्र प्रदेश गया था, तब वहाँ के किसानों ने मुझसे कहा था कि "पहली बार एक किसान का बेटा इस मुल्क की गद्दी पर बैठा है यानी प्राइम मिनिस्टर बना है। अब तो हमारी तकदीर ही बदल जाएगी।"

चौधरी साहब को अक्सर लोग कुलक कहते थे। यहाँ मैं बताना चाहता हूँ कि हिन्दुस्तान में जब मैंने भी, किसानों को उनके उत्पाद के सही दाम दिए जाने की माँग उठायी थी, तो मुझे भी कुलक कहा गया था। यह बात जब मैंने चौधरी साहब को बताई तो उन्होंने मुझसे कहा– "आप भी कुलक हो गए। आप तो कम्युनिस्ट लीडर हैं, आपको भी नहीं छोड़ा।"

वह भारी उद्योगों के खिलाफ थे। उनका मानना था कि इसी की वजह से देश में बेकारी, भुखमरी, गरीबी और बेरोजगारी बढ़ी। चौधरी साहब ने एक नहीं कई पुस्तकें लिखीं। इनमें इकनॉमिक नाइटमेयर ऑफ इंडियाः इट्स कॉजेज एंड क्योर प्रमुख है। इसमें उन्होंने इन समस्याओं के निदान के तरीके भी सुझाए हैं। उस समय हम लोग उनकी बात नहीं मानते थे। लेकिन मैं इतना कहना चाहता हूँ कि हिन्दुस्तान में बेकारी और गरीबी को दूर करने का एक ही रास्ता है और वह है समाजवाद का। इससे गरीबी भी खत्म हो जाएगी और बेकारी भी। हाँ, यदि भारी मशीनें नहीं लगानी हैं तो चौधरी चरण सिंह जी का रास्ता ही बेहतर है।

इसमें कोई दो राय नहीं है कि चौधरी साहब ईमानदारी के साथ राजनीति करते थे। वह जो कहते थे, वही करते भी थे। कुछ बातों से हम लोग उनसे असहमत थे लेकिन उनकी ईमानदारी, साफगोई आदि की वजह से हम लोग उनकी बहुत कदर करते थे। हमें उनकी ज़िंदगी से प्रेरणा लेनी होगी। उन्होंने इस मुल्क के लिए, किसानों के लिए, देश की एकता–अखण्डता के लिए जो कुछ किया, उसे भुलाया नहीं जा सकता।

१९
एक दृष्टि संपन्न जननेता
उदयन शर्मा*

चौधरी चरण सिंह का लंबा राजनीतिक जीवन अनेक सफलताओं और भोलेपन में किए गए गलत फैसलों का भी लंबा सिलसिला है। लेकिन चौधरी चरण सिंह एक राजनीतिज्ञ, एक पार्टी के अध्यक्ष, एक भूतपूर्व प्रधानमंत्री का नाम ही नहीं था, चरण सिंह एक विचार धारा का नाम भी था। चौधरी चरण सिंह का मतलब शहर में देहात का खामोश नहीं, आत्मविश्वास से सराबोर कदम था। चौधरी चरण सिंह का मतलब राजनीतिक सत्ता में पिछड़ों और गरीबों की भागीदारी था। चौधरी चरण सिंह का मतलब दिल्ली की चकाचौंधी और बदबूदार भ्रष्ट सत्ता–राजनीति में ग्रामीण सुलभता, सहजता और गलतियों का प्रवेश था। चौधरी चरण सिंह एक अर्थशास्त्री का नाम था, जो भारत की समस्याओं को भारतीय परिवेश में देसी तरीकों से सुलझाना चाहता था। चौधरी चरण सिंह उस ठेठ देहाती राजनीतिज्ञ का नाम था, जिसकी राजनीति में कोई दुराव, कोई कपट नहीं था, बल्कि उसे जो अच्छा लगा, उसे ताल ठोंक कर अच्छा कहा और जो बुरा लगा, उसे खुल्लम–खुल्ला कोसा।

आजादी के बाद इस देश में हर वर्ग की लॉबी थी, हर क्षेत्र की अपनी ताकत थी, पर किसान, जो आजाद भारत की असली ताकत थे, उनकी कोई आवाज नहीं थी, उनकी कोई लॉबी नहीं थी। छठे दशक के घटनाक्रमों ने ही किसानों की आवाज को एकजुट करने की नींव डाली थी। उत्तर प्रदेश की राजनीति में एक नाम काफी तेजी से सक्रिय था, जो न तो वामपंथियों की तरह लफ्फाजी में यकीन रखता था और न ही दक्षिणपंथियों की तरह शहर के बडे व्यापारियों का हितपोषक था। यह व्यक्ति राज्य में जमींदारी उन्मूलन के लिए शिद्दत से काम कर रहा था। सिर्फ काम ही नहीं कर रहा था, वरन् निहित स्वार्थों से टक्कर भी ले रहा था। यह नाम था– चौधरी चरण सिंह, जो कभी पंडित

---

* उदयन शर्मा (१९४९–२००१), लेखक और पत्रकार। अपनी ईमानदारी, विश्वसनीयता और खोजी रिपोर्टिंग के लिए प्रसिद्ध। संपादक, अमर उजाला (२००१)।

गोविंद बल्लभ पंत से, तो कभी डॉक्टर संपूर्णानंद से लड़ते रहते थे, भूमि सुधारों के तहत, पर उस किसान को जमीन का मालिक बनाने के लिए जो भूमि पर हल चला रहा था। लेकिन यह लड़ाई चौधरी साहब के लिए नई नहीं थी। एक गरीब किसान के घर में जन्मे चौधरी चरण सिंह की जीवन यात्रा काफी गरीबी में शुरू हुई थी। फिर भी नूरपुर में जन्मा किसान का यह बेटा जब आगरा से अपने गाँव वापस आया, तब उसके घर पर नामपट्ट लगा, जिस पर लिखा था–चरण सिंह, एम. ए., एल. एल. बी.।

वकील चौधरी चरण सिंह कांग्रेसी बन चुके थे और स्वतंत्र भारत में वे किसानों के सबसे बड़े प्रवक्ता थे। उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलन के दौरान चौधरी साहब को सबसे ज्यादा परेशानी अपनी यह माँग स्वीकृत कराने में हुई कि अतिरिक्त भूमि का आवंटन बिना किसी भुगतान के हो। हरिजनों के उत्थान पर कोई भाषण दिए बिना, राज्य में हरिजनों के लिए यह सबसे बड़ा काम था। गाँधी–नेहरू युग के बाद चौधरी चरण सिंह एकमात्र नेता थे, जिन्होंने अपनी अलग विचारधारा का विकास किया और उसका प्रचार पूरी शिद्दत से किया। चौधरी साहब जैसा किसान नेता भारत में अब कभी नहीं होगा। आज एक नेता ऐसा नहीं है, जो किसानों की सभा में घंटों बोलता रहे, उनको आँकड़े सुनाता–समझाता रहे और श्रोता सिर्फ भाषण को सुने ही नहीं, वरन् उसकी बातों को रट कर अपने–अपने मुहल्लों में तर्क के रूप में पेश करते फिरें। यह सिर्फ चौधरी साहब का चमत्कार था। अपने श्रोताओं और अपने समर्थकों पर ऐसा कब्जा बिरलों का होता है। चौधरी साहब ने अपने राजनीतिक जीवन में कितनी भी गलतियां की हों, कितनी ही असफलताओं को झेला हो, पर उन्होंने अपने आधार पर अपने लोगों से न तो कभी नाता तोड़ा, न ही कभी दूरी बढ़ाई। प्रेस और अभिजात्य वर्ग कुछ भी कहता रहा हो, पर वे अपने आधार से हर कीमत पर जुड़े रहे और उन्हीं की बात कहते रहे। अन्यथा यह हिम्मत किस राजनेता में होती है कि वह बंबई और कलकत्ता की आमसभाओं में भी किसानों की बात कहे, कृषि के विकास के पक्ष में और बड़े उद्योगों के खिलाफ तर्क जुटाए। इसीलिए किसान चौधरी साहब को प्यार करते थे और किसानों की आवाज उठाने के लिए, जिन्हें वे चुनौती देते थे, वे उनसे नफरत करते थे। इस बूढ़े व्यक्ति का यह भी चमत्कार ही था कि आप कहीं भी हों, उनकी पार्टी के साथ या उसके खिलाफ, पर आपका चौधरी साहब से रिश्ता सीधा होता था और वह भी सिर्फ दो तरह का– या तो आप उनसे नफरत कर सकते थे, या असीम प्यार। बदले में आपको भी या तो बेहद गुस्सा मिलता था, या अगाध स्नेह–निश्छल, काँच की तरह पारदर्शी और ठेठ देहाती बुजुर्गों सरीखा।

चौधरी चरण सिंह सत्ता के बाहर से (और सत्ता के अंदर रह कर भी) राजनीतिक तंत्र को बदलने की कोशिश कर रहे थे। चौधरी साहब की राजनीति में यही खुसुसियत थी कि उनका लक्ष्य कभी नहीं गड़बड़ाया, चाहे उसे प्राप्त करने के रास्ते पर विवाद क्यों न रहा हो। बुद्धिजीवी–खासकर शहरी अभिजात्य–ड्राइंगरूमों में बैठकर कह सकते हैं कि चौधरी चरण सिंह छठे सातवें दशक में हर राज्य में पैदा हुए किसान नेतृत्व का ही अंग थे। इसी रौ में ये विद्वान लोग चौधरी साहब को बीजू पटनायक, चिमनभाई पटेल, देवराज अर्स, यशवंतराव चह्वाण की पाँत में बैठा देते हैं। यह गलत भी है और चौधरी साहब के साथ अन्याय भी। यह सच हो सकता है कि ये सभी छठे दशक की कृषि–प्रगति और सातवें दशक की कृषि क्रांति की देन रहे हों, लेकिन इनमें से किसी ने किसान के लिए राजनीति नहीं की और न ही किसानों और गाँवों के लिए अपनी राजनीति दांव पर लगायी। इसीलिए ये किसी–न–किसी बड़े केंद्रीय नेता के सूबेदार तो रहे, पर स्वयं आजाद रूप से नेता नहीं बन सके और इन सभी नामों को चौधरी साहब का नेतृत्व स्वीकार करना पड़ा, चाहे बीजू पटनायक हों, चिमनभाई पटेल हों, यशवंत राव चह्वाण हों, देवराज अर्स हों या बिहार के महामाया बाबू हों। देवराज अर्स तो अपने अंतिम दिनों में लोक दल में अपनी पार्टी के विलय का फैसला ले चुके थे लेकिन उनकी असमय मृत्यु के कारण यह संभव न हो सका और बाद में आंध्रप्रदेश में चौधरी साहब के दर्जनों साथी–अर्स की मृत्यु के बाद एन. टी. आर. के साथ चले गए, अन्यथा इतनी उम्र में भी चौधरी साहब दक्षिण भारत में घुसपैठ कर जाते। एन. टी. रामाराव इसी कारण से १९८३–८४ में सबसे ज्यादा आदर चौधरी चरण सिंह का करते थे और गैर कांग्रेसी मुख्यमंत्रियों में वे अकेले थे, जो चौधरी साहब के दाह–संस्कार में मौजूद थे।

यह भी सच है कि चौधरी साहब से कांग्रेसियों ने नहीं, बल्कि विरोधी दलों ने भी नफरत की थी, क्योंकि हमारा विरोध पक्ष आचार्य नरेंद्र देव–लोहिया–चरण सिंह को छोड़कर अभिजात्य के ही कब्जे में रहा है। चौधरी साहब इतने सालों तक विरोधी दलों की राजनीति में जमे रहे, तो अपने दम पर, अपने वोटरों की ताकत पर। अन्यथा चौधरी साहब के बारे में जितनी घृणित और अशोभनीय बातें भारतीय जनता पार्टी (पहले जनसंघ), संगठन कांग्रेस, जनता पार्टी के एक धड़े और खुद उनकी पार्टी के नेताओं ने कही हैं और कहते रहे हैं, वैसी बातें कांग्रेस ने राजनीतिक विरोध होने पर भी कभी नहीं कहीं। पर पटनायक, चिमनभाई, चह्वाण आदि की तरह ये भी मौका पड़ने पर मजबूरी में चौधरी साहब का नेतृत्व स्वीकारते रहे। अन्यथा ये लोग, अगर बस चलता, तो चौधरी साहब को

राजनीति से निष्कासित करने की इच्छा रखते थे। लेकिन वे मजबूर थे। चौधरी साहब की ताकत का सबूत १९७१, १९७४, १९७७, १९८०, १९८४ और १९८५ में उनकी पार्टियों को मिले वोट थे।

यह संभव कैसे हुआ कि उपर्युक्त नेताओं और पार्टियों से चौधरी साहब ऊपर उठ गए? इस देश की राजनीति में कुछ बातें सबसे पहले चौधरी चरण सिंह ने कहीं और अपने पक्ष में तर्क देते समय गाँधी की सोच और तर्कों को गवाही के रूप में पेश किया। कृषि और किसान के बढ़ते प्रभाव के समय हर राज्य में इस वर्ग से नेता आये, पर चौधरी चरण सिंह, चौधरी चरण सिंह इसलिए थे, क्योंकि गाँव और किसान की बात करने वाले सबसे पहले चौधरी चरण सिंह ही थे। जब वे किसान की बात करते थे, तो हर जाति का किसान उसमें शामिल रहता था और जब वे गाँव की बात करते थे, तो वे कुटीर उद्योगों, हाथ से धंधा करने वाले कारीगरों और कलाकारों की बात करके एक गंभीर आर्थिक नीति पेश करते थे।

जुबान से चौधरी साहब हमेशा कड़े रहे और किसी भी बात की १०० बार तहकीकात करना उनकी आदत में शुमार था, लेकिन वे किसी भी कीमत पर अपने आधार की बात, अपने समर्थकों की बात नहीं भूलते थे। क्या इस देश में अंग्रेजी प्रेस को यह पहचान हुई कि ३१ मई को चौधरी साहब के शव के पास शामली के महेन्द्र सिंह टिकैत फूट–फूट कर क्यों रो रहे थे? सत्यपाल मलिक घंटों चौधरी साहब के शव के पास खड़े होकर क्यों रोते रहे? इसलिए कि ये लोग आज जो कुछ भी हैं, चौधरी साहब के कारण हैं, और वे चाहे किसी भी पार्टी में रहें, चौधरी साहब को नहीं भूल सकते हैं। चौधरी साहब से पहले गाँव और हस्तशिल्पियों की बात आजाद भारत में किसने की थी? अगर हम ध्यान से देखें तो पाते हैं कि चौधरी साहब के किसान से डर कर, उनके गाँव से आतंकित होकर ही सभी अन्य पार्टियों ने किसान– किसान कहना शुरू किया था। उनके बोलने के बाद ही सभी ने कारीगरों–हस्तशिल्पियों की बातें अपने चुनावी घोषणापत्रों में डाली थीं। उनकी आवाज गाँवों की, पिछड़ों की आवाज बन चुकी थी। लेकिन यह भी सच है कि चौधरी साहब का पचास फीसदी वोटर इतना गरीब था कि वह उनकी सभाओं में आ सकता था, किसान घाट पर आकर उनके लिए रो सकता था, लेकिन बेचारा वोट नहीं डाल पाता था– गरीबी, शोषण और आतंक के कारण। अन्यथा चौधरी साहब ने उत्तर प्रदेश पर १९७४ में ही कब्जा कर लिया होता।

जो वर्ग चौधरी साहब के नेतृत्व में खड़ा हो चुका था, उसका एक उदाहरण काफी है। १९८० के लोकसभा चुनाव के दौरान हेमवती नंदन बहुगुणा कांग्रेस (इ) के सेक्रेटरी जनरल थे और पार्टी का नेतृत्व संजय

गाँधी के हाथों में था। चुनावों के बाद बहुगुणा जी ने मुझे बताया, "चौधरी चरण सिंह ने जीना हराम कर दिया था। हम ही जानते हैं कि हम कैसे बिहार, उत्तर प्रदेश, हरियाणा और राजस्थान में जीते हैं। भैया यादवों का छह साल का लड़का भी हमारी पार्टी की जीप देखकर खड़ा हो जाता था और चौधरी चरण सिंह की आलोचना तो दूर, उनका नाम आते ही ईंटों से जीप गाँव से बाहर कर देता था।" यह ताकत थी चौधरी साहब की १९६९ से १९८७ तक। यह ताकत चौधरी साहब ने अर्जित की थी १९५९ में नेहरू को चुनौती देकर – आर्थिक नीतियों पर। मजेदार बात यह थी कि अपनी निजी बातचीत में वे नेहरू को अपना नेता मानते थे और कहते थे, "जवाहरलाल जी अपने अंतिम दिनों में प्लानिंग में हुई गलती समझ गए थे, पर उसे सुधारने के लिए वे जीवित नहीं रहे।"

इन्हीं चौधरी चरण सिंह का एक महत्वपूर्ण योगदान युवा पीढ़ी को यह है कि उन्होंने एक पूरी युवा पीढ़ी राजनीति को दी। जब भी वे किसी युवा को चुनते थे, तो उसे किसी पद पर आसीन कर देते थे। हिंदी राज्यों में आज जितने प्रभावशाली राजनेता हैं, उनमें से अधिकांश कभी–न–कभी या तो चौधरी साहब के नेतृत्व में काम कर चुके हैं या फिर भूतपूर्व केंद्रीय वित्त राज्यमंत्री ब्रह्मदत्त या उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व कृषि मंत्री नरेंद्र सिंह की तरह वे शुद्ध चौधरी साहब के राजनीतिक उत्पाद हैं।

लेकिन मेरी दृष्टि में चौधरी चरण सिंह का सबसे बड़ा योगदान गाँव, किसान या ग्रामीण कारीगरों से जुड़ी अर्थनीति या किताबें ही नहीं, बल्कि आज के परिप्रेक्ष्य में उत्तर प्रदेश में उनका सबसे बड़ा योगदान हिंदू और मुसलमान सांप्रदायिकताओं को कमजोर करना था। जब तक चौधरी साहब सक्रिय रहे, उन्होंने संघियों को बकरी बना कर रखा। चौधरी साहब की जुबान कड़वी थी और अपने मुसलमान साथियों से वे काफी कड़ी बातें कहते थे, पर आचरण में वे एक महान धर्मनिरपेक्ष व्यक्तित्व थे। इसी कारण उत्तर प्रदेश के गरीब मुसलमानों का बहुमत चौधरी साहब को वोट देता था और इसी कारण गाजियाबाद से फैजाबाद तक का मुसलमान बड़ी तादाद में चौधरी साहब का समर्थक था। चौधरी साहब के आर्थिक दर्शन में मुख्य जोर कारीगरों पर था, जिनका ९० फीसदी उत्तर प्रदेश और बिहार का मुसलमान है। यह चौधरी साहब का ही रुतबा था कि सांप्रदायिक दंगे कभी ग्रामीण क्षेत्रों में प्रवेश नहीं कर सके थे, क्योंकि १९६७ से चौधरी साहब ने संघियों को गाँवों से दौड़ा लिया था। उनके राजनीतिक अभ्युदय से सबसे ज्यादा नुकसान संघियों का हुआ था और राजनीतिक दृष्टि से उनकी मृत्यु से भारतीय जनता पार्टी ने राहत की साँस ली है। हरियाणा में भाजपा – देवीलाल गठबंधन भाजपा ने इसी

दृष्टि से किया। भाजपा के मामले में चौधरी साहब ने १९८३ में गलती की थी, इसे वे बाद में स्वीकारते थे।

चौधरी साहब का एक गुण यह था कि वे गलती करने पर मान लेते थे कि गलती हो गयी। इसका कारण यह था कि उनसे कोई भी कार्यकर्ता बहस कर सकता था। यह एक अजीब गुण था। वे अपनी पार्टी के नेताओं से न बहस करते थे, न उनको ज्यादा महत्व देते थे, पर उनकी पार्टी के युवा कार्यकर्ता उनसे जब चाहें तब, कितनी भी देर बराबरी से बहस कर सकते थे। इसी तरह की एक बहस का नतीजा था– एन. डी. ए. का दफनाया जाना। वे १९७७ की अपनी एक राजनीतिक गलती के लिए स्वयं को जीवन भर खुद ही कोसते रहे। १९७७ के चुनाव हो चुके थे। जनता पार्टी ने भारतीय लोकदल के चुनाव चिन्ह पर चुनाव लड़ा था। जीत के बाद सांसदों का बहुमत बाबू जगजीवन राम को प्रधानमंत्री बनाने के पक्ष में था। ऐसे में गाँधी शांति प्रतिष्ठान में सेठ रामनाथ गोयनका की देखरेख में एक राजनीतिक षडयंत्र रचा गया। इसमें बीजू पटनायक और राजनारायण (दोनों तब चौधरी साहब की पार्टी में थे) भी शामिल थे। राजनारायण को भेज कर अस्पताल में पड़े चौधरी साहब से चिट्ठी लिखवायी गई कि चौधरी साहब का समर्थन मोरारजी देसाई को है। इस तरह एक एहसानफरामोश व्यक्ति इस देश का प्रधानमंत्री बन गया, जिसने पहले जे. पी. को और बाद में चौधरी साहब को सदा हेय दृष्टि से देखा। बाद में चौधरी साहब जीवन भर अपने इस निर्णय पर पश्चाताप करते रहे।

प्रेस से चौधरी चरण सिंह के रिश्ते हमेशा खराब रहे। प्रेस से उनको हमेशा शिकायत रही कि वह उनका उल्लेख जाट नेता की तरह करता रहा, एक किसान नेता के रूप में नहीं। यह बात सच भी थी, भारतीय प्रेस का एक बड़ा वर्ग उनको हमेशा पश्चिमी उत्तर प्रदेश का नेता मानता रहा। उनकी मृत्यु के बाद भी अज्ञानी पत्रकार उन्हें हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश का नेता मानते रहे। ये लोग पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार को भूल गए, जहाँ किसानों और पिछड़ों ने चौधरी साहब को जो प्यार और समर्थन दिया, उसकी कल्पना नहीं की जा सकती है। उन्हें मीडिया से दूसरी शिकायत यह थी कि वह उनकी खबरें सिर्फ उतनी ही छापता है, जितनी उनके राजनीतिक झगड़ों से संबंधित होती हैं, लेकिन यह नहीं छापता कि उन्होंने नीतिगत वक्तव्य क्या दिया है। यह कितने आश्चर्य की बात है कि भारतीय प्रेस १९६९ से १९८५ तक हर छह महीने के बाद चौधरी चरण सिंह की राजनीतिक मृत्यु की घोषणा करता रहा, कभी मोरारजी से मतभेद होने पर, तो कभी देवीलाल से मतभेद होने पर, तो कभी उपचुनाव हारने पर। लेकिन हर बार चौधरी साहब के राजनीतिक

भविष्य के बारे में अधिकांश प्रेस गलत साबित होता रहा। प्रेस से चौधरी साहब के मनमुटाव का संभवतः एक कारण यह भी था कि चौधरी जी अपने गाँव वालों को जितना समझदार और राष्ट्रभक्त मानते थे, अभिजात्य वर्ग को उतना ही अज्ञानी और गैर–जिम्मेदार मानते थे। अभिजात्य से उन्हें दिल से घृणा थी। देश का कोई भी पूँजीपति उनका दोस्त नहीं था। मेरठ के पृथ्वीनाथ सेठ एक जमाने में उनके घनिष्ठ मित्र थे, लेकिन बी. के. डी. बनने के बाद नीतियों को लेकर चौधरी जी का उनसे झगड़ा हो गया। भारतीय राजनीति में विरोधी दलों की सबसे बड़ी बिडंबना यह रही कि उनका नेतृत्व गरीब, भूमिहीन किसान, खेत मजदूर और हरिजन की बात तो करता है, पर मन से स्वयं अभिजात्य वर्ग में प्रवेश पाने का इच्छुक रहता है। चौधरी साहब की ऐसी कोई तमन्ना नहीं थी। इसके विपरीत वे इस वर्ग के चरित्र से नफरत करते थे। चौधरी साहब का घरेलू रहन–सहन और व्यक्तिगत खर्च जितना साधारण और कम था, उसकी कल्पना किसी भी भारतीय राजनीतिज्ञ को देखकर नहीं की जा सकती। चौधरी साहब अपनी पत्नी गायत्री देवी जी के साथ जिस सादगी से रहते थे, वह आज के युग में एक विधायक के लिए भी अकल्पनीय है। जमीन पर बैठ कर वही एक सब्जी–रोटी का खाना। न अपना घर, न कोई बैंक बैलेंस, न कोई संपत्ति।

भारतीय राजनीति में बिरले ही ऐसे नेता हैं, जो बड़े स्तर पर राजनीति में रह कर भी किसी उद्योगपति से चंदा न लें। चौधरी साहब व उनकी पत्नी दोनों हमेशा ही आर्थिक दृष्टि से एकदम विपन्न रहे। सैकड़ों धनपशुओं ने बूढ़े आदमी के चक्कर लगाए और चले गए, पर इनमें से कोई भी चौधरी साहब को भ्रष्ट नहीं कर सका। करोड़पति बाप के घर पैदा होकर शोषण और लूट की कमाई से मजे में जीवन निर्वाह करके कोई भी सेठ या राजनेता ईमानदारी की हुँकारें भर सकता है, लेकिन एक गरीब किसान के, खपरैल के घर में पैदा हुआ व्यक्ति अंत तक ईमानदार बना रहे, असली तपस्या वही है। चौधरी चरण सिंह इस तपस्या में खरे साबित हुए थे। शायद इसीलिए अक्सर बिहार की गरीबी की बात करते समय, बिहार के पिछड़ों–हरिजनों की बात करते समय चौधरी साहब को मैंने रोते देखा था। चौधरी साहब की सबसे बड़ी शक्ति यह थी कि उनके व्यक्तिगत जीवन और सार्वजनिक जीवन में अंतर नहीं था।

चौधरी चरण सिंह विरोधी दल के नेता थे। लेकिन उन्होंने विरोध को कभी भी राष्ट्रहित से ऊपर नहीं माना। वे राष्ट्रीय आंदोलन की उपज थे, इसीलिए वे घनघोर राष्ट्रभक्त थे। इंदिरा गाँधी से वे आर्थिक नीतियों के कारण और उत्तर प्रदेश–हरियाणा के कुछ नेताओं के कारण बेहद नाराज

रहते थे, पर १९८४ में ऑपरेशन ब्लूस्टार के बाद उन्होंने खुल कर इस कार्रवाई का समर्थन किया था, जबकि प्रकाश सिंह बादल से उनकी गहरी छनती थी। किंतु नवंबर में जब सिख विरोधी दंगे हुए, तो चौधरी चरण सिंह विरोधी नेताओं में सबसे पहले थे, जिन्होंने दंगों के खिलाफ सिखों के समर्थन में बयान दिया और खुद सड़क पर आये।

भारतीय राजनीति में चौधरी साहब मनमर्जी के बादशाह थे। जिसको चाहा अपनी पार्टी में रखा, जिसको चाहा निकाला। चाहे देवीलाल हों या कर्पूरी ठाकुर या बुद्धप्रिय मौर्य, इन लोगों ने चौधरी साहब को कभी पसंद नहीं किया, ये सभी मजबूरी में चौधरी चरण सिंह के साथ रहे। इस मजबूरी का कारण था। ये लोग बार–बार चौधरी जी को छोड़ कर भागते रहे और मजबूरी में वापस आते रहे। चौधरी साहब को लोग अक्सर सत्तापरस्त कहते हैं, पर प्रश्न यह है कि राजनीति में सत्ता के लिए कौन नहीं है? चौधरी साहब की हैसियत विरोधी दलों में सबसे ऊँची थी, इसलिए सबको तकलीफ थी। लेकिन चौधरी साहब के कांग्रेस विरोध में एक फर्क था। चौधरी साहब का विरोध 'नेगेटिव' नहीं 'पॉजिटिव' था। उन्होंने कांग्रेस के खिलाफ एक वैकल्पिक आर्थिक कार्यक्रम दिया और इसी वैकल्पिक नीति को आधार बना कर अपनी धरती से जुड़े रहे। कार्यक्रम का जवाब कार्यक्रम से देने के कारण ही हरियाणा से उड़ीसा तक के सभी सूबेदार चौधरी साहब की छाया में इकट्ठा होते रहे। चौधरी साहब अपनी समस्त सफलताओं–असफलताओं के बावजूद भारतीय राजनीति को एक स्पष्ट धारा प्रदान कर गए हैं। वे इसीलिए याद नहीं किए जाएंगे, क्योंकि वे उत्तर प्रदेश, हरियाणा, बिहार या राजस्थान में अपने बूते पर विधायक चुनवा सकते थे, या वे केंद्र सरकार के गृहमंत्री या फिर प्रधानमंत्री रहे थे। उनको इसलिए याद किया जाएगा कि एक गरीब किसान के बेटे ने उस वर्ग को आवाज दी, जो शोषित था, जिसकी कोई लॉबी नहीं थी। चौधरी साहब के कारण ही हर पार्टी में आज किसानों की, पिछड़ों की, कारीगरों की और गाँव वालों की आवाज है। चौधरी साहब के कारण ही आज शामली में महेंद्रसिंह टिकैत पैदा हो सकते हैं। चौधरी साहब को किसानों–गाँव वालों के ऐसे नेता के रूप में याद किया जाएगा, जिसने इनको आवाज और नई दिशा दी, जिम्मेदारी और अक्खड़पन के साथ।

२०

एक विरोधी की नजर में चौधरी चरण सिंह

प्रताप कुमार टंडन*

कम्युनिस्ट पार्टी के किसान मोर्चे पर काम करने वाले एक कार्यकर्ता के नाते मैं चौधरी चरण सिंह के विचारों का शुरू से कट्टर विरोधी रहा हूँ। किंतु फिर भी जब–जब कभी भी मेरी मुलाकात चौधरी साहब से हुई, मैंने विचारों की तीखी नोक–झोंक के बाद यह पाया कि वे न सिर्फ अपने विचारों के प्रति दृढ़ थे बल्कि विरोधी विचारों का सम्मान करना जानते थे तथा अपने विचारों पर उतना ही दृढ़ रहने वाले साधारण से साधारण ईमानदार कार्यकर्ता को अपना स्नेह भी प्रदान करते थे। १९५३ से लेकर १९७८ तक अनेक बार चौधरी साहब से मेरी भेंट हुई और कुछ ऐसे अवसरों का ज़िक्र करके मैं चौधरी साहब के व्यक्तित्व के इस पहलू का उल्लेख करना चाहूँगा।

देश के प्रथम आम चुनावों के बाद पार्टी ने मुझे पूर्वी जिलों से हटाकर (जहाँ से मैंने अपना किसान कार्य आरंभ किया था) राज्य केंद्र लखनऊ में, दमन के एक दौर के बाद उत्तर प्रदेश किसान सभा के राज्य केंद्र को पुर्नगठित करने की जिम्मदारी सौंपी। उस समय उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन तथा भूमि सुधार अधिनियम, इलाहाबाद हाई कोर्ट द्वारा लम्बे अरसे के बाद, वैध घोषित होने के बाद कानून का रूप धारण कर रहा था तथा उस पर राजनीतिक क्षेत्रों में काफी गरमागरम बहस चल रही थी। सभी जानते हैं कि १९४५ में बनी जमींदारी विनाश समिति की रिपोर्ट तथा इस रिपोर्ट के आधार पर इस अधिनियम को तैयार करने में सबसे प्रमुख योगदान चौधरी साहब का ही था।

चौधरी साहब जोतों की हदबन्दी के सिद्धांत रूप से विरूद्ध थे। उनका कहना था कि ढाई तीन एकड़ से कम की और लगभग १५ एकड़ से अधिक की जोतें अलाभप्रद होती हैं। इसलिए उनकी राय में भूमि के

---

* प्रताप कुमार टंडन (१९००–२००५), स्वतंत्रता सेनानी और कम्युनिस्ट राजनीतिज्ञ। सचिव, यूपी–राज्य किसान सभा और संयुक्त सचिव, अखिल भारतीय किसान सभा। अखिल भारतीय कृषि श्रमिक संघ से जुड़े रहे।

छोटे–छोटे टुकड़े बाँटना भूमि जैसे दुर्लभ संसाधन को बरबाद करना है। क्योंकि यह छोटी जोत वाले खेती में पर्याप्त पूँजी लगाकर उसका सर्वाधिक लाभप्रद उपयोग नहीं कर पाएंगे। उत्तर प्रदेश के राजस्व मंत्री के रूप में उन्होंने एक पुस्तक लिखी थी, "उत्तर प्रदेश में कृषि क्रान्ति"। इस पुस्तक में उन्होंने स्पष्ट लिखा है कि यदि उनका बस चले तो इन छोटी जोत वालों में भूमि वितरित करने के बजाय, उनके पास की भूमि लेकर उन्हें दूसरे घरेलू छोटे उद्योगों में लगाया जाय (जैसे मोमबत्ती, कागज, दियासलाई आदि) और इनमें बड़े व्यवसायियों के प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाय। उन्होंने इस पुस्तक में यह भी कहा है कि ऐसा वे राजनीतिक कारणों से नहीं कर पा रहे हैं। १५ एकड़ से बड़ी जोतों के बारे में उनके विचार यह थे कि उन्हें खरीद कर या किसी और तरीके से और अधिक भूमि हासिल करके अपनी जोत का आकार बढ़ाने से रोक दिया जाए–उत्तराधिकार के फलस्वरूप यह जोतें अपने आप कई व्यक्तियों में बंटते–बंटते छोटी हो जाएंगी।

हम जोतों की हदबंदी के द्वारा भूमि जैसे खेती के प्रमुख संसाधन के अधिक न्यायपूर्ण वितरण के सदा प्रबल पक्षधर रहे हैं। हम अब भी समझते हैं कि कांग्रेसी सरकारों ने जान बूझकर हदबन्दी कानूनों में ऐसे चोर दरवाजे छोड़ रखे हैं, जिससे इन कानूनों को अमल में प्रभावहीन बना दिया गया। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान "जोतने वालों को जमीन दो" के नारे ने ग्रामीण गरीबों को कांग्रेस का वोट बैंक बना दिया था। पर इन कानूनों के अमल ने उनकी आशाओं को चकनाचूर कर दिया है जिसके कारण वे आज जातिवादी संगठनों की ओर खिंच रहे हैं। दूसरी तरफ ग्रामीण जीवन पर हावी भूस्वामी ही न सिर्फ प्रत्येक कल्याणकारी कानून और कार्यक्रम को लागू करने के मार्ग में बाधक बन गए हैं, बल्कि प्रत्येक रूढ़िवादी विचार और सम्प्रदायवादी राजनीति के स्तम्भ बन गए हैं, भूमि सुधारों के प्रति इस खिलवाड़ के फलस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी पनप रही है तथा जिन क्षेत्रों में सामंती तत्व अधिक प्रभावशाली हैं (जैसे बिहार) वहाँ कृषि अर्थतंत्र अत्याधिक पिछड़ा हुआ है। इसलिए हम कृषि के विकास, गरीबी उन्मूलन तथा प्रगतिशील लोकतांत्रिक विचारों के आधार पर समाज के पुर्नगठन के लिए भूमि सुधारों को एक अनिवार्य शर्त मानते हैं। इस प्रश्न को लेकर लखनऊ के समाचार पत्र नेशनल हेराल्ड में मैंने चौधरी साहब के विचारों के विरोध में संपादक के नाम पत्र लिखा। मुझे यह जानकर अत्यंत आश्चर्य हुआ कि इस विषय पर अनेक प्रसिद्ध व्यक्तियों ने पत्र लिखे जैसे डॉ. अटल और लखनऊ विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभाग के रीडर स्व. डॉ. वीर बहादुर सिंह। स्वयं चौधरी साहब

ने मेरे जैसे साधारण कार्यकर्ता के तर्कों के अत्यंत शालीन भाषा और तर्कसंगत रूप में उत्तर दिए जिसके लिए मैंने अपने अंतिम पत्र में उनके प्रति सम्मान और आभार प्रगट किया।

इसके बाद किसान सभा के अनेक प्रतिनिधि मंडलों के सदस्य होने के नाते चौधरी साहब से अनेक बार साक्षात्कार करने का अवसर मिला। पहली ही मुलाकात में उन्होंने पूछा– आप लोगों में पी. के टण्डन कौन है? मैंने खड़े होकर उनका अभिवादन किया तो वे बोले, "तुम तो शहर के रहने वाले हो, खेती से तुम्हारा कोई मतलब नहीं, तो तुम कैसे किसान नेता बन गए?" मैंने कहा कि "चौधरी साहब किसान तो मैं नहीं हूँ किंतु यदि मेरे जैसा पढ़ा लिखा नवयुवक किसान जनता की सेवा में अपना जीवन निछावर करना चाहे तो आप जैसे महान किसान नेता को तो खुश ही होना चाहिए।" वे हँसे और बोले – "यदि ऐसा कर सको तो बहुत अच्छी बात है।" मैंने यह कहकर बातचीत समाप्त की– "चौधरी साहब आप का आशीर्वाद चाहिए" और उन्होंने हाथ उठाकर कहा जरूर मिलेगा।

कम्युनिस्ट पार्टी के विभाजन के बाद मैं मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी में गया। १९६९–७० के दौर की बात है। उस समय में बंग्लादेश का युद्ध चल रहा था। भारत–चीन संबंध अत्यंत कटु थे और बंगाल की खाड़ी में सातवें अमेरिकी बेड़े के आने से एक चिंताजनक स्थिति पैदा हो गई थी। उस समय यह उचित समझा गया कि लखनऊ में एक सर्वदलीय सभा करके बंग्लादेश के युद्ध के संबंध में भारत सरकार की नीति के प्रति प्रदेश की समस्त जनता का पूर्ण समर्थन व्यक्त किया जाय। श्री चन्द्र भानु गुप्त की अध्यक्षता में हुई इस सभा में चौधरी साहब और श्री राजनारायण मौजूद थे और अपनी पार्टी का मैं प्रतिनिधित्व कर रहा था। यहाँ यह बता देना अप्रसांगिक न होगा कि राजनारायण और मैं बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के समकालीन छात्र थे।

मीटिंग शुरू होते ही श्री गुप्त बोल उठे – "उत्तर से चीन और दक्षिण से अमेरिका हमें दबोच लेगा और इस युद्ध में हम हार जाएंगे।" राजनारायण जी ने तुरंत एक प्रस्ताव पेश किया कि अर्न्तराष्ट्रीय रंगमंच पर हमारी यह शोचनीय दशा नेहरू की गलत नीतियों का परिणाम है जिसके अर्न्तगत हमने तिब्बत चीन के सुपुर्द कर दिया। मैं उपस्थिति पुस्तिका पर हस्ताक्षर करने जा रहा था, इस प्रस्ताव के आते ही मैंने हाथ रोक दिया। मैं ऐसी सभा में भाग लेने को तैयार नहीं था जिसमें राजनारायण जी का उपर्युक्त प्रस्ताव बहस का मुख्य मुद्दा हो। चौधरी साहब ने यह देख लिया और वे भांप गए कि मैंने हस्ताक्षर पुस्तिका बिना हस्ताक्षर किए क्यों उनकी तरफ बढ़ा दी। वे बोले– "गुप्ता तुम राजनीति

नहीं समझ रहे हो। न चीन हमला करेगा और न सातवां बेड़ा – वह तो एक राजनीतिक चाल है।" फिर राजनारायण जी से बोले – "वापस लो अपना प्रस्ताव, हम लोग नेहरू की अन्तर्राष्ट्रीय नीति पर विचार करने यहाँ नहीं बैठे हैं।" फिर अचानक मेरी ओर घूमकर बोले– "टण्डन, तुम चुप क्यों हो – क्या मैं ठीक कह रहा हूँ।"

मैंने कहा कि "जब आप मेरी बात कह रहे हैं तो मुझे बोलने की क्या जरूरत है। राजनारायण को मैं जानता हूँ वे हमेशा उलटी–पलटी बात कहने के आदी हो गए हैं।" राजनारायण उठ कर मेरे पास आए और बोले "भाई टण्डन, अगर तुम्हें एतराज है तो मैं अपना प्रस्ताव वापस लेता हूँ।" चौधरी चरण सिंह जी के हस्तक्षेप से सभा सफल हुई और सर्वसम्मत प्रस्ताव पास हो सका।

यहाँ मैं यह कहना उचित समझूँगा कि चौधरी चरण सिंह देश के उन इने गिने शीर्षस्थ नेताओं में से थे जिन्होंने पश्चिम बंगाल में १९७१ के चुनावों के बाद मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी के सबसे बड़ी पार्टी के रूप में चुन कर आने के बाद, उसे सरकार बनाकर विधानसभा में अपना बहुमत सिद्ध करने का मौका न देने और पुनः चुनाव कराने की घोषणा की निंदा की थी। बाद में हुए चुनावों में की गई धांधलीबाजी और सिद्धार्थ शंकर राय की सरकार द्वारा मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी के विरूद्ध जारी किए गए अर्द्ध–फासिस्टी दमन के विरोध में आवाज उठाने वालों में वे एक थे।

श्रीमती इंदिरा गाँधी द्वारा २५ जून १९७५ को आपात स्थिति लागू किए जाने के संबंध में किए गए प्रसारण को सुनकर मुझे पार्टी का यह आदेश प्राप्त हुआ कि मैं कुछ अन्य नेताओं के साथ भूमिगत होकर कार्य करूँ। यह स्थिति १९७७ में चुनावों की घोषणा के बाद समाप्त हुई और मुझे यह आदेश प्राप्त हुआ कि मैं श्री हेमवती नन्दन बहुगुणा और बाद में जेल से छूट कर आने पर चौधरी चरण सिंह से भेंट करूँ। मैं उत्तर प्रदेश की पार्टी में इन दोनों नेताओं के सबसे नजदीक समझे जाने वाले व्यक्तियों में से था।

चौधरी साहब जेल से छूटकर आचार्य कृपलानी की अध्यक्षता में हुए एक सम्मेलन में उपस्थित थे जिसने आपात स्थिति समाप्त करने की माँग करते हुए एक प्रस्ताव पारित किया, जिसे "आम सहमति" कहा गया था। मुझे यह आदेश दिया गया था कि मैं इस आम सहमति की एक प्रतिलिपि चौधरी साहब से लेकर उसका हिन्दी अनुवाद करूँ और उसको छपवाकर वितरित करने की व्यवस्था करूँ।

मैं चौधरी साहब के निवास स्थान पर "जनमोर्चा" के तत्कालीन संपादक श्री हरगोविन्द के साथ गया और जैसे ही मैंने लोकतंत्र पुर्नस्थापित करने

की बात कही, चौधरी साहब बोल उठे – "तुम लोग कब से लोकतंत्र के समर्थक हो गए? तुम्हारा बस चले तो मेरी गर्दन काट लो।" मैंने कहा– "चौधरी साहब गर्दन कटने का डर तो आपके बजाय हम लोगों को होना चाहिए क्योंकि हम इस समय इंदिरा गाँधी को हटाकर आपको देश का प्रधानमंत्री बनाना चाहते हैं। और यदि हमें गर्दन कटने का डर नहीं है तो आपको किस बात का डर है?" इस नोकझोंक के बाद बड़े कायदे से बातचीत हुई। वर्तमान राजनीतिक स्थिति की चर्चा करते हुए चौधरी साहब कहा– "इन्दिरा गाँधी तो झूठ मुजस्सिम है। मगर मैं क्या करूँ, मेरे साथ भी कुछ ऐसे लोग हैं जिनके कौल फ़ैल का कोई एतबार नहीं। (उन्होंने कुछ नाम लिए जिनका इस समय ज़िक्र करना उचित नहीं होगा) अगर तुम्हारे जैसे दो तीन भी कार्यकर्ता मिल जाएं तो कुछ काम आगे बढ़े।" मैंने फिर चुटकी लेते हुए कहा कि "चौधरी साहब क्या बात है कि आपके पास केवल ऐसे ही लोग आते हैं जिनके कौल फ़ैल का एतबार आपको नहीं और मेरे जैसे लोग कम्युनिस्ट पार्टी ही में जाना पसंद करते हैं। इस बात पर आपने कभी सोचा?

चौधरी साहब हँसे और बोले भई अब बात खत्म करो, फिर मिलेंगे। हम लोग उठे और मुझे अत्यंत आश्चर्य हुआ तब कि जब चौधरी साहब हमें नंगे पाँव चलकर सड़क तक पहुँचाने आए।

चौधरी साहब जनता पार्टी की तरफ से पूरे उत्तर भारत के लिए १९७७ के चुनाव में उम्मीदवारों का चयन करने के लिए सर्वाधिकार प्राप्त नेता बनाए गए। मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी के उत्तर प्रदेश के मंत्री स्व. शंकर दयाल तिवारी के साथ मैं उनके बंगले पर पार्टी की ओर से यह कहने के लिए भेजा गया कि हमारी पार्टी के लिए कम से कम एक–दो सीटें छोड़ दें। हमने पाँच सीटों के नाम पेश किए और केवल एक सीट पर सन्तोष करने का संकेत दिया।

चौधरी साहब टिकटार्थियों की भीड़ से घिरे अपने बंगले के लॉन में बैठे थे। हम लोगों को देखते ही बोले – "जरा देर लॉन के एक कोने में बैठ जाओ, देखते हो कैसे लोगों से मेरा पाला पड़ा है। थोड़ी देर में इनसे छुट्टी लेकर तुमसे बात करूँगा।" उनका नौकर तीन कुर्सियाँ डाल कर चला गया।

थोड़ी देर में चौधरी साहब आये। मैंने देखा उनकी कुर्सी छाँव में है और जाड़े के दिन थे। मैं उनकी कुर्सी को हटाकर धूप की ओर ले जाने लगा। वे हँसते हुए बोले – "कुर्सी तो खिसका लोगे। मगर राजनीति में जरा भी नहीं खिसकते हो। तुमने अपनी पार्टी के दो एम. एल. ए. के वोट खराब किए और हमारे विधान परिषद के उम्मीदवार को नहीं दिये।"

मैंने कहा – “चौधरी साहब आप अपने विचारों की दृढ़ता के लिए मशहूर हैं और मैं तो उसी का अनुकरण कर रहा हूँ। कहीं आप कुछ ढीले तो नहीं पड़ गए हैं?“

इसके बाद बातचीत शुरू हुई। चौधरी साहब केवल इसके लिए तैयार थे कि हमारे एक साथी को अपने चुनाव चिन्ह पर लड़ने का टिकट दे दें। मगर हमारे लिए अपनी पार्टी के चुनाव चिन्ह पर लड़ने के लिए एक भी सीट छोड़ने को तैयार नहीं हुए। बातचीत विफल रहने पर मैंने कहा– ”हम पाँच गाँव माँग रहे थे, आप एक भी देने को तैयार नहीं हैं। अब केवल यही होगा कि धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र में आपसे हम युद्ध करें। दोबारा मैं बात करने नहीं आऊँगा।“

चौधरी साहब ने मुस्कराते हुए मेरी पीठ पर हाथ रखकर कहा– ”ऐसा मत कहो। हम फिर मिलेंगे। तुम जब चाहो मिलने आ सकते हो। वक्त फिर मिलाएगा। परिस्थितियाँ फिर मिलाएंगी।“

यह शब्द आज भी मेरे कान में गूंज रहे हैं क्योंकि आज फिर वैसा ही वक्त आ गया है।

और उदाहरण देना – और घटनाओं का ज़िक्र करना अब मैं जरूरी नहीं समझता।

चौधरी चरण सिंह किसान समस्याओं के विशेषज्ञ थे और उन्होंने अपने देश के ही नहीं, अनेक देशों के कृषि विकास का गहन अध्ययन किया था। विचारों की दृष्टि से दो विपरीत छोर पर खड़े होने के बावजूद उनके साथ वाद–विवाद में मुझे सदा आनन्द आता था क्योंकि मुझे बहुत सी नई बातें मालूम हो जाती थीं। मैं चौधरी साहब के बारे में केवल इतना ही और कहना उचित समझता हूँ कि वे उस समय भी जब मैं उनके तर्कों का डटकर विरोध करता था, बुरा नहीं मानते थे और अक्सर कहते थे ”मैं, तुमने जो कहा है, उस पर फिर से सोचूंगा।“

चौधरी साहब मेरे जैसे साधारण कार्यकर्ता के साथ समानता का व्यवहार करते थे, छेड़ कर बातचीत करते थे और मुझसे कहते थे तुम और अध्ययन करो, गाँव जाकर देखो – यह उनकी महानता थी जिसके प्रति मैं आज भी नतमस्तक हूँ। यही उनके प्रति मेरी श्रद्धांजलि है।

२१
उन्होंने की थी समता के विचार को जनाधार देने की पहल

सुरेन्द्र मोहन*

अकस्मात १६ वर्ष पहले २३ दिसंबर का वह विशाल जनसमूह आँखों के सामने आ जाता है, जो चौधरी चरण सिंह के जन्मदिन पर उनका अभिनंदन करने के लिए दिल्ली में उमड़ आया था। उस समय चौधरी साहब सत्ता से बाहर थे और संभवतः उनके प्रति जनता की सहानुभूति के चलते इस जनसमूह की विशालता बढ़ गई थी। उतना विशाल जनसमूह उसके बाद कभी दिल्ली में एकत्र नहीं हुआ, न ही किसी अन्य नेता के अभिनंदन में और न ही स्वयं चौधरी चरण सिंह के लिए। उस दिन भी नहीं, जब वे प्रधानमंत्री बने, न ही उनके उस एकमात्र जन्मदिन पर, जब वे प्रधानमंत्री पद को सुशोभित कर रहे थे। उस दिन भी समृद्ध किसानों अथवा कुलकों की संख्या के मुकाबले घुटनों तक धोती बांधे और मीलों पैदल चल कर आए साधारण किसानों की ही गिनती बहुत भारी थी।

१९८० में जब शिक्षित और बुद्धिजीवी वर्ग चौधरी चरण सिंह का आलोचक था, तब भी यह बात उसकी समझ से परे थी कि उत्तर भारत में अकेले वे इतने लोकप्रिय कैसे हो गए। वास्तव में यह करिश्मा ही था कि १९६७ में १६ विधायकों के साथ कांग्रेस से हटकर संयुक्त विधायक दल के नेता के तौर पर मुख्यमंत्री बनने के दो वर्ष के अंदर वे १९६९ के मध्यावधि आम चुनाव में १०० विधायकों को निर्वाचित कराने में कामयाब हुए और १९७७ तक वे उत्तर भारत के किसानों और पिछड़ों के एकमात्र नेता बन गए।

१९६७ तक चौधरी चरण सिंह उत्तर प्रदेश से बाहर तो जाने ही न जाते थे यदि उनको याद भी किया जाता था, तो उनकी ईमानदार और

---

* सुरेन्द्र मोहन (१९२६–२०१०), राजनीतिज्ञ, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, प्रजा सोशलिस्ट पार्टी और जनता पार्टी। गाँधीवादी सिद्धांतों को बढ़ावा देते हुए खादी और ग्रामोद्योग आयोग (१९९६–१९९८) की अध्यक्षता की।

निर्भय छवि के चलते और दूसरे इसलिए कि १९५९ में नागपुर के कांग्रेस अधिवेशन में उन्होंने जवाहरलाल नेहरू द्वारा प्रतिपादित सहकारी कृषि की नीति का विरोध किया था। अलबत्ता जब वे चौथे आम चुनाव के बाद तत्काल कांग्रेस से हटे, तो उन्होंने कांग्रेस विरोध की उस लहर को आंधी बना दिया, जिसमें कांग्रेस कई राज्यों में हारी थी। उसके बाद उनका भारतीय क्रांति दल यूं तो साठे कांग्रेसियों का एक मोर्चा बना, जिसमें बिहार के महामाया प्रसाद सिन्हा, मध्यप्रदेश के तख्तमल जैन, राजस्थान के कुंभाराम आर्य और हरियाणा के देवीलाल शरीक हो गए, तो भी उसकी पकड़ उत्तर प्रदेश में ही रही। १९६९–७४ और १९७४–७५ में भी उनकी भूमिका कुछ वैसी आकर्षक न थी कि वे उत्तर भारत में अपना असर जमा पाते। १९७४ में उत्तर प्रदेश के आम चुनाव में यदि तत्कालीन भारतीय जनसंघ के साथ उनका चुनाव समझौता हो जाता, तो वे कांग्रेस को बुरी तरह हरा सकते थे, पर वे उस अवसर को चूक गए।

परंतु बाद में उत्तर भारत में वे धीरे–धीरे जनमानस में छाते गए। उसके दो बड़े कारणों पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डालना जरूरी है, तभी यह बात स्पष्ट हो सकेगी कि १९६७ में एक बार विपक्ष में आ बैठने पर वे राष्ट्रीय विपक्ष के इतने महत्वपूर्ण नेता कैसे बने कि उनकी टक्कर का कोई अन्य नेता नहीं रहा, जिसको इतना विशाल समर्थन मिला। बल्कि उस दस–बारह वर्षों में स्थिति यह आ गई थी कि जैसे इंदिरा गाँधी से हट कर कोई कांग्रेसी पनप न पाया और घर वापस आने पर मजबूर हो गया, वैसे ही लोकदल से नाता तोड़ने का अर्थ हुआ विपक्ष की राजनीति से हट कर सत्ता पक्ष में जा मिलना या फिर चौधरी चरण सिंह का ही दोबारा दामन थामना।

जमींदारी उन्मूलन में देश के सबसे बड़े राज्य में चौधरी चरण सिंह ने भारी भूमिका निभाई। गोकि बिहार में कृष्णबल्लभ सहाय ने अपनी एक मिसाल कायम की और उस सामंतशाही से टक्कर ली, जिसकी जड़ें उत्तर प्रदेश की तुलना में कहीं गहरी थीं, तो भी चौधरी चरण सिंह ने स्वयं किसान समुदाय का व्यक्ति होने के कारण ज्यादा नाम पाया। जमींदारी उन्मूलन के बाद ही मध्यम किसान एक स्वतंत्र वर्ग के तौर पर उभरा और जब दूसरी–तीसरी पंचवर्षीय योजनाओं में देश को खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता के लक्ष्य से खेती को ज्यादा महत्व मिला, तो उसकी संपन्नता और आत्मविश्वास को अपेक्षतया भारी बल मिला। १९६५ में लाल बहादुर शास्त्री ने 'जय किसान' का नारा बुलंद किया। १९६६–६७ के सूखे के उत्पीड़न से किसान और उसके खेत को सिंचाई देने का महत्व और भी बढ़ा। उन्हीं दिनों सी. सुब्रह्मण्यम के खाद्य मंत्रित्व काल

में हरित क्रांति की ओर पग बढ़ाये गए। यानी १९५५–६७ का पूरा काल भारतीय राजनीति और अर्थनीति में उस किसान और खेती के पदार्पण का काल था, जिसका न तो अपना स्वतंत्र संगठन था और न ही एक सर्वमान्य नेता।

१९५९ में सहकारी खेती को ही प्रमुख मुद्दा बना कर चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, मीनू मसानी और एन. जी. रंगा ने स्वतंत्र पार्टी का गठन किया और लाइसेंस–परमिट राज का विरोध करते हुए कृषि को प्राथमिकता देने की नीति अपनाई। राजस्थान का भूस्वामी संघ, उड़ीसा की गणतंत्र परिषद और बिहार की तत्कालीन जनता पार्टी भी उनके साथ मिले। परंतु स्वतंत्र पार्टी भारत में किसान आंदोलन के एक तरह से संस्थापक नेता एन. जी. रंगा के बावजूद, किसानों की पार्टी न बन पाई। उसने भूमि सुधारों का विरोध करके जमींदारों और रजवाड़ों का साथ दिया। अतः यह भी उस शून्य को भर न सका।

समाजवादी आंदोलन ने भी कृषि को प्राथमिकता देने, खेती की उपज को लाभकर दाम दिलाने, जोत हदबंदी, सिंचाई, अनार्थिक जोतों का लगान माफ करने जैसे महत्वपूर्ण प्रश्न उठाए थे। गुड़–गन्ना, पाट, कपास वगैरह के दाम संबंधी लड़ाईयां भी लड़ी थी जमींदारी उन्मूलन के साथ–साथ भूमि के पुनर्वितरण का सशक्त आंदोलन चला कर किसान जनता में अपनी जड़ें भी जमाई थी लेकिन जमींदारी उन्मूलन के बाद भी वे जमीन के बंटवारे और भूमिहीनों के शोषण पर बल देते रहे, जिसके चलते जमीन के नए मालिक बने किसानों की विकास समस्याओं के साथ वे पूर्णतः जुड़े हुए नहीं दिखे, बल्कि शायद कई जगह हालत यही बनती गई कि किसान उनको भूमिहीनों की ही पार्टी मानने लगे। फिर भी उनकी हालत स्वतंत्र पार्टी जैसी नहीं हुई। समाजवादी आंदोलन की कमी यह थी कि उसका नेतृत्व मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों और औद्योगिक मजदूरों का था, जबकि कार्यकर्ताओं में किसानों की भारी संख्या थी। दूसरे, आपसी फूट, एक समूह द्वारा कांग्रेस में विलय, पहचान के संकट और क्रमशः जेपी, कृपलानी, लोहिया, नरेंद्र देव और अशोक मेहता के हटने के कारण किसानों में जो ताकत बनी थी, वह टूटी ही।

चौधरी चरण सिंह से वह खाली जगह भर गई। कुछ उनके अपने प्रयास अथवा संकल्प के कारण नहीं, बल्कि परिस्थिति की बाध्यता के कारण। उत्तर भारत में किसानों के उदीयमान मध्यमवर्ग को निभ्रष्ट, ईमानदार, किसान परिवार में जन्मे और सादगी पसंद नेता की जरूरत थी, वह पूरी हो गई। हरित क्रांति की अत्यंत सीमित सफलता से और

१९७३–७५ में मुद्रा प्रसार एवं महंगाई की मार से इस प्रक्रिया को मदद मिली। पाँच–छह वर्षों में चौधरी चरण सिंह उत्तर भारत के प्रमुख जन नेता बन गए, क्योंकि संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी ने उनके दल के साथ विलय करके उनको बिहार में भी एक बड़ा मौका दिया।

दूसरा कारण था, उत्तर भारत में पिछड़ा वर्ग आंदोलन, जो दक्षिण भारत की अपेक्षा पिछड़ गया था। महाराष्ट्र का बहुजन समाज आंदोलन, जो महात्मा फुले से प्रेरणा पाकर मोरे जेधे और खाडिलकर के नेतृत्व में बलवान हो गया था, उसने कांग्रेस के अंदर उच्चतर जातियों के प्रभुत्व को पचास के दशक में समाप्त कर दिया। तमिलनाडु में रामास्वामी पेरियार के द्रविड़ आंदोलन और आंध्रप्रदेश के आत्मसम्मान आंदोलन (जो बाद में जस्टिस पार्टी में मुखर हुआ) ने भी वही भूमिका निभायी और केरल में नारायण गुरू की अप्रत्यक्ष प्रेरणा से बनी एस. एन. डी. पी. ने भी। स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले दशक तक यह प्रक्रिया नर्मदा नदी के दक्षिण में लगभग पूरी हो चुकी थी। किंतु उत्तर भारत में अभी अवरुद्ध थी।

उच्चतर जातियों को उत्तर भारत में जमींदारी का बड़ा सहारा था और वे इस आर्थिक स्वामित्व के साथ–साथ शिक्षा और उसके फलस्वरूप सरकारी सेवाओं में भी बहुत आगे थीं। यहाँ समाज पर उनका दबदबा दक्षिण भारत की तुलना में कहीं अधिक था। स्वतंत्रता आंदोलन में सामाजिक–आर्थिक बदलाव की आकांक्षाओं के कारण जमींदारी प्रथा के खिलाफ भी वातावरण बना और समाज पर कुलीनों के दबदबे के खिलाफ भी। किंतु दक्षिण में तो कांग्रेस आंदोलन में काफी ऐसे नेता आगे आए, जो पिछड़ी जातियों के थे लेकिन उत्तर भारत में ऐसा न हो सका, इसलिए जब जमींदारी का खात्मा भी हुआ और लोकतांत्रिक चुनाव प्रणाली के चलते संख्या का महत्व भी बढ़ा, तो भी पिछड़ा वर्ग अपनी पहचान या अपना नेतृत्व पेश करने में कामयाब नहीं हो सका। कुल मिलाकर कर्पूरी ठाकुर बिहार में आगे आए और उत्तर प्रदेश में चौधरी चरण सिंह दोनों को ही पहला स्थान १९६७ में या उसके बाद मिला। दूसरे, यशवंतराव चव्हाण, संजीव रेड्डी, कामराज नाडार, हनुमंतैया और निजलिंगप्पा १९५७ के आसपास, बल्कि कामराज तो पहले ही, प्रमुखता पा चुके थे। उत्तर भारत मे साठोत्तर दशकों में पिछड़ा वर्ग आंदोलन तेजी के साथ आगे आया और नेता का स्थान भरा चौधरी चरण सिंह ने, क्योंकि पिछड़ों–दलितों, अल्पसंख्यकों के आंदोलनों में भी नेतृत्व के लिए बराबर वे ही आगे आते हैं, जो उनमें अपेक्षतया कम पिछड़े हुए हों। रेड्डी, चव्हाण, कामराज आदि की भी स्थिति वही थी।

भारत की अर्थव्यवस्था और जाति व्यवस्था में जो दो नए वर्ग गत

पच्चीस–तीस बरसों में सामने आए हैं और संख्या बल में भी जिनका दबदबा है, चौधरी चरण सिंह उनके सर्वमान्य नेता के तौर पर उभरे। उनको इसमें मदद मिली अपनी सज्जनता– शालीनता के कारण और उनके अगाध अध्ययन–मनन के चलते। वे पिछड़ी जातियों का सामाजिक समीकरण बना पाए, क्योंकि उन्होंने न केवल उनके सामाजिक संबंधों की जानकारी हासिल की. बल्कि इसलिए कि उन्होंने उनको आर्थिक कार्यक्रम की भी स्पष्ट रूपरेखा बताई और लोकतंत्र के साथ–साथ विकेंद्रीकरण के गाँधीवादी सिद्धांत का समावेश करके पंचायती राज और ग्रामोत्थान का राजनीतिक–सांस्कृतिक धरातल भी दिया और स्वदेशी, स्वभाषा और स्वावलंबन की बुनियादें मजबूत कीं।

१९७६ आते–आते भारतीय अर्थव्यवस्था में भी एक ऐसा मोड़ आ गया था कि पंचवर्षीय आर्थिक नियोजन को छोड़ना पड़ा था। मुद्रा का अवमूल्यन हो चुका था और चीन व पाक युद्धों के चलते खाद्यान्नों और अन्य चीजों के संबंध में आत्मनिर्भरता की कमी बहुत चिंताजनक थी। उसके बाद के दशक में इंदिरा गाँधी ने 'गरीबी हटाओ' के नारे पर चुनाव जीत कर जनता को निराशा की गुफा में ढकेल दिया।

इसलिए पंडित नेहरू द्वारा प्रतिपादित अर्थनीति, या कहिए कांग्रेसी अर्थनीति, अपनी साख पूर्णतः खो चुकी थी। जब जनता पार्टी विशेषकर चौधरी चरण सिंह ने वैकल्पिक अर्थनीति पेश की, तो उसने जनता को अपनी ओर आकर्षित किया।

चौधरी चरण सिंह ने अपने जीवनकाल के अंतिम बीस वर्षों में उत्तर भारत के किसानों और पिछड़ों को ही नया नेतृत्व नहीं दिया, उन्होंने गाँधीवादी अर्थनीति को भी गाँधी जी के निधन के तीस वर्ष बाद राष्ट्रीय चिंतन की मुख्यधारा में लाने में योगदान दिया। किंतु निपट आभिजात्य और कुलीन वर्ग और औद्योगिक–महानगरीय विशिष्ट जनसमूह के हाथों से देश की राजनीति और सामाजिक–आर्थिक सत्ता को छुड़ाने का कार्य जब भी संपन्न होगा, तब इतिहास इस तथ्य की साक्षी देगा कि जेपी और लोहिया जो बातें, सिद्धांत और कर्म से जीवनपर्यंत प्रचारित–प्रसारित करते रहे, उनको अत्यंत सशक्त भूमिका दे कर जनसाधारण के हाथों में राजनीतिक, आर्थिक और सामजिक सत्ता सौंपने की ठोस शुरुआत चौधरी चरण सिंह ने ही की थी। इसीलिए गाँधीवाद और समाजवाद के मध्य एक सेतु की तरह खड़े रह कर उन्होंने इन अवधारणाओं के साथ एक ऐसा जनसमुदाय जोड़ दिया, जो समता के दर्शनशास्त्र को साक्षात रूप दे सकता था। तत्वज्ञानी निःसंदेह चौधरी चरण सिंह की दसियों ऐसी उक्तियाँ, उदाहरण आदि जमा कर

ले सकते हैं, जो उनकी विसंगतियों को उजागर कर दें और वे गाँधी की बुनियादी सामाजिक मान्यता के संबंध में उनकी आर्य समाजी समझ की सीमाओं पर कटाक्ष भी कर सकते हैं, तो भी शायद वे भी इस तथ्य को अस्वीकार न कर सकेंगे कि सामाजिक समता, आर्थिक संतुलन और राजनीतिक विकेंद्रीकरण की आस्थाओं और कार्यक्रमों को उन्होंने एक अटूट जनाधार प्रदान करने में भारी पहल की है। हमारा समाज इन आकांक्षाओं में से कुछ समय तक मुँह चुरा भले ही ले, वह इनसे मुँह फेर लेने में अब सफल नहीं हो सकेगा।

२२

वह आजीवन किसान ही रहे

रघुवर दयाल वर्मा*

एक सामान्य किसान परिवार में जन्मे चौधरी चरण सिंह एक व्यक्ति नहीं, विचार थे। वह एक जाने–माने चिंतक और अर्थशास्त्री भी थे। सच तो यह है कि वह अदम्य साहसी, निर्भीक, कठिन परिश्रमी, दृढ़ निश्चयी, विलक्षण प्रतिभा के धनी और सिद्धांतों के प्रति अटूट आस्था रखने वाले राजनीतिज्ञ थे। प्रधानमंत्री की गौरवमयी कुर्सी पर बैठकर भी वह अपने आपको सदैव किसान ही मानते रहे। उनके मंत्रिमंडलीय सहयोगी श्री मिश्र ने उनसे मेरे सामने एक बार कहा था कि "चौधरी साहब आपकी धोती और कुर्ते में मैच नहीं है, कुर्ता ज्यादा और धोती उसकी अपेक्षा कम साफ दिखाई देती है।" चौधरी साहब हँसते हुए बोले कि मिश्रा जी "देखो मैं किसान हूँ। किसान ने तो कभी कुर्ता–धोती का मैच नहीं देखा। किसान के संस्कार तो आज भी मेरे साथ हैं। यह जो वर्मा जी आपके साथ बैठे हैं, फिरोजाबाद से विधायक हैं। इनको तो मैंने आज तक कभी मैच के हिसाब से कपड़े पहने ही नहीं देखा है। इनसे पूछो तो मालूम हो जाएगा।" मैंने कहा, "चौधरी साहब ने जैसा भी बताया है, वही हमारी किसान संस्कृति है और उसका ही अनुसरण चौधरी साहब कर रहे हैं।" इसके साथ ही श्री मिश्र जी ने अपने कथन को वापस ले लिया। यह तो महज एक संयोग था कि एकाएक ऐसी बात हुई। यह तो हम सभी जानते हैं कि चौधरी साहब किसान संस्कृति के सच्चे प्रतीक रहे। उनसे हमें यह प्रेरणा लेनी चाहिए।

चौधरी साहब ने कभी जातिवाद को प्रश्रय नहीं दिया और वह जातिवाद के सदैव खिलाफ रहे। वह जातिवाद को कलंक मानते थे। यह मैंने नजदीक रहकर देखा। एक बार लोकदल की दिल्ली में रैली थी। उसके बाद हम उनके निवास पर भी गए। तब उन्होंने कहा कि "वर्मा जी! आओ और यह बताओ कि उत्तर प्रदेश में गेहूँ ज्यादा बोया गया है

---

* रघुवर दयाल वर्मा (१९२६–२०११), राजनीतिज्ञ, भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) और समाजवादी पार्टी। पूर्व राज्य मंत्री और चार बार फिरोजाबाद से विधायक।

या लाहा–सरसों।" मैंने उत्तर दिया कि "चौधरी साहब" बिजली मिलती नहीं, नहरों में पानी नहीं, नलकूप चलते नहीं, गूलें टूटी पड़ी हैं, इन सबके रहते गेहूँ में कम से कम चार बार सिंचाई करनी पड़ती है। यही वजह है कि हमारे यहाँ के किसान लाहा और सरसों ज्यादा बोते हैं, क्योंकि उसमें दो बार के पानी से ही काम चल जाता है। पानी नहीं है तब भी उपज तो अच्छी होती ही है। इस कारण गेहूँ का क्षेत्रफल घट रहा है और कैश क्रॉप्स का एरिया बढ़ रहा है।" मेरा इतना कहते ही पास में ही खड़े सांसद चौधरी दिगम्बर सिंह ने कहा कि "चौधरी साहब जहाँ जाट वहाँ गेहूँ और जहाँ जाट नहीं, वहाँ गेहूँ नहीं।"

चौधरी साहब इतना सुनते ही आक्रोश में बोले कि जाट की आबादी पूरे देश में २ प्रतिशत से कम है। उत्तर प्रदेश में आगरा से पूर्व में जाट नहीं है, इस तरह तो तुम्हारे हिसाब से वहाँ गेहूँ होना नहीं चाहिए। तुम गलत हो, तुम लोग सही बात का निर्णय लेने ही नहीं देते हो। तुम तो बस अपने आगे–पीछे जाट ही को देखते रहना, मुल्क तुम्हें नहीं देखेगा। चले जाओ और मुझे बात करने दो।"

हमें दुःख तो इस बात का है कि आज हम सब लोग, जिन्होंने चौधरी साहब के साथ रहकर बरसों इस मुल्क की तकदीर बदलने के लिए संघर्ष किया है, उनके आदर्शों–सिद्धांतों से सबक नहीं लिया। आज राजनीति प्रदूषित हो गई है और अपराधियों का बोलबाला हो गया है और नेता जाति की राजनीति करने लग गए हैं। यदि इनसे छुटकारा पाना है तो चौधरी साहब के आदर्शों पर चलना होगा। ऐसे अनेक प्रसंग मेरे सामने आए, जब चौधरी साहब ने अपराधियों और शराबियों को अपने कार्यालय तक में घुसने नहीं दिया। यदि किसी अपराधी प्रवृत्ति वाले को किसी प्रकार टिकट मिल भी जाता और जब चौधरी साहब को इसकी जानकारी मिलती, तो वह चुनाव सभाओं में मंच से खुलेआम कहते थे कि मेरा फलाँ उम्मीदवार अपराधी है, इसलिए आप इसे वोट नहीं दें। यह था चौधरी साहब का आदर्श। इस देश के लिए असलियत में महामानव थे वह ईमानदारी, नैतिकता और सिद्धांत उनके लिए सर्वोपरि था, आज के माहौल में ढूंढे नहीं मिलेंगे ऐसे लोग। वह चिंतक, विचारक और लेखक भी थे। उन्होंने भारत की गरीबी और बदहाली पर कई पुस्तकें भी लिखीं। उनके द्वारा लिखी पुस्तकें देश के लिए मार्गदर्शक से कम नहीं हैं। इन पुस्तकों में उन्होंने देश की गरीबी, बेरोजगारी, जातिवाद, कृषकों तथा खेतिहर मजदूरों की मजबूरी, देश के बिगड़ते स्वरूप, हमारी आर्थिक गुलामी के कारणों का विशद् विश्लेषण किया है। यही नहीं एक सुधार सिद्धांत भी प्रस्तुत किया है। मैं चाहता

हूँ कि देश का वर्तमान नेतृत्व उनकी आर्थिक नीतियों का अनुसरण करे, तभी देश का विकास संभव है और तभी उनका किसान, गरीब, मजदूर, जिनके लिए वह जीवन भर संघर्षरत रहे, खुशहाल होगा। उनके प्रति यही सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

२३

सात्विक और दृढ़ व्यक्तित्व का राजनेता

शिवकुमार गोयल*

लखनऊ की एक शाम। राजधानी दिल्ली से उत्तर प्रदेश के दौरे पर गए हम पत्रकारों का दल तत्कालीन मुख्यमंत्री चौधरी चरण सिंह जी के बंगले के लॉन में बैठा हुआ था। चौधरी साहब चाहते थे कि मेरठ, बुलंदशहर तथा अन्य स्थानों से उनसे भेंट करने आए कुछ व्यक्तियों से मुलाकात कर, उन्हें विदा करने के बाद वे हमसे बातें करें। "विश्वंभर, तूने मेरठ से इतनी दूर आने की तकलीफ किसलिए की? चौधरी साहब ने सबसे किनारे बैठे हुए एक युवक से पूछा।

"चौधरी साहब, आपके दर्शनों के लिए यों ही चला आया हूँ।" उसने कहा तथा कुछ क्षण रुक कर वह बोला, "शराब की दुकान नीलाम होने वाली है। यदि आप किसी से कह दें तो काम हो जाए।"

मैं उनके बिल्कुल पास की कुर्सी पर बैठा ये सब बातें सुन रहा था। चौधरी साहब का चेहरा तमतमा उठा। परंतु उन्होंने गुस्से को दबाते हुए बहुत आहिस्ता से कहा, "भले आदमी, तुझे और कोई काम नहीं मिला। अब खेती–बाड़ी छोड़कर दलाली करके पैसा कमाना चाहता है। शराब और मुकदमेबाजी ने तुम लोगों का नाश कर डाला और तू मुझसे यह आशा करता है कि मैं तेरे लिए मौत का कुआँ खोदने में तेरी मदद करूँ?"

चौधरी साहब के ये शब्द सुनकर तथा उनके लाल हुए चेहरे को देखकर उस बेचारे का वहाँ से उठना भारी हो गया। वह उनके पैर छूकर वहाँ से चुपचाप खिसक लिया। इसके बाद उन दर्जन भर ग्रामीणों में से आधे तो उन्हें 'नमस्ते' करके खिसक गए। किसी ने बिजली व पानी की कठिनाई बताई, तो चौधरी साहब ने अपने निजी सचिव से नोट करके

---

* शिव कुमार गोयल (१९३८–२०१४), प्रतिष्ठित पत्रकार। हिंदुस्तान समाचार (समाचार समिति) की स्थापना करने और पत्रकारिता में प्रचुर योगदान देने के लिए जाना जाता है। उनके उल्लेखनीय लेखों में "अमर योद्धा सावरकर" और "स्वामी विवेकानंद का जीवन और विचार" शामिल हैं। डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम से गणेश शंकर विद्यार्थी पत्रकारिता पुरस्कार, कुशल संपादन के लिए स्वर्ण पदक और राज्यपाल विष्णुकांत शास्त्री से हनुमान पोद्दार राष्ट्र सेवा सम्मान से समान्नित किए गए।

तथा तुरंत कार्रवाई कराने का निर्देश दिया। चाय–पानी व भोजन की बात पूछने के बाद सबको विदा कर दिया।

वे १९३० में गाजियाबाद में वकालत करते थे। एक बार जब बलात्कार के आरोप में एक युवक का केस उनके पास आया और उन्हें बताया गया कि मामला झूठा है तथा आपस की रंजिश के कारण उस पर यह गंभीर आरोप लगाया गया है, तो प्रारंभ में उन्होंने मामला पैरवी के लिए स्वीकार कर लिया। बाद में एक दिन उसी गाँव के एक विश्वस्त आदमी से उन्हें यह पता लगा कि उक्त युवक वास्तव में कुख्यात अपराधी है तथा इस प्रकार के अपराधों का आदी है, तो उन्होंने अदालत में मामला पेश होने वाले दिन युवक के आने पर पैरवी करने से स्पष्ट इंकार कर दिया तथा कहा, "मैं किसी बलात्कारी एवं बदमाश को कानून के शिकंजे से छुड़ाने का पाप नहीं कर सकता।" उनके एक साथी वकील ने तर्क दिया, "हमें इन बातों से क्या लेना–देना है।" परंतु चौधरी साहब अपने निर्णय से टस से मस न हुए तथा उन्होंने एक सप्ताह पहले ली हुई फीस आदि अपने मोहर्रिर से कह कर वापिस करा दी।

इमरजेंसी लागू किए जाने से कुछ माह पूर्व की बात है। मैं 'हिन्दुस्तान समाचार' के प्रबन्ध संपादक श्री बालेश्वर अग्रवाल के साथ मेरठ एक कार्यक्रम में गया हुआ था। चौधरी साहब मेरठ के सर्किट हाऊस में ठहरे हुए थे। हम दोनों उनसे भेंट करने पहुँचे। देश की स्थिति पर उनसे बातचीत होने लगी। कम्युनिस्ट पार्टी की अवसरवादी नीति से लेकर कांग्रेस सरकार की नीतियों तक की चर्चा हुई। चौधरी साहब ने मुख्य रूप से 'व्यक्ति–पूजा' पर चिंता व्यक्त की तथा चेतावनी दी कि यदि व्यक्ति पूजा पर नियंत्रण न हुआ तो देश शीघ्र ही 'एक व्यक्ति तथा एक परिवार' की तानाशाही की जकड़ में आ जाएगा। उन्होंने श्री बंसीलाल के कुछ कार्यकलापों की भी चर्चा की। कुछ ही दिन बाद व्यक्ति–पूजा ने श्री संजय गाँधी को नेता बना दिया, तो चौधरी साहब की वह चेतावनी मुझे याद आई। उसके बाद तो उनकी अनेक बातें तथा आशंकाएं सत्य होती चली गईं।

१९४० के बाद आप स्थायी रूप से मेरठ में रहने लगे और कांग्रेस के कार्यकलापों में पूर्णतः सक्रिय हो गए। उन दिनों प्रसिद्ध गाँधीवादी श्री विचित्र भाई मेरठ जिला कांग्रेस कमेटी के मंत्री थे। वे गाँधी आश्रम के भी सचिव थे। आचार्य कृपलानी ने आदेश किया कि जो गाँधी आश्रम के पदाधिकारी हैं, वे त्यागपत्र देकर ही सत्याग्रह में भाग लें। व्यक्तिगत सत्याग्रह का दौर दौरा था। कांग्रेस कमेटी का सचिव जेल न जाए, यह कैसे संभव था। क्षेत्र के किसानों को सक्रिय करने की दृष्टि से चौधरी

चरण सिंह को जिला सत्याग्रह समिति का मंत्री बनाया गया। २८ अक्टूबर १९४० को वे किसानों के एक बड़े जत्थे के साथ सत्याग्रह करते हुए बन्दी बनाए गए। मेरठ के प्रसिद्ध नेता पं. प्यारेलाल शर्मा, बाबू लक्ष्मीनारायण जी, महाशय प्यारेलाल जी आदि भी मेरठ जेल में उनके साथ थे। उन्हें डेढ़ वर्ष की सजा हुई तथा जुर्माना किया गया। इस संदर्भ में मजेदार बात यह है कि चौधरी साहब के मकान से उनकी भैंस कुर्क कर ली गई, तो कांग्रेसी नेता मास्टर सुन्दरलाल जी ने जिलाधीश श्री बनर्जी के पास जाकर कहा, "भैंस से तो उनके परिवार को दूध मिलता है। उसकी जगह आप चौधरी साहब की लाइब्रेरी कुर्क क्यों नहीं कर लेते? तब जाकर भैंस को कुर्की से मुक्त किया गया।

वे अपने सार्वजनिक जीवन के प्रारंभ से ही निर्भीक व स्पष्टवादी रहे थे। डॉ. सम्पूर्णानंद जी से उनका किसी विषय पर मतभेद हो गया और उन्होंने उन्हें लिखा, "मैं इस विषय में यह मत रखता हूँ, यदि आप इससे सहमत नहीं हैं, तो फिर मेरा सहयोग मिलना कठिन ही है।" परिणामस्वरूप वे मंत्रिमंडल से अलग हो गए।

नेहरू जी अत्यंत दबंग प्रधानमंत्री थे। उनके समक्ष किसी भी नेता ने उनके विचारों को चुनौती देने का कभी साहस नहीं किया। किंतु चौधरी साहब पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने नागपुर में हुए कांग्रेस कार्यसमिति के अधिवेशन में नेहरू जी के सहकारी खेती संबंधी विचारों को अव्यवहारिक बताकर चुनौती दी। उन्होंने तर्कपूर्ण ढंग से यह सिद्ध किया कि सहकारी खेती में व्यक्तिगत रुचि के अभाव के कारण कृषि उत्पादन गिर जाएगा। उन्होंने आंकड़े दे कर बताया कि निजी भूमि तथा उसके उत्पादन पर निजी अधिकार की भावना ही किसान को धूप व वर्षा की प्रेरणा देती है। उन्होंने इस विषय में आचार्य विनोबा भावे का उद्धरण भी दिया। उनके भाषण के बीच जब कई बार तालियाँ बजीं तो उन्होंने निर्भीकता के साथ कहा, "ये तालियाँ स्वयं सिद्ध कर रही हैं कि आप सब मेरे विचारों से सहमत हैं, परंतु आप में मेरी तरह खुले विचार रखने का साहस नहीं है।"

एक पत्रकार के नाते मुझे चौधरी साहब से अनेक बार मिलने और उनके साथ दौरे पर जाने का अवसर प्राप्त होता रहा। मैंने सदैव यह देखा कि चौधरी साहब स्पष्टवादी, दो टूक बात कहने वाले तथा किसी भी गलत बात को स्वीकार न करने वाले तेजस्वी नेता थे। अपनी दो टूक बातों तथा किसी गलत व हृदय के विपरीत काम न करने के स्वभाव ने उनके विरोधियों को भी जन्म दिया, परंतु यह सब अहसास करने के बावजूद उन्होंने कभी अन्य राजनीतिक नेताओं की तरह व्यवहार कुशल बनने, लगी–लिपटी बातें करने तथा सभी को प्रसन्न करने के लिए

'झांसेबाजी' का सहारा लेना स्वीकार नहीं किया। चौधरी साहब का यह स्वभाव प्रारंभ से ही रहा।

चौधरी साहब गाजियाबाद में प्रैक्टिस के दौरान ही कांग्रेस तथा आर्यसमाज में सक्रिय भाग लेने लगे थे। वयोवृद्ध बाबू शम्भूदयाल मुख्तार उन दिनों उनके निकट के मित्रों में थे। उन्होंने मुझे बताया कि चौधरी साहब तथा वे, कुछ मित्रों के साथ किस प्रकार प्रातः हिंडन नदी पर स्नान के लिए जाया करते थे, किस प्रकार प्याऊ स्थित बगीची पर कभी—कभी कुश्तियां लड़ा करते थे, वे घंटों हिंडन नदी में तैरते, जल का आनंद लेते थे। उनका जीवन शुरू से ही सात्विक तथा नियमित था। बीड़ी, सिगरेट, हुक्के का व्यसन उन्होंने कभी पास नहीं भटकने दिया, प्रारंभ से ही अपने जीवन को सादा तथा सात्विक रखा।

गाजियाबाद में उन्हीं दिनों एक एग्जीक्यूटिव अफसर ने किसी स्थानीय लड़की का अपहरण कर लिया तथा इस घटना से नगर में बवंडर मच गया। नगर के संभ्रांत नागरिकों ने लड़की का पता लगाने के लिए एक समिति का गठन किया, तो चौधरी साहब भी उसमें सक्रिय थे। वे वकालत की चिंता न करके लड़की की वापसी के लिए दौड़—धूप में लगे रहे तथा तब तक चुप न रहे, जब तक लड़की अपने घर वापस न आ गई।

इसी प्रकार एक पाखंडी साधू ने गाजियाबाद आकर डेरा जमाया तथा अपने को 'अवतार' व 'सिद्ध' बताकर वह लोगों, विशेषकर महिलाओं को, अपने जाल में फांसने लगा। उसके चरित्र के विषय में लोगों को संदेह हुआ तो नगर में सनसनी फैल गई, संभ्रांत नागरिकों ने उसके विरुद्ध अभियान चलाया, चौधरी साहब उसमें भी सबसे आगे थे।

चौधरी साहब ने जीवन में कभी पाखंड, छल—छिद्र तथा फरेब को सहन नहीं किया तथा उसके विरुद्ध वे सदैव संघर्षरत रहे।

२४
नैतिक मूल्यों की स्थापना के पक्षधर
बलवंत सिंह रामूवालिया*

छठी लोकसभा में मैंने तकरीब तीन साल उस इंसान के साथ गुजारे हैं, जो इंसानों में हीरा था। जिसने कभी झूठ नहीं बोला और जो ईमानदारी, उसूलों तथा साफगोई के लिए मशहूर था। उस इंसान का नाम था चौधरी चरण सिंह, जिसे उनके अनुयायी और समर्थक प्यार और आदर के साथ "चौधरी साहब" के नाम से पुकारते थे। उन्होंने देश के सदियों से दबे–थके किसानों–मजदूरों और पिछड़े तबके के लोगों के लिए ज़िंदगी भर सोचा, लिखा और संघर्ष किया। यही नहीं उन्हें राजनीति में हिस्सेदारी का एहसास भी कराया। उन्हें विधानसभा और संसद में पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उनकी बहबूदी के लिए वह सड़क से लेकर संसद तक अपनी अंतिम सांस तक आवाज उठाते रहे।

वह राजनीति में नैतिक मूल्यों और सिद्धांतों की स्थापना के पक्षधर रहे और इनके प्रति आजीवन वह प्रतिबद्ध भी रहे। वह एक महान स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, किसानों के रहनुमा और एक जाने–माने अर्थशास्त्री भी थे। असलियत में वह एक नेकदिल इंसान थे जिसकी मिसाल ढूंढे नहीं मिलेगी।

छल–छिद्र की राजनीति से वह कोसों दूर थे। लेकिन दुख इस बात का है कि उनका वास्ता हमेशा ऐसे लोगों से पड़ा जो राजनीति में धोखाधड़ी के सहारे मिली सफलता को ही सफल राजनीति मानते हैं। उन्हें अक्सर झूठे और फरेबी लोगों ने बार–बार छला और धोखा दिया, फिर भी उन्होंने उसका कभी बुरा नहीं माना। लेकिन उस इंसान की बड़प्पन की मिसाल मिलना मुश्किल है कि उन्होंने उन लोगों को पुनः पास आने पर माफ भी कर दिया। ऐसे अनूठे व्यक्तित्व के धनी इंसान से मेरी पहली भेंट १३ जनवरी १९७४ को तब हुई, जब वह मुक्तसर (पंजाब)

---

* बलवंत सिंह रामूवालिया (१९४२–), राजनीतिज्ञ, अकाली दल, समाजवादी पार्टी। उत्तर प्रदेश में कैबिनेट मंत्री। राज्यसभा सांसद (१९९६), एचडी देवेगौड़ा सरकार में केंद्रीय समाज कल्याण मंत्री। महासचिव, स्टूडेंट्स फेडरेशन ऑफ इंडिया (१९६३) और अध्यक्ष, ऑल इंडिया सिख स्टूडेंट्स फेडरेशन (१९६८–१९७२)।

में होने वाले माधी मेले में आयोजित किसान सम्मेलन में हिस्सा लेने हेतु अकाली दल के निमंत्रण पर पधारे थे। उस समय मैं नौजवान था और अकाली दल ने मुझे दल के प्रचार मंत्री का काम करने का जिम्मा दे रखा था। मैं चौधरी साहब को सम्मेलन में लाने हेतु मुक्तसर के सरकारी गेस्ट हाउस पहुँचा। कमरे में पहुँचकर मैंने आने का अपना कारण बताया। चौधरी साहब बोले–"ठीक है। तुम करते क्या हो?" मैंने उत्तर दिया– "चौधरी साहब मैं मेरठ में पढ़ता हूँ और अकाली दल के प्रचार मंत्री की हैसियत से काम कर रहा हूँ।" चौधरी साहब ने फिर कहा– "जगत सिंह को जानते हो।" मैंने उत्तर दिया कि– "हाँ।" फिर पूछा कि– "वह कैसा आदमी है।" मैने जबाव दिया कि– "अच्छा है और मेरा दोस्त भी है।" यह सुनने के बाद चौधरी साहब सलाह देते हुए बोले कि– "वह लड़का अच्छा है, आगे भी उससे मिलते रहा करो।" इसके बाद सम्मेलन में जाने के लिए गाड़ी से चल दिए। रास्ते में बातचीत का दौर चलता रहा। शुरूआत में उन्होंने मुझसे कहा कि– "भई सम्मेलन किसानों का है, संयोजकों में से एक तुम भी हो, लेकिन क्या कभी किसानी की है।" मैंने जबाव दिया कि: "चौधरी साहब, पढ़ता तो मैं हूँ ही लेकिन जब घर आता हूँ तो किसानी भी करता हूँ।" फिर उन्होंने पूछा – "अच्छा बताओ कि तुम्हारे यहाँ एक एकड़ कितना माना जाता है।" मैंने जबाव दिया कि– "४० कदम एक ओर और ३६ कदम दूसरी ओर। दोनों ओर इतने कदम चलते ही एक एकड़ जमीन के बराबर हो जाएगा।" मेरे जबाव पर वह मुस्कराए और फिर बोले – "ठीक है। तुम्हें असली मायने में किसान सम्मेलन करने का हक है। सच तो यह है कि किसान ही किसान का दुख–दर्द अच्छी तरह देख, सुन, समझ और उसका एहसास कर सकता है।" सम्मेलन में उन्होंने अपने भाषण की शुरूआत सरदार भाइयों कह कर की और अपने भाषण में उन्होंने संगठन बनाने पर जोर दिया और कहा कि संगठन में शक्ति होती है, संगठन बनते ही समस्याओं पर विजय पाओगे, यह मेरा दृढ़ विश्वास है। मेरी यह निश्चित मान्यता है और मैं समझता भी हूँ कि वह इस सम्मेलन के जरिये पंजाब की जमीं पर सरदारों को उनकी एहमियत, अरवलाक और भारतीय संस्कृति और एकता की रक्षा के लिए कुर्बानी और जिम्मेदारी का निरंतर एहसास कराना चाहते थे।

मेरी उनसे दूसरी बार १९७८ के आस–पास सूरज कुंड में मुलाकात हुई। उस समय चौधरी साहब गृह मंत्री थे। मेरे साथ पंजाब के मुख्यमंत्री प्रकाशसिंह बादल भी थे। जब मैंने सूरज कुंड स्थित उस कमरे में, जिसमें चौधरी साहब ठहरे थे, प्रवेश किया, तो इसे संयोग ही कहा जाएगा कि उस समय चौधरी साहब के पास जनता पार्टी के वरिष्ठ नेता श्री

रामकिंकर जी व टूण्डला के चौधरी मुल्तान सिंह जी, जो जलेसर क्षेत्र से लोकसभा के सदस्य थे, बैठे थे। चौधरी साहब किसी बात पर उन दोनों नेताओं से नाराज थे और उनको डांट–धमका रहे थे। मेरे कमरे में पहुँचने पर उनकी आवाज तो धीमी जरूर हुई लेकिन उनकी मुद्रा में कोई बदलाव नहीं आया। तभी सरदार प्रकाश सिंह बादल जी ने कहा कि– "चौधरी साहब, आप तो बड़े हैं और यह सब पार्टी के सीनियर नेता। इन्हें प्यार से ही समझा बुझा दिया करें।" चौधरी साहब तपाक से बोले – "सीनियर तो हैं लेकिन यदि यह गलती करेंगे तो इन्हें मेरी नाराजगी जरूर बर्दाश्त करनी पड़ेगी। वैसे इनको भी उतना ही हक हासिल है मुझसे अपनी नाराजगी का इजहार करने का।" जब बाद में मैंने इन नेताओं से बातचीत की तो उनका कहना था कि– "यह तो बाबा, पिता और बड़े भाई के बराबर हैं। नाराज भी होते हैं और प्यार भी करते हैं। इनके साथ तो सब चलता है। यह केवल हमारे नेता ही नहीं हैं, वह तो हमारे सब कुछ हैं।" जब उन दोनों से विदा ली तब ऐसा लगा कि यह चौधरी साहब का कितना उच्च व्यवहार है और सहयोगियों के प्रति उच्चस्तरीय सोच का परिणाम।

एक बार और उनसे मुलाकात का मौका मिला। हम लोग चाहते थे कि चंड़ीगढ़ स्थित पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंस में डायरेक्टर का पद किसी ऐसे व्यक्ति को दिया जाय जो अकाली पृष्ठभूमि का हो। इसके लिए हम स्वास्थ्य मंत्री श्री राजनारायण जी से भी मिल चुके थे लेकिन वह इसके लिए कतई तैयार नहीं थे। उसके बाद ही हमने चौधरी साहब से मुलाकात का फैसला लिया और जा पहुँचे उनके पास। उन्होंने कहा कि: "भई ऐसी क्या बात है कि तुम लोग अकाली पृष्ठभूमि वाले को ही वहाँ का डायरेक्टर बनवाना चाहते हो।" मैंने जबाव दिया कि – "एक तो अकाली दल क्षेत्रीय दल है, फिर पहली बार देश की मुख्य धारा में शामिल हुआ है। विपक्षी दलों के साथ मिला है। मैं चाहता हूँ कि विरोधी दल अकाली दल को अपने साथ आत्मसात कर लें, अन्यथा वह अलग–थलग पड़ जाएगा।" चौधरी साहब ने हमारा मंतव्य समझ कर तुरंत श्री राजनारायण जी को फोन किया और राजनारायणजी ने उसी अनुसार आदेश भी कर दिए। तब मुझे एहसास हुआ कि इस व्यक्ति में देश की एकता और अखंडता के प्रति कितनी आस्था है।

सन् १९८० के आस–पास की एक घटना मुझे याद आती है। उस समय जालंधर से प्रकाशित अखबार 'प्रताप' ने 'जाट मरा तब जानिये, जब तेरहवीं हो जाए,' नामक शीर्षक से एक समाचार छाप दिया था। यह समाचार चौधरी चरण सिंह जी से ही संबंधित था। संयोग कि उसी दिन

मैं उनके पास किसी काम से गया था। मुझे देखते ही बोले कि – "देखो तुम्हारे जालंधर से प्रकाशित यह अखबार मेरे लिए क्या कहता है? मैं इस बात से बहुत नाराज हूँ। यदि वह 'चौधरी मरा तब जानिये, जब तेरहवीं हो जाए,' लिखता तो निश्चित ही मुझे कोई नाराजगी नहीं होती। मुझे एक जाति से जोड़कर, उस जाति पर ही क्यों प्रहार किए जा रहे हैं। इस तरह क्या यह देश की सेवा कर रहे हैं? समाज को तोड़कर नष्ट–भ्रष्ट करने के इनके प्रयास क्यों हो रहे हैं? मेरा तुमसे यह कहना है कि इन अखबार वालों से जाकर कहना कि मैं उनसे बहुत नाराज हूँ। वह जातिवाद को बढ़ावा न दें और न इसे फैलायें। देश को टूटने से बचायें।" मैंने कहा कि "चौधरी साहब वह तो आपके ही आदमी हैं और आप और वह दोनों आर्य समाजी हैं। आप उन पर इस तरह नाराज न हों।" मेरी बात पर चौधरी साहब ने जबाव दिया कि– "मुझे ऐसे आर्य समाजी नहीं चाहिए जो देश का नाश करने में लगे हैं।" चौधरी साहब के विचार सुनकर मैं यह बात सोचने पर मजबूर हो गया कि–काश, ऐसे विचार देश के सभी राजनेताओं के होते, तो आज देश जाति, धर्म, क्षेत्र, भाषा आदि विवादों में फंसकर विनाश की ओर अग्रसर न होता।

एक दिलचस्प वाकया और याद आता है। एक बार चंडीगढ़ में चौधरी साहब और जगजीवन राम जी दोनों ही पधारे थे। दोनों गेस्ट हाउस में ठहरे थे। मैं वहाँ पहुँचा, तो देखते ही बिठा लिया। फिर बात चीत का दौर शुरू हुआ। लौट फिर कर बात श्री अजीत सिंह पर आकर ठहर गई। मैंने उनसे कहा कि "आप अजीत सिंह को भारत क्यों नहीं बुलवा लेते। आपके काम में सहायता करेंगे। वह तो पढ़े–लिखे, समझदार और भले, अपने आदमी हैं।" इस पर वह बोले–"कि भई राजनीति पेशा नहीं है, सेवा कार्य है। इसमें आदमी को स्वयं ही निर्णय लेना पड़ता है। क्या वह सेवाकार्य के लिए तैयार है। अगर मेरा अपना काम होता, घर–गृहस्थी का काम होता, तो मैं अपने बेटे को तुरंत बुला लेता। लेकिन यह तो सार्वजनिक सेवा का कार्य है। इसके लिए तो उसे ही खुद निर्णय लेना होगा। मेरा इस मामले में कोई लेना–देना नहीं है। वो चाहे आवे या वो न चाहे तो न आवे।" वास्तव में चौधरी साहब निर्लेप व्यक्तित्व के धनी थे। उन्होंने हमेशा राजनीति को समाज सेवा का कार्य–साधन माना। उनका मानना था कि प्रत्येक व्यक्ति का आचार–विचार स्वतंत्र होना चाहिए।

मैं एक बार लक्ष्मी कॉमर्शियल बैंक के चेयरमैन सरदार बजाज साहब के साथ चौधरी साहब के पास गया। दरअसल बजाज साहब को अपने कार्यकाल के लिए एक वर्ष की अवधि और चाहिए थी। उन्होंने बड़े–बड़े लोगों से चौधरी साहब के पास इस काम के लिए सिफारिशें पहुँचवाई

लेकिन सबकी सिफारिशों को चौधरी साहब ने ठुकरा दिया था। मैं जब कमरे में दाखिल हुआ तो चौधरी साहब बोले कि "कहो भई कैसे आए।" मैंने तुरंत कहा – "चौधरी साहब यह सरदार साहब है। कहते हैं मेरे बारे में बड़े–बड़े आदमियों की पहुँच, सिफारिशों को चौधरी साहब ने ठुकरा दिया है। मैं तो एक छोटा सा आदमी हूँ। इन्हें लेकर आपके पास आया हूँ। आप बस इनकी एक बार सुन लें।" चौधरी साहब ने कहा कि– "अच्छा भई, अब तुम आए हो, तो इनकी बात सुन लेते हैं।" बजाज साहब ने अपनी समस्या बताई और चौधरी साहब ने उसे ध्यान से सुनने के बाद बिना किसी हील हुज्जत के बजाज साहब को ६ माह का एक्सटेंशन दे दिया। फिर मेरी ओर देखकर हँस दिये। मैंने चौधरी साहब को इस तरह मुस्कराते–हँसते हुए पहली बार देखा था। मुझे यह बात कहने में कोई संकोच नहीं है कि मैं भी उन्हें हँसते देख एकाएक मुस्करा पड़ा और सोचने लगा कि चौधरी साहब का कितना सरल और साफ व्यक्तित्व है।

वास्तव में चौधरी चरण सिंह एक व्यक्ति नहीं, वरन् गुणों की खान थे। उनमें एक विलक्षण दूर दृष्टि, सहयोगियों के लिए दर्द, किसान के लिए स्वप्न, देश की एकता और अखंडता के लिए कुछ भी कर सकने की लालसा, समाज की कुरीतियों के प्रति रोष तथा समाज सेवा के लिए संकल्प के साथ सीधी–सादी मनोवृत्ति के दर्शन होते थे।

आज चौधरी साहब हमारे बीच नहीं हैं लेकिन उनकी नीतियाँ देश के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। मुझे उम्मीद है कि चौधरी साहब जो देश के सैंकड़ों सालों से पिछड़े लोगों के उत्थान का सपना लिए चले गए, उसे उनके अनुयायी और समर्थक पूरा करने का प्रयास करेंगे। उनके लिए हम सबकी यही सबसे बड़ी और विनम्र श्रद्धांजलि होगी।

२५
अंतरंग परिचय
भास्कर

किसी भी व्यक्ति का अंतरंग परिचय उसके परिवार से ही प्राप्त होता है। विगत १२ दिसम्बर सन् १९७७ को मुझे चौधरी चरण सिंह के परिवार से मिलने का दुर्लभ अवसर प्राप्त हुआ। भीतरी लॉन पर मन भावनी धूप में सहजता, सरलता एवं सौम्यता का स्वरूप श्रीमती गायत्री देवी विराज–मान थीं। सहज भाव से मैं उनके पास बैठ गया। अनेक प्रश्नों के घेरे में मैं उन्हें बाँधता रहा और वे सरलता से स्नेह से मुस्करा कर उत्तर देती रहीं। उनके पास अनुभूतियों, अनुभवों और संस्मरणों का भरपूर भण्डार है। चौधरी साहब की जीवन–संगिनी के रूप में उन्होंने अनेक उतार चढ़ाव देखे हैं। उनका जीवन, संघर्ष की एक लंबी गाथा है। जिसका पति राष्ट्र के लिए समर्पित हो, उसके कंधे पर संपूर्ण परिवार का दायित्व समय–समय पर पड़ता रहा और वह उसे गर्व मान कर निभाती रही। उनकी उदारता एवं सरलता ने उन्हें ममता की मूर्ति बना दिया है। उन्हें देखकर ऐसा लगता है जैसे वे अपनी ही माँ हैं। वही निश्छल स्नेह वही सरल संबोधन, वही सरल भाव–भंगिमा। ऐसा लगा जैसे मैं अपनी माँ के निकट बैठा हूँ। मुझे बैठा देखकर उनकी छोटी बेटी शारदा मेरे पास आकर बैठ गई। शारदा ने अपने अनेक मधुर संस्मरण सुनाते हुए बताया कि वह घर में सबसे छोटी है, अतः उसे माता–पिता का भरपूर प्यार मिला है। बचपन के मधुर क्षणों को याद करते हुए उसने बताया कि पिता जी मुझे बहुत प्यार करते हैं। सभी बच्चों को वे सदैव स्नेह देते रहे हैं और आज भी बच्चों के बीच में बच्चों जैसे बन जाते हैं। उन्हें अच्छी–अच्छी कहानियाँ सुनाते हैं, और उनके साथ हँसते हैं, गाते हैं और साथ ही जीवन की शिक्षा भी देते रहते हैं। अनेक महापुरुषों के प्रेरणामय चरित्र सुनाते हैं, जिनसे शिष्टाचार की शिक्षा मिलती हो। बच्चों को सुसंदर्भ सुनाते रहते हैं। माता जी ने कि अपनी बेटियों के लिए उन्हें सुंदर संस्कार देने के लिए तथा सुशिक्षित करने के लिए चौधरी साहब ने शिष्टाचार शिक्षा पर एक अति श्रेष्ठ पुस्तक लिखी थी जो अभी प्रकाशित नहीं हो पाई है ।

शारदा बेटी के बाल्यकाल के संस्मरणों में अपने पिता के व्यस्त जीवन के अनमोल क्षण यत्न से सुरक्षित हैं। जब भी वे प्रातः भ्रमण के लिए जाते हैं रास्ते भर उनको अच्छी अच्छी बातें बताते, कुछ न कुछ शिक्षा देते, हँसते–हँसाते कभी अपना प्रिय गीत 'कदम कदम बढ़ाए जा, खुशी के गीत गाए जा' बच्चों को भी साथ–साथ गाने के लिए कहते और स्वयं भी साथ–साथ गाते। घूमते समय इतना तेज चलते कि बच्चे पीछे रह जाते या भाग–भाग कर उन्हें साथ लिए विवश होना पड़ता। पिता जी का यह क्रम सदैव जारी रहता। वे बच्चों के लिए महापुरुषों के चरित्र विषयक अच्छी–अच्छी पुस्तकें लाते, उन्हें पढ़ने के लिए देते और बाद में उनसे पूछते कि पुस्तक में उन्होंने क्या पढ़ा? इस प्रकार प्रति क्षण बच्चों के चरित्र निर्माण में उनका ध्यान लगा रहता।

बच्चों के बीच अक्सर अपनी प्रिय कविता सुनाया करते 'बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी, खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी।' बच्चों के साथ खेलना और गाना सदैव चलता रहता है। वर्षा ऋतु में मेघ जब झमझम बरसने लगते तो पिता जी का बचपन मचल उठता। वे कपड़े उतार कर वर्षा में नहाने निकल पड़ते। सभी बच्चों को बुला लेते और खूब नहाते। बच्चों के स्वास्थ्य और सफाई की ओर उनका विशेष ध्यान रहता। वे अक्सर स्वच्छ रहने की आदत डालने के लिए प्रेरणामय निर्देश देते रहते हैं ।

अपने पिता के सरल और विनोदी स्वभाव के संस्मरण सुनाते हुए बेटी शारदा ने उनके भोजन करने की अद्‌भुत रुचि की भी चर्चा की। उसने बताया कि पिता जी को कभी–कभी एक ही वस्तु खाने की धुन सी लग जाती है। कभी चिल्ले खाएंगे तो चिल्ले ही खाते रहेंगे तो कभी पूड़ियाँ खाएंगे तो पूड़ियाँ ही बनती रहेंगी। दैनिक जीवन में वह अत्यंत साधारण भोजन लेने के आदी हैं। भोजन परिवार के साथ ही बैठकर करते हैं।

चौधरी साहब एक नियमित इंसान हैं। इसकी साक्षी घर के बच्चे हैं और आस पास के तमाम लोग हैं। भारत के अधिकतर किसान भाइयों की भाँति भारत की आत्मा में बसे कवि कबीर, मीरा, तुलसी के अनेक पद उन्हें गाते हुए प्रायः सुना जा सकता है। आज भी वे मौज में अक्सर भोजन के बाद रात में रस में डूबकर खुले कंठ से गा उठते हैं और सुनने वालो को गीत का भाव तथा अर्थ भी समझाते रहते हैं। भोजन के बाद यह हँसना, गाना अक्सर चलता रहता है। परिवार के साथ बैठकर ताश खेलना ही उनका विशेष मनोरंजन है। आज भी वे भारत के गृहमंत्री के पद पर भारी दायित्व का भार लेकर दिन भर काम में व्यस्त रहा करते हैं, रात्रि में ८ बजे के बाद पूर्ण विश्राम आवश्यक सा है। रात में वे राजनीतिक पुरुषों

की भाँति इधर उधर डूबते उतराते नजर नहीं आते। घर में ही बाल–बच्चों के बीच सद्गृहस्थ की भाँति भरपूर जीवन का आनन्द प्राप्त करते हैं।

बच्चों को अपने पिता पर सचमुच बड़ा गर्व है। उनकी स्नेह–शीलता, निश्छलता और सुस्पष्ट विचारधारा के कारण वे कभी भी किसी के प्रति दुर्भाव एवं दुर्व्यवहार की भावना मन में ला ही नहीं सकते। न्याय और सिद्धांतों के वह कट्टर पक्षधर हैं परंतु निर्बल के प्रति उनकी सहृदयता सदा ही भरपूर रही है और महिलाओं के प्रति उनके मन में आदर भावना है। उनके प्रति सम्मान प्रकट करते हुए वह अपने सिद्धांतों और भावनाओं का आग्रह रखते हैं। उनको धोखा देना कठिन है किंतु फिर भी कभी–कभी वे हँसकर जानबूझकर धोखा खा भी लेते हैं। माता जी ने बताया कि एक दिन किसी व्यक्ति ने चौधरी साहब को सूचना दी कि उनका मित्र उन्हें धोखा देने वाला है। चौधरी साहब ने उत्तर दिया, 'भाई अभी से क्यों परेशान हो, ईश्वर की कृपा है कि अभी तक उसने धोखा दिया नहीं है और फिर धोखा दे भी दे तो क्या अंतर पड़ेगा? धोखा देने से धोखा खाना मैं अच्छा मानता हूँ।'

चौधरी साहब को लेकर चौधरी साहब की बेटी वेद एवं उनके पति डॉ. जयपाल सिंह से भी वार्ता करने का अवसर प्राप्त हुआ। दोनों ही दिल्ली के मेडिकल इस्टीट्यूट में कार्यरत हैं। अपने पिता और अपने ससुर के संबंध में दोनों के ही मन कोमल भावनाओं के साथ जुड़े हैं। डॉ. जयपाल सिंह सुन्दर प्रभावशाली व्यक्तित्व और स्पष्ट विचार धारा वाले आधुनिक व्यक्ति हैं। उन्होंने अपने जीवन से संबद्ध अपने ससुर श्री चरण सिंह से जुड़े हुए अनेक संस्मरण सुनाए जिससे पता चलता है कि चौधरी साहब का व्यक्तित्व हर तरह से सराहनीय ही नहीं अपितु पूजनीय भी है। गीता में महापुरुष का जो वर्णन श्री कृष्ण ने किया वह चौधरी साहब के जीवन में साधना रूप में विकसित हुआ है। बड़ी से बड़ी समस्या आने पर वह शांत और गंभीर बने रहते हैं। विकट से विकट परिस्थितियों में उन्हें विचलित होते नहीं देखा गया। सहज भाव से समस्या का आकलन करके निर्णय लेते हैं जिसमें समाज और राष्ट्र का हित निहित रहता है। इसीलिए वह सदैव निश्चिंत एवं निर्द्वंद्व रहते हैं। कभी भी चिंता में घुलते हुए उन्हें नहीं देखा गया। वे सदैव जिंदा दिली और ताजगी से अपने कार्य में संलग्न रहते हैं। डॉ. जयपाल सिंह ने कहा चौधरी साहब में अपने लोगों के प्रति अत्यंत समर्पण की भावना है, अपने मित्रों और परिचितों के प्रति वह सदैव चिंतित रहते हैं। उनका जीवन दोहरी नीतियों पर विश्वास नहीं करता। वे स्पष्ट वक्ता, दृढ़ निश्चयी हैं, अतः कभी–कभी लोगों को गलतफहमी हो जाती है कि वह अत्यंत कठोर एवं अहंकारी हैं, यह धारणा पूर्ण भ्रांतिमय

है। उनका हृदय कुसुम के समान कोमल और कर्त्तव्य पालन में वज्र की भाँति कठोर है।

डॉ. साहब ने चौधरी साहब के संबंध में मुख्य बात यह बताई कि चौधरी साहब कानून को पूर्ण भावना से मानने का आग्रह रखते हैं। उनकी मान्यता है कि कानून सबके भले के लिए है, उसको मानना ही चाहिए। यदि कोई कानून अनुचित लगे तो खुलकर डटकर उसका विरोध किया जाना चाहिए। कानून और न्याय के मामले में वे राजा विक्रमादित्य के आदर्श को मानते हैं। सबको समान न्याय मिले यही उनका निरंतर प्रयास है। यही प्रयास उनका सही निर्णय के संबंध में है। वे यह मानते हैं कि सही निर्णय के लिए सही विवेक आवश्यक है। एक प्रेरणाप्रद प्रसंग इस संदर्भ में उन्होंने सुनाया। जब चौधरी साहब जनता पार्टी की सरकार के गृहमंत्री बनाए गए और इस आवास में रहने आए तो उन्होंने सर्वप्रथम यहाँ आते ही हवन किया और पूर्णाहुति के बाद पण्डित जी से यही आशीर्वाद माँगा कि जब तक मैं इस स्थान पर रहूँ, राष्ट्रहित में सही निर्णय लेने का विवेक मुझमें बना रहे।

इतनी देर में डॉ. जयपाल सिंह जी से काफी घनिष्टता सी जान पड़ने लगी थी। चाय पीते हुए मैंने उनसे एक दूसरा ही प्रश्न किया 'दूर के लोग जो चौधरी चरण सिंह को नही जानते, अक्सर यह कहते सुने जाते हैं कि श्री चरण सिंह जाट हैं और वे जाटों या जाट जाति के लिए ही सब कुछ करते हैं। वे घोर जातिवादी हैं। इसके संबंध में आप क्या कहेंगे?' इस पर डॉ. साहब हँस पड़े और बोले– 'यह आरोप भी खूब रहा। यदि ऐसा होता तो आज बहुत से जाट लोग चौधरी चरण सिंह से नाराज नहीं होते। दरअसल बात यह है कि संकीर्ण विचारधारा वाले और जातीयता के समर्थक लोग ही इस प्रकार के आरोप लगाते हैं जो कि चौधरी चरण सिंह को कतई जानते नहीं अथवा उनके संपर्क में कभी आए ही नहीं। अधिकांश राजनीतिज्ञ ईर्ष्या द्वेष के कारण भी अनेक बातें कहते हैं और यह बिल्कुल स्वाभाविक है। जिसका भी हित चौधरी साहब से नहीं हो सका वही विरोधी बातें करने लगे तो आश्चर्य क्या? बहुत से लोग इसलिए असंतुष्ट हैं, उन्होंने कहा, कि हमारे लड़के को नौकरी दिला दो या नौकरी की सिफारिश कर दो। चौधरी साहब अयोग्य व्यक्तियों की सिफारिश नहीं कर सके या जातिवाद का झण्डा ऊँचा नहीं कर सके तो वे लोग नाराज तो होंगे ही।'

इस संबंध में चौधरी साहब बहुत साफ दृष्टिकोण रखते हैं और इसी कारण कभी–कभी जाट जाति के प्रति आग्रह रखने वालों को निरुत्साहित भी करते हैं। पिछले दिनों का प्रसंग था। हरियाणा में उनके रिश्तेदार श्री

ओम प्रकाश को कैबिनेट मंत्री का पद देने की बात तय हो चुकी थी। जैसे ही चौधरी साहब को यह विदित हुआ उन्होंने तुरंत मना कर दिया। क्या इसी तरह कोई जाट पंथी बन सकता है? इसकी वास्तविकता यह है कि भारतीय जन–समाज में अब तक जो जाति–पाँति की संकुचित भावनाएँ चली आ रही हैं, उन्हीं के अनुसार लोग सबको तोलते हैं और अपने ही आइने में दूसरों की भी सूरत देखने के आदी हैं। विरोधी लोगों के लिए अपनी कुत्सित भावना प्रदर्शन के लिए यह एक और बहाना है। इसको सभी समझदार लोग जानते हैं और चौधरी साहब की उदार, पक्षपात रहित, साफ सुथरी विचारधारा को पहचानते हैं। दरअसल राजनीतिक क्षेत्र में भ्रामक विचारों का प्रचार ही विरोध का सबसे बड़ा अस्त्र होता है। विरोधी इस अस्त्र का प्रयोग जान–बूझकर करते हैं। इसी संदर्भ में माता जी ने बताया कि चौधरी साहब के सच्चे मित्र सभी जातियों के रहे हैं। उनके निकट जो लोग पहुँचते हैं वे जाति के आधार पर नहीं, अपने गुण और योग्यता के कारण अभिन्न मित्र बन जाते हैं।

महर्षि दयानंद और गाँधी जी की शिक्षा पर चलने वाले व्यक्ति पर जातिवादी होने का आरोप कितना हास्यास्पद है, कितना मिथ्या है, यह समझदार लोगों से छिपा नही है फिर भी आज की स्वार्थ भरी राजनीति में इसका खूब चलन है। जन–साधारण को भुलावे में डालकर इसी तरह के फरेबों से राजगद्दी प्राप्त करने के लिए गोयें बिछायी जाती हैं।

चौधरी चरण सिंह अत्यंत ही मानवतावादी है। डॉ. जयपाल सिंह की मान्यता है कि वे इंसान को इंसान मानकर सभी से प्रेम, सहानुभूति और सम्मान की भावना से व्यवहार करते हैं।

इसी तरह उनका दिल दिमाग शुरू से बना है। गाँधीजी की हरिजन उद्धार की बात ने उनको बहुत प्रभावित किया है। वे शुरू से ही हरिजनों के प्रति विशेष सहानुभूति और सद्भाव रखते आए हैं। इस संदर्भ में माता जी ने एक संस्मरण सुनाया। चौधरी साहब के साथ एक भोजन बनाने वाला हरिजन भाई था। नाम था चीतू। इनकी माता जी तो पुरातनपंथी रही होंगी परंतु परिवार के सभी लोग चौधरी साहब के साथ उसी का बनाया भोजन करते थे। चीतू को आगे चलकर चौधरी साहब ने मिस्त्री की ट्रेनिंग दिलवाकर रोडवेज में नौकरी दिला दी थी। उसका और उसके परिवार वालों का हमारे घर आज भी आना जाना रहता है।

कृषि और ग्राम उद्योगों के प्रबल पक्षधर चौधरी साहब का दृष्टिकोण और उनकी आर्थिक नीति बहुत चर्चा का विषय रही है। कुछ लोग इसकी कटु आलोचना भी करते हैं परंतु शहर के वासी, राजनीति और अर्थनीति के खिलाड़ी गाँवों से दूर होने के कारण वह सब नहीं देख पाते

जो गाँधीजी देखते थे और चौधरी साहब देखते हैं और ह्रदय में अनुभव करते हैं। हमारे देश की लगभग नब्बे प्रतिशत आबादी शहरों में नहीं बल्कि गाँवों में रहती है। कृषि ही अपने देश की मुख्य आजीविका है। कृषि के साथ गाँवों में यदि छोटे–मोटे उद्योग चलते रहें तो हमारे देश की बहुत बड़ी समस्या का समाधान हो सकता है। बेकारी का बोझ दूर हो सकता है। आर्थिक उलझने और अन्य समस्यायें सुलझ सकती हैं। यह व्यवहारिक बात है। चौधरी साहब इसी पर विश्वास करते हैं, हवाई किले बनाने से देश का भला नहीं होने को है। इसी तरह की योजनायें तो अब तक देश में चलती रहीं जिनसे विषमताएँ बढ़ीं और समस्याओं के अम्बार लगे। जब गाँवों में लघु उद्योग लगेंगे तो गाँवों के लोगों का शहरों की ओर भागना बंद होगा। नवजवानों की बेकारी दूर होगी। लोगों की आर्थिक स्थिति सुधरेगी। देश का आर्थिक विकास होगा। इस मामले में जापान जैसे छोटे से देश की नीति का उदाहरण हमारे सामने है। हमें उससे सीख लेनी चाहिए।

दूसरी बेटी डॉ. वेद की जबानी पिता की कहानी

बातों का यह सिलसिला आगे बढ़ा। डॉ. वेद ने कुछ मर्म छूने वाली बातें बताईं जो कि चौधरी साहब की सांस्कृतिक दृष्टि को मुखर करती हैं। भावभीने स्वर में डॉ. वेद ने अपने पिता की उस शिक्षा का संस्मरण किया जो विवाह के समय ससुराल जाते समय अपनी बेटी को दी थी। उन्होंने मुख्य रूप से तीन बातें कहीं थी –

१. अपने पति से कभी कलह मत करना। कभी क्रोध आए तो उसकी बात का उस समय उत्तर मत देना। बाद में भले ही खूब लड़ झगड़ लेना।
२. पति को अच्छा से अच्छा भोजन बनाकर खिलाना– पिलाना और उसका सदैव ध्यान रखना।
३. सबके खाने के बाद, नौकर–चाकरों को खिलाने के बाद ही स्वयं भोजन करना। सबसे स्नेह करना, सबका सम्मान करना।

भारतीय जीवन की यह दृष्टि कितनी कल्याणमयी है, यह बात यूरोप की सभ्यता में या उससे प्रभावित आधुनिक भारतीय नवयुवकों या नवयुवतियों की समझ में भले ही न आए परंतु आज यदि सुखी समाज की रचना की जानी है तो उसका मूलाधार यही होगा। दरअसल आज हमारे देश में सुबुद्धि की बड़ी आवश्यकता है जो आधुनिक कही जाने वाली सभ्यता से

बहुत दूर है। डॉ. जयपाल सिंह ने उस दिन की एक बात बताई। कार में उनको बिठाते हुए किसी बात का उत्तर देते हुए चौधरी साहब बोले, 'भाई इस देश में अक्ल की बड़ी कमी है, खाने की नहीं। कोई भी देश विना खाये तो जिंदा रह सकता है लेकिन अक्ल के बिना मर जाएगा।'

परिवार नियोजन और छोटे परिवार रखने की बात भी चौधरी चरण सिंह को अच्छी लगती है। वे इसके हिमायती हैं और अपने बेटे–बेटियों को भी इसका उपदेश करते रहते हैं। सबको यही परामर्श देते हैं किंतु इसमें आत्म–संयम और सुविचार की आवश्यकता है। जोर जबरदस्ती नहीं होनी चाहिए।

माताजी ने कई संस्मरण सुनाते हुए चौधरी साहब की एक कमजोरी की ओर इंगित किया। वे अपने मित्रों के प्रति बहुत अधिक लगाव का अनुभव करते हैं। परिचितों का भी बहुत ध्यान रखते हैं। आन्तरिक आत्मीयता की गहराइयों में डूब जाते हैं। साथियों का सदैव स्मरण करते हैं। सुख–दुख के साथी आखिर यह मित्रगण ही होते हैं न। उनके मित्रों में जाट नहीं अनेक जातियों के लोग हैं जैसे श्री राजाराम (खत्री अरोरा) अतरौली के बलभद्र सिंह (बुलंदशहर) विष्णु शरण, दुबलिस। उनके नगर में जाएगे तो उनसे मिलने जरूर जाएंगे। उनसे सलाह मशविरा करेंगे।

एक आदर्श गृहस्थ

आजकल राजनीतिक पुरुषों का जीवन बड़ा व्यस्त देखा जाता है। रात में देर तक वे सभा सोसाइटी, क्लब या मजलिस में उलझे रहते हैं। घर–परिवार की उनको चिंता नहीं। चौधरी साहब इस मामले में बिल्कुल निराले हैं। वे रात आठ बजे के बाद कहीं बाहर नहीं जाते। दिन भर व्यस्त रहने के बाद वह विश्राम चाहते हैं और इसके लिए पारिवारिक भीड़ से अधिक सुख और कहाँ रखा है? वे रात ८ बजे के बाद अपने घर परिवार में खो जाते हैं। एक आदर्श गृहस्थ की जिम्मेदारी अनुभव करते हुए वे रात का समय अपने बाल–बच्चों, नाती–पोतों, बेटे–बेटियों के बीच बिताते हैं। उन्हीं के साथ खाना–पीना, हँसना–खेलना, गाना, कथा कहानी कहना, ताश खेलना, चुटकुलेबाजी आदि का दौर चलता रहता है।

डॉ. वेद ने एक संस्मरण सुनाया। चुनाव के दिनों की बात है। पिताजी दिन भर चुनाव के चक्कर के बाद रात में घर लौटे थे। खा–पीकर लेटे थे कि छोटे बच्चे ने रोना शुरू किया। उसके कान में दर्द था। बच्चे का रोना सुनकर वे सब थकान भूलकर उसको बहलाने और दर्द के इलाज में लग गए। रात के तीन बज गए। जब बच्चे को आराम मिला तभी जाकर

सो सके। छोटे बच्चों का उन्हें विशेष ध्यान रहता है। यहाँ तक कि कौन बच्चा रात में कितने बजे सोया, कितनी बार रोया, इस सबकी जानकारी रखते हैं। ऐसी है उनकी पारिवारिक भावना और दायित्व बोध।

उनकी बेटियाँ बतलाती हैं कि जब हम छोटे थे, पिता जी हम सबको सदैव ही कुछ न कुछ सीख दिया करते थे। सादा जीवन, उच्च विचार, आदर्श व्यवहार, सबसे प्रेम और स्नेह की भावना, सेवा की वृत्ति आदि सद्‌गुणों की शिक्षा वे स्वयं अपने आचरण द्वारा सिखलाते थे। गाँधी जी की तरह स्वयं करके दिखलाने की नसीहत उनका कारगर उपाय था। वे कहते थे कि जैसा व्यवहार आप दूसरों से चाहते हैं पहले वैसा व्यवहार स्वयं करना चाहिए। सत्य बोलने का आग्रह विशेष रूप से रहा, और है। आज भी जब किसी का फोन आता है और पिताजी सामने होते हैं तो कोई भी फोन पर यह नहीं कह सकता कि वे घर पर नहीं हैं। झूठ बोलना उन्हें कतई पसंद नहीं। सच्चाई पर वे जान देते हैं। अच्छाई और बुराई को भी वे स्पष्ट रूप से बच्चों को समझाते हैं। बचपन में बच्चे प्रश्न करते अच्छाई क्या है और बुराई क्या? पिताजी बताते 'जिस काम को करने में स्वयं ही मन में बुरा लगे वही बुराई है और जो काम मन को भीतर से प्रसन्न करे वही अच्छाई है।'

गाँधी जी का मूल मंत्र 'सादगी' चौधरी साहब के जीवन का अभिन्न अंग रही है। सादा जीवन उनको सदैव भाता है। परिवार के लोगों को भी इसका महत्त्व वे समझाते रहे। साधनहीनों, निर्बलों और गरीबों से उनका लगाव हमेशा रहा है और वे उनके दुःख में भागीदार रहे हैं। इसीलिए वे गरीबों, निर्धनों और साधनहीन लोगों के पक्षधर हैं।

सदैव दूसरों के लिए कुछ करने को तत्पर

दूसरों का ख्याल रखना चौधरी साहब की स्वाभाविक विशेषता है। कहीं भी हों, उनको दूसरों की फिक्र रहती है, अपनी नहीं। आपातकाल में जब जेल में थे – तिहाड़ जेल दिल्ली में उस समय उनको खबर मिली कि उनकी द्वितीय पुत्री डॉ. वेद के पति डॉ. जयपाल सिंह को हार्ट की बीमारी हो गई है। यह सुनकर तुरंत ही उन्होंने उनके लिए उपाय सोचा। जेल में मीसा के अंतर्गत मध्य प्रदेश से लाए गए एक अच्छे वैद्य जी भी बंद थे। उनसे परामर्श करके दामाद को लिखित परामर्श भेजा कि यह आयुर्वेदिक औषधि लें, यह खाओ, यह पिओ, यह सावधानी बरतो आदि। दामाद को उन्हीं की प्रेरणा से चने की रोटी खानी पड़ी। स्वस्थ होने पर जब काफी अर्से बाद डॉ. जयपाल उनसे मुलाकात करने जेल पहुँचे तो उन्होंने पहले

ही कुशल प्रश्न पूछा – 'कैसे हो?' चौधरी साहब दूसरों से कुशल प्रश्न पहले ही पूछकर हृदय को छू लेते हैं। यह है उनकी आत्मीयता।

परिवार में वे सबसे बड़े हैं, सबके केंद्र बिंदु हैं। जब और जहाँ वे रहेंगे वहीं सब परिवार एकत्र हो जाता है। वे नहीं तो सब दूर–दूर, बिखरे–बिखरे। सबको एक सूत्र में रखने वाला उनका आकर्षक व्यक्तित्व है।

चौधरी साहब ७५ वें वर्ष को पार करने पर भी युवा लोगों की भाँति कठिन कार्य भार संभालने में सक्षम हैं। इसके पीछे उनके आरंभिक जीवन की कर्म साधना है। लड़कियों ने बतलाया कि जब हम छोटे थे तो लखनऊ में देखा करते थे कि पिता जी बड़े सबेरे उठकर चार बजे से ही अपना कार्य शुरू कर देते थे। वही क्रम आज भी है।

उनके जीवन क्रम की साक्षी माता जी ने अपने विवाह के शुरू के दिनों के कई संस्मरण सुनाते हुए बताया कि चौधरी साहब किस प्रकार अपनी रीति–नीति और आचार–व्यवहार के कारण घर–बाहर सभी स्थानों पर सम्मान पाते रहे, यहाँ तक कि उनके पिताजी उनके प्रति आश्वस्त थे और उनको सम्मान की दृष्टि से देखते थे। जब कांग्रेस आंदोलन में वे कूदे और जेल गए तो पिता जी ने कहा कि उनका बड़ा बेटा कोई गलत काम नहीं करेगा। जो कुछ करता है सोच समझ कर करता है। अपने पुत्र पर उनको अभिमान था। उस जमाने में आजादी की लड़ाई में जो लोग कूदे थे वे अधिकतर अपने जुनून के पक्के साबित हुए। उन्हीं सिरफिरे जवानों की टोली में चरण सिंह जी भी शामिल रहे। आगे चलकर इसी जुनून का रचनात्मक विस्तार हुआ।

आपातस्थिति का पहले से आभास

चौधरी साहब के विशेष व्यक्तित्व की चर्चा करते हुए परिवार के सदस्यों ने बतलाया कि आपातकाल में वे कैसे अविचलित भाव से सब कुछ बर्दाश्त करते रहे। दृढ़ता से उस संकट का सामना किया। उनकी गिरफ्तारी से पहले की बात है। २४ जून १९७५ को सब लड़के, लड़कियाँ पिता जी के साथ बैठे दशहरी आम खा रहे थे। बीच में वे एकाएक बोल पड़े, 'आज एक पुराना गाना गाने का मन बहुत कर रहा है और गाने लगे सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है।' बुधवार का दिन था और वे अस्वस्थ थे। २५ जून १९७५ को प्रातः चौधरी साहब उत्तर प्रदेश भवन में बिल्कुल अकेले थे। उसी दिन उनको श्रीमती इन्दिरा गाँधी के निर्देश पर मीसा के अंतर्गत गिरफ्तार कर लिया गया। परिवार के सब लोग दूर–दूर थे।

उनकी गिरफ्तारी की खबर बहुत देर बाद उनको मिल सकी। गिरफ्तारी के समय वे बहुत कमजोर थे। यदि उनको गाड़ी में न ले जाया जाता तो उनके पैरों में पैरालिसिस (लकवा) की बीमारी होने की संभावना थी फिर भी वे मजबूत बने रहे, भीतर से, बाहर से भी। कहीं से भी वे टूटे नहीं। उनकी गिरफ्तारी की सूचना पाकर माता जी परेशान तो हुई परंतु चौधरी साहब के साथ रहने के कारण उनमें भी वही दृढ़ता रही। वे धैर्य की मूर्ति बनीं आपातकाल की अनूभूति के बावजूद अविचलित रहीं। उस समय देश के सभी बड़े–बड़े नेताओं को जेल में डाल दिया गया था। तिहाड़ जेल में जो भी उनसे मिलने जाता, उससे निश्चित समय में ही मुलाकात करते। अधिक समय कभी नहीं चाहा। जेलर के कहने पर भी नहीं। भाई श्याम सिंह से जेल में मिलने से इसीलिये इन्कार कर दिया था कि विधिवत मिलने की स्वीकृति प्राप्त नहीं हुई थी।

चौधरी साहब के संबंध में एक रोचक बात यह है कि वैसे तो चौधरी साहब हमेशा अपने विवेक से ही निर्णय करते हैं और वही निर्णय करते हैं जो कि हर दृष्टि से निष्पक्ष हो, सर्वोपरि हित का हो। इसमें वे तटस्थ भाव से ही विचार एवं निर्णय करते हैं। यदि कभी किसी के परामर्श या दबाव से उनके निर्णय पर प्रभाव पड़ा तो बस बेड़ा गर्क। दूसरे की राय लेकर निर्णय किया तो कहीं जरूर कुछ गलत हो गया और जब स्वयं का निर्णय होता है तो कहीं कोई विकार नहीं। कड़े से कड़ा निर्णय लेकर भी वे हृदय से कोमल, उदार और संवेदनशील बने रहते हैं। कटुता या दुराग्रह का लवलेश भी नहीं रहता उनमें।

निकट से चौधरी साहब को जानने वाले लोग उनके संबंध में कभी भ्रमित नहीं हो सकते। परंतु कुछ पीत पत्रकार और विरोधी क्षुद्र हृदय वाले धूर्त राजनीतिज्ञ उनसे ईर्ष्या और द्वेष के कारण अनर्गल प्रचार किया करते हैं। उनकी तस्वीर उलटी पेश करते हैं। संभवतः वे उनके सही निर्णय और अनुशासन की भावना के कारण सदैव विचलित और भयभीत रहते। यही कारण है कि वे चौधरी साहब के संबंध में जन साधारण में भ्रांतियाँ रोपने का कोई अवसर नहीं छोड़ते फिर भी सिंह तो अपनी चाल से चलता ही जाएगा।

एक कुशल प्रशासक के रूप में वर्तमान समय में चौधरी चरण सिंह ही देश की नौका के समर्थ कर्णधार हैं इसमें क्या संदेह? उन्होंने राजनीतिक जीवन में अपने सिद्धांतों पर चलकर कीर्तिमान स्थिर किया और उत्तर प्रदेश मंत्रिमण्डल में विभिन्न दायित्वों का सफलता एवं दृढ़ता से निर्वाह किया तथा भारतीय क्रांति दल और भारतीय लोक दल का निर्माण करके देश की राजनीति को एक जबर्दस्त मोड़ दिया। उन्होंने आपातकाल की

ज्यादतियों से जूझने वाले सभी दलों को एकता के सूत्र में बांधने की योजना बनाई और जनता पार्टी खड़ी करने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। चुनाव चमत्कार के साथ वे भारत सरकार के गृहमंत्री पद पर आसीन हुए। क्या ऐसा प्रभावशाली व्यक्तित्व इतिहास में किसी महापुरुष से पीछे दिखता है?

भारतीय जन साधारण लोग, निर्बल वर्ग, हरिजन लोग न्याय की आकांक्षा रखने वाले और अनुशासन प्रिय लोग यह महसूस करते हैं कि राष्ट्र की इस संकटापन्न स्थिति में सरदार वल्लभ भाई पटेल जैसा लौहपुरुष ही राष्ट्र का कर्णधार हो सकता है और चौधरी चरण सिंह सरदार पटेल जैसी कर्मठता, दृढ़ता और प्रशासनिक क्षमता रखते हैं।

२६

संकल्पों के धनी

डॉ. इर्तिजा हुसैन

अनेक महान नेताओं ने इस देश में जन्म लिया। इनके विचारों, प्रवृत्तियों और गुणों में परस्पर भिन्नता भी थी किंतु मातृभूमि की सेवा में सभी ने मूल्यवान योगदान दिया। राजनीति वस्तुतः सैद्धांतिक दृढ़ता और कार्यसाधकता दोनों के समन्वय से ही संभव है तथापि भिन्न–भिन्न व्यक्तियों में इन दोनों का अनुपात भिन्न–भिन्न होता है। जहाँ वैचारिक दृढ़ता और स्पष्टवादिता की चर्चा होती है, चौधरी चरण सिंह का नाम अनायास ही जुबान पर आ जाता है। यद्यपि समझा जाता है कि कार्यसाधकता और समझौता– शीलता तात्कालिक समस्याओं के समाधान में शायद अधिक सहायक होती है तथापि अंतिम विजय और दीर्घकालीन समाधान की प्राप्ति सैद्धांतिक दृढ़ता से ही संभव होती है।

यह सच है कि सिद्धांतों के प्रति अटूट आस्था और स्पष्टवादिता जहाँ जनता के एक वर्ग से श्रद्धांजलि प्राप्त करती है वहीं एक वर्ग से आलोचना भी अर्जित करती है। क्या हम आज सरदार वल्लभभाई पटेल, राम मनोहर लोहिया, करीम भाई छागला, हमीद दलवई तथा ऐसे ही अनेक नेताओं और विचारकों को इसीलिए याद नहीं करते कि उन्होंने अपने सिद्धांतों पर दृढ़ रहते हुए हजार आलोचनाएँ सहन कर लीं किंतु वाहवाही प्राप्त करने के लिए सिद्धांतों के साथ समझौता (जो बहुधा समझौता नहीं समर्पण होता है) गवारा नहीं किया। चौधरी चरण सिंह भी अपने अदम्य संकल्प, सैद्धांतिक दृढ़ता और स्पष्टवादिता के लिए सदा याद किए जाते रहेंगे। वस्तुतः उनके व्यक्तित्व में विवेक, दृढ़ता, सत्यनिष्ठा और कर्तव्यपरायणता का एक अद्भुत संगम देखने को मिलता है और साथ ही एक रचनात्मक कल्पना शक्ति भी, जो अन्याय, अंधविश्वासों और कुप्रथाओं और भ्रष्टाचार से मुक्त एक समाज के नवनिर्माण की प्रेरणा देती है।

कुछ लोगों के पास न अपना दिशाबोध होता है न संकल्पशक्ति, वे किसी वृक्ष की शाखाओं के समान उसी दिशा में जाते हैं जिस दिशा में हवा चल रही हो। वे उस मूढ़ कवि के कथन का अनुसरण करते हैं जिसने कहा है 'चलो तुम उधर को, हवा हो जिधर की।'

मानव ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ सृष्टि है, उससे निम्न श्रेणी के पशु हैं, तदन्तर वृक्ष हैं और सबसे निम्न श्रेणी में वे कंकर–पत्थर हैं जिनमें किसी प्रकार की चेतना नहीं। स्वयं दिशाबोध से रहित होते हुए इस प्रवृत्ति का दर्शन करना कि 'चलो तुम उधर को हवा हो जिधर की' वस्तुतः पेड़ पौधों का गुण हो सकता है मानव का नहीं। मानव तो उनसे दो श्रेणी श्रेष्ठ है। उसका काम तो स्वयं दिशा प्रदान करना है। चौधरी चरण सिंह उन राष्ट्रीय नेताओं में हैं जो हवा को दिशा देते हैं, उसके झोकों में अनायास बहते नहीं रहते। उनका चिंतन मौलिक है; उनका बौद्धिक साहस सर्वविदित है, स्पष्टवादिता उनके विशेष गुणों में से है। यहाँ तक कि जहाँ कहीं सैद्धांतिक प्रश्नों पर उन्हें गाँधी और नेहरू जैसे नेताओं से मतभेद होता है वे उसे तर्कपूर्ण और साहसिक ढंग से व्यक्त करते हैं।

इसमें संदेह नही कि गाँधी और नेहरू महान नेता थे। किंतु कोई व्यक्ति कितना ही महान क्यों न हो भ्रमातीत नहीं होता। महात्मा गाँधी और श्री नेहरू के विषय में भी यह नहीं कहा जा सकता कि उन्होने हर मामले में सही दृष्टिकोण अपनाया। दोनों उदारता और सहिष्णुता के अग्रदूत माने जाते हैं किंतु अनेक अवसरों पर उनकी उदारता ने प्रतिक्रियावाद और संकीर्ण पृथकतावादी सांप्रदायिकता के प्रति तुष्टीकरण का रूप धारण कर लिया। इसके अतिरिक्त आर्थिक और राजनीतिक प्रश्नों पर भी इनकी सब नीतियों को पूर्णरूप से निर्भ्रांति नहीं समझा जा सकता। अनेक अवसरों पर तो स्वयं उन्होंने अपनी त्रुटियों को स्वीकार किया है। चौधरी चरण सिंह महापुरुषों का सम्मान करते हैं किंतु अंधानुकरण नहीं। वे बड़े से बड़े नेता की त्रुटियों को इंगित करने में नही चूकते, जहाँ कहीं वे अनुभव करते हैं कि इससे राष्ट्रीय हितों को क्षति पहुँची है। इसलिए नहीं कि यह आप में कोई उद्देश्य है बल्कि इसलिए कि राष्ट्र के भावी दिशा निर्देशन में उन त्रुटियों की पुनरावृत्ति न होने पाए और उनके दुष्परिणामों से राष्ट्र की रक्षा की जा सके।

यथार्थ में प्रत्येक नेता के अपने असाधारण गुण और क्षमताएं होती हैं और साथ ही अपनी–अपनी न्यूनतायें भी। उदाहरण स्वरूप स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत देशी रियासतों और रजवाड़ों के विलय के द्वारा इस क्षत विक्षत राष्ट्र के एकीकरण का जो ऐतिहासिक कार्य सरदार वल्लभभाई पटेल ने किया था, वह श्री नेहरू के बस के बाहर था। वस्तुतः सौ नेहरू मिलकर भी यह कार्य नहीं कर सकते थे जो एक पटेल ने किया। इसलिए जब हम एक नेता के गुणों का बखान करते हैं तो दूसरे नेताओं को नहीं भूल जाना चाहिए। इससे व्यक्तिपूजा की प्रवृत्ति पनपती है जो राष्ट्र के लिए अनिष्टकारी और आत्मघातक सिद्ध हो सकती है। चौधरी चरण

सिंह उन राष्ट्रीय नेताओं में हैं जिन्होंने राष्ट्र को व्यक्ति से ऊपर मानकर व्यक्तिपूजा की प्रवृत्ति का विरोध किया है।

उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री के रूप में उन्होंने जैसी साहसिक नीतियों को क्रियान्वित करने के अभूतपूर्व प्रयास किए, वे अविस्मरणीय हैं। इतना ही नहीं संपूर्ण राष्ट्रीय जीवन को एक नया रूप प्रदान करने तथा भ्रष्टाचार और सांप्रदायिकता से मुक्त एक नए समाज का सृजन करने के लिए उन्होंने जैसे साहसिक और क्रांतिकारी विचार रखे, वे सदा प्रेरणाजनक रहेंगे। किसी ऐसे देश में जो भ्रष्टाचार में सिर से पैर तक डूबा हुआ हो भ्रष्टाचार के विरुद्ध जंग छेड़ने का संकल्प उनकी प्रशासनिक विशेषताओं में से एक है और अब राष्ट्र को केंद्रीय नेता के रूप में उनसे जातिप्रथा, दहेज, सांप्रदायिकता और भ्रष्टाचार के निवारण के निमित्त साहसिक पग उठाने की आशा है। वस्तुतः राष्ट्र का वास्तविक संकट तो नैतिक ही है। अन्य सब संकट – राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक तो मुख्यतया उसके परिणाम मात्र हैं। उनमें सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध संघर्ष करने की प्रबल भावना भी है, प्रशासनिक क्षमता भी और नैतिक साहस भी। प्रश्न उन अनेकानेक कठिनाइयों और जटिल परिस्थितियों का है जिनमें सत्ता की बागडोर संभालने का अवसर मिला है।

सांप्रदायिकता के प्रश्न पर भी उनका दृष्टिकोण स्पष्ट और बेलाग है। दुःख इसका है कि हमारे अल्पसंख्यक संप्रदाय में लोग क्षणिक तुष्टीकरण को अपने दीर्घकालीन हितों की अपेक्षा अधिक महत्त्व देते हैं। राष्ट्रीयधारा में समाहित होने के बजाय वे अपने पृथक सांप्रदायिक हितों के लिए प्रलाप करते हैं। योग्यता और पात्रता अर्जित करने और परिश्रम का मार्ग अपनाने के बजाय वे सरकार से विशेष रियायतों की भीख मांगते हैं। राष्ट्रभाषा हिंदी को पूर्ण रूप से स्वीकार करने के बजाय वे उर्दू का प्रतिक्रियावादी नारा लगाते हैं। परिश्रम व पुरुषार्थ को अपने पुनरुत्थान साधन बनाने के बजाय वे अकर्मण्यता और भिक्षा–वृत्ति को अपने जीवन का आधार बनाना चाहते हैं। वास्तविकता से आँखें चार करने के बजाय वे कल्पनाओं में खोये रहना चाहते हैं। चौधरी चरण सिंह मुँहदेखी बातें करने के अभ्यस्त नहीं हैं। एक दयानतदार और प्रामाणिक नेता के रूप में वे इसे अपना कर्तव्य समझते हैं कि अल्पसंख्यकों को धोखे में न रखें तथा उन्हें राष्ट्रीय धारा में समाहित होने और अपने पृथकतावादी सांप्रदायिक आत्मघाती दृष्टिकोणों से मुक्ति पाने का सपरामर्श देते रहें। दुःख इस बात का है कि अल्पसंख्यकों का एक वर्ग स्वयं अपने को धोखे में रखना ही अपने लिए अधिक श्रेयस्कर समझता है। आत्म–प्रवंचना में ही वह आत्म–संतोष अनुभव करता है। चौधरी चरण सिंह जैसे किसी प्रामाणिक, दयानतदार

और खरे नेता द्वारा भ्रम–निवारण उन्हें अखरता है। यह दुर्भाग्य की बात है कि जो नेता उन्हें अफीम खिला खिला कर गफलत में रखना चाहते हैं, उनसे वे अधिक संतुष्ट रहते हैं उन नेताओं की अपेक्षा जो उनका मोहभंग करके उन्हें वास्तविकता के निकट लाने और दीर्घकालीन हितों के प्रति जागरूक होने की प्रेरणा देते हैं।

केवल मुसलमान ही नहीं हिंदुओं का भी एक वर्ग उनकी स्पष्टवादिता से खिन्न है। यही हमारा दुर्भाग्य है। जब तक हम अपने सच्चे और खरे नेताओं का मान करना न सीखेंगे, हम अपने देश से न भ्रष्टाचार समाप्त कर सकेंगे और न ही अपने नैतिक संकट से मुक्ति प्राप्त कर सकेंगे। यह जनता का कर्तव्य है कि वह अपने किसी नेता को केवल इसलिए अस्वीकार न कर दे कि वह मुँहदेखी कहने को तैयार नहीं। नैतिक संकट से ग्रस्त इस देश में बहुत थोड़े लोग हैं जो स्पष्टवादिता और सत्यनिष्ठा का दीपक जलाये हुए हैं। अब देश का भविष्य इस पर निर्भर करेगा कि हम उन्हें लोकप्रियता प्रदान करते हैं अथवा उनका तिरस्कार कर देते हैं। चौधरी चरण सिंह जैसे स्पष्टवादी, दयानतदार और प्रामाणिक नेताओं को वरीयता देते हैं अथवा उन लोगों को, जो क्षणिक तुष्टीकरण के द्वारा दीर्घकालीन हितों पर कुठाराघात करते हैं।

हमें राष्ट्र के प्रति उनकी सेवाओं को कृतज्ञतापूर्वक स्मरण करना चाहिए और आशा करना चाहिए कि उनका प्रखर व्यक्तित्व उनका राजनीतिक विवेक, उनका प्रखर उनके मौलिक विचार और उनका क्रांतिकारी संकल्प साहस, दीर्घकाल तक राष्ट्र को सही दिशा की ओर प्रेरणा प्रदान करता रहेगा।

२७

कुछ अनछुए पहलू

तिलक राम शर्मा*

मैंने अपने सेवाकाल में, सन् १९४४ से १९७७ तक उत्तर प्रदेश सचिवालय में रहते हुए अनेक मंत्रियों के साथ कार्य किया। चौधरी चरण सिंह के साथ मैंने केवल दो बार, अक्तूबर, १९६३ से मई १९६४ तथा अगस्त, १९६५ से मार्च, १९६७ तक बतौर निजी सहायक कार्य किया। इस बीच वे क्रमशः कृषिमंत्री तथा वन एवं स्वायत्त शासन मंत्री थे। मुझे उनके साथ कार्य करने में बहुत आदर मिला, एक सुखद अनुभव हुआ तथा उनकी कार्य–प्रणाली और कर्त्तव्य व देश के प्रति जो समर्पण भावना थी, उसे काफी निकट से देखने का सौभाग्य मिला। उन क्षणों को याद कर आज भी मेरा हृदय उनके प्रति श्रद्धा से भर उठता है और मस्तक अपने आप सम्मान में झुक जाता है। यहाँ मैं उनके कुछ कार्यों, उनके सरकारी तथा निजी जीवन पर प्रकाश डालने वाले कुछ बिंदुओं को पुनः स्मरण कर, संस्मरण रूप में प्रस्तुत कर रहा हूँ, यह सोचकर कि आगे आने वाली भारत की नई पीढ़ी, उस महापुरुष के जीवन से कुछ अच्छा ग्रहण कर सके।

जब मैं पहली बार उनके साथ मेरठ दौरे पर गया, तो मुझे कुछ कार्यवश सर्किट हाऊस में रुकना पड़ा। चौधरी साहब अपने चुनाव–क्षेत्र छपरौली चले गए। संध्या समय वहाँ से लौटने पर वे सीधे अपने मित्र के निवास पर रात्रि–भोज के लिए चले गए। मेरे पास वहीं से फोन आया, मुझे भी रात्रि–भोज पर वहीं बुलाया। मैंने धन्यवाद देकर बता दिया कि मेरे भोजन का प्रबंध हो गया है, चिंता न करें। दूसरे क्षण उनके मेजबान फोन पर थे और मुझसे बोले कि चौधरी साहब आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं, जब तक आप नहीं आएँगे, वे खाना शुरू नहीं करेंगे। मेरे फोन रखते ही मुझे ले जाने के लिए एक कार आ गई। जब मैं उनके घर पहुँचा तो देखा कि चौधरी साहब तथा कुछ अन्य उपस्थित सज्जनों के सामने

---

* तिलक राम शर्मा चौधरी चरण सिंह के निजी सचिव थे जब चरण सिंह अक्टूबर १९६३ से मई १९६४ तक कृषि मंत्री रहे। फिर, अगस्त १९६५ से मार्च १९६७ तक, उन्होंने उत्तर प्रदेश सरकार में वन विभाग का प्रभार संभाला। इस दौरान भी शर्मा जी उनके सचिव बने रहे।

भोजन लगाया जा चुका था, परंतु खाना तभी शुरू हुआ जब में वहाँ पहुँच गया। वे अपने निजी स्टाफ का इसी तरह ख्याल रखते थे।

हापुड़ जंक्शन पर रेलगाड़ी से उतरने के पश्चात् जब सभी सामान कार में रखा जा चुका, तो जो विधायक चौधरी साहब को लेने आए थे, वो मुझे देखकर बोले – "टाइप बाबू भी आ गए, इस पर चौधरी साहब बहुत नाराज हुए और उनसे कहा – आप सदन के एक पुराने सदस्य हैं। क्या आप नहीं जानते कि टाइप बाबू नहीं, बल्कि पी. ए. या प्राइवेट सेक्रेटरी हमारे साथ चलते हैं।" चौधरी साहब इतने गुस्से में थे कि हापुड़ से बुलंदशहर के पूरे रास्ते उस सदस्य से एक शब्द भी नहीं बोले।

चौधरी चरण सिंह के सफेद दामन पर कहीं कोई दाग नहीं। अपनी इसी उज्ज्वल छवि के कारण चौधरी चरण सिंह ने राजनीति, सरकार, सरकारी कर्मचारियों और जनता के बीच एक विशेष स्थान बना लिया था। ६२ दिन तक चली सरकारी कर्मचारियों की हड़ताल के समय जब वे कहीं दौरे पर जा रहे थे, तो कानपुर शहर से गुजरते हुए, अन्य मंत्रियों की भाँति उनकी कार को भी हड़तालियों ने घेरकर रोक लिया। जब उन्हें मालूम हुआ कि कार में चौधरी चरण सिंह हैं तो चारों ओर से आवाज आई इन्हें जाने दो, जाने दो। ऐसी थी जनमानस में उनके प्रति श्रद्धा व सम्मान की भावना, जो शायद ही किसी राजनेता के प्रति कहीं देखने को मिली हो।

सन् १९६५ में भयंकर सूखे के कारण उत्तर प्रदेश में पशुओं के लिए चारे की कमी पड़ गई, तब मिलिट्री फार्म झाँसी से चारा मँगाने की व्यवस्था की गई। झाँसी से आए पत्र का सचिवालय और निर्देशक के यहाँ कुछ तफसील से परीक्षण हुआ कि सौदे की क्या शर्तें रहेंगी। इससे कार्रवाई में विलंब हो गया और उत्तर देर से भेजा जा सका। जब सौदे को अंतिम रूप दे दिया गया और पत्रावली स्वीकृति हेतु चौधरी साहब के पास पहुँची, तो स्थिति बदल चुकी थी। जाड़ों के समय वर्षा हो जाने के कारण चारा बहुतायत में उपलब्ध हो गया था तथा रबी की भरपूर फसल कुछ समय पश्चात् खलिहान में पहुँचने वाली थी। चौधरी साहब पत्रावली पढ़ते समय विशेष जागरूक रहते थे। कृषि संबंधी प्रगाढ़ ज्ञान होने के कारण व्यवहारिक दृष्टिकोण अपनाते हुए वह पत्रावली उन्होंने इन शब्दों के साथ लौटा दी कि बदली हुई परिस्थितियों में कहीं से भी चारा प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार सरकार को व्यर्थ होने वाली हानि और परेशानी से बचा लिया गया।

एक बार उनकी सबसे बड़ी बेटी अपने बच्चों सहित आगरा से लखनऊ सड़क मार्ग से आई। बातचीत करते चौधरी साहब ने यह मालूम

कर लिया कि वे लोग वन विभाग की जीप से आए हैं, जिसमें पेट्रोल उन्होंने भरवाया था। दस बजे सचिवालय पहुँचने पर चौधरी साहब ने मुझे तुरंत बुलाया और कहा – "देखो! ये लोग आगरा से वन विभाग की जीप से आए हैं। बेशक उसमें खर्च हुए पेट्रोल का भुगतान इन्होंने किया, पर मैं इससे संतुष्ट नहीं हूँ। तुम मालूम करो यदि सरकारी गाड़ी निजी काम में लाई जाए, तब किस रेट से चार्ज करते हैं। कितना रुपया देय होता है, इसका हिसाब लगाकर, जो पेट्रोल के दाम दिए जा चुके हैं, वह घटाकर बाकी राशि का चेक मुझसे भरवा लो। यह ध्यान रहे, यह सब आज दोपहर के खाने से पहले करना है।" मैंने तुरंत संबंधित विभाग से संपर्क किया और सभी आवश्यक कार्रवाई समय से पहले ही कर ली। वास्तव में चौधरी साहब का कहना था कि यदि वे वनमंत्री न होते, तो अधिकारी यह कृपा कदापि न करते। उनके मंत्रीपद से प्रभावित होकर ही उन्होंने ऐसा अनुचित कार्य किया है, जो उन्हें नहीं करना चाहिए था।

चौधरी साहब की ईमानदारी तथा कार्य करने की प्रणाली के ऐसे अनेक वृत्तांत हैं, जिनसे स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने कभी एक सरकारी पैसा तक अपने निजी कार्यों पर खर्च नहीं किया।

चौधरी चरण सिंह अनुशासन को बहुत महत्त्व देते थे, चाहे वह शासन में हो या पार्टी में अथवा स्वयं के जीवन में। जब वे उत्तर प्रदेश विधानसभा में नेता विरोधी दल थे, तब उन्होंने अपने दल, भारतीय क्रांति दल के सदस्यों को स्पष्टरूप से निर्देशित कर दिया था कि वे कोई भी असंवैधानिक कार्य न करें। एक बार असेंबली हाल में गड़बड़ी के बीच उनके दल के एक सदस्य ने शासक दल के किसी सदस्य को जूता फेंककर मारा। चौधरी साहब को इसका पता चल गया और दोबारा जब वे मुख्यमंत्री बने तो उन्होंने उस व्यक्ति को अपने मंत्रीमंडल में मंत्री बनाने से साफ इंकार कर दिया, यद्यपि वे सज्जन अच्छे पार्टी कार्यकर्ता थे और पूर्व राज्य मंत्री भी थे।

चौधरी साहब अपने पास आए पत्रों तथा डाक पर पूरा ध्यान देते थे। हर पत्र की गहराई तक जाते थे। एक बार डाक देखते समय उन्हें एक पोस्टकार्ड मिला। पत्र एक छोटे पुलिसकर्मी की पत्नी ने लिखा था, जिसमें शिकायत की गई थी कि एक सीनियर पुलिस अधिकारी उसके पीछे पड़ा है तथा उसे परेशान करता है। चौधरी साहब ने उसे पढ़कर तुरंत उस क्षेत्र के डी.आई.जी. को फोन मिलवाया, पोस्टकार्ड में दिया पता नोट कराया और निर्देश दिया कि वे शीघ्रातिशीघ्र उस महिला का बयान लें व पुनः उन्हें (चौ. साहब को) सूचित करें। उस पत्र में लिखी शिकायत ठीक पाई गई तथा उस अधिकारी को दण्ड दिया गया। इस प्रकार की

तुरंत कार्रवाई करने के कारण ही जनमानस में यह विश्वास बैठता चला गया कि चौधरी साहब को भेजे गए पत्रों पर शीघ्र और समुचित कार्रवाई अवश्य होगी।

चौधरी साहब बात–बात पर आयोग बिठाने के खिलाफ थे। सातवें दशक के मध्य जब वेतन आयोग की रिपोर्ट के आधार पर उत्तर प्रदेश सरकार के कर्मचारियों के वेतन पुनः निर्धारित हुए, तो स्थानीय निकाय के कर्मचारियों के वेतनमान पुनः निर्धारित करने का प्रश्न उठा। उस समय चौधरी साहब स्वायत्त शासन मंत्री भी थे। इस कार्य के लिए एक आयोग नियुक्ति का प्रस्ताव जब चौधरी साहब के पास स्वीकृति के लिए पहुँचा, तो उन्होंने संबंधित सचिव से आयोग पर होने वाले व्यय, वित्तीय भार तथा लगने वाले समय के विषय में पूछा, तो उन्हें बताया गया कि इस आयोग पर लाखों रुपया खर्चा आएगा, जिसे स्थानीय निकायों को वहन करना पड़ेगा और रिपोर्ट आने में दो–तीन वर्ष का समय लग जाएगा। चौधरी साहब ने इस पर गंभीरता से विचार किया। इस कार्य को १९६७ के आम चुनाव से पहले पूरा करना था और इतना समय था नहीं। दूसरे इस आयोग का खर्चा निकायों पर पड़ता जो इस स्थिति में थे नहीं। अतः उन्होंने यह कार्य विभाग के एक सुलझे हुए वरिष्ठ अधिकारी को सौंप दिया, जिसे स्पष्ट रूप से यह कहा गया कि सरकारी कर्मचारियों को दिए जानेवाले नए वेतनमानों का अध्ययन कर एक चार्ट बनाएँ जिसमें स्थानीय निकाय कर्मचारियों के वर्तमान वेतनमान, उसके समकक्ष सरकारी कर्मचारियों के पुनरीक्षित वेतनमान और अंत में स्थानीय निकाय कर्मचारियों के लिए पुनरीक्षित वेतनमान की संस्तुति हो। उस अधिकारी को उन्होंने यह भी आदेश दिया कि वह कार्य तीव्रता से करे, ताकि १९६७ के चुनाव आने से पहले अर्थात् सुचेता कृपलानी सरकार के समय में ही सरकारी आज्ञा निर्गत हो जाए। उस अधिकारी को काफी कठिन कार्य करना पड़ा और एक दिन वह सब कागजात लेकर मेरठ सर्किट हाऊस जा पहुँचा, जहाँ चौधरी साहब बीमारी के बाद स्वास्थ्य लाभ कर रहे थे। डॉक्टर की सलाह के अनुसार किसी को भी चौधरी साहब से मिलने नहीं दिया जा रहा था, अतः उस अधिकारी को दो दिन बाद मिलने का अवसर मिला। ऐसी अशक्त दशा भी चौधरी साहब उस अधिकारी के साथ लगभग चार–पाँच घंटे बैठे और पूरा कार्य, चार्ट आदि, जो उनके आदेशानुसार तैयार किया गया था, का बिंदुवार परीक्षण–निरीक्षण कर, सुधरवा कर अंतिम निर्णायक रूप दे दिया। जो कार्य तीन वर्ष में लाखों रुपये खर्च करने के पश्चात् पूरा होना था, वह चौधरी साहब ने केवल अठारह दिनों में अपने अधिकारियों से ही पूरा करा दिया।

यद्यपि चौधरी साहब को रुपयों की सख्त जरूरत थी, गरीबों की सहायता के लिए तथा अपने उन घनिष्ठ साथियों के लिए जो चुनाव लड़ रहे थे, लेकिन वे चुनावी खर्च के लिए हर किसी से धन स्वीकार नहीं करते थे। सन् १९६७ के विधानसभा चुनावों के समय, जब वे बीमारी के कारण मेरठ सर्किट हाऊस में स्वास्थ्य लाभ कर रहे थे, तब गाजियाबाद के कुछ लोग (संभवतः फैक्ट्री—मालिक) उनके पास आए और छह हजार एक सौ रुपये चुनाव हेतु उनके पास छोड़ गए। चौधरी साहब को यह सब अच्छा नहीं लगा। जब वे चले गए, तो उन्होंने मुझसे उस रुपये को सुरक्षित रखने को कहा, जो आज के हिसाब से पचास—साठ हजार रुपये के बराबर था। मैंने किसी तरह वह धन अपने पास सुरक्षित रखा। जब हम वापस लखनऊ लौट रहे थे तो चौधरी साहब ने मुझे हिदायत दी कि यह रुपया संबंधित पार्टी को बैंक ड्राफ्ट द्वारा लौटा दिया जाए, क्योंकि वे उसे अपने पास नहीं रखना चाहते। मैंने उनके आदेशानुसार वह रुपया उस पार्टी को भेज दिया। मुझे मालूम था कि चौधरी साहब अपने क्षेत्र के किसानों को छोड़कर अन्य किसी से चुनाव के लिए वित्तीय सहायता नहीं लेते थे।

चौधरी साहब सभी को यथायोग्य सम्मान देते थे। अपने से आयु में बड़े महान् देशभक्त लोगों के प्रति उनकी बड़ी श्रद्धा थी। जब कभी श्री विष्णु शरण दुबलिश (काकोरी कांड के अभियुक्त), जो केवल विधायक थे, चौधरी साहब से मिलने मंत्रीकक्ष में आते थे, तो मंत्री होते हुए भी चौधरी साहब कुर्सी से खड़े होकर उनका स्वागत करते थे।

उस महापुरुष के जीवन के ऐसे न जाने कितने अंतरंग तथ्य हैं, जिन्हें यदि लिपिबद्ध किया जाए तो एक अलग ग्रंथ की रचना की जा सकती है। इस समय नवासी वर्ष की आयु में, मुझे जो भी थोड़ा स्मरण हो आया, वह मैंने कलमबद्ध कर दिया और यही उनके प्रति मेरी सच्ची श्रद्धांजलि है।

२८

स्मृति शेष!

जयपाल सिंह*

मेरा जन्म चूँकि स्वतंत्रता सेनानी, सदस्य डिस्ट्रिक्ट बोर्ड मेरठ चौधरी भीम सिंह के घर हुआ, अतः चौधरी चरण सिंह जी को बचपन से देखने का मुझे भरपूर मौका मिला।

चौधरी साहब से मेरी पहली भेंट मेला गढ़मुक्तेश्वर पर हुई। चौधरी साहब पिताजी के शिविर में ठहरे थे। मैं उन्हें खाना खिला रहा था। उस समय चौधरी साहब कांग्रेस से विधानसभा सदस्य थे। मैंने जब एक पूरी उनकी इच्छा के विपरीत उन्हें परोस दी, तो वे डाँटकर बोले यह खातिर नहीं है, अब तेरी जिद्द पर मेरा पेट खराब हो गया तो यह जनाब की गलती होगी ना। मेरे क्षमा याचना पर प्रसन्न होकर मेरा नाम पता पूछा। मैंने जब अपना परिचय दिया तो बोले, "आपके पिताजी तो विशाल शरीर के स्वामी हैं। तुम दुबल–पतले कैसे?" मैंने कहा– दिल और दिमाग से मैं भी मजबूत हूँ। ९ वर्ष के बच्चे का यह उत्तर सुनकर वे हँसे और मुझे बहुत दुलारा। उनका उस दिन का यह वाक्य, (भीम सिंह तेरा बेटा बहुत निर्भीक और साहसी होगा) आज तक कानों में गूँजता रहता है। यह सन् १९३९ की बात है।

सन् १९४२ का आंदोलन चरम पर था। बागपत तहसील का कांग्रेस कार्यालय गोपनीय तौर पर हमारी गढ़ी में आ चुका था। एक दिन बागपत पुलिस के दरोगा जी का, जो बिरादरी से गुर्जर थे, अंग्रेज सरकार के नौकर रहते हुए भी उन्हें देश–भक्त आंदोलन कार्यकत्ताओं से अटूट हमदर्दी थी, गोपनीय संदेश पिताजी के नाम आया। बस पिताजी की आज्ञानुसार गढ़ी से तार काटने के औजार, स्टेशन फूँकने का सामान, गर्म दल के लोगों के अवैध शस्त्र, क्रांतिकारी साहित्य, पर्चे सभी सामान मक्का की पूलियों में छिपा दिया और फतेह सिंह राणा, जो स्वतंत्र भारत में यू. पी. विधानसभा के सदस्य रहे, चौधरी होशियार सिंह तुगाना पूर्व प्रधानाचार्य, चौधरी शिवदयाल सिंह, जो बाद में डिस्ट्रिक्ट

---

* जयपाल सिंह उत्तर प्रदेश के बागपत जिले के निरोजपुर गूजर गाँव के रहने वाले थे।

बोर्ड के चेयरमैन रहे, दर्शनानंद स्वतंत्रता सेनानी, मूलचन्द शास्त्री जो डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चेयरमैन और एम. एल. ए. रहे तथा चौधरी चरण सिंह जी को गढ़ी में अपने परिवार के एक घर से दूसरे घर निकालते समय गाँव से बाहर एक कब्रिस्तान में झाड़ियों में छिपा दिया। जब पुलिस गढ़ी में तलाशी ले खाली हाथ लौटी, तो उनका अंग्रेज अफसर, जिसे सब कप्तान साहब कह रहे थे, थानेदार को डाँट रहा था– हमारी सूचना झूठी नहीं हो सकती, जिले के सभी कांग्रेस कार्यकर्ता यहाँ मौजूद थे। सूचना लीक कैसी हुई? चालाक अंग्रेज कप्तान ने बच्चों और औरतों से भी पूछने की चेष्टा की। मेरी दादी जी जो उस समय ९० पार कर चुकी थीं, बोलीं अजी म्हारे घर में भौंरा (तहखाना) तो है नहीं, जहाँ लोग छिपे हों, सारा घर तो आप देख चुके। पुलिस के जाने के बाद पता चला कि अमन सिंह आत्रेय के पैर में मोच आ गई, परंतु सभी बच गए इस बात की खुशी सभी को सदा रही।

सन् १९५२ में चौधरी चरण सिंह उ. प्र. सरकार में मंत्री थे, मेरा इलाहाबाद साक्षात्कार था। पिताजी के आदेशानुसार मैं पहले लखनऊ गया। पिताजी चाहते थे कि पब्लिक सर्विस कमीशन उ. प्र. के किसी सदस्य से चौधरी साहब सिफारिश कर देंगे, परंतु उन्होंने मना कर दिया। कालांतर में जब मेरा सलेक्शन हो गया, तो मैं चौधरी साहब को चिढ़ाने के लिए मिठाई लेकर लखनऊ पहुँचा। चौधरी साहब बहुत प्रसन्न हुए और गले लगाकर आशीर्वाद दिया. बोले–'जयपाल मैं तो चाहता नहीं था कि तुम नौकरी करो। चूँकि किसान के सभी पढ़े–लिखे बच्चे नौकरी में चले जाते हैं और राजनीति में गाँव मरुस्थल होकर रह जाता है।'

मैंने नियुक्ति–पत्र फाड़ दिया और नौकरी न करने और पॉलिटिक्स करने का निर्णय लिया।

चौधरी चरण सिंह संविद सरकार के मुखिया थे। रोडवेज कर्मचारी संघ चक्का जाम का निर्णय ले चुका था। गवर्नमेंट कर्मचारी संघ चीफ मिनिस्टर को अल्टीमेटम देने आया। संयोग से मैं चैंबर में ही था। संभवतः पांडेजी के नेतृत्व में डेलीगेशन जब चौधरी साहब से मिलने आया, तो मैंने उठकर चलना चाहा, तब चौधरी साहब ने रोक लिया। तीन–चार आदमी और भी रुक गए। डेलीगेशन आते ही चौधरी साहब बोले, "पांडेजी हम तो स्वयं आपसे मिलने को आतुर थे।" पांडेजी बोले– आदेश कीजिए। चौधरी साहब बोले, "पांडेजी रोडवेज घाटे में जा रही है। मेरे जहन में एक स्कीम है। दो–दो ग्रेजुएट लड़कों को एक–एक रोडवेज बस का चार्ज सौंप दिया जाए। ड्राइवर–कंडक्टर, वर्कशॉप तथा सभी स्टाफ ज्यों–का–त्यों रहेगा। सिर्फ बस का संचालन लड़कों का होगा। लाभ–हानि सब उन्हीं

की होगी। इस तरह बहुत बड़ी तादाद में शिक्षित–बेरोजगारी समाप्त हो जाएगी और इंशा अल्लाह रोडवेज के घाटे से सरकार का पिंड छूट जाएगा।" पांडेजी और उनके साथी हड़बड़ा गए। उनकी हालत देखते ही बनती थी और वे बिना नोटिस थमाए, माँगपत्र देकर हड़ताल स्थगित करने की प्रेस–विज्ञप्ति तिलकराम शर्मा (पी. आर. ओ.) को देकर चले गए।

लौहपुरुष चौधरी चरण सिंह

मुझे यह सौभाग्य प्राप्त है कि मैं भारत के किसानों की किस्मत के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और निर्णायक क्षणों का प्रत्यक्षदर्शी रहा हूँ। सन् १९५९ में नागपुर में कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन चल रहा था। खुले अधिवेशन में पं. जवाहरलाल नेहरू, प्रधानमंत्री भारत सरकार ने सहकारी खेती भारत में लागू करने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया। जहाँ तक मुझे याद है मूल प्रस्ताव की भाषा कुछ इस प्रकार थी – भारत में खेती की प्रति एकड़ कम उपज और खेत का आकार छोटा होने के कारण भारत में सहकारी खेती तुरंत लागू की जाए। उस समय कांग्रेस में नेहरूजी की इच्छा ही समस्त कांग्रेस की इच्छा थी। सभी कांग्रेस सरकार के मुख्यमंत्री तथा केंद्रीय मंत्री प्रस्ताव के पक्ष में बोले। भारत के कोने–कोने से आए कांग्रेस डेलीगेट इस भयावह प्रस्ताव से सहम उठे। पूरा पंडाल मानसिक रूप से जड़–प्रायः हो चुका था। हम सभी यह महसूस कर रहे थे कि अब जमीन से किसानों की मिलकियत चन्द–रोजा है। उस समय लग रहा था कि अंदर से सहकारी खेती के विरुद्ध होते हुए भी कांग्रेस–नेतृत्व में नेहरूजी द्वारा प्रस्तावित प्रस्ताव के हक़ में बोलने की होड़ लगी हुई थी, तभी शंकर दयाल शर्मा (जो बाद में हमारे राष्ट्रपति रहे) ने प्रस्ताव पास करने के लिए हाथ उठाने की माँग की, परंतु देवरजी, जो उस समय अखिल भारतीय कांग्रेस के अध्यक्ष थे और अधिवेशन का सभापतित्व कर रहे थे, ने कहा कि उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी के एक पदाधिकारी चौधरी चरण सिंह का सहकारी खेती प्रस्ताव पर एक संशोधन आया है कि भारत में सहकारी खेती किसान की स्वेच्छा से ही स्वीकार की जाए। चौधरी चरण सिंह जी यद्यपि मात्र अकेले विपक्ष में बोलने वाले व्यक्ति थे, तो भी उन्हें केवल १५ मिनट अपनी बात रखने को दिए, जबकि प्रातःकालीन सैशन के ४ घंटे ३० मिनट नेहरू जी और उन्हें प्रसन्न करने वाले नेताओं के नाम रहे और दोपहर बाद के सैशन में भी ५० मिनट का समय प्रस्ताव–समर्थक ले चुके थे।

चौधरी चरण सिंह ने प्रारंभ में ही अपने अकाट्य तर्क और प्रभावशाली शैली से कांग्रेस डेलीगेट्स को उत्साह से सरावोर कर दिया। १४ मिनट समाप्त होते ही ढेवरजी ने भाषण का उपसंहार करने हेतु प्रथम घंटी बजा दी, परंतु सभागार से भारी नारे बाजी हुई– 'चरण सिंह जिंदाबाद', 'महात्मा गाँधी अमर रहें', 'चरण सिंह को बोलने दो।' प्रतिनिधियों की माँग पर बार–बार समय बढ़ाया गया और चौधरी चरण सिंह बोलते रहे। मेरे समस्त राजनीतिक जीवन की यह सर्वाधिक लंबी तकरीर थी, जो मैंने चौधरी साहब या अन्य राजनीतिक नेताओं के द्वारा सुनी। चौधरी साहब द्वारा कहा गया एक बड़ा वाक्य में यहाँ उद्धृत करना चाहूँगाः–

> "माननीय प्रधानमंत्री जी! आप निस्संदेह भारत की कृषि की दुर्दशा पर चिंतित हैं, कृषि और कृषक को ऊपर उठाना चाहते हैं, परंतु सहकारी खेती किसान के शिक्षित हुए बगैर और उसका मानसिक विकास अत्यंत उन्नत हुए बगैर किसान को तबाह कर देगी। माननीय पंडित जी! जिस राष्ट्र (सोवियत रूस) का आप अनुसरण करना चाहते हैं, जो औद्योगिक क्षेत्र में बहुत प्रगति कर चुका है और आगे भी करेगा, ३० वर्ष बाद भूखा मर जाएगा और अंततः बिखर जाएगा। चूँकि खेती और उद्योग के सिस्टम में जमीन आसमान का फर्क है, ...।" उन्होंने अपने सारगर्भित लम्बे भाषण में जहाँ तर्क और आँकड़े प्रस्तुत किए, वहीं अपने क्षेत्र की खेती से जुड़ी कतई गँवयी भाषा में एक कहावत भी प्रस्तुत की। "खेती खसम सेती, बेटे की आधी और नौकर की पशम सेती।"
>
> (ज्ञातव्य है कि कालांतर में सोवियत रूस के संबंध में १९५९ में नागपुर में की गई चौधरी साहब की भविष्यवाणी अक्षरशः सत्य सिद्ध हुई)।

अंत में मत विभाजन में हाऊस के लगभग इकतरफा समर्थन के बल चौधरी साहब का संशोधन पास हुआ और देश की कृषि और किसान तबाह होते–होते बचे।

गाँधीजी की हत्या, सरदार पटेल का निधन, जयप्रकाशजी और लोहियाजी का कांग्रेस छोड़कर जाना तथा अन्य कई कारणों से नेहरूजी का अहंकार बढ़ चुका था। कांग्रेस में रहकर नेहरूजी का विरोध किसी भी राजनीतिक हस्ती के लिए खतरा हो सकता था। होना तो यह चाहिए था कि नेहरूजी अपने योग्य कार्यकर्ता का मनोबल बढ़ाते, हुआ बिल्कुल

उलटा। तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री सम्पूर्णानंद को कांग्रेस अध्यक्ष उ. नू. भाई ढेबर का हवाई–पत्र मिला, जिसमें स्पष्ट निर्देश था कि नेहरूजी चाहते हैं कि सहकारी खेती जैसे प्रगतिशील प्रस्ताव का विरोध करने वाले लोगों को मंत्रीमंडल से हटा दिया जाए।

मुझे तारीख याद नहीं, इतना याद है कि हमारे यहाँ का विधानसभा का उपचुनाव होना था और श्री हरख्याल सिंह उम्मीदवार थे ही, चूँकि उन्हीं की पिटीशन पर यह उपचुनाव हो रहा था, इसलिए हम लोगों ने नागपुर अधिवेशन में ही चौधरी साहब का अपने क्षेत्र का व्यापक दौरा तय कर दिया था। उधर ढेवरजी का पत्र मिलते ही मुख्यमंत्री, उ. प्र. डॉ. सम्पूर्णानंदजी ने चौधरी साहब को नेहरूजी और कांग्रेस अध्यक्ष ढेवरजी के मत से अवगत कराया। चौधरी साहब ने सायं ५ बजे ही डॉ. सम्पूर्णानंदजी को पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने प्रार्थना की कि मेरे इसी पत्र को मेरा इस्तीफा माना जाए, पर चूँकि मेरे इस्तीफे का कुप्रभाव विधानसभा के उपचुनाव पर पड़ेगा और यह सीट कांग्रेस की प्रतिष्ठा बन चुकी है। माननीय नेहरूजी स्वयं बावली में जा चुके हैं, इसलिए इस्तीफे को गोपनीय रखा जाए। चुनाव संपन्न होते ही मेरा इस्तीफा स्वीकार कर लिया जाए। और रात्रि ९.४० पर चौधरी साहब लखनऊ–दिल्ली एक्सप्रेस से मेरठ के लिए चल पड़े।

ट्रेन उस समय लगभग ६ बजे हापुड़ पहुँचती थी। हम कई साथी जीप से, जिसे सरदार मिलकियत सिंह चला रहे थे, हापुड़ चौधरी साहब को रिसीव करने पहुँचे। जैसे ही ट्रेन रुकी, फर्स्ट क्लास कम्पार्टमेन्ट के सामने हमने कांग्रेस, नेहरूजी और चौधरी साहब के नारे लगाए तो चौधरी साहब ने खिड़की से मुँह निकालकर कहा– आज का अखबार नहीं पढ़ा और उन्होंने हिंदुस्तान टाइम्स मेरे हाथों में थमा दिया, जिसमें प्रथम पेज पर अंग्रेजी में लिखा था – Charan Singh resigned from cabinet – resignation accepted (चरण सिंह ने मंत्रीमण्डल से त्यागपत्र दे दिया और उसे स्वीकार कर लिया गया)। तभी सरदार मिलकियत सिंह ने कहा सरकारी गाड़ी चौधरी साहब को लेने नहीं आई। हमने चौधरी साहब को फर्स्ट क्लास वेटिंग रूम में बैठाया और कई दरवाजों पर गाड़ी के लिए दस्तक दी। जो लोग चौधरी साहब के आगे हाथ जोड़े खड़े रहते थे, सब किनारा कर गए। बड़ी कठिनाई से किराए पर ली एक कार से चौधरी साहब को मेरठ लेकर आए। मेरठ आकर मैं स्वयं और अमन सिंह आत्रेय डी. एम. मेरठ से मिले। उन्होंने कहा कि सी. एम. के आदेशानुसार चौधरी साहब को वी. आई. पी. सहूलियत नहीं दी गई। हमने किराये की साधारण गाड़ी से चुनाव – प्रचार किया। परंतु कांग्रेसी नेताओं और प्रशासन ने खुलकर चौधरी साहब के निकटतम

कांग्रेस प्रत्याशी चौधरी हरख्याल सिंह को हराकर ही चैन की साँस ली। श्री कैलाश प्रकाश, श्री बनारसीदास, श्री उमादत्त शर्मा, श्री किशन दत्त त्यागी एम. पी. श्री चन्द्रभानु गुप्त सभी ने चरण सिंह के निकटतम सहयोगी श्री हरख्याल सिंह को हराने में योग दिया। थोड़े दिन बाद नेहरूजी को मेरठ भैंसाली ग्राउण्ड में भाषण देना था, परंतु सार्वजनिक सभा से पहले उन्होंने प्यारे लाल शर्मा स्मारक में (जहाँ कांग्रेस का कार्यालय भी था) कांग्रेस कार्यकर्ताओं को सम्बोधित करना चाहा। कार्यकर्ता सम्मेलन में माननीय नेहरूजी ने कहा, कुछ सिर–फिरे लोग सहकारी खेती का विरोध करते हैं, ऐसे लोगों के लिए कांग्रेस में कोई जगह नहीं और मैं मेरठ की क्रांतिकारी धरती के कांग्रेस कार्यकर्ताओं से अपेक्षा करता हूँ कि वे ऐसे लोगों को बाहर का रास्ता दिखाएँगे। मैं और श्री रतीराम मधुर, प. रामस्वरूप वैद्य, श्री धारा सिंह निवासी धनौरा आदि एक साथ बैठे थे। नेहरूजी के कहते ही अचानक हम खड़े हुए और अकस्मात् सब के मुँह से चौधरी चरण सिंह जिंदाबाद का नारा निकला। मेरा साहस दुस्साहस में बदल गया और मैंने दूसरा नारा लगाया कांग्रेस नेहरू की जायदाद नहीं। शर्मा मैमोरियल कार्यकर्ताओं से खचाखच भरा हुआ था। अधिक संख्या में ग्रामीण किसान थे, सभी ने हमारे नारों का शानदार स्वागत किया, चौधरी चरण सिंह जिंदाबाद के नारों से सभागार गूँज उठा। नेहरूजी भाषण बीच में छोड़, नाराज होकर चले गए। बाद में चौधरी चरण सिंह की फटकार सुनने को मिली। हमने सोचा चौधरी साहब नाराज हो गए परंतु रामस्वरूप वैद्य बोले यह सतही नाराजगी है।

अधिकारी का आदर करो

एक दिन मेरठ सर्किट हाऊस में हम चौधरी साहब के पास बैठे थे। तत्कालीन डी. एम. मि. कपूर चौधरी साहब से मिलने आए। हम अंदर सूट में ही बैठे थे। हम बैठे रहे। जब डी. एम. चले गए तो बोले– तुम सब लोगों को डी. एम. को खड़ा होकर ताजीम (इज्जत) देनी चाहिए थी हम सब शर्मिंदा होकर रह गए।

कितने भोले थे चौधरी साहब

बात मेरठ सर्किट हाऊस की है। चौधरी साहब गृहमंत्री भारत सरकार थे, बोले– इलेक्शन के दौरान जो होली जगदीश ने सुनाई थी उसे सुनाओ। होली मैंने जगदीश जी बरवाला और धर्मपाल सिंह उज्ज्वल मवीकलां के सहयोग से बनाई थी। हममें से कोई कवि तो था नहीं पर तुक्का तीर

सिद्ध हुआ और तीनों होली बहुत पसंद की गई। चौधरी साहब का हुक्म कौन टाले? होली कहने के उपरांत मैंने चौधरी साहब से कहा आप भी तो होली कह लेते थे, उन्होंने हमारे कहने पर महाभारत की होली सुनाई और वह भी लयबद्ध। देश का गृहमंत्री मेरठ सर्किट हाऊस के ग्राउण्ड में होली गाए और वह भी हम जैसे साधारण लोगों के सामने – कहाँ राजा भोज कहाँ गंगू तेली'।

एक दिन १२ तुगलक रोड दिल्ली में, मैं छज्जू सिंह एम. एल. ए., बनारसी दास चाँदना एम. एल. ए., त्रिलोकचन्द हस्तिनापुर, एम. एल. सी. और पद्मश्री डॉ. जे. पी. सिंह, चौधरी साहब के दामाद व माता श्रीमती गायत्री देवी बैठे थे। उस समय संयोग पर चर्चा चल रही थी। चौधरी साहब बोले – छज्जू सिंह! १९३१ में, मैं सत्याग्रह करने के मूड में नहीं था, चूँकि चौधरन साहिबा गर्भवती थीं, और शीघ्र डिलीवरी होने वाली थी, इस लड़के (मेरी तरफ इशारा करके) के पिता चौधरी भीम सिंह ने मुझसे कहा "चरण सिंह! मैं तो मामूली पढ़ा–लिखा व्यक्ति हूँ। मेरे साथ ९ साथी सत्याग्रह को तत्पर हैं। आप वकील हैं, एक दिन देश आजाद होगा, आप नेता बनोगे। आगे बढ़ो," भीम सिंह और उसके साथियों ने मेरे नेतृत्व में सत्याग्रह किया। अगर मैं उस समय कायरता बरतता तो हो सकता है मुझे यह मुकाम न मिलता। राजनीति में इस रुतबे पर पहुँचकर कोई नेता अपने सहयोगियों के योगदान की सराहना इस हद तक करे, ऐसी मिसाल कम मिलेगी।

जातिवाद के बड़े विरोधी थे

बात छोटी सी है, पर है महत्त्वपूर्ण। टीकम सिंह गाँव नौरोजपुर गूजर, जनपद बागपत को १२ तुगलक रोड पर मैंने चौधरी साहब से मिलवाया तो मैंने कहा चौधरी साहब यह टीकम सिंह बी. ए. पास हैं, गुर्जर हैं, आपके दर्शन करने आए हैं। यह सुनते ही चौधरी साहब गुस्से में लाल हो गए और बोले, "इतना पढ़–लिखकर भी यह तमीज है तुम्हें, किसान – पुत्र या किसान नहीं कह सकते थे। अब टीकम सिंह प्राइमरी पाठशाला में प्रधान अध्यापक हैं, और आज तक चौधरी चरण सिंह के भक्त हैं।"

बहुत स्वाभिमानी थे चौधरी साहब

बात सन् १९७७ के राजनीतिक महासमर की है। चुनाव दौरे चल रहे थे। हमारे एक साथी श्री साहब सिंह (बाद में एम. एल. ए. बने) ने बिना चौधरी

चरण सिंह से पूछे नवाब कोकब हमीद, बागपत के यहाँ चौधरी साहब की चाय रख दी। चौधरी चरण सिंह जी बड़ौत डाक बंगले में ठहरे हुए थे। प्रातः किसी ने उनसे ज़िक्र किया तो नाराज होकर बोले "यह घर मेरा सदा का विरोधी है और वैसे भी राष्ट्रीय आंदोलन में अंग्रेज – परस्त रहा है, मैं उनके यहाँ नहीं जाऊँगा। हम सभी के प्रयास के बावजूद चौधरी साहब नवाब बागपत के यहाँ चाय पीने नहीं गए। श्रीमती इंदिरा गाँधी को इस घटना का पता चला, तो वह स्वयं टेलीफोन करके बागपत नवाब के यहाँ चाय पीने आई। हमारे क्षेत्र के मुसलमानों पर नवाब कोकब हमीद का व्यापक असर है, अतः मुसलमान मतदाताओं में चर्चा चल पड़ी कि चरण सिंह के लोगों ने जानबूझकर नवाब को बेइज्जत किया है। अतः चरण सिंह को वोट मत दो, हम सब कार्यकर्ताओं को बड़ी घबराहट हुई। हमने चौधरी साहब पर दबाव बनाने के लिए उन्हें दिल्ली जा घेरा। मैं स्वयं, डॉ. महक सिंह पूर्व एम. एल. ए., चौधरी उदयमान सिंह मलिक, श्री सखावत हुसैन जी एम. एल. ए., जगदीश जी बरवाला और श्री धर्मपाल सिंह मवीकलां दिल्ली स्थित यू. पी. निवास पहुँचे तो चौधरी साहब ईदगाह दिल्ली पर चुनाव सभा को सम्बोधित करने गए थे। रात्रि के १ बजे वापस आए तो हमने अपनी बात पेश की, मैंने कहा "आपने नवाब बागपत के यहाँ चाय पर न जाकर बागपत पार्लियामेंट के अधिकांश मुस्लिम मतदाताओं को नाराज कर दिया।" मेरे यह कहने पर कि मुस्लिम मतदाताओं पर नवाब का बहुत असर है, चौधरी साहब नाराज हो गए और बोले "क्या नवाब–नवाब लगा रखी है, कहाँ हैं नवाब और राजे–महाराजे, अगर नवाब की दया पर ही चुनाव जीतना है, तो मैं हारना पसंद करूँगा।" हम बहुत दुःखी हुए और मेरी आँखों में पानी भर आया। शायद मेरे आँसू उन्हें दिखाई दे गए। चौधरी साहब ने माननीय ओमपाल सिंह से कहा– "यह लड़का बहुत भावुक है, बुलाओ इसे। हम सभी अंदर चले गए। तब तक चौधरी साहब शांत हो चुके थे। चौधरी साहब बोले "देखो जयपाल सिंह! नवाब को नवाबी १८५७ के स्वतंत्रता संग्राम में अंग्रेज सरकार की सहायता करने के इनाम में मिली। यह घर सदा से अंग्रेज–परस्त रहा है और आम जनता के विरुद्ध है। इनके यहाँ बिना निमंत्रण के चाय पीने जाने में म अपमान है, फिर भी आप लोग चाहते हैं तो हमीद निमंत्रण देगा तो मैं आप लोगों की प्रसन्नता के लिए चला चलूँगा; पर अच्छा यही होगा कि आप लोग जिद न करें। हम कहाँ मानने वाले थे, हमने रात में ही कोकब हमीद को उठाया, उसे निमंत्रण देने को कहा और तीसरे दिन क्षेत्र के दौर में चौधरी साहब का बागपत नगर की हवेली में सायं ७.०० बजे चाय के लिए लेकर गए। चौधरी साहब की चाय नवाब ने अपनी

'खुर्शीद मंजिल में आयोजित की। चौधरी साहब पूर्व की ओर थे और उनके दायें में मैं और महक सिंह बैठे थे। चौधरी साहब ने चाय का कप उठाया और पीना शुरू किया कि उनकी निगाह कर्मइलाही के चित्र पर गई तो चौधरी साहब की आँखों का रंग बदला। उन्होंने कप नीचे रख दिया और उठकर आए। बात वास्तव में देश और देशभक्तों की इज्जत की थी। पूरे इलाके में यह कहा सुना जाता है कि १८५७ की क्रांति के महान सेनानायक बाबा शाहनल सिंह, जब फौज से लड़ते हुए बुरी तरह जख्मी हो गए थे और बड़ौत–बड़का, गुराना तथा हिलवाड़ी की सीमा के जंगल में पड़े हुए थे, कर्नइलाही वहाँ से गुजर रहा था और उसने बाबा शाहमल का सर काटकर अंग्रेजों से इनाम में बागपत नवाब की पदवी पाई थी। अपनी जीत सुनिश्चित करने के लिए चौधरी साहब ने उस नवाब की चाय पीना स्वीकार नहीं किया और प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी बिना बुलाए नवाब के घर स्वयं चलकर आई। स्वाभिमान और वतन–परस्ती की ऐसी मिसालें राजनीति में कम मिलती हैं।

१८ जून १९८० की बागपत की वह जघन्य घटना

बागपत पुलिस ने तीन नवयुवकों को गोलियों से छलनी कर मौत के घाट उतार दिया और उनके साथ की महिला माया त्यागी को निर्वस्त्र कर दिया। यह घटना बागपत के चौपाले पर हुई और वह भी मामूली मारपीट के फलस्वरूप। १९ जून को श्री ओमबीर तोमर, वकीलों को लेकर मौन जुलूस निकालना चाहते थे, उन्हें स्वयं एस. ओ. बागपत डी. पी. गौड़ ने लाठियों से पीटा। २१ जून को मैंने चौधरी चरण सिंह से दिल्ली मिलकर विरोध जताने का निवेदन किया, तो चौधरी साहब को सहसा विश्वास ही नहीं हुआ और बोले, कोई भी थानेदार खुले चौपले पर ऐसी घृणित हरकत नहीं कर सकता, परंतु बाद में जब उन्हें यकीन हुआ और माया त्यागी कांड के विरोध में जेल भरो आंदोलन, धरना प्रदर्शन हुआ, तो मुझे ही बागपत आंदोलन का संयोजक बनाया। २८ जुलाई १९८० को पुलिस लाठी चार्ज में मेरी तीन पसली, कूल्हे की हड्डी और रीढ़ की डिस्क फ्रैक्चर हो गई और २९ जुलाई को डॉ. महक सिंह पर भी पुलिस ने कसकर लाठियाँ बरसाई और उन्हें जेल भेज दिया। ५ अगस्त को चौधरी साहब प्यारे लाल शर्मा जिला अस्पताल मेरठ में मुझसे मिलने आए तो उनकी आँखें नम थीं, उनकी आँख के उन दो बूँद आँसूओं ने मेरी सारी पीड़ा हर ली।

ईमानदारी की बेजोड़ मिसाल

चौधरी चरण सिंह देश के कार्यवाहक प्रधानमंत्री थे और मध्यावधि चुनाव चल रहा था। पार्टी के पास पैसे का नितांत अभाव था। पार्टी की ओर से चुनाव सामग्री के नाम पर प्रति कैंडीडेट २००–३०० पोस्टर, २०० झंडे तथा कुछ चुनाव चिह्न इत्यादि ही मिलते थे। मैं और जगदीश निवासी बरवाला, धर्मपाल सिंह मवीकलां, दिल्ली चुनाव सामग्री लेने पहुँचे तो पता चला कि टाटा साहब का अपोइंटमेंट है। सहज बात थी लगा पैसे का संकट दूर होने वाला है। मैंने चोरी से टाटा साहब की बात सुनने की ठान ली और चौधरी साहब के निजी कक्ष में माताजी से बात करने के बहाने घुस गया। चौधरी साहब के बैडरूम के ठीक पश्चिम में एक छोटे से कमरे में, जिसका दरवाजा बैडरूम में भी खुलता था, जिसे चौधरी साहब लिखने–पढ़ने और आगंतुकों से मिलने के लिए प्रयोग करते थे, में जैसे ही टाटा साहब पधारे, मैं बैडरूम और अध्ययन कक्ष के पर्दे में लिपटकर खड़ा हो गया। अगर पकड़ा जाता तो बहुत फटकार लगती, मगर मैंने खतरा मोल ले ही लिया।

औपचारिकता के उपरांत चौधरी साहब ने टाटा से ...कहा कैसे तकलीफ की?" टाटा ने कहा, "पैसे देने आया हूँ।"

चौधरी साहबः मैं तो उद्योगपतियों से पैसा लेता नहीं और आपके यहाँ तो लोग खुद माँगने जाते हैं, बिना माँगे मुझपर यह मेहरबानी क्यों?

रतन टाटाः आप जब वित्तमंत्री थे, भारतवर्ष के इन्कम टैक्स के उच्च अधिकारियों की बैठक में आपने हमारी कंपनी को ईमानदार बताया। इसी कारण मैं आपको चुनाव के लिए पैसा देना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि देश का प्रधानमंत्री ईमानदार आदमी बने और यह बिना पैसे संभव नहीं। मैं आपके पास कभी काम के लिए नहीं आऊँगा।

चौधरी चरण सिंहः आप हमारा डॉयलोग नहीं समझेंगे, (उन्होंने हिंदी में कहा) "मुँह खाये आँख लजाए", आपके बिना कहे ही मेरा हाथ आपकी फाइल साइन कर देगा।

उन्हें ईमानदारी से हारना मंजूर था पर बेईमानी से जीतना नहीं ऐसा था वह माटी का लाल।

विनोदी स्वभाव

मैं सरूरपुर कलां इन्टर कॉलेज का मैनेजर था। चौधरी चरण सिंह कॉलेज प्रांगण में भाषण दे रहे थे। मीटिंग में पाँच घंटे से लोग बैठे थे। एक सज्जन जो ग्राम लुहारी के रहने वाले थे और उन्हें ९ किलोमीटर चलकर

जाना था, भाषण के बीच में ही उठकर चल दिए। चौधरी चरण सिंह ने उन्हें रोका, थोड़ी देर और बैठो, वह सज्जन बोले, "मैं तो लुहारी का हूँ, (लुहारी गाँव)। चौधरी साहब बोले लुहारी का हो या कुम्हारी का, बैठ जाओ।" सभागार में बैठे सभी लोग हँस पड़े और स्वयं चौधरी साहब भी अपने को नहीं रोक पाए।

लोकदल के कानपुर सम्मेलन में चन्द्रभानु गुप्ता गवर्नमेन्ट को समर्थन जारी रखा जाए या नहीं, पर बहस चल रही थी। एक विधायक विषय से हटकर अपने जिले के पी. डब्लू. डी. इंजीनियर की शिकायत करने लगे। उनका कहना था कि अमुक इंजीनियर हमें घास नहीं डालता। चौधरी साहब बोले, "इंजीनियर तो घास डाल देगा, आप खाएंगे कैसे?" सारा पंडाल ठहाकों से गूँज गया।

कानपुर से चौधरी साहब को लखनऊ जाना था। मनोहर लालजी (मंत्री) के आवास पर नाश्ता करके जब वे चलने लगे, तो मनोहरजी के एक रिश्तेदार थे, जो बहुत सुंदर लम्बे बाल रखे हुए थे और क्लीन शेव थे और माननीय कमलापति त्रिपाठी की तरह ही धोती बाँधे थे, चौधरी साहब के साथ बैठना चाहते थे। चौधरी साहब ने उस सज्जन की तरफ मुखातिब होते हुए कहा– "बहनजी आप मनोहर लालजी की गाड़ी में ही बैठिए", और मुझे बैठने का इशारा कर दिया। हम सभी लोग हँस पड़े और मनोहर लालजी और उनके साथी शर्म से गड़ गए।

स्पष्टवादी चौधरी चरण सिंह

माननीय अटल बिहारी वाजपेयी दिल्ली फिरोज शाह कोटला मैदान में बोल रहे थे। उन्होंने कहा, "पार्लियामेंट में बहस चल रही थी कि स्वर्ण मंदिर में आतंकवादी शरण लेते हैं। प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने पूछा, 'क्या विपक्ष चाहता है कि स्वर्ण मंदिर में पुलिस प्रवेश करे?' मैंने उत्तर दिया, 'क्या सरकार सभी कार्य विपक्ष से पूछ कर करती है?' परंतु चौधरी साहब ने तुरंत खड़े होकर पुलिस नहीं, तुरंत फौज भेजी जाए।' ज्ञात रहे, पंजाब सिक्ख जाट–बहुल प्रदेश है और स्वर्ण मंदिर उनका काबा, पर देश से बड़ा कोई नहीं है।"

सत्तालोलुप नहीं थे

बात १९७९ की है, इंदिरा गाँधी के समर्थन से चौधरी चरण सिंह को महामहिम राष्ट्रपति ने तीन सप्ताह में लोकसभा में बहुमत सिद्ध करने

की शर्त पर प्रधानमंत्री की शपथ दिला दी। इंदिराजी ने प्रधानमंत्री को अपने निवास पर चाय के लिए आमंत्रित किया। हम सबने चौधरी साहब से निवेदन किया कि आपको धन्यवाद देने इंदिराजी के आवास पर जाना चाहिए, मगर चौधरी साहब नहीं गए। बाद में चौधरी साहब ने बताया कि वह अपने खिलाफ मुकदमे वापस कराना चाहती थीं जो मुझे स्वीकार नहीं। सभी जानते हैं कि सत्ता के लिए कैसे–कैसे समझौते लोग किया करते हैं, लेकिन चौधरी साहब को समझौतों और शर्तों में बँधकर सरकार चलाना नहीं आता था।

अंत में पाठकों से मेरा विनम्र निवेदन है कि व्यक्तिगत तौर पर चौधरी चरण सिंह के एक भी एहसान के बहुत नीचे दबा हुआ नहीं हूँ। उनकी तरफ से प्यार तो मिला, मगर राजनीतिक उपहार न मैंने माँगा और न ही उन्होंने दिया। मैंने तो यह सब जो लिखा है वह मेरी आत्मानुभूति है। मैं गरीब भारत के प्रति उनके चिंतन और राष्ट्र के प्रति उनके समर्पण को साधुवाद देता हूँ, नमन करता हूँ।

२९

बौद्धिक मूल्यांकन की कसौटी

भोला शंकर शर्मा*

राजनीति के कालचक्र की सूईयाँ १२ के अंक पर एकाकार होकर एक बार फिर आगे बढ़ चली हैं। देश के कई प्रदेशों में संविद सरकारों के गठन के समय १९६७ में वजूद में आया गैर–कांग्रेसवाद का नारा गैर–भाजपावाद तक पहुँच, एक चक्र पूरा कर चुका है और कभी 'एकला चलो' में विश्वास रखने वाली कांग्रेस गठबंधन की राजनीति की अनिवार्यता को न केवल स्वीकार कर चुकी है, बल्कि केंद्र में उसी के सहारे सत्तारूढ़ भी है। भारतीय राजनीति ने पलटा भी कुछ ऐसा खाया कि गैर–कांग्रेसवाद और गैर–भाजपावाद अभियान के वामपंथी और समाजवादी जैसे महारथी और अतिरथी आज उसी कांग्रेस और भाजपा के साथ लामबंद हैं, जो कभी उनके निशाने पर रहा करती थी। उत्तर प्रदेश विधानसभा के विगत चुनाव में सोशल इंजीनियरिंग का पुराना सूत्र फिर प्रतिफलित हुआ है, जिसके तहत दलितों–पिछड़ों और अल्पसंख्यकों के साथ सवर्णों के समर्थन के सहारे डेढ़ दशक से भी अधिक की अवधि के बाद मायावती एक अप्रत्याशित (पूर्ण) बहुमत के साथ सत्ता में आ चुकी हैं, किंतु यहाँ इस लेख का उद्देश्य राजनीतिक धाराओं के विचलन का विश्लेषण करना नहीं है बल्कि गैर–कांग्रेसवाद के एक ऐसे पुरोधा का स्मरण करना है, जिसने इस देश में गैर–कांग्रेसवाद के साथ ही एक नया वाद चलाया – किसानवाद। निर्विवाद रूप से किसानों के साथ आजीवन प्रतिबद्ध रहे इस राजनेता का नाम था –चौधरी चरण सिंह।

किसी भी महान व्यक्ति की महानता इसी तथ्य में निहित होती है कि वह रहे या न रहे किंतु उसकी नीतियाँ और सिद्धांत, उसका दिखाया हुआ रास्ता समाज–देश का मार्ग–दर्शन करता है। तत्कालीन मेरठ जिले के अंतर्गत हापुड़ के निकट स्थित बाबूगढ़ छावनी से १४ किलोमीटर दूर

---

* भोला शंकर शर्मा, प्रख्यात पत्रकार। आगरा विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में स्नातकोत्तर किया। संपादक, असली भारत (मासिक पत्रिका) (१९८९)। किसान ट्रस्ट के प्रबंध ट्रस्टी हैं, जिन्हें २००३ में ट्रस्ट के तत्कालीन अध्यक्ष चौधरी अजीत सिंह ने नियुक्त किया था।

गाँव नूरपुर की मढ़याँ में पैदा हुए भूतपूर्व प्रधानमंत्री चौधरी चरण सिंह के व्यक्तित्व और कार्यों का मूल्यांकन करते हैं, तो पाते हैं कि आज के दौर की समस्याओं के संदर्भ में भी उनका चिंतन और नीतियाँ प्रासंगिक हैं।

मुद्दा चाहे आर्थिक नीतियों का हो अथवा जातिवाद का या राजनीतिक हौसले और फैसले का, चौधरी चरण सिंह आज भी अपने आप में एक बेमिसाल व्यक्तित्व हैं।

जनता पार्टी के शासन के दौरान १९७८ में जब छोटे–छोटे घटकों के बड़े–बड़े नेताओं ने चौधरी चरण सिंह को अपमानित और लांछित करना चाहा, तो यह मात्र चौधरी साहब को अपमानित करने की कोशिश नहीं थी, बल्कि देश के उन पिछड़े – शोषित खेती–किसानी से जुड़े गाँव – किसान और कमेरी कौमों को अपमानित करने की साजिश थी, जो इस चौधरी में अपने रहनुमा की तस्वीर देखती थीं और तब चौधरी साहब ने निश्चय किया इन साजिशी चेहरों को उन किसान कौमों की ताकत दिखाने का, जिन्हें ये तुच्छ, कमजोर, जाहिल और गँवार समझते थे।

२३ दिसम्बर, १९७८ की उस विराट किसान रैली का फलितार्थ यह था कि जो गाँव, किसान और पिछड़ी कौमें राजनीतिक दलों के एजेण्डे में हाशिये पर पड़ी थीं, वे अब केंद्र में आ गई थीं और राजनीतिक दल – चाहे वे भाजपा जैसे चरम दक्षिणपंथी हों या कांग्रेस जैसे मध्यमार्गी, गाँव – किसान की बात करने लगे थे, किंतु गाँव – किसान के संदर्भ में अन्य दलों और चौधरी चरण सिंह की सोच एक मौलिक अंतर रहा जहाँ अन्य दल किसान को वक्त–बेवक्त सीढ़ी की तरह इस्तेमाल करते रहे, वहीं चौधरी साहब किसानों की आवाज बने किसान उनकी ताकत था तो वह किसान का आसरा थे – विश्वास थे।

सन् १९२९ में कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन में पूर्ण स्वराज के उद्‌घोष से बेचैन होकर नौजवान एडवोकेट चौधरी चरण सिंह ने गाजियाबाद में कांग्रेस कमेटी की स्थापना की थी। आजादी की लड़ाई के दौरान कई बार जेल यात्राएँ कीं। १५ अगस्त, १९४७ को जब देश आजाद हुआ तो चौधरी चरण सिंह को मुख्यमंत्री पं. गोविंद बल्लभ पंत ने स्वायत्त शासन विभाग में सभासचिव नियुक्त किया, किंतु १९२९ से १९४७ तक, १८ साल का यह अर्सा चौधरी साहब ने केवल आंदोलन करने और जेल जाने में ही नहीं बिताया। उन्होंने उन कारणों का विश्लेषण किया, जिनके चलते कभी 'सोने की चिड़िया' कहा जाने वाला भारत आज दयनीयता की स्थिति में पहुँच गया। उन्होंने पाया कि एक साजिश के तहत इस देश के गाँव – किसान को तथा खेती और कुटीर–धंधों को लगातार विनष्ट किया गया

है। यही वजह थी कि राजनीतिक जीवन की शुरूआत से ही उनके चिंतन के केंद्र बिंदु गाँव और किसान रहे।

और इसी के चलते इस देश के शहरी बुद्धिजीवी वर्ग एवं मेट्रोपोलिटिन प्रैस के एक हिस्से का रवैया चौधरी चरण सिंह के प्रति पूर्वाग्रहग्रस्त रहा। इसे समझने के लिए एक–दो उदाहरण काफी हैं।

अंग्रेजी दैनिकों के जाने–माने स्तम्भ लेखक गुरुचरण दास अपनी पुस्तक "इण्डिया अनबाइंड", जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बेस्ट सेलर का दर्जा पा चुकी है, की भूमिका द वाइज एलिफेंट में नेहरू जी की मिश्रित अर्थव्यवस्था पर प्रहार करते हुए लिखते हैं–

> "जब मैं युवा था, तब तक लोग आधुनिक और नवीन भारत के नेहरू के सपने में गहरा विश्वास रखते थे। जैसे–जैसे समय बीतता गया, हमने पाया कि नेहरू द्वारा दिखाया आर्थिक रास्ता हमें एक अंधे मोड़ की ओर ले जा रहा है और हमारे सारे सपने हवा हो गए। जब हम समाजवाद की स्थापना करने निकले तो हमने पाया कि इसके स्थान पर राज्यवाद की स्थापना हो गई है। १९६० में जब मैनेजर के पद पर कार्य कर रहा था तब मैंने अपने आप को नौकरशाही नियंत्रण के घने जंगल में पाया।"

इस पुस्तक को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर न केवल बेस्ट सेलर का दर्जा हासिल हुआ है बल्कि अमृत्य सेन, नारायण मूर्ति से लेकर 'न्यूयार्क टाइम्स' और 'दि इकोनॉमिस्ट' जैसी पत्र–पत्रिकाओं में प्रशंसापूर्ण टिप्पणियाँ भी मिली हैं।

दूसरी ओर जब चौधरी चरण सिंह नेहरू जी की आर्थिक नीतियों का विरोध करते थे, तब उनकी इस सोच के लिए तत्कालीन प्रैस और बुद्धिजीवी वर्ग का एक हिस्सा उन्हें पिछड़ी सोच का करार देता था।

चौधरी साहब के चिंतन का सूत्र वाक्य था, "भारत की खुशहाली का रास्ता गाँवों और खेतों से होकर गुजरता है।" वह नेहरू जी की आर्थिक नीति का अंधा विरोध नहीं करते थे बल्कि उनका विरोध जमीनी हकीकत पर आधारित होता था, जैसा कि औद्योगिक विकास बनाम कृषि विकास के संदर्भ में वह अपनी पुस्तक 'इण्डियन इकोनॉमिक पॉलिसीः गाँधियन ब्लूप्रिंट' के अध्याय 'द रोल ऑफ एग्रीकल्चर इन इकोनॉमिक डॅवलपमेंट' के पृष्ठ १८ पर लिखते हैं–

"नेहरू यह तो ठीक कहते थे कि लोगों के रहन–सहन का स्तर ऊँचा उठाने के लिए भारत में औद्योगीकरण अथवा कृषितर साधनों का विकास आवश्यक है, लेकिन उन्होंने गलती यह की कि सोवियत रूस की नकल

करने की कोशिश में पहले भारी उद्योगों के विकास की नीति अपना ली, जिससे हमारी अर्थव्यवस्था बर्बाद हो गई ३३३. जब से देश आजाद हुआ है, दुनिया यह विचित्र तमाशा देख रही है, जहाँ कृषि के अंतर्गत आए क्षेत्रफल के ७५ प्रतिशत भाग पर खाद्यान्न की पैदावार होती है और जहाँ श्रमिक – बल में से ५२.९५ प्रतिशत लोग केवल खाद्यान्न की खेती में लगे हैं। जैसे–जैसे समय बीतता जाएगा, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में खाद्य – पदार्थों की भूमिका का महत्त्व बढ़ता जाएगा।'

अंतर्राष्ट्रीय राजन; में खाद्य–पदार्थों की बढ़ती भूमिका के महत्त्व संबंधी चौधरी साहब की चेतावनी भारत–अमेरिका के बीच हुए पी. एल. – ४८० समझौते के उत्तर–प्रभावों के रूप में प्रतिफलित हुई। दूसरी ओर पंडित नेहरू को जीवन के अंतिम दिनों में अपनी गलती का एहसास हुआ। ११ दिसम्बर, १९६३ को संसद में पंचवर्षीय योजनाओं पर बोलते हुए नेहरू जी ने कहाः

> "मैं अधिकाधिक महात्मा गाँधी के दृष्टिकोण के बारे में सोचने लगा हूँ। ३३३ मैं पूरी तरह से आधुनिक मशीन का प्रशंसक हूँ और बेहतरीन मशीन व बेहतरीन तकनीक चाहता हूँ, लेकिन हमारे देश में हालत यह है कि हम आधुनिक युग में चाहे जितना बढ़ जाएँ, उसका बहुत दिनों तक हमारे लोगों की बहुत बड़ी संख्या पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। उन्हें उत्पादन में भागीदार बनाने के लिए कोई और उपाय करना होगा, चाहे उत्पादन यंत्र आधुनिक तकनीक के मुकाबले में बहुत कुशल न हों।"

लेकिन तब तक देर हो चुकी थी। इस भाषण के बाद छह महीने भी नहीं बीते, कि वे चल बसे। पश्चिमी जीवन शैली की भौंडी नकल करने तथा अंग्रेजी की अधकचरी जानकारी से स्वयं को महिमा–मंडित समझने वाले कुछ बुद्धिजीवियों ने चौधरी चरण सिंह के बौद्धिक विमर्श को सदैव संदेह की दृष्टि से देखा। "लैण्ड रिफॉर्मस इन यू. पी. एंड दि कुलक्स" तथा "इकोनॉमिक नाइटमेयर ऑफ इण्डियाः इट्स कॉजेज एंड क्योर" जैसी अकादमिक पुस्तकों के लेखक चौधरी चरण सिंह के विषय में स्कूल ऑफ ओरियंटल एंड एफ्रीकन स्टॅडीज, यूनिवर्सिटी ऑफ लंदन में अर्थशास्त्र एवं राजनीति विभाग के प्रो. टेरेन्स जे. बायर्स की टिप्पणी, जो उन्होंने अपनी पुस्तक "चरण सिंह (१९०२–८७)ः एन एसेसमेन्ट" में की है, उल्लेखनीय है –

"चरण सिंह के बौद्धिक गुणों का गंभीर विश्लेषण बहुत कम हुआ है।

मुझे याद है, चरण सिंह की पुस्तक "इकोनॉमिक नाइटमेयर ऑफ इण्डिया (भारत की भयावह आर्थिक स्थिति) १९८२ में लंदन में जब मेरी मेज पर पड़ी हुई थी तो संपन्न शहरी परिवार के कुशाग्र बुद्धि बी. ए. अंतिम वर्ष के एक भारतीय छात्र ने यह पुस्तक हाथ में ली और अविश्वासपूर्ण मुद्रा में उसने पूछा, "क्या इसे चरण सिंह ने स्वयं लिखा है?" चरण सिंह के बौद्धिक गुणों की नकारात्मकता की दृष्टि से प्रश्न महत्त्वपूर्ण था। उनकी पुस्तक "इकोनॉमिक नाइटमेयर ऑफ इण्डिया, जो १९८१ में छपी, लोकदल क्षेत्र के बाहर उपेक्षित सी रही परंतु १९७८–७९ में चरण सिंह राष्ट्रीय मंच पर राष्ट्र के सर्वोच्च पद के प्रतियोगी थे। उनकी उपेक्षा कैसे हो सकती थी! मैंने इसे पढ़ा और कई लोगों से इसकी चर्चा की।

प्रो. टेरेन्स जे. बायर्स आगे लिखते हैं – निःसंदेह चरण सिंह ने अपनी बारीक बुद्धि का इस्तेमाल उत्तर प्रदेश की कृषिपरक समस्याओं के अध्ययनार्थ किया। वे बुद्धिजीवी थे या नहीं, इस बात का फैसला करने के लिए "बुद्धिजीवी की परिभाषा करनी होगी। इस शब्द की परिशुद्ध परिभाषा के आधार पर मेरा यह निर्णय है कि चरण सिंह स्पष्ट रूप से एक बुद्धिजीवी थे, वे असामान्य रूप में भी बुद्धिजीवी थे।"

तो यह रवैया था इस देश के बुद्धिजीवी वर्ग का उस व्यक्ति के प्रति, जिसने 'एबोलिशन ऑफ जमींदारी' (१९४७), 'हाउ टू एबोलिश जमींदारीः विच एल्टरनेटिव सिस्टम टू एडॉप्ट' (१९५८), 'एग्रेरियन रिवोल्यूशन इन यू. पी. (१९५८), 'इण्डियाज पॉवर्टी एंड इट्स सोल्यूशन' (१९६४), 'इण्डियाज इकोनॉमिक पॉलिसीः दि गाँधियन ब्ल्यूप्रिंट' (१९७८), 'इकोनॉमिक नाइटमेयर ऑफ इण्डियाः इट्स कॉजेज एंड क्योर' (१९८१) और 'लैण्ड रिफॉर्म्स इन यू. पी. एंड दि कुलक्स' (१९८६) जैसी अर्थशास्त्र के अकादमिक ज्ञान से परिपूर्ण पुस्तकें लिखीं। चौधरी साहब ने उक्त सभी पुस्तकें अंग्रेजी भाषा में लिखी हैं, हिंदी में लिखी उनकी पुस्तकों की संख्या इनमें शामिल नहीं है।

अध्ययन और लेखन के प्रति ऐसा रुचि–रुझान न तो उस दौरान के अधिकांश नेताओं में था, न आज के दौर के नेताओं में दिखता है (मधु लिमये जैसे कुछेक अपवादों की बात और है)। यदि ऐसा होता तो डॉ. अम्बेडकर और दलित नेता दिवंगत काशीराम जी के साथ मायावती जी के आदर्श पुरुषों में पेरियार की जगह चौधरी चरण सिंह होते। उल्लेखनीय है कि पेरियार मात्र अपनी ब्राह्मण जनित घृणा के चलते बसपा के आदर्श हैं, जबकि वह दलितों–अंत्यजों के प्रति अपनी घृणा व्यक्त करने से कभी नहीं चूके।

दूसरी ओर चौधरी चरण सिंह थे, जिनके लेखन और कार्यों में दलितों

और पिछड़ों के प्रति चिंता और उनके कल्याण की भावना स्पष्ट दिखाई देती है।

चौधरी चरण सिंह ने जब १९५२ में उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार कार्यक्रम लागू किया तो उसका सर्वाधिक लाभ दलितों और पिछड़ी जातियों को ही मिला। १९५१ की सेंसस ऑफ इण्डिया के दूसरे खण्ड में 'रिपोर्ट ऑन उत्तर प्रदेश' (पृष्ठ सं. ४२२–४२५) से स्पष्ट होता है कि इस कानून से कुल लाभान्वित लोगों में अनुसूचित जाति के लोग २७.५ प्रतिशत थे।

उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार कानून के तहत जहाँ अन्य जाति के लोगों को जमीन के मालिकाना हक़ के लिए चुकाए जा रहे लगान का दस गुना रुपया सरकारी मालखाने में जमा करना जरूरी था, वहीं नियम – १७२ (ए) के अंतर्गत अनुसूचित जाति के लोगों को इस नियम से छूट मिली हुई थी।

इस विधेयक की धारा–९ में प्रावधान था कि गाँव के प्रत्येक व्यक्ति का उस जमीन, जिस पर उसका आवास बना है तथा उसकी परिसीमा में आने वाले कुएँ तथा पेड़ों पर भी मालिकाना हक़ होगा। इस अधिकार से लाभान्वित होने वालों में सर्वाधिक पिछड़े और हरिजन ही थे।

यह चौधरी चरण सिंह ही थे, जिन्होंने कुमाऊँ के वरिष्ठ कांग्रेसी नेताओं – पं. गोविंद बल्लभ पंत, श्री जगमोहन सिंह नेगी और श्री नारायणदत्त तिवारी के विरोध के बावजूद कुमाऊँ क्षेत्र के जोतकारों, जिन्हें वहाँ सीरतान कहा जाता था, को भूमि – स्वामित्व के अधिकार दिलाए। इन सीरतानों में अधिकांश अनुसूचित जाति से संबंधित थे। दलितों को उनके ये अधिकार दिलाने के कारण चौधरी साहब को आगे चलकर राजनीतिक खामियाजा भी भुगतना पड़ा। वे वरिष्ठ कांग्रेसी नेताओं के कोपभाजन बने।

१८ फरवरी, १९८२ को नई दिल्ली के बोट क्लब पर होने वाली रैली के लिए हरिजनों, गिरिजनों और पिछड़ों से की गई चौधरी साहब की अपील का निम्न अंश दलितों के लिए क्रांतिकारी आह्वान है तथा उनके मन की निश्छल भावनाओं की अभिव्यक्ति है।

"इस मातृभूमि को प्यार करने वाले मेरे जैसे किसी भी व्यक्ति की इससे बड़ी सद्इच्छा और क्या होगी कि उन लोगों से, जो हमारे समाज के परजीवी बन चुके हैं, पिछड़ों, हरिजनों, गिरिजनों और सभी दबे–थके तबकों द्वारा सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक सत्ता छीन ली जाए। मैं समाज के पिछड़े और वंचित तबकों के नौजवानों से जागने और संगठित होने की अपील करता हूँ। इतिहास साक्षी है कि एकाधिकारवादियों और

शोषकों ने सत्ता स्वेच्छा से कभी नहीं छोड़ी है, इसे सदैव छीनना पड़ा है।

चौधरी चरण सिंह ने भारतीय इतिहास का गहन अध्ययन किया था; उल्लेखनीय है कि बी.एस.सी. के बाद एम.ए. में उनका विषय इतिहास ही था। निजी जीवन के अनुभवों और इतिहास के अध्ययन से प्राप्त अकादमिक ज्ञान ने उनकी इस धारणा को पुष्ट किया कि भारत के न केवल आधुनिक सामाजिक विघटन बल्कि अतीत के राजनीतिक एवं सांस्कृतिक पराभव के लिए भी जातिगत विभाजन ही जिम्मेदार है। इसलिए राजनीतिक जीवन की शुरूआत से ही वह इस सामाजिक बुराई के विरुद्ध सदैव सजग एवं संघर्षरत रहे, लेकिन अभिजात्य संस्कारों में पले–बढ़े कुछ राजनेता और प्रभु–वर्ग की पालकी ढोने को सदैव तत्पर रहा प्रेस का एक हिस्सा भी चौधरी चरण सिंह पर जातिवादी होने का आरोप मढ़ते रहे, बिना किसी तथ्य एवं प्रमाण के और जब चौधरी साहब ने ऐसे लोगों के आरोपों को सप्रमाण गलत साबित किया तथा उन्हें उनके आरोप सिद्ध करने की चुनौती दी, तो ऐसे लोगों ने न तो जवाब देने की ईमानदारी दिखाई, न ही गलती स्वीकार करने का नैतिक साहस। पंडित नेहरू, श्रीमती गाँधी से लेकर 'ब्लिट्ज' के ब्यूरो प्रमुख के. राघवन तथा हाल तक और भी कई पत्रकार इस प्रपंच में शामिल रहे हैं।

पूर्वाग्रहग्रस्त ऐसे लोगों को चौधरी साहब के व्यक्तिगत जीवन की कोई जानकारी नहीं थी। १५–१६ वर्ष की कच्ची उम्र के किशोर थे वे, जब उन्होंने १९१७ में आर्यसमाज को अपना आदर्श माना था, जो उन दिनों हिंदू समाज की संकीर्णताओं, जिनमें जातिवाद भी शामिल था, के विरुद्ध संघर्ष कर रहा था।

राजनीतिक जीवन की शुरूआत से ही जातिवाद विरुद्ध चौधरी साहब का अभियान जारी रहा। संयुक्त प्रांत धारा सभा का सदस्य बनने के बाद १९३९ में उन्होंने कांग्रेस विधायक दल की मीटिंग में एक प्रस्ताव रखा, जिसमें कहा गया था कि जो भी हिंदू प्रत्याशी किसी शैक्षणिक संस्था या लोक सेवा में प्रवेश करे, उससे जाति की बावत कुछ न पूछा जाए, सिवाय इसके कि वह हरिजन है या नहीं। इसी तरह १६ फरवरी, १९५१ में आचार्य जुगल किशोर की अध्यक्षता में हुई प्रदेश कांग्रेस कमेटी की कार्यकारिणी की बैठक में चौधरी साहब ने प्रस्ताव रखा कि कांग्रेस का कोई भी सदस्य जाति के आधार पर बनी किसी भी संस्था–संगठन से स्वयं को नहीं जोड़ेगा। यह प्रस्ताव बहुमत से पारित हुआ।

सामाजिक विषमता के इस कारक को समाप्त करने के प्रति चौधरी साहब सदैव संकल्पबद्ध रहे। उनके प्रयासों की गंभीरता का अंदाजा २२ मई, १९५४ को भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित नेहरू को लिखे

उनके उस पत्र से लगाया जा सकता है, जिसमें उन्होंने राजपत्रित पदों पर उन्हीं युवक–युवतियों के चयन का सुझाव दिया था, जो अपनी जाति से बाहर विवाह करने को तैयार हों।

यहाँ एक बात का उल्लेख करना गैरवाजिब न होगा। चौधरी साहब के लिए सत्ता साधन थी साध्य नहीं। यही वजह रही कि वह जब भी सत्ता में आए, उन्होंने उन सिद्धांतों को प्राथमिकता के आधार पर लागू किया, जो समाज और जन–कल्याण पर आधारित थे। १९६७ में जब वह उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री बने तब उन्होंने आदेश जारी किया कि जिन शिक्षण संस्थाओं के साथ जाति–सूचक शब्द जुड़े हैं, उनका सरकारी अनुदान बंद कर दिया जाएगा। इसका परिणाम यह हुआ कि जिन शिक्षण संस्थाओं ने जाति–विशेष से अपना नाम संबद्ध कर रखा था, वे रातों–रात नाम बदलने को बाध्य हो गई।

ऐसा व्यक्ति, जीवनभर जिसके काम जातिवाद का घोर विरोधी होने का स्वयंसिद्ध साक्ष्य रहे, उस पर जातिवादी होने का आरोप लगाना विकृत मानसिकता का परिचायक है।

भ्रष्टाचार के विरुद्ध तो वह आजीवन एक योद्धा की तरह लड़े। आधी सदी लम्बा चौधरी चरण सिंह का राजनीतिक जीवन एक ऐसा पारदर्शी आईना है, जिस पर कोई दाग नहीं है और यही वजह है कि उनके धुर राजनीतिक विरोधी भी इस मामले में उन पर कोई आरोप नहीं लगा पाते।

हर देश के पास अपना अतीत होता है– अतीत के नायक होते हैं। जो देश अपने नायकों को विस्मृति के गर्त में डाल देता है, वह एक कृतघ्न और विपन्न समाज होता है। प्रश्न यह है कि हम कैसे समाज का निर्माण कर रहे हैं? यदि हम अपने राष्ट्रीय परिदृश्य पर गौर करें तो एक ओर पाते हैं विकास की अंधी दौड़ में शामिल खाया–पीया, अघाया एक छोटा–सा समाज और दूसरी ओर अपनी जमीन और खेती से बेदखल होते, कर्ज के फंदे, जो अंततः मौत का फंदा बन जाता है, में फँसे किसान।

यदि हमें देश की खेती–किसानी को बचाना है, इस असंतुलित विकास की जगह समग्र विकास का रास्ता पकड़ना है तो अमेरिका परस्त सर्वग्रासी नीतियों की जगह गाँधीवाद के रस – पाक में रची–बसी चौधरी चरण सिंह की अर्थनीति को अपनाना ही होगा। चौधरी चरण सिंह के आर्थिक दर्शन की यही महत्ता है कि वह कल भी अर्थवान था आज भी प्रासंगिक है।

३०

भारत-निर्माण के चिंतक

सूरज भान दहिया

चौधरी चरण सिंह का पूरा जीवन निर्बाध चेतना – प्रवाह की ऐसी अंतर्कथा है जो अवरोधों को समेटती हुई अनवरत ग्रामीण विकासोन्मुखी रही। उनके जीवन का एक चुनौती भरा लक्ष्य था – शोषित ग्रामीण समाज को लोकतंत्र के माध्यम से राहत दिलाना। उन्होंने इस लक्ष्य की पूर्ति हेतु आँधियों को ललकारा, डटे रहे, झुके नहीं, अकेले पड़ गए, पर अविचलित रहे, क्योंकि उनमें वैचारिक गहनता, स्पष्टता और तटस्थता थी– उदात्त योद्धा –सी। वे गरीबी को पूँजीपतियों का षड्यंत्र मानते थे। उनकी दृष्टि में किसान, समाज का सबसे ज्यादा ईमानदार, कर्त्तव्यनिष्ठ एवं भोलेपन की मूर्ति है फिर भी वह गरीब है और चारों ओर से शोषण का शिकार है। उनकी चिंता यही थी कि भोला मानव (गरीब) किस तरह दानव (शोषक) का बंधक बन जाता है? वे व्यवस्था में इसका कारण तलाशते थे और इसलिए वे व्यवस्था से जीवन–भर टकराते रहे। व्यवस्था की खामियों को सामने लाने में उन्होंने कोई कसर नहीं छोड़ी। वे सदैव कुव्यवस्था के खिलाफ जनमत को जागृत करने की दिशा में पहल करते रहे, यही उनके जीवन की साधना भी रही। उन्होंने विकास प्रक्रिया को ग्रामीण प्रभावी होने पर बल दिया, क्योंकि उनकी दृष्टि से 'असली भारत' गाँवों में निवास करता था। इसलिए वे जीवनपर्यंत खेत–खलियानों, विधानसभाओं एवं संसद में अपने जनकल्याण के मिशन को पूरा करने में प्रयासरत रहे। वे ग्रामीण परिवेश से उभरकर पहले क्रांतिकारी स्वतंत्रता सेनानी बने और फिर आजादी के बाद गाँधी के हिंद स्वराज के सपने को पूरा करने हेतु अहिंसावादी जनसंघर्ष नेता बने।

भारत ने आजादी के बाद पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से विकास का रास्ता चुना। वे कुछ चकित से हुए कि लगभग सभी राजनीतिक दलों ने समाजवाद का नारा लगाया, लेकिन आर्थिक ढाँचे का मूल स्वरूप पूँजीवादी ही रहा। एक ऐसी वर्ग–प्रणाली में, जिसमें पूँजीवादी उत्पादन–विधि का प्रभुत्व हो, समाजवाद कभी भी राष्ट्रीय सिद्धांत नहीं बन सकता। अभिजात्य वर्ग (व्यापारी, अफसर और राजनेता) की बेईमानी

और दिखावा यह था कि उसमें वर्ग–प्रणाली वालों की बात समाजवादी सिद्धांतों वाली लगे।

क्रांतिकारी स्रोत संग्रहण के नाम पर संवायुव ऐसी आर्थिक कार्यवाहियाँ की गई, जिससे मध्यम और निम्न मध्यम श्रेणियों के साथ–साथ आम जनता पर चोट पड़ी परिणामस्वरूप आर्थिक बचत और साधन कम होते गए और योजनाओं में आत्मनिर्भरता के उद्देश्य को लगभग ताक पर रख दिया गया। राष्ट्रीयता या स्वदेशी की बात अनसुनी कर दी गई। अभिजात्य वर्ग गाँधी की अपेक्षा नेहरू को पसंद करता था क्योंकि नेहरू ने विदेशों से भारी मात्रा में विचारों, पैसों और मूल्यों का आयात किया था, जबकि गाँधी इस बात पर जोर देते थे कि भारत अपनी प्रतिभा व क्षमता के बल पर आत्मनिर्भर बने।

चौधरी चरण सिंह ने योजना – प्रक्रिया में विवाद के मुद्दे उठाए–नगरों द्वारा ग्राम का शोषण, राष्ट्रीय निवेश का नगरों पर विषम अनुपाती व्यय, कृषि की उपेक्षा और उद्योग को बढ़ावा, राजनीतिक क्षेत्र में नगरों का वर्चस्व आदि। समाजशास्त्रियों, अर्थशास्त्रियों एवं अनेक राजनीतिज्ञों को चौधरी चरण सिंह की बात में सच्चाई लगी। गाँधी जी ने कहा था, "मैं कहूँगा कि यदि गाँव नष्ट हुआ, तो भारत भी नष्ट हो जाएगा। वह भारत नहीं रह जाएगा। संसार के लिए उसका उद्देश्य, मिशन लुप्त हो जाएगा। इसलिए चौधरी चरण सिंह ने 'इण्डिया बनाम भारत' की विचारधारा देश के सामने रखी। उन्होंने कहा, "इस देश में पूँजीपति सत्ता से रिश्ता जोड़कर किसानों का लहू चूसते रहे हैं। काश्तकारों से कौड़ियों के मोल उसकी काश्त (कच्चामाल, उत्पाद) खरीद ली जाती है और फिर धुंआ उगलती चिमनियों वाली इमारतों में पका कर मोटा मुनाफा कमाया जाता है। अपने हाड–माँस गलाकर खेती करने वाला किसान तो हमेशा सूने आकाश की ओर ही ताका करता है। कई गुना मुनाफा कमानेवाले लोग कौन हैं? यही लुटेरे हैं, इन्हीं को 'शहरी' कहा जाता है, कमेरे तो किसान व किसान–मजदूर हैं। उन्होंने आगे चेताया, "यह कैसी विडंबना है कि तिलहनों का उत्पादक सारी उमर दो वक्त की रोटी के लिए संघर्षरत रहता है, परंतु तिलहनों का व्यापारी–चन्द दिनों में ही करोड़पति बन जाता है। एक बार 'इलस्ट्रेटिड वीकली ऑफ इण्डिया' को बोलते हुए उन्होंने स्पष्ट कर दिया था," भारतीय राजनीति केवल शहरी–संपन्न लोगों का खेल नहीं है। भारतीय अर्थव्यवस्था की दुर्दशा केंद्रीय कांग्रेस सरकार की गलत नीतियों का परिणाम है।

प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डॉ. एच. के. परांजपे ने चौधरी चरण सिंह के तर्क को सही ठहराते हुए स्वीकार किया था – गाँव और शहर को लेकर

आर्थिक मोर्चे पर एक लड़ाई तो है। आर्थिक विकास को लेकर गाँव हमेशा ही शहरों पर अवलंबित होते है, क्योंकि व्यवस्था राजधानी में होती है और वहीं से संचालित होती है, इसलिए राजधानी के निवासियों का व्यवस्था और निर्णयों पर प्रभाव होना स्वाभाविक भी है। हमारा राजनीतिक नेतृत्व परिपक्व होना चाहिए, उसमें गाँवों की समस्याओं को सुलझाने की इच्छा शक्ति आवश्यक है। यदि समाधान नहीं हुआ, तो असंतुलन बढ़ता जाएगा। लोग रोजगार पाने शहरों में आएँगे और शहरों के सीमित साधन जनसंख्या को समा लेने में अक्षम हो जाएँगे। बाद में एक समय योजना आयोग के सदस्य रहे जयदेव सेठी ने चौधरी चरण सिंह के 'शहर – बनाम गाँव के मुद्दे का विश्लेषण करते माना था कि चौधरी साहब की बात में बहुत सच्चाई है। उन्होंने पाँच बिंदुओं पर प्रकाश डाला था – 'पहला– गाँव के आदमी की आमदनी, शहर के आदमी की आमदनी से आधी से भी कम है। दूसरा– अभी भी ७० प्रतिशत लोग गाँवों में रहते हैं और कृषि पर निर्भर हैं, लेकिन राष्ट्रीय आय में उनका हिस्सा ५० प्रतिशत से घटकर ३२ प्रतिशत रह गया है। लोग उतने ही हैं जो खेती पर निर्भर हैं। खेती की पैदावार बढ़ने के बावजूद राष्ट्रीय आय में अनुपात कम हो रहा है। तीसरा– गाँव में उद्योग नहीं बढ़ रहे हैं। जो जनता है या नई पीढ़ी है, वह कृषि में खप नहीं सकती है। इसलिए चौधरी साहब ने जो कुछ कहा है उससे यह बात उभरकर सामने आई है कि जो नीति अंग्रेजों के वक्त से चल रही थी, गाँवों में उद्योगों को नहीं बढ़ने देने की, वह अब तक बढ़ती ही जा रही है। चौथी बात यह है कि सामाजिक संरचना या सामाजिक विकास के जो माध्यम हैं, शिक्षा, स्वास्थ्य, संचार वगैरह उनका विस्तार जितना शहरों में हुआ है, गाँवों में नहीं हुआ। गाँव में स्कूल है तो मास्टर नहीं, ब्लैक बोर्ड नहीं, पीने को पानी नहीं है। शहर में तो इन सब चीजों के लिए लोग शोर भी कर सकते हैं, गाँव में कौन करता है? पाँचवां– जो चीजें किसान खरीदता है, उसकी कीमत ज्यादा देता है और जो बेचता है उसकी कीमत कम लेता है। ये पाँच कारण हैं, जिसके आधार पर मैं समझता हूँ कि चौधरी चरण सिंह ने जो यह प्रश्न उठाया था, यह इस बात का प्रतीक है कि गाँव और शहर में तालमेल के बजाय, अलगाव होता जा रहा है, इसलिए उन्होंने ठीक मुद्दा उठाया था – खासतौर से मार्क्सवादी इससे ज्यादा बोलते हैं कि गाँव में भूमि सुधार होना चाहिए। पर आज प्रश्न यह है कि शहरों में भूमि सुधार का क्या मतलब होगा? आज से बीस साल पहले जिस आदमी ने एक लाख की कोठी बनाई, आज उसकी कीमत एक करोड़ रुपये से ज्यादा है। भूमि–सीलिंग एक्ट ठीक से काम नहीं कर रहा है। जितना भ्रष्टाचार और काला धन है, सब

शहरों की ही देन है। एक प्रश्न और उठा कि हरित–क्रांति के पश्चात् किसान खुशहाल हुआ है, परंतु खेती, किसान और खेतिहर–मजदूरों की समस्याएँ इसके पश्चात् बढ़ी हैं, खुशहाली की बात तो बहुत दूर है।

कृषि के बारे में सोचने की आदत इस देश में बहुत कम है। हमारे कई हजार साल के इतिहास में ऐसे कई रोमांचक प्रसंग हैं जब फसल न होने पर राजा ने तपस्या की अथवा स्वयं ही हल उठाया। लोकतंत्र में चौधरी चरण सिंह ने अपने आपको इस भूमिका में झोंक दिया तो इतनी बहस क्यों? आज सोचना पड़ रहा है कि कृषि क्षेत्र में क्रांति है या कोई बड़ी भ्रांति। ऐसी स्थिति में यह प्रश्न मन में बार–बार उठता है कि 'हरित क्रांति' (अनाज में आत्मनिर्भरता), श्वेत क्रांति (दूध में आत्मनिर्भरता) और नील–क्रांति (मछली–पालन में आत्मनिर्भरता) का अमृत–कुंभ कौन ले भागा है? कहाँ और क्यों अटक गई– ग्राम विकास की हरहराती गंगा? चौधरी चरण सिंह ने जो मुद्दा उठाया था निःसंदेह वह आज भी प्रासंगिक है।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय नेतृत्व के चरित्र का अवलोकन करना यहाँ नितांत आवश्यक है। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने देश के विकास को समाजवाद के माध्यम से आगे बढ़ाया। वे इस इच्छा को 'फ़ेबियन समाजवाद' और 'कल्याणकारी राज्य' की चाशनी में लपेटकर पेश करते थे। गाँधीवादी यह बात साफ–साफ इसलिए नहीं कहते थे कि कहीं वर्ग–युद्ध न छिड़ जाए। चौधरी चरण सिंह लाग–लपेट वाले आदमी नहीं थे, इसलिए उन्होंने किसान–हितों के प्रवक्ता होने का जिम्मा किसी ग्रामीण समाज के वकील के रूप में नहीं, बल्कि उभरते हुए पूँजीवाद के धुर विरोधी के रूप में सँभाला। उन्होंने साफ कहा कि उद्योगों की उत्पादकता कृषि से श्रेष्ठ होती है, इसलिए किसान गरीब होता है और उद्योगपति खुशहाल। उन्होंने जवाहरलाल की प्रशंसा की कि उन्होंने अगर भारी उद्योगों का ढाँचा न खड़ा किया होता तो हम आज लघु उद्योगों की स्थापना के बारे में सोच भी नहीं सकते थे, परंतु वे उनकी क्रियान्वयन नीति के पक्षधर नहीं थे। चौधरी चरण सिंह ने कृषि–आधारित उद्योगों को बढ़ावा देने की वकालत की। उस समय उन्होंने अफसोस जाहिर किया था कि भारत में उल्टी धार बह रही है। अर्थात् यहाँ खेती पर आधारित आबादी बढ़ती जा रही है और उद्योग–आधारित आबादी घटती जा रही है। चौधरी चरण सिंह गाँधीवादी थे और इसी रास्ते को गाँधी का रास्ता मानते थे कि प्रत्येक ग्राम को एक स्वावलंबी इकाई बनाने का प्रयास किया जाना चाहिए, जिसमें ग्राम–रोजगार पर काफी जोर दिया जाए। देश जब आजाद हुआ, जर्जर आर्थिक स्थिति को बदलने के लिए

जवाहरलाल नेहरू ने विकास का एक मॉडल दिया, जिसे नेहरू–मॉडल कहा जाता है और उसकी सफलता और असफलता को लेकर आज बौद्धिक बहस छिड़ी हुई है। कुछ बुद्धिजीवी ऐसे हैं, जो इसे तत्कालीन समय की जरूरत और पूर्णतः सफल मानते हैं. परंतु ज्यादा तबका ऐसा है जो देश की वर्तमान खराब आर्थिक स्थिति के लिए जवाहरलाल नेहरू तथा उनके विकास–मॉडल को जिम्मेवार मानता है। चौधरी चरण सिंह के विकास–सिद्धांत के पक्षधरों का कहना है कि भारत के लिए किसी भी तरह का विकास तब तक अधूरा माना जाएगा जब तक कि जनसंख्या का एक बड़ा भाग बेरोजगार और गरीबी रेखा के नीचे रहेगा। हमारे यहाँ श्रम काफी बड़ी मात्रा में उपलब्ध है। अतः विकास के किसी भी कार्यक्रम में पूँजी लगाते समय इस बात का ध्यान रखना आवश्यक हो जाता है कि काम करने वाले हाथों को उनकी योग्यतानुसार काम मिले। दूसरे शब्दों में मानव संसाधनों का अधिकतम उपयोग सभी प्रयासों का केंद्रीय उद्देश्य होना चाहिए। इसी पहलू की उपेक्षा नेहरू के मॉडल की कमजोरी थी। बड़े उद्योगों में जिस अनुपात में पूँजी लगी, उस अनुपात में बेरोजगारों को रोजगार नहीं मिला।

इस संदर्भ में चरण सिंह–मॉडल ज्यादा कारगर साबित होता है। कुटीर उद्योग, लघु उद्योग इसीलिए ग्रामीण उद्योगों को समुचित प्रोत्साहन और सुरक्षा नहीं मिलने की वजह से वे धीरे–धीरे लुप्त होते गए, इसीलिए आज नेहरू की आलोचना की जाती है और चरण सिंह की प्रशंसा।

आज पुनः चरण सिंह–मॉडल को अपनाने की जरूरत महसूस हो रही है। इस माडल की प्राथमिकताएँ हैं:

१. कृषि की श्रेष्ठता।
२. मानव संसाधन का संपूर्ण उपयोग।
३. कुटीर तथा लघु उद्योगों को संपूर्ण आधार मानकर भारी उद्योगों को लगाना।
४. राष्ट्रीयता व स्वदेशी भावना जनमानस में प्रवाहित करना।
५. माँग व अधिकारों की बजाय कर्त्तव्य व अनुशासन पर बल। राजनीतिक दलों, नेताओं तथा अन्य संस्थाओं द्वारा राष्ट्रीय मूल्यों और उद्देश्यों के अनुसार कठिन परिश्रम के साथ हिंद–स्वराज के स्वप्न को साकार करना।

करीब पाँच हजार वर्षों से भारत खेती–व्यवसाय से जुड़ा है, अतएव कृषि भारत की आत्मा है जो हमारी सभ्यता के विकास को इंगित करती है। चौधरी चरण सिंह का कहना था – "भारत कृषि प्रधान देश है। यहाँ ७०

प्रतिशत आबादी गाँव में रहती है, लेकिन शहरों–कस्बों में रहनेवाली ५० प्रतिशत आबादी की तुलना में कृषि संबंधित ग्रामीण विकास कार्यों पर राष्ट्रीय आय केवल २४ प्रतिशत ही खर्च किया जाता है। शेष प्रतिशत शहरी आबादी के हिस्से में चला जाता है। यही कारण है कि भारत का किसान आज भी उतना ही गरीब और दयनीय है जितना स्वतंत्रता के समय था। भारत सरकार ने अपनी नीतियों द्वारा उद्योगों के प्रति उदारता दिखाई जबकि किसानों को खेती की लागतभर का भी पैसा नहीं मिलता। कोई भी उद्योगपति कितने ही उद्योग लगा सकता, लेकिन किसान के खेत की जोत की सीमा बाँध दी गई है। इससे कृषि जोत में विभाजन होता गया तथा छोटी–छोटी जोतें अलाभकारी हो गई हैं। उद्योगों के माल की कीमत का लागत से कोई संबंध नही है, इस पर माँग व पूर्ति का नियम लागू होता है, लेकिन किसान की उपज वसूली मूल्य और समर्थन मूल्य के घेरे में बंद कर दी गई है। खेती का महत्त्व केवल पेट भरने तक ही सीमित नहीं है। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का अपना एक विशेष स्थान और योगदान है। इसलिए विशुद्ध सार्थक दृष्टि से भी कृषि की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। देश का ६३ प्रतिशत श्रमिक वर्ग आज कृषि या उससे संबद्ध कार्यों में लगा हुआ है। कृषि क्षेत्र, अर्थात् किसानों और खेती से जुड़ी जनता का विकास ही देश का असली आर्थिक विकास होगा।

आज के नेताओं की तरह चौधरी साहब के कथन और कर्म में अंतर न था। वह जो बात कहते थे, उसको पूरा करते थे। उत्तर प्रदेश में जमींदारों का समूह किसानों का सबसे बड़ा शोषक था और चौधरी साहब किसानों के सबसे बड़े हितकारी। अतः उन्होंने १९५२ में यू. पी. विधानसभा में, जमींदारी–उन्मूलन विधेयक पारित कराके जमींदारों को खत्म कर दिया। उनके इस कार्य से बौखलाए जमींदारों ने अपने पुराने सहयोगी पटवारियों को आंदोलन पर लगा दिया। फलतः आंदोलित पटवारियों से, मंत्री की हैसियत से, चौधरी साहब ने सरकारी कागजात तहसीलों में जमा करा लिए। उसके बाद प्रदेश के २७,००० पटवारियों के त्यागपत्र स्वीकार करके किसानों के शोषकों को घर बिठा दिया। पुराने जमींदारों ने बाग लगाने के बहाने किसानों की भूमि को अधिग्रहण करने की योजना बनाई। उसे चौधरी साहब ने विफल कर दिया। इसके बाद उन्होंने चकबंदी कानून बनवाया।

आजादी के पश्चात् गाँधीवादी विचारधारा पर नेहरू विकास – मॉडल हावी होता दिखाई दिया तथा सभी क्षेत्रों में मानो समाजवाद का ज्वार–सा प्रवाहित होने लगा था। चौधरी चरण सिंह ने कृषि क्षेत्र में सहकारिता को अपनाने के लिए नेहरू को सचेत किया था, क्योंकि वे किसान के स्वभाव

व कृषि की आधारभूत हकीकत से वाकिफ थे। चौधरी साहब मार्क्स के साम्यवाद और अलग–अलग देशों में प्रचलित नाना रूपधारी समाजवादी विचार–व्यवस्थाओं पर भी उन्मुक्त चिंतन करते थे। वे बार–बार कहते थे– "मेरा स्वप्न न तो मार्क्सवादी है और न ही माओवादी है, बस केवल भारतीय व गाँधीवादी है।"

चौधरी चरण सिंह के सहकारिता पर कांग्रेस के १९५९ के नागपुर अधिवेशन में प्रेरणादायक भाषण का उल्लेख करते हुए भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह ने एक जगह लिखा था – "मुझे चौधरी साहब के भाषण सुनने के पश्चात् सहकारिता के बारे में जानकारी हुई। उस समय मैं भी सांसद था व कांग्रेस कार्य–समिति का सदस्य भी। अधिवेशन में पंडितजी ने प्रस्ताव, जो सहकारी खेती पर था, पेश किया, चौधरी साहब ने उसका जोरदार विरोध किया। विरोध के पक्ष में तर्क तथा तथ्य के साथ देश की स्थिति का भी उन्होंने हवाला दिया। चौधरी साहब के एक घंटे के धाराप्रवाह भाषण को पंडितजी ने बड़े ध्यानपूर्वक सुना और वे मुस्कराए। मैं तो चौधरी साहब के भाषण को सुनकर मंत्रमुग्ध हो गया। पंडितजी के प्रस्ताव पेश करते समय अधिवेशन के पंडाल में जो धड़ाधड़ तालियाँ बज रही थीं, चौधरी साहब के भाषण के बाद ऐसा लगता था कि पासा ही पलट गया। पंडितजी ने भोजनावकाश के बाद चौधरी साहब की बात का उत्तर दिया। हम लोगों को तो पंडितजी का, उनकी बात से सहमत न होते हुए भी समर्थन करना पड़ा, क्योंकि पंडितजी की पर्सनैलिटी का असर ही ऐसा था। हाँ, इतना मैं जरूर कहूँगा कि यदि पंडितजी की जगह मैं होता तो, चौधरी साहब के सामने अपना बचाव नहीं कर पाता।"

इसके पश्चात् चौधरी साहब के विरुद्ध राजनीतिक चाल चलनी शुरू हो गई। कभी उन्हें 'जाट नेता' कहा गया, कभी उन्हें 'कुलक' कहा गया, यही नहीं उनको पूँजीपतियों के एक बड़े तबके का समर्थक भी कहा जाने लगा, परंतु चौधरी साहब ने सभी जातियों के किसानों को संगठित किया और किसानों में नव चेतना जागृत की। उनके इस प्रयास को भी 'अजगर' (अहीर, जाट, गुज्जर व राजपूत) का नाम देकर मीडिया में वर्ग–विभाजन का विष फैलाने का षड्यंत्र भी शुरू हो गया, पर चौधरी साहब किसानों में खुशहाली लाने में कार्यरत रहे। आरंभ में उन्होंने हरित–क्रांति का सर्मथन किया, परंतु बाद में वे इसके विरुद्ध हो गए। शुरूआती वर्षों की उछाल के बाद हरित–क्रांति वह लक्ष्य बाँधने में भी चूकने लगी जो उसका मुख्य उद्देश्य था, अर्थात् उपज बढ़ाने का। कुछ वर्षो के बाद गेहूँ और चावल की उपज जड़ता की शिकार हो गई और कपास जैसी फसलों की उत्पादकता काफी कम हो गई। इस पर चौधरी साहब ने टिप्पणी की, "खाद्यान्न में

हमारी आत्मनिर्भरता उसी तरह खोखली है, जैसे हमारे समाजवाद का नारा खोखला है।"

चौधरी चरण सिंह की आर्थिक विचारधारा स्पष्टतः जनता पार्टी की आर्थिक नीति में दिखाई दी। चौधरी साहब ने माना कि कांग्रेस सरकार की नीतियों के कारण आय एवं सम्पत्ति में अंतर बढ़ा। १५ वर्ष के अंतराल में (१९६०–६१ तथा १९७५–७६ के बीच) प्रति–मानव, आधारभूत चीजों (यथा अनाज, दाल, तेल, चीनी व कपड़ा आदि) की खपत घटी तथा ६० प्रतिशत निचली जनता की यह खपत तो एकदम गिरी और ३० प्रतिशत गरीबों का जीवन तो नरक बन गया था। अतएव कृषि प्रधान देश में ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार, कृषि–विकास तथा देहात में बुनियादी सुविधाएँ प्रदान करना जनता पार्टी सरकार की प्राथमिकता रहेगी। कुल उपलब्ध संसाधन का ४० प्रतिशत कृषि एवं ग्रामीण विकास पर व्यय किया जाएगा। उपलब्ध सिंचाई क्षमता को १५ साल के भीतर दोहन करके कृषि की विकास दर बढ़ाना, इस सरकार का मुख्य उद्देश्य होगा। भू–संरचना, कृषि के लिए बिजली देना तथा ऑरगेनिक खाद को बढ़ावा, कुटीर उद्योगों का विस्तार तथा ग्रामीण विकास केंद्र स्थापित करके ग्रामीण स्वराज स्थापित करना ही इस सरकार का उद्देश्य रहेगा।

चौधरी साहब ने १९७९ में केंद्रीय वित्तमंत्री के रूप में जनता–बजट पेश किया तथा आजादी के पश्चात् यह पहला बजट था जिसमें गरीब किसान व भूमिहीन मजदूरों के उत्थान पर जोर दिया गया था। 'काम के बदले अनाज' योजना लागू करने का कार्यक्रम चौधरी साहब की आर्थिक दूरदर्शिता माना गया। राजीव गाँधी के १९८८ बजट को चौधरी साहब के १९७९ के बजट का पुनरावृत्ति कहा गया। आर्थिक विश्लेषकों ने कांग्रेस के ३० साल के शासनकाल को जनता सरकार के ३० महीनों के कार्यकाल के साथ तुलना करके यह निष्कर्ष निकाला कि जनता सरकार ने कीमतों पर नियंत्रण रखकर, ग्रामीण विकास त्वरित करके, गाँधीजी के हिंद स्वराज के सपने को पूरा करने का प्रयत्न किया। चौधरी साहब ने जनता सरकार के दृष्टिकोण को जनता के सामने रखते हुए कहा था "भारत कृषि प्रधान देश है और रहेगा भी। गाँधी का आर्थिक सिद्धांत ही इस देश को प्रगति पथ पर ले जा सकता है और तभी हलपति एक राज्यपति बन सकता है वरना कमेरे और लुटेरों का द्वन्द्व चलता रहेगा।"

चौधरी साहब ने कृषि–विकास का गहन अध्ययन किया। 'ज्वाईंट फार्मिंग एक्सेरड' में उन्होंने लिखा था 'खेत की मिट्टी बैंक की भाँति है। इसमें जितना आपने जमा किया उससे ज्यादा नहीं ले सकते। कुदरत ओवर–ड्राफ्ट की अनुमति नहीं देती। इसलिए इस मिट्टी की उत्पादकता

को न केवल बनाए रखना होगा, बल्कि इसे धनाढ्य बनाना होगा। हरित क्रांति की तकनीक ने इसको विषैला बना दिया है जो किसानों के लिए अब घातक बन बैठी है। उन्होंने फिर कृषि विविधीकरण पर बल दिया। वे किसानों के दृष्टिकोण को बदलना चाहते थे और पारंपरिक खेती से हटकर नगदी फसलों को अपनाने की बात कहते थे। उन्होंने स्पष्ट किया था, "भारत में कृषि–नीति का मतलब कृषि पर आधारित समाज की स्थापना, विकास या उसके सुधार की दृष्टि से बनी नीति, कभी नहीं रहा। यहाँ कृषि नीति प्रायः औद्योगिक हितों की मातहती करने के उद्देश्य से ही सूत्रबद्ध की गई। यही हमारी आर्थिक राजनीति में हो रहा है। राजनीति में तो आदमियों में, पार्टियों में टकराव होता ही रहता है। सभी अपनी–अपनी ढपली बजाते हैं। जिन्हें खेती के बारे में पता नहीं होता, वे भी खेती की बात करते हैं। इसका कोई इलाज नहीं। सार्थक बात तो यह है कि किसान पूजनीय है। उसकी सेवा करनी चाहिए। स्वतंत्रता के बाद चार बार औद्योगिक विकास की नीति तैयार की गई, लेकिन कृषि–नीति पर आज तक फैसला नहीं हो पाया। बस यही किसान की दयनीय स्थिति का कारण है।" समकालीन राजनीतिक इतिहास में सिर्फ दो ही किसान नेता हुए हैं – आजादी से पहले चौधरी तथा आजादी के बाद चौधरी चरण सिंह। दोनों ग्राम्य विकास के प्रबल समर्थक थे। चौधरी चरण सिंह ने तो प्रधानमंत्री बनते ही ग्रामीण पुनरुत्थान मंत्रालय का गठन भी कराया।

१९७७ में दिल्ली में आयोजित किसान रैली को संबोधित करते हुए अटलबिहारी वाजपेयी ने कहा था चौधरी चरण सिंह मातृभूमि के सच्चे सपूत हैं और उनमें किसान का बेटा होने की सभी खूबियाँ हैं। "साम्यवादी नेता मधु लिमये चौधरी चरण सिंह को नवप्रगतिवादी अर्थशास्त्री मानते थे। उनकी आर्थिक विचारधारा को वर्तमान बुद्धिजीवी प्रैक्टिकल अर्थशास्त्र" की संज्ञा देते हैं। पाश्चात्य देशों में उनके प्रैक्टिकल अर्थशास्त्र पर गहन अध्ययन व शोध हो रहे हैं। चौधरी चरण सिंह की विचारधारा में स्पष्टतः किसान–संपन्नता, ग्रामीण विकास एवं आर्थिक विषमताओं को दूर करना परिभाषित था। कुछ निहित स्वार्थी लोग उन जैसी पावन हस्ती के विषय में व्यर्थ की बातें कहने से नहीं चूकते।

स्वतंत्र भारत में चौधरी चरण सिंह के प्रगतिशील विचार होते हुए भी वे सबसे अधिक विवादित राजनीतिक नेता थे। उन्होंने पूँजीपतियों द्वारा नियंत्रित प्रेस का तीव्र आक्रोश सहा, केंद्रीय सरकार के विरोध को झेला, यहाँ तक कि जनता सरकार में भी अपने सहयोगियों के कटाक्ष सुने। एक बार उन्होंने पत्रकारों को संबोधित करते हुए दो

टूक जवाब देकर कह दिया था – "आप इस सच्चाई को कैसे पचा सकते हैं कि कैसे एक किसान का बेटा दिल्ली में बैठकर असली भारत की तस्वीर बदलने के लिए समर्पित है और सरकारी तंत्र को ग्राम्य विकास के लिए दिशा–निर्देश दे रहा है।" चौधरी साहब को बार–बार जाट राजनीति से जोड़कर उनके कद को छोटा करने के प्रयास निरंतर रहे। इस पर उन्हें कई बार कहना पड़ा था – "मैंने कभी इस संकीर्ण वातावरण में नहीं सोचा। मैं राष्ट्र के व्यापक हितों को बार–बार ध्यान में रखता हूँ और उसी के अनुरूप काम करता हूँ। संकीर्ण मानसिकता ने देश का नाश कर दिया है। मुझे इससे घृणा है। अपने देश में सब वर्गों को साथ लेकर चलना चाहिए। मैं केवल जमीन वालों को किसान नहीं मानता, मैं कृषि–मजदूरों को भी किसान मानता हूँ। किसान समुदाय में अकेले जाट नहीं है, मेरा एक व्यापक दृष्टिकोण है। किसानों के साथ–साथ मजदूरों में भी खुशहाली आए, गाँव–गाँव में वही सुविधाएँ हों जो शहरों में हैं। इस संघर्ष में मेरे साथ सभी किसान जातियाँ एवं मजदूर हैं।" चौधरी साहब ने जाति संकीणर्ता और जाटपन से ऊपर उठकर पं. जवाहरलाल नेहरू को एक पत्र भी लिखा था कि "भावी भारत के उत्थान में जाति संकीर्णता सबसे बड़ी अवरोधक बन सकती हैं। अतएव अंतर्जातीय विवाह एक कानून के अंतर्गत अनिवार्य करना राष्ट्रहित में होगा।" चौधरी साहब के इस विचार से पंडितजी सहमत तो थे, परंतु इस बात को उन्होंने न जाने क्यों विराम दे दिया। चौधरी साहब ने तो इस भावना को अपने परिवार के माध्यम से प्रेरित भी किया। यही नहीं जाति आधार पर शैक्षणिक संस्थाओं के नाम को बदलने के लिए उन्होंने एक अभियान भी चलाया था। उन्होंने जाट कॉलेज बड़ौत (बागपत) का नाम बदलवाकर जनता वैदिक कॉलेज रखवाकर एक पहल भी करवाई, परंतु अन्य जातियों ने इस पर अपनी तटस्थता दिखाई। अतएव चौधरी साहब सदैव जातिवाद से दूर रहे थे। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि चौधरी साहब से अन्य जातियों के नेता काफी प्रभावित तथा समर्पित रहे। १६–३० सितंबर, १९९० के धर्मयुग से 'शख्सियत' शीर्षक से छपे लेख में श्री मुलायम सिंह यादव ने स्वीकार किया – "मेरी नजर में चौधरी चरण सिंह के बराबर का कोई किसान नेता आजाद भारत में नहीं हुआ। उन पर जातिवाद फैलाने का आरोप लगाना पूरे किसान समुदाय को अपमानित करना है। चौधरी साहब ने जातिवाद के विरुद्ध अभियान चलाने के लिए प्रेस से असली भारत के नवनिर्माण में सहयोग की अपील की थी परंतु शहरी प्रेस कहाँ आगे आनेवाली थी। तत्पश्चात् उन्होंने महाराजा सूरजमल

संस्थान, नई दिल्ली में ग्रामीण भारत के निर्माण हेतु एक सक्रिय केंद्र के रूप में कार्य करने का आह्वान किया। उन्होंने इस संस्थान द्वारा 'असली भारत' साप्ताहिक पत्रिका के प्रथम संस्करण का "लोकतंत्र में मीडिया की विमोचन करते हुए कहा था किसी दृष्टिकोण को बदलने के लिए अहम भूमिका होती है। यह पत्रिका साप्ताहिक न रहकर यदि दैनिक समाचार पत्र के रूप में ग्राम्य जीवन के उत्थान के लिए सक्रिय भूमिका निभाने का दायित्त्व निभाने लगेगी तो मेरा इस अवसर पर उपस्थित होना सार्थक हो जाएगा।" अति खेद का विषय है कि ऐसा न हो सका तथा वह साप्ताहिक ही लुप्त हो गया।

जब मैं जनता वैदिक कॉलेज बड़ौत में एम. एस. सी. (सांख्यिकी) का छात्र था, तो मैंने कई बार चौधरी साहब के विचार सुने तथा एक बार मुलाकात भी हुई। मैंने इस मुलाकात के दौरान एक बात विनम्रतापूर्वक पूछने का साहस कर लिया– "चौधरी साहब मैंने आपके विचार कई बार सुने तथा आप आँकड़ों के माध्यम से असली भारत की तस्वीर जनता के सामने रखते हैं, परंतु उनमें इससे चेतना जागृत क्यों नहीं होती?"

चौधरी साहब ने मेरी जिज्ञासा को और कुरेदा और कहा "बेटे! सबसे बड़ी ट्रेजेडी तो यही है कि बेचारा भोला–भाला किसान मेरी बात न समझे, तो कोई बात नहीं। पढ़े–लिखे लोग तथा राजनीतिज्ञ भी इस हकीकत को नहीं समझ रहे हैं। क्या आप मेरी बात को समझ पाए हैं?" मैंने उत्तर दिया "मुझे आपकी बात समझ आ रही है तथा आपकी विचारधारा से प्रभावित हुआ हूँ।" चौधरी साहब ने आगे मुझे प्रेरित किया – "आप पढ़ाई पूरी करके नौकरी की ओर न भागना। आप ग्रामीण उत्थान के लिए समर्पित भावना से काम करना। यदि आपको नौकरी ही करनी है, तो मेरे पास आ जाना।" यह मुझसे भूल हुई कि मैंने पढ़ाई पूरी करने के पश्चात् उनसे संपर्क नहीं किया तथा अपने आप हरियाणा सरकार में सेवारत हो गया। काफी समय के पश्चात् उनसे मैं पुनः मिला तथा उन्होंने मुझे फिर प्रेरित किया। "आप जैसे युवक ग्रामीण वातावरण को बदलने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। जहाँ भी हो, वहीं से ग्राम स्वराज के अभियान को आगे बढ़ाओ।" तत्पश्चात् मैं पूर्ण निष्ठा से इस मिशन में लग गया।

भारतमाता ग्रामवासिनी थी, ग्रामवासिनी है और ग्रामवासिनी रहेगी। जब तक बहुसंख्यक भारतीय गाँवों में निवास करते हैं और अपने जीवनयापन हेतु कृषि पर निर्भर हैं, जब तक अभिजात्य जनसाधारण को शांति करके उसे गरीबी के गड्ढे में धकेलता रहेगा, जब तक ग्रामीण लोग सामाजिक, और शैक्षणिक स्तर पर पिछड़े रहेंगे, जब तक सरकारी

तंत्र में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व रहेगा तथा जब तक क्षेत्रीय, धार्मिक तथा जातिवाद के नारों से ग्रामीणों को गुमराह करके उन्हें उनके असली आर्थिक मुद्दे से विमुख किया जाता रहेगा, चौधरी चरण सिंह का प्रैक्टिकल अर्थशास्त्र का सिद्धांत उनको अपनी समस्याओं को सुलझाने का रास्ता दिखाता रहेगा।

३१
पिछड़ों-किसानों के अप्रतिम योगदाता

अजय सिंह *

भारतीय राजनीति के फलक पर 'चौधरी चरण सिंह' एक ऐसा नाम है, जिसने आदर्श राजनीति की एक मिसाल कायम की। उन्होंने अपने ५० वर्ष से ज्यादा के राजनीतिक जीवन का एक—एक पल देश के करोड़ों दलितों, शोषितों के अधिकारों की लड़ाई लड़ते हुए जिया। गाँधी के "अंतिम आदमी" की लड़ाई उन्होंने बिना किसी सहारे लड़ी। उनका सहारा रहा केवल उनका आदर्श और निष्कपट स्वभाव।

राजनीति के इस भीष्म को दाँव पेंच और स्वार्थ की राजनीति कभी रास नहीं आई। दूसरी ओर सत्ता—स्वार्थ में लिपटी प्रतिगामी शक्तियों ने जब भी चौधरी साहब को सत्ता के करीब आते देखा, तो एकजुट होकर उनपर हमला किया, किंतु वे बिना विचलित हुए शोषितों के हक में लड़ते रहे।

यह सब मैं किसी किताब या भाषणों में पढ़—सुन कर या अकादमिक ज्ञान के आधार पर नहीं कह रहा हूँ, बल्कि १९४८ से उनके साथ बने अपने पारिवारिक संबंधों तथा १९७७ में हुई पहली मुलाकात से उनके जीवन के अंतिम सोपान तक उनके सान्निध्य से प्राप्त हुए अनुभवों के आधार पर कह रहा हूँ।

चौधरी साहब से मेरा पारिवारिक संपर्क था। सन् १९४८ में जिस समय मेरे पिता, कैप्टन भगवान सिंह बुलंदशहर जिले में, जिलाधीश थे, चौधरी साहब उत्तर प्रदेश शासन में पार्लियामेण्ट्री सेक्रेटरी थे। जब भी

---

* अजय सिंह (१९५०–२०२०) आगरा, उत्तर प्रदेश से राजनीतिज्ञ और राजनयिक। वे दिल्ली के सेंट स्टीफंस कॉलेज और मॉडर्न स्कूल के एक मेधावी छात्र और कुशल खिलाड़ी थे; उन्होंने १९७४ में क्राइस्टचर्च न्यूजीलैंड के स्कूल ऑफ जर्नलिज्म से एम.ए. पूरा किया। उन्होंने १९८० में हिंदुस्तान टाइम्स समूह के साथ पत्रकारिता में एक आशाजनक करियर छोड़ कर चौधरी चरण सिंह द्वारा स्थापित किसान ट्रस्ट के प्रबंध न्यासी और ट्रस्ट के ग्रामीण—उन्मुख प्रकाशनों के प्रधान संपादक के रूप में काम किया: असली भारत (हिंदी और उर्दू समाचार पत्र) और रियल इंडिया (अंग्रेजी साप्ताहिक)। उन्होंने दिग्गज नेताओं मधु लिमये, जॉर्ज फर्नांडिस, बीजू पटनायक, कर्पूरी ठाकुर, मुलायम सिंह यादव, शरद यादव और रामविलास पासवान के साथ मिलकर काम किया उनका अंतिम आधिकारिक पद २००५ से २००७ तक फिजी द्वीप, टोंगा, तुवालु और कुक द्वीप में भारत का उच्चायुक्त था।

चौधरी साहब बुलंदशहर आते, हमारा आतिथ्य अवश्य स्वीकार करते। उन्होंने उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलन के जरिए, जो क्रांतिकारी कार्य किया तथा इसका प्रदेश के पिछड़ों और भूमिहीनों के जीवन पर जो प्रभाव पड़ा, उसके विषय में मुझे पिता जी से काफी कुछ सुनने और समझने को मिला।

जहाँ तक व्यक्तिगत संपर्क का सवाल है, तो वह अवसर मुझे १९७७ में मिला। मैं विदेशों में पढ़ाई पूरी कर, वापस लौटा था और 'इण्डिया टुडे' पत्रिका में पत्रकार के तौर पर, अपने करियर की शुरूआत की थी। चौधरी साहब उन दिनों जनता शासन में गृहमंत्री थे। मैं अंग्रेजी पाक्षिक पत्रिका 'इण्डिया टुडे' की ओर से उनका इंटरव्यू लेने गया था। उनके बारे में जिस अनुशासन और सादगी की बात मैं सुनता आया था, उनसे मिलकर मुझे वैसी ही अनुभूति हुई। कभी–कभी वह पत्रिका की 'लाइन' से भले ही नाराज हो जाते थे किंतु व्यक्तिगत तौर पर मेरे प्रति उनका स्नेह सदैव बढ़ता ही रहा।

जिस समय चौधरी साहब जनता सरकार में गृहमंत्री एवं प्रधानमंत्री थे, उन्होंने मुझे अपने साथ काम करने को बुलाया, किंतु मैंने उस समय विनम्रतापूर्वक अपनी असमर्थता व्यक्त कर दी, क्योंकि तब वे सत्ता में थे और उनके साथ काम करने वालों की कोई कमी नहीं थी। १९८० में, जब विधान सभा चुनाव हो रहे थे तथा चौधरी साहब की पार्टी सत्ता से बाहर आ चुकी थी, उन्होंने मुझे फिर बुलाया और अपने साथ जुड़ जाने को कहा। इस बार मैं ना न कह सका और 'हिन्दुस्तान टाइम्स' ग्रुप की डिप्टी एडीटरी छोड़कर उनसे जुड़ गया। तब से अंतिम समय तक उनका सान्निध्य मुझे प्राप्त हुआ। इस दौरान उन्होंने मुझे जितना स्नेह दिया, उतना ही विश्वास भी दिया। वैसे तो मैं लेखन–पठन संबंधी कार्यों में सहायता करता था, किंतु उन्होंने मेरा उपयोग अपने 'विश्वासपात्र' के तौर पर भी किया। मुझे उन्होंने देश के बड़े–से–बड़े नेताओं के पास अपना संदेश–वाहक बनाकर भेजा।

चौधरी चरण सिंह किसी के दुख के प्रति कितने संवेदनशील थे तथा मुझ पर कितना विश्वास करते थे, इस संदर्भ में मुझे एक वाकया याद आता है। बात १६ अगस्त, १९८४ की है। केंद्र में इंदिरा कांग्रेस सरकार थी। संबंधों में टकराव के चलते केंद्र की इंका सरकार ने आंध्र प्रदेश की नन्दमूरि तारक रामाराव (एन. टी. आर.) की सरकार को राज्यपाल से बर्खास्त करवा दिया था। उस समय चौधरी साहब किसान कामगार शेतकरी संगठन के अध्यक्ष शरद जोशी के बुलावे पर एक किसान रैली को संबोधित करने महाराष्ट्र आए हुए थे। उस दिन वह बम्बई के शेषाद्रि

गेस्ट हाउस में ठहरे हुए थे। मैं उनके साथ था। वे बैठे कागजात देख रहे थे, तभी फोन की घंटी घनघनाई। मैंने फोन उठाया और उनको दिया। फोन के दूसरी ओर आंध्र प्रदेश की बर्खास्त सरकार के मुख्यमंत्री एन. टी. आर. जोर–जोर रो रहे थे, "चौधरी साहब प्लीज हेल्प मी, आई हैव बीन चीटेड, सेन्टर हैज डिसमिस्ड माई गवर्नमेन्ट इलीगली, यू आर द पर्सन हू कैन सेव मी, प्लीज चौधरी साहब।"

एन.टी.आर. का इस तरह रोना चौधरी साहब सुन न सके। उन्होंने रिसीवर मुझे देते हुए कहा, "लो अजय, एन. टी. आर. हैं, तुम मेरी तरफ से जो आश्वासन ठीक समझो, इन्हें दे दो।"

एन. टी. आर. की सरकार के भंग कर दिए जाने की जानकारी मुझे भी थी। मैंने रिसीवर लिया। एन. टी. आर. अब भी रोते हुए कह रहे थे, "चौधरी साहब प्लीज हेल्प मी।"

मैंने उन्हें आश्वस्त करते हुए कहा, "डॉन्ट वरी मिस्टर राव, वी आर विद यू। होल नेशन इज विद यू, वी विल फाइट ऑन स्ट्रीट्स एण्ड विल ब्रिंग योर ऑनर बैक । हैव पेशॅन्स मिस्टर राव।"

रामाराव के "थैंक यू वेरी मच चौधरी साहब, थैंक यू", सुनने के साथ ही मैंने रिसीवर रख दिया। चौधरी साहब मेरी ओर देखकर बोले, "ठीक कहा तुमने, कुछ करना होगा।"

बाद की कहानी सभी को पता है कि किस प्रकार विरोधी दलों ने संसद और संसद के बाहर उग्र प्रदर्शन किया, दिल्ली के रामलीला मैदान में विशाल रैली की, तथा राष्ट्रपति से मिलकर विरोध दर्ज कराया, जिसके फलस्वरूप केंद्र को एन. टी. आर. की सरकार बहाल करनी पड़ी।

कहने का आशय यह है कि इस राष्ट्रीय महत्त्व के मसले (एन. टी. आर. को जवाब देने का दायित्व मुझे सौंप देने) में चौधरी साहब ने मेरी भूमिका अचानक कितनी महत्त्वपूर्ण बना दी। यह था उनका राजनीतिक बड़प्पन और मेरे प्रति विश्वास की भावना।

सन् १९८० से लेकर उनके राजनीतिक रूप से सक्रिय रहने तक ऐसे बहुत–से अवसर आए, जब मुझे वस्तुस्थिति के प्रति उनके नजरिए को, अवसर विशेष पर उनकी निर्णय लेने की क्षमता को, बहुत करीब से समझने का मौका मिला। उस अनुभव के आधार पर यों तो चौधरी साहब के व्यक्तित्व और कृतित्व पर ग्रंथ लिखे जा सकते हैं, किंतु उनके साथ बीते वर्षों के दौरान, अपने अनुभवों के आधार पर यहाँ मैं उन दो बातों का उल्लेख करूँगा, जो उन्हें अन्य भारतीय राजनेताओं से अलग करती हैं।

पहली बात तो यह है कि भारतीय राजनीति में हम बड़े–बड़े नेताओं के जैसे–जैसे करीब पहुँचते जाते हैं, वैसे–वैसे उनका कद छोटा पड़ता

पाते हैं, किंतु चौधरी साहब के साथ इसका उलटा था। उनको जितना करीब से कोई देखता, उनकी सरलता, सादगी, अनुशासन, विनम्रता तथा ईमानदारी के नए–नए पृष्ठ उसके सामने खुलते जाते और इस तरह उनका कद करीब आने पर और ऊँचा नजर आता था।

दूसरी बात चौधरी साहब के सहयोगी के रूप में काम करते हुए मुझे बहुत–से राजनेताओं के संपर्क में आने का तथा उन्हें करीब से बरतने का मौका मिला। मैंने चौधरी चरण सिंह के अलावा श्री मधु लिमये को छोड़कर–समान्यतः अन्य राजनेताओं की गहन अध्ययन में अभिरुचि नहीं पाई। उनके अंदर पढ़ने की एक भूख थी, जो जितनी मिटती थी, उतनी ही बढ़ती थी। यद्यपि निहित स्वार्थी तत्त्व उनकी छवि बिगाड़ने के प्रयास में लगे ही रहते थे किंतु वे इस तरह की ओछी आलोचनाओं से अप्रभावित रहते थे।

महान चिंतक एवं अध्यवसायी चौधरी साहब जब किसी बात को सिद्धांत रूप में अपनाते, तो पहले उसका गहन अध्ययन और मनन करते थे। उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार विधेयक उनके गहन चिंतन और अध्यवसाय का परिणाम था और यही कारण था कि उक्त विधेयक विधान सभा में मूलरूप से पारित हो सका तथा उसकी एक भी धारा को न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकी।

चौधरी साहब की यह विशेषता थी कि वह अपने मंत्रीमंडल सहयोगियों को उनके विभागों से संबंधित विषयों पर लम्बे–लम्बे नोट्स भेजा करते थे। गहन चिंतन पर आधारित ये नोट बेहद महत्त्वपूर्ण होते थे तथा नीति–निर्देशक सिद्धांतों के रूप में इन पर अमल किया जा सकता था।

अध्ययन और लेखन से चौधरी साहब जीवन के अंतिम सोपान तक जुड़े रहे। जीवन के अंतिम दिनों में ही उन्होंने 'लैण्ड रिफॉर्म्स इन यू. पी. एण्ड दि कुलक्स' नामक पुस्तक लिखी, जिसमें उत्तर प्रदेश में भूमि सुधारों तथा जमींदारी उन्मूलन का विशद विवेचन किया गया है। १९८५ में अस्वस्थ होने से पूर्व वे "जनता पार्टी कैसे बनी और किन विसंगतियों के चलते टूटी", इस विषय पर एक पुस्तक लिख रहे थे, साथ ही आरक्षण पर भी एक पुस्तक लिख रहे थे।

चरणसिंह जी अस्वस्थ होने से पूर्व अपनी फाइलों को भी पुनर्व्यवस्थित कर रहे थे। इन सब कार्यों में, मैं उनकी सहायता कर रहा था। इस कार्य के परिणामस्वरूप कोई नई कृति हमारे सामने आती, किंतु दुर्भाग्य से उनकी अस्वस्थता और अंततः अवसान ने इस महत्त्वपूर्ण कृति से हमें वंचित कर दिया।

यों तो चौधरी साहब ने उत्तर प्रदेश में सत्ता में रहते हुए किसानों और

पिछड़ों के लिए बहुत कुछ किया, किंतु इस दिशा में उनका जो अप्रतिम योगदान था– वह है इस वर्ग में राजनीतिक चेतना जागृत करना। उन्होंने समाज के दबे–थके वर्गों के मन में, सत्ता में भागीदारी की भावना पैदा की। यह चौधरी साहब ही थे, जिन्होंने उत्तर प्रदेश में अपने मुख्यमंत्रित्व काल में पिछड़े वर्ग के चार लोगों को कैबिनेट स्तर का मंत्री बनाया। सच पूछा जाए तो किसानों और पिछडों के मसीहा थे चौधरी साहब।

आज देश में कोई भी राजनीतिक दल किसानों और पिछड़ों की अनदेखी नहीं कर सकता। इन हालात को पैदा करने तथा सत्ता के समीकरण में इन वर्गों को एक महत्त्वपूर्ण कारक की हैसियत प्रदान करने में, चौधरी साहब की अहम भूमिका थी।

आज चौधरी चरणसिंह हम लोगों के बीच नहीं हैं किंतु उन्होंने कर्म और चिंतन के स्तर पर जिस सामाजिक क्रांति का सूत्रपात किया, उस चिंतन को, उन विचारों को, इस देश के शोषितों, दलितों–पिछड़ों और किसानों मजदूरों तक पहुँचाने के हम सार्थक प्रयास करें, यही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

भाग २

राजनीति

३२
हमें मिली उनसे संघर्ष की प्रेरणा
चौधरी देवीलाल*

आज से लगभग पचपन–साठ वर्ष पूर्व की बात है। मैंने अपना बचपन समाप्त कर युवावस्था में प्रवेश किया ही था, तभी मेरा ध्यान देहात में कार्य करने वाले मजदूर किसानों की बेबसी और असहनीय दरिद्रता की ओर गया। जब कभी उन्हें फटे कपड़ों में तन को समेटे, पेट पीठ से चिपका हुआ, बुझे हुए मन से, कड़कती सर्दी, गर्मी व बरसात में काम करते देखता तो बस मन में ही कोलाहल मच जाता।

उस समय तो मेरी यह धारणा थी कि जितने भी अत्याचार हो रहे हैं, उन सबका कारण विदेशी साम्राज्य है। सात समुद्र पार से आए अंग्रेज हमारे देश का खून चूस रहे हैं। धीरे–धीरे समय की आवश्यकतानुसार मैं आंदोलन में कूद पड़ा। हथकड़ी जेवर बन गई और जेलखाना घर।

देश में अनेक प्रकार के आंदोलन हुए, जिनसे मैं प्रभावित हुआ, किंतु मेरा कार्य–क्षेत्र सदैव ग्रामीण क्षेत्र व किसान ही रहे। कभी भूमि की बेदखली, तो कभी पुलिस के अत्याचारों के विरोध में, किंतु मैं देहात के लिए लड़ता रहा।

गाँधी जी के स्वराज का अर्थ ग्रामीण जनता की गरीबी दूर करना था। किंतु हुआ इसके विपरीत। जब भी देखा, देश का नेतृत्व शहरी सफेदपोशों के हाथ में रहा। इसी कारण मेरा मन उस पथ को खोजने में लगा, जिससे देहाती जनता एवं किसानों को भी स्वराज का वास्तविक लाभ मिल सके।

इसी समय उत्तर प्रदेश से एक कृषक क्रांति की आवाज आई कि किसानों के जीवन में परिवर्तन आना चाहिए। वह आवाज चौधरी चरण

---

* चौधरी देवीलाल (१९१४–२००१) राजनीतिज्ञ, भारतीय राष्ट्रीय लोक दल के संस्थापक। हरियाणा के गठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और दो बार हरियाणा के मुख्यमंत्री (१९७७–७९, १९८७–८९) रहे। लगातार दो सरकारों के तहत भारत के उप प्रधानमंत्री (१९८९–९०, १९९०–९१)। एक जमींदार किसान के बेटे, वे ग्रामीण समुदायों के लिए वकालत करते हुए आगे बढ़े। इंदिरा गाँधी की इमरजेंसी का विरोध करते हुए जनता पार्टी और जनता दल में प्रमुख भूमिकाएँ निभाईं।

सिंह की थी, जो देश भर की देहाती जनता एवं किसानों की उन्नति के लिए जूझ रहे थे, कृषि – अर्थनीति को वैज्ञानिक दृष्टिकोण देने की दिशा में बढ़ रहे थे। मैं चौधरी साहब के विचारों से बहुत प्रभावित हुआ और यहीं से मेरे जीवन को नया मोड़ मिला।

जिस दर्शन के लिए मेरा मन भटक रहा था, वह इस दार्शनिक ने प्रस्तुत कर दिया एवं मेरे लिए एक नई दिशा निर्धारित कर दी।

चौधरी चरण सिंह जी किसानों की समस्याओं को उजागर करने के लिए किसी भी लड़ाई एवं त्याग से नहीं झिझके। आवश्यकतानुसार सरकार में बैठकर आवाज बुलंद की, यदि समय की पुकार हुई तो राजगद्दी का त्याग भी कर दिया।

अपने ध्येय की प्राप्ति हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में गए। देश को वहाँ होने वाले अत्याचारों से अवगत कराया। चकबंदी से लेकर सीलिंग, जोतदारी, कटाई, मालियाना, अलियाना, रहन–सहन, पढ़ाई एवं उन्नति के अवसर, सरकार–संचालन में देहात एवं किसानों की भागीदारी को उन्होंने वैज्ञानिक दर्शन का रूप दे दिया।

चौधरी साहब ने देश में पहली बार अंतर्जातीय विवाह की बात की, ताकि सामाजिक जीवन से जातिवाद समाप्त हो। ऐसा एक पत्र उन्होंने पं. जवाहरलाल नेहरू को भी लिखा था, किंतु उन्होंने उसका कोई सार्थक उत्तर नहीं दिया।

चौधरी साहब ने अन्याय का सदैव विरोध किया, साथ ही राष्ट्र–हित की बात कहने में कभी कोई संकोच नहीं किया। अन्याय का विरोध करने वालों के वह प्रेरणा स्त्रोत रहे हैं। जिस समय हरियाणा में भ्रष्टाचार का दूसरा नाम – भजनलाल गद्दी पर था, तब हमने उसके खिलाफ संघर्ष शुरू किया। राष्ट्रपति को जब हमने ज्ञापन देने का निश्चय किया, तो चौधरी साहब ने हम लोगों की अगुवाई की। इस तरह उन्होंने हमारा हौसला बढ़ाया।

इसके बाद हुआ पंजाब समझौता। जब मैंने यह पाया कि समझौते की धारा ७ और ९ हरियाणा के हितों के खिलाफ हैं, तो मैंने विरोध का निश्चय किया। मैं चौधरी साहब के पास पहुँचा और उन्हें बताया कि समझौते की अमुक धाराएं हरियाणा के साथ अन्याय करती हैं. साथ ही यह समझौता हरियाणा को विश्वास में लिए बिना किया गया है, जो राज्य के लिए अपमानजनक है। चौधरी साहब ने सारी स्थिति पर विचार करने के बाद हमारे मकसद में हमारी हौसला आफजाही की, साथ ही हरियाणा के लोकदल विधायकों को आदेश दिया कि वे विधानसभा से इस्तीफा दे दें।

अन्याय को न सहना तथा उसका विरोध करना उनके मिजाज की खूबी थी और उसी के चलते उन्होंने ये फैसले लेने में कोई देर–अबेर नहीं की। सिद्धांतों के लिए उन्होंने नफे–नुकसान को कभी नहीं देखा।

चौधरी चरण सिंह सार्वजनिक जीवन के साथ व्यक्तिगत जीवन में भी स्वच्छता एवं ईमानदारी के पक्षधर थे। उनका कथन था कि जो व्यक्ति अपने निजी जीवन में सही आचरण नहीं करेगा, वह सार्वजनिक जीवन को भी गंदा करेगा। राजकीय पदों पर रहते हुए जब–जब उन्हें अवसर मिला, उन्होंने प्रशासन से भ्रष्टाचार मिटाने के लिए भरसक प्रयास किये। शासन के पद पर उनकी उपस्थिति मात्र से भ्रष्टाचारी तत्व घबराने लगते थे।

ये गुण हैं, जो चौधरी साहब को दूसरे राजनेताओं से अलग करते थे। यही गुण आज भी उनके लिए मन में आदर और सम्मान की भावना पैदा करते हैं।

३३
कृषक लोकतंत्र के पक्षधर
मधु लिमये*

आगरा और अवध के संयुक्त प्रांत (वर्तमान उत्तर प्रदेश) ने बीसवीं सदी के प्रारंभ में मदन मोहन मालवीय, तेज बहादुर सप्रू, मोतीलाल नेहरू और वजीर हसन जैसे नेताओं की एक आकाश गंगा को जन्म दिया। लेकिन वस्तुतः गाँधी–युग में यह प्रांत अपने उरूज पर आया। असहयोग आंदोलन के दौरान जवाहरलाल नेहरू, पुरुषोतम दास टण्डन, गोविन्द बल्लभ पंत, आचार्य नरेन्द्र देव, सम्पूर्णानंद, रफी अहमद किदवई और मोहनलाल सक्सेना जैसे विशिष्ट व्यक्तियों ने ख्याति पाई। जवाहरलाल नेहरू इनमें सबसे बड़े कद के नेता थे। चौधरी चरण सिंह, चन्द्रभानु गुप्ता, कमलापति त्रिपाठी और बनारसी दास इन नेताओं के शिष्य थे, जिन्होंने राज्य में महत्वपूर्ण ओहदे संभाले।

नयी पीढ़ी के नेताओं में चौधरी चरण सिंह सिर्फ सबसे महत्वपूर्ण ही नहीं बल्कि कई मायनों में सबसे ज्यादा असामान्य नेता भी थे। उनके बीच चौधरी चरण सिंह ही ऐसे व्यक्ति थे, जो समाजवादी विचारों से अछूते थे और ये विचार कांग्रेसी नेताओं और उनके अनुवर्तियों के सामान्य गुण थे। भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के एक बड़े नेता दादा भाई नौरोजी ने भारत के स्वराज के संघर्ष के लिए अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी आंदोलन का समर्थन प्राप्त करने हेतु एम्स्टर्डम में आयोजित सोशलिस्ट इंटरनेशनल की कॉन्फ्रेंस में हिस्सा लिया था, जिसके कारण इंग्लैण्ड में उनके उदारवादी मित्र और भारत में नरम दलवादी साथी उनसे नाराज भी हुए। दादाभाई के इस कदम की प्रशंसा करते हुए लोकमान्य तिलक ने बड़े पूँजीपतियों और जमींदारों द्वारा गरीबों के शोषण के खिलाफ विश्वव्यापी समाजवादी आंदोलन और गुलाम भारत के प्रति इसकी सहानुभूति की बात की थी। तिलक ने यह भी कहा था कि किसी न किसी दिन समाजवादी आंदोलन

---

* मधु लिमये (१९२२–९५), प्रमुख समाजवादी राजनीतिज्ञ, जनता पार्टी और लोक दल के महासचिव। मुंगेर और बांका निर्वाचन क्षेत्रों का लोक सभा में प्रतिनिधित्व किया। आपातकाल (१९७५–७७) के विस्तार के विरोध में लोकसभा से इस्तीफा दिया।

की निःसंदेह जीत होगी। उन्होंने कहा कि भारत में विदेशी नौकरशाही तंत्र से लड़ने के लिए दुनिया के समाजवादियों से मदद लेने में कुछ गलत नहीं है। तिलक के अलावा लाला लाजपत राय, सी. आर. दास और दूसरे कई पुराने नेताओं के मन में समाजवादी उद्देश्य के प्रति सहानुभूति थी। महात्मा गाँधी ने, जिन्होंने कांग्रेस आंदोलन को स्वरूप प्रदान किया, अपने आपको समाजवादी या साम्यवादी कहा। लेकिन उन्होंने यह स्पष्ट किया कि उनके समाजवाद में हिंसा, राज्यवाद और केंद्रीकरण लेश मात्र भी नहीं है। जहाँ तक जवाहर लाल नेहरू और सुभाष बोस का सवाल है, उन्होंने समाजवाद में अपनी आस्था खुले तौर पर घोषित की।

उत्तर प्रदेश की कांग्रेस समाजवादी विचारों से रंगी हुई थी और एक मौलिक कृषि कार्यक्रम के प्रति प्रतिबद्ध थी, जिसमें जमींदारी प्रथा को खत्म करना और राज्य एवं किसानों के बीच से बिचौलियों को समाप्त करना शामिल था। लेकिन यह कुछ आश्चर्य की बात है कि जहाँ उत्तर प्रदेश के वरिष्ठ नेता और समकालीन लोग समाजवादी विचारों से प्रभावित थे, वहीं चौधरी चरण सिंह इन प्रभावों से पूरी तरह अछूते रहे। मेरी राय में इसके दो कारण हैं। पहला, उनकी प्रेरणा के स्त्रोत सबसे पहले स्वामी दयानंद और फिर महात्मा गाँधी थे। दूसरा कारण यह था कि समाजवादी विचारों से उनका परिचय कभी भी ठीक तरह से नहीं हुआ था। वह एक गैर औद्योगिक क्षेत्र के व्यक्ति थे और उन्होंने मुझसे कई बार यह कहा कि औद्योगिक पूँजीवाद की कार्यप्रणाली के बारे में उन्हें ज्यादा जानकारी नहीं है। बहरहाल, वह बड़े व्यापारियों और एकाधिकारियों के प्रभुत्व के खिलाफ थे। यह उनके और समाजवादियों के बीच एक कड़ी की तरह होना चाहिए था। मगर ऐसा नहीं हुआ और इसका बड़ा कारण यह है कि उनकी सोच का मुख्य विषय औद्योगिक शोषण नहीं, बल्कि कृषि संबंधी समस्या और सामाजिक सवाल थे।

समाजवादी दल जमींदारी प्रथा को खत्म करने के पक्ष में था। जवाहरलाल खुद इसके कट्टर समर्थक थे। चौधरी चरण सिंह के मन में सरदार पटेल के लिए बहुत श्रद्धा थी, लेकिन उन्हें मालूम नहीं था कि सरदार पटेल जमींदारी खत्म करने के पक्ष में नहीं थे। उत्तर प्रदेश में वस्तुतः जवाहरलाल, गोविन्द बल्लभ पंत, पुरूषोत्तम दास टण्डन और समाजवादियों ने कांग्रेस को इस दिशा में कदम उठाने के लिए मजबूर किया।

जब चौधरी चरण सिंह एक कनिष्ठ मंत्री बने और महान भूमि सुधार विधेयक विधान मंडल में पारित करवाने की जिम्मेवारी उन्हें सौंपी गई, तब तक समाजवादी कांग्रेस छोड़ चुके थे और भूमि सुधार के मामले में उन दोनों के बीच सहयोग की कोई संभावना नहीं थी।

चौधरी चरण सिंह भूमि सुधार कानून को बिना प्रतिक्रियावादी परिवर्तन के पास करने तथा उसको निष्फल बनाने के निहित स्वार्थों द्वारा किए गए प्रयासों के खिलाफ लड़े। हालाँकि हमेशा उनकी चल नहीं पाई किंतु इसमें संदेह नहीं कि मुख्य रूप से उन्हीं की लगन और समर्पण के कारण उत्तर प्रदेश भूमि सुधार कानून का प्रगतिशील चरित्र बना रहा।

इसलिए चौधरी चरण सिंह को कुलकों का समर्थक कहना अन्याय है। वह जमीन के स्वामित्व के मामले में असमानता के खिलाफ थे और एक किस्म के कृषि प्रजातंत्र के पक्षघर थे। औद्योगिक क्षेत्र में वह एक ऐसी विकेंद्रीकृत अर्थ–व्यवस्था के पक्ष में रहे, जिसमें बड़े पैमाने पर तकनीक का प्रयोग सिर्फ उन क्षेत्रों में सीमित हो, जहाँ उसकी निहायत जरूरत है।

तब समाजवादी कार्यक्रम में ऐसा क्या था, जिस पर चौधरी चरण सिंह का आक्षेप था? इसका कारण जमींदारी खत्म करना नहीं हो सकता था। इसका कारण पूँजीवाद का विरोध नहीं हो सकता था। इसका कारण लोहिया द्वारा छोटी इकाई की तकनीक का समर्थन भी नहीं हो सकता था। मेरी समझ से इसका मुख्य कारण राज्य द्वारा खेती और सामूहिक खेती का समर्थन था, जिससे चौधरी चरण सिंह के बुनियादी मतभेद थे। जवाहरलाल ने बार–बार व्यक्तिगत खेती की जगह सामूहिक और सरकारी खेती पर जोर दिया था। प्रारंभ के कांग्रेस समाजवादी कार्यक्रमों ने भी सामूहिक खेती का समर्थन किया, हालाँकि बाद में समाजवादियों ने इस कार्यक्रम को त्याग दिया था। लेकिन चौधरी चरण सिंह को समाजवादियों की नयी सोच और उनके द्वारा अपने परंपरागत कार्यक्रमों के पुनर्मूल्याकंन की जानकारी नहीं थी।

चौधरी चरण सिंह जानते थे कि अपने खेत से किसानों का कितना गहरा जुड़ाव है। वे जानते थे कि सामूहिक खेती मानव स्वभाव के विरूद्ध है। उन्हें विश्वास था कि सामूहिक या सहकारी खेती से उत्पादन पर बुरा असर होगा और मुल्क विनाश की ओर अग्रसर होगा।

पोलैण्ड, चीन, यूगोस्लाविया और सोवियत रूस जैसे साम्यवादी देशों का अनुभव यह बतलाता है कि चौधरी साहब की राय सही थी। खेती के जबरन समूहीकरण से सोवियत कृषि को पहुँची हानि से उबारने के लिए सोवियत सुधारक १९५३ से भरसक कोशिश कर रहे हैं। लेकिन वे सफल नहीं हो पाए, क्योंकि उन्होंने व्यवस्था में मौलिक सुधार किए बिना ही सुधार लाने की कोशिश की। सामूहिक किसानों को जमीन के छोटे–छोटे टुकड़े देने की सोवियत पद्धति काफी पुरानी है। जमीन के इन टुकड़ों की, जिन पर किसान फल के पेड़, सब्जियाँ लगाते थे और मुर्गी, सुअर, गाय, आदि पालते थे, उत्पादन क्षमता हमेशा बहुत ज्यादा रही है।

फिर भी सोवियत नेताओं ने इससे आवश्यक सीख नहीं ली। बुरे हाल में फंसी सोवियत कृषि को बचाने के लिए गोर्बाचेव ने हिम्मत के साथ गंभीर प्रयास किए। सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी के जून–जुलाई १९८७ में हुए सम्मेलन में कई वक्ताओं ने यह विलाप किया कि "ग्रामीण क्षेत्र तबाही में है।" गोर्बाचेव ने फिर पट्टेदारी पद्धति के प्रयोग की बात चलाई। यह और कुछ नहीं बल्कि पिछले दरवाजे से निजी सम्पति की व्यवस्था को लागू करना था। लेकिन मूल्य की गारंटी, ऋण देने वाली संस्थाओं और कृषि से संबद्ध एजेंसियों से आवश्यक मदद के बिना पट्टेदारी से प्राप्त जमीन पर अपनी बचत का धन कौन खर्च करना चाहेगा? निःसंदेह गोर्बाचेव के रास्ते में कई मुश्किलें रहीं, मगर इस सोवियत प्रयोग से बहुत उम्मीदें भी थीं और इससे यह पता चलता है कि चौधरी चरण सिंह द्वारा समूहीकरण और सहकारीकरण का विरोध दुराग्रहपूर्ण नहीं था। सहकारी खेती पर जवाहरलाल नेहरू द्वारा प्रायोजित नागपुर प्रस्ताव का, चौधरी साहब ने साहसपूर्वक विरोध किया था, जो मृत–पत्र ही रहा है। इससे भी चौधरी चरण सिंह की समझ सही साबित होती है।

सामाजिक–सांस्कृतिक नीति के क्षेत्र में चौधरी चरण सिंह के विचारों में कुछ विरोधाभास या अंतर्विरोध रहे है। जहाँ वह हिन्दू एकता के विचारों से आकर्षित हुए थे, वहीं उन्होंने परंपरागत श्रेणीबद्ध जाति व्यवस्था, जिसके कारण निम्न श्रेणी के लोग निकृष्ट माने जाते थे, को पूर्णतया अस्वीकार किया। चौधरी चरण सिंह ब्राह्मणवाद और उसकी अवधारणाओं के खिलाफ थे। जनसंघ, भाजपा और आर.एस.एस. के साथ उनके संदिग्ध संबंध का मुख्य कारण यही था। हिंदुओं के गौरवपूर्ण अतीत की उनकी बातें उन्हें उनकी ओर खींचती थी लेकिन उनके उच्च जातीय भारी अक्खड़पन के कारण चौधरी चरण सिंह का आकर्षण विरोध में बदल गया। वर्ण की पवित्रता का पक्ष लेना उनकी दूसरी अस्पष्टता थी। चूंकि हिन्दू सामाजिक व्यवस्था का सार तत्व जाति है, जाति संस्था का विरोध और हिन्दू सुदृढ़ीकरण के प्रति जुड़ाव के बीच का विरोधाभास, कम से कम अल्पकाल में खत्म नहीं हो सकता। चूंकि चौधरी चरण सिंह ने वर्ण–व्यवस्था को स्वीकारा था, डॉ. अंबेडकर, जो जन्म पर आधारित वर्ण और जाति व्यवस्था में कोई भेद नहीं देखते थे, के अनुयायी उन्हें प्रतिक्रियावादी मानते थे। और, इसलिए वे उनका विश्वास नहीं जीत पाए। कुछ वर्षों तक महात्मा गाँधी भी वर्ण–व्यवस्था के पक्षधर रहे और उन्होंने अंतर्जातीय और अंतर सांप्रदायिक विवाहों को गैर–जरूरी ही नहीं, हानिकारक भी माना। बाद में उन्होंने पूरी तरह से अपने विचार बदल दिए और ऐसे मिश्रित विवाहों के कट्टर समर्थक बने। चौधरी साहब भी मिश्रित

विवाहों के बड़े समर्थक थे और इसलिए मेरी राय में, उन्हें जातिवादी कहना अन्यायपूर्ण होगा।

हालाँकि कृषक लोकतंत्र और विकेंद्रीकृत अर्थ–व्यवस्था में उनका गहरा और ईमानदार विश्वास था, उन्होंने महसूस किया कि सत्ता के बगैर कुछ भी नहीं किया जा सकता। इसीलिए वे सत्ता चाहते थे और उसे पाने के लिए उन्होंने विरोधाभासी गठबंधन भी किए। गैर–कांग्रेसी पार्टियों और कांग्रेस (१९६७ और १९७०), दोनों के साथ उन्होंने संबंध बनाए। फिर भी आम कांग्रेसियों की तरह वह खालिस रूप से सत्ता के पीछे भागने वाले राजनीतिज्ञ नहीं थे। चूंकि वह अपनी आस्थाओं और कार्यक्रमों से गहरे रूप से जुड़े हुए थे, सत्ता में आने पर उन्हें लागू करने में वह कभी नहीं झिझके, और इस प्रक्रिया में उन्होंने हमेशा पदच्युत होने का खतरा भी मोल लिया। यही कारण है कि वह अपने पदों पर हमेशा थोड़े समय के लिए रहे– जैसे १९६७–६८, १९७०, १९७७–७८ तथा १९७९ में। जब भी वह किसी पद पर रहे, एक सशक्त और ईमानदार शासक के रूप में उनकी ख्याति रही और वह कामचोर कर्मचारियों के सिरदर्द बने रहे।

हालाँकि चौधरी चरण सिंह के व्यक्तित्व का विकास गाँधी युग में हुआ और वह कई बार जेल गए थे, उनका विचार था कि लोकतंत्र में नागरिक अवज्ञा के लिए कोई जगह नहीं है। अन्याय के निदान के लिए सरकार को वोट के जरिये बदलना चाहिए, ऐसी उनकी मान्यता थी। हम लोग उनके इस विचार से कतई सहमत नहीं थे। चौधरी साहब दुराग्रही नहीं थे और उनकी राय बदलवा पाने में मैं सफल हुआ। अंतिम वर्षों में उन्होंने इस बात की जरूरत को स्वीकार किया कि प्रत्यक्ष बुराईयों को दूर करने के लिए शांतिपूर्ण संघर्ष आवश्यक है। ऐसा एक अवसर माया त्यागी का वीभत्स प्रसंग था। जब सरकार पर हमारे प्रतिवेदनों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा, तब उन्होंने सत्याग्रह करने के लिए मुझे और दल को न सिर्फ अपनी स्वीकृति दी, बल्कि एक लेख भी लिखा, जिसका शीर्षक था "सत्याग्रह की घड़ी"। वह खुद इस सत्याग्रह में हिस्सा लेना चाहते थे, लेकिन कुछ पक्षपाती लोगों ने उन पर अनुचित दबाव डाला और उनके सहज बोध को कुंठित कर दिया। आज इस घड़ी में जब विपक्षी पार्टियों के बीच एकता की आवश्यकता व्यापक पैमाने पर महसूस की जा रही है, चौधरी चरण सिंह का व्यवहारिक ज्ञान और विपक्षी एकता का उनका कट्टर समर्थन, राजनीतिक व्यक्तियों के लिए प्रेरणा स्त्रोत होगा।

३४

किसान दिवस की उनकी संकल्पना

मधु दण्डवते*

वित्त मंत्रालय चलाते समय जिनकी स्मृति ने मुझे अर्थव्यवस्था को किसान की तरफ ले जाने में स्फूर्ति दी, वह प्रेरणा के स्त्रोत थे चौधरी चरण सिंह। मैं यहाँ किसान दिवस के बारे में बताना चाहता हूँ कि चौधरी चरण सिंह जी की राय इस सिलसिले में क्या थी। एक मर्तबा उनके साथ बातचीत हो रही थी। उस समय चौधरी साहब ने कहा था कि सिर्फ हिन्दुस्तान में ही नहीं बल्कि समूची दुनिया में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर दुनिया के मजदूरों का दिन एक मई "मजदूर दिवस" के रूप में मनाया जाता है लेकिन कृषि प्रधान होते हुए भी हमारे देश में "किसान दिवस नहीं मनाया जाता, यह कितने दुःख की बात है।

यहाँ मैं एक बात और बताना चाहता हूँ कि एक बार इस दिन (किसान दिवस) के बारे में चौधरी साहब से बात हुई, तो उन्होंने मजाक में कई बातें मुझे बताई। उन्होंने मजाक में कहा कि हमारे देश मे कई नेताओं के नाम से दिन मनाये जाते हैं। विडम्बना यह है कि हमारे यहाँ नेताओं की कमी नहीं है और यदि हर नेता के नाम से दिन मनाए जाते रहे तो एक दिन वह आएगा, जब भारत ही बंद हो जाएगा। इसलिए उन्होंने कहा था कि ये सारे दिन संकल्प दिवस के रूप में मनाए जाने चाहिए, न कि अवकाश–दिवस के रूप में।

जहाँ तक किसान दिवस की बात है, तो इस बारे में उनका कहना था कि किसान दिवस वाले दिन किसान देहात में सुबह से शाम तक खेत में मेहनत से काम करे और बाबू लोग सारे दिन आराम करते हैं, इस तरह से किसान दिवस की सार्थकता पूरी नहीं होगी। यह तभी पूरी होगी, जबकि किसान को न्याय दिलाने के लिए, उसके अधिकारों को दिलाने के लिए संघर्ष किया जाए और उस संघर्ष के लिए किसान दिवस के

---

* मधु दंडवते (१९२४–२००५), राजनीतिज्ञ, जनता दल पार्टी और प्रजा सोशलिस्ट पार्टी। योजना आयोग के उपाध्यक्ष, प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह के अधीन वित्त मंत्री। मोरारजी देसाई के शासनकाल में रेल मंत्री। संसद सदस्य के रूप में राजापुर, महाराष्ट्र का प्रतिनिधित्व किया।

दिन संकल्प लिया जाए। "किसान दिवस" की मेरे मन में भी सही मायने में यही कल्पना है।

चौधरी साहब का कहना था कि देश को सिर्फ विचारों से ही नहीं बल्कि अपने चरित्र से, आचार से, कथनी और करनी से प्रेरणा देनी होगी। जिसके विचार ही उज्ज्वल नहीं होंगे, चरित्र अच्छा नहीं होगा, जिसकी कथनी और करनी में अंतर होगा, जिसका आचरण उदाहरण प्रस्तुत नहीं करेगा, वह किसी को क्या प्रेरणा देगा। उन्होंने किसान के लिए न तो रंगीन टेलीविजन की माँग की, न रेफ्रीजरेटर की, न मारूति कार की, उन्होंने किसान के लिए केवल कपड़ा, रोटी और मकान की माँग की। उनका कहना था कि यह तीन चीजें हमारे किसान को दे दो, वह खुशहाल हो जाएगा और यदि किसान खुशहाल हो गया, तो देश खुशहाल हो जाएगा।

भौतिक सुख–सुविधाओं से वह आजीवन परे रहे। वह मंत्री रहे हों, मुख्यमंत्री रहे हों, केंद्रीय मंत्री, उप–प्रधानमंत्री या प्रधानमंत्री पद पर रहे हों, उन्होंने पूरा जीवन एक साधारण किसान की तरह जिया।

सच तो यह है कि देश की जनता धरा पुत्र चौधरी चरण सिंह को नहीं भूलेगी, जिसने पूरी ज़िंदगी ही गरीबों, पिछड़ों, मजदूरों और किसानों के लिए कुर्बान कर दी। इस हिन्दुस्तान को आगे ले जाने के लिए किसान की ज़िंदगी में तरक्की लानी होगी, जिस दिन किसान की तरक्की होगी, सही मायने में वही दिन चौधरी चरण सिंह साहब को श्रद्धांजलि देने का सही दिन होगा। यह अवसर जल्दी आए, यही मेरी कामना है।

३५

यथार्थवादी राजनेता थे वह

प्रो. बलराज मधोक*

चौधरी चरण सिंह के साथ मेरा पहला परिचय १९६७ में हुआ। मैं उस समय भारतीय जनसंघ का राष्ट्रीय अध्यक्ष था और चौधरी साहब भारतीय जनसंघ के सहयोग से बनी उत्तर प्रदेश की संविद सरकार के मुख्यमंत्री थे। मैं लखनऊ में उनके सरकारी आवास पर उनसे मिला। मुझे उनकी बैठक में लगे महर्षि दयानंद सरस्वती के चित्र और उनके सादे रहन–सहन ने प्रभावित किया। बातचीत के दौरान उन्होंने संविद सरकार के काम में जनसंघ के उत्तर प्रदेश नेतृत्व द्वारा अनुचित हस्तक्षेप की शिकायत की और यह कह कर कि जनसंघ उत्तर प्रदेश संविद का सबसे बड़ा घटक है और इसके पूरे सहयोग के बिना सरकार सुचारू रूप से चल नहीं सकती, मेरे हाथ में राज्यपाल के नाम लिखा अपना त्याग पत्र थमा दिया और कहा कि आप इसे राज्यपाल को भेज दें। मुझे इससे अचम्भा भी हुआ और दुःख भी। मैंने उन्हें त्याग–पत्र वापस कर दिया और आश्वासन दिया कि मैं जनसंघ के उत्तर प्रदेश के नेताओं को कहूँगा कि वे आपको शिकायत का अवसर न दें।

उस पहली भेंट में ही हम दोनों में एक–दूसरे के प्रति आदर का भाव पैदा हुआ। हमारी जो मित्रता उस दिन शुरू हुई, वह उनके जीवनपर्यंत बनी रही।

१९७३ में जनसंघ के नए नेतृत्व के साथ वैचारिक और नीतिगत मतभेद के कारण में जनसंघ से अलग हो गया और अपना अधिक समय लिखने–पढ़ने में लगाने लगा। उस समय तक चौधरी चरण सिंह उत्तर प्रदेश में क्रांति दल बना चुके थे और राष्ट्रीय स्तर पर समान विचार के संगठनों को जोड़कर एक बड़ा संगठन बनाने की आवश्यकता महसूस कर रहे थे। इस संबंध में उन्होंने मुझसे लखनऊ में चर्चा भी की थी।

---

* बलराज मधोक (१९२१–२०१६), राजनीतिज्ञ, भारतीय जनसंघ। १९६६ से १९६७ भारतीय जनसंघ के अध्यक्ष। १९६० और १९७० के दशक के दौरान हिंदुत्व सिद्धांतों और रूढ़िवादी मूल्यों की वकालत की। जम्मू और कश्मीर के भारत में एकीकरण के प्रबल समर्थक, राष्ट्रीय सुरक्षा और विदेश नीति मामलों पर राजनीतिक विमर्श में सक्रिय भूमिका निभाई।

१३ अप्रैल १९७४ को बैसाखी के दिन वे अकस्मात मेरे निवास पर पहुँच गए। वे लखनऊ से विमान से आए थे और विमानपत्तन से सीधे मेरे पास आ गए। मुझे इसकी कोई पूर्व सूचना नहीं थी। वे दिन भर मेरे पास रहे और समान विचारधारा वाले दलों को मिलाकर राष्ट्रीय संगठन बनाने के संबंध में विचार विनिमय करते रहे। इसी बीच उन्होंने मेरे निवास से ही बीजू पटनायक, राजनारायण और पीलू मोदी से फोन पर बात की और सायं चार बजे बीजू पटनायक के निवास स्थान पर इकट्ठे मिलने की बात तय की। यह बैठक बहुत सफल रही और यहाँ क्रांति दल, स्वतंत्र पार्टी, राष्ट्रीय लोकतांत्रिक संघ, समाजवादी दल इत्यादि सात संगठनों को मिलाकर भारतीय लोकदल बनाने का निर्णय लिया गया।

कुछ दिन बाद जब हम लोग भारतीय लोकदल का घोषणा–पत्र तैयार कर रहे थे, तब विदेशी मिशनरियों के प्रश्न पर गतिरोध पैदा हो गया। चौधरी साहब और मैं चाहते थे कि घोषणा–पत्र में स्पष्ट लिखा जाए कि विदेशी मिशनरियों की गतिविधि पर रोक लगाई जाए, लेकिन पीलू मोदी और राजनारायण इसका कड़ा विरोध कर रहे थे। चौधरी साहब ने राजनारायण और पीलू मोदी को काफी समझाया बुझाया और इस संदर्भ में तर्क भी दिए, तब कहीं जाकर मिशनरी संबंधी उनके मत का घोषणा–पत्र में समावेश किया जा सका। भारतीय लोकदल के विधिवत गठन के बाद वे उसके राष्ट्रीय अध्यक्ष चुने गए और राजनारायण, बीजू पटनायक तथा मैं इसके उपाध्यक्ष बने। पीलू मोदी को महामंत्री की जिम्मेदारी सौंपी गई।

१९७५ में आपातकाल की घोषणा के बाद चौधरी चरण सिंह सहित हम सबको मीसा के अंतर्गत गिरफ्तार कर, देश की विभिन्न जेलों में बंद कर दिया गया। कुछ महीनों के बाद चौधरी साहब को छोड़ दिया गया। उसके बाद पत्नी की बीमारी के कारण मुझे एक सप्ताह के लिए पैरोल पर छोड़ा गया। दिल्ली आने पर मैंने चौधरी साहब से भेंट की। उस समय सभी गैर–कम्युनिस्ट विपक्षी दलों को मिलाकर एक साझा दल बनाने की बात चल रही थी। इस संबंध में मेरी उनके साथ विस्तृत चर्चा हुई और वे भी इन दलों को मिलाकर प्रस्तावित जनता पार्टी बनाने के लिए रजामंद हो गए। कुछ दिनों के बाद मैं पुनः जेल लौट गया।

मेरे कारावास – काल में चौधरी साहब नियमित रूप से मेरे घर जाकर मेरी पत्नी की कुशल क्षेम के बारे में जानकारी लेते रहे। उनके इस सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार ने मुझे बहुत प्रभावित और अनुगृहीत किया। अपने साथियों के प्रति उनकी यह आत्मीयता और प्रेम उनका बहुत बड़ा गुण भी था और मित्रों के लिए सम्बल भी।

३१ दिसम्बर १९७६ को अठारह महीनों के कारावास के बाद मैं रोहतक जेल से रिहा हुआ। रिहा होने के बाद मैं दिल्ली आकर चौधरी साहब से मिला और हम सब जनता पार्टी के गठन में जुट गए।

कुछ दिन बाद मोरारजी देसाई भी रिहा हो गए। चौधरी साहब और मैं उनसे मिलने उनके डुप्ले रोड स्थित आवास पर गए। मोरारजी देसाई बड़े रूखे ढंग से मिले। मेरे लिए यह बड़ी अनपेक्षित बात थी, क्योंकि मेरे साथ उनके मैत्रीपूर्ण संबंध थे।

कुछ दिनों बाद मैं मोरारजी देसाई से अकेले मिलने गया तो उनकी बातचीत से पता लगा कि चौधरी साहब के प्रति उनकी धारणा अच्छी नहीं है। वे उन्हें 'प्रादेशिक' और 'जातिवादी' नेता मानते थे, राष्ट्रीय नेता नहीं।

मोरारजी देसाई और चौधरी साहब में बहुत सी बातें समान थीं। दोनों चरित्रवान और यथार्थवादी थे। दोनों पंडित नेहरू की अपेक्षा सरदार पटेल से अधिक प्रभावित थे और राष्ट्रवादी तथा यथार्थवादी नीतियाँ अपनाना चाहते थे परंतु दोनों के बीच किसी प्रकार का भावात्मक सामंजस्य नहीं था। जनता सरकार में उनके बीच टकराव का यही सबसे बड़ा कारण बना। यदि मैं उस समय संसद में होता तो शायद मोरारजी देसाई और चौधरी साहब के बीच पुल का काम कर पाता, क्योंकि मैं दोनों का विश्वासपात्र था और दोनों से खुलकर बात कर सकता था। परंतु जनसंघ के नेताओं के दबाव पर चौधरी चरण सिंह ने मुझे १९७७ में लोकसभा में चुनाव न लड़ने की सलाह दी।

उस समय चौधरी साहब ने मुझसे कहा था कि राज्यसभा में भी जनता पार्टी का कोई वरिष्ठ नेता होना चाहिए और साथ ही यह आश्वासन भी दिया था कि "यदि मैं जिंदा रहा तो सबसे पहले आपको राज्यसभा में भेजूंगा।"

मेरी चौधरी साहब में श्रद्धा और आस्था थी। आयु में भी वे मुझसे बड़े थे। इसलिए मैंने उनकी बात मान ली और लोकसभा का चुनाव नहीं लड़ा। कुछ महीनों के बाद उन्होंने स्वयं मेरे पास आकर मुझसे कहा कि मुझे दिल्ली से राज्यसभा का टिकट दिया जा रहा है। परंतु कुछ दिनों बाद जनसंघ के लोगों के दबाव में आकर उन्होंने मेरे स्थान पर जनसंघ के कर्नाटक के नेता जगन्नाथ जोशी को दिल्ली से राज्यसभा में भेज दिया। मुझे इससे दुःख हुआ और कुछ समय के लिए मैं चौधरी साहब से दूर हो गया किंतु हमारी पुरानी मित्रता शीघ्र ही हमें फिर एक–दूसरे के निकट ले आई।

१९६७ से मृत्युपर्यंत चौधरी चरण सिंह मेरे अभिन्न मित्र रहे। मैं उन्हें अपना मित्र भी मानता था और बुजुर्ग भी। वे मुझसे आयु में लगभग १६

वर्ष बड़े थे। मेरी तरह वह भी आर्य समाजी और यथार्थवादी थे। देश के गाँवों और कृषि संबंधी समस्याओं पर उनकी गहरी पकड़ थी। इस संबंध में उनका अध्ययन और अनुभव व्यापक था।

चौधरी चरण सिंह और सरदार बल्लभ भाई पटेल में बहुत ही बातें समान थीं। वे सरदार पटेल की तरह देश को कुशल और सशक्त नेतृत्व देने की क्षमता रखते थे। उनके गुणों को अपने अंदर धारण करना और देश की नीतियों, विशेषकर आर्थिक नीति को, उनके चिंतन के अनुरूप दिशा देना राष्ट्र के लिए हितकर होगा।

३६

एक सार्थक बहस के जन्मदाता

लाल कृष्ण आडवाणी*

चौधरी साहब किसानों की समस्याओं को समझते थे, उनके लिए दर्द अनुभव करते थे, इसी कारण हिन्दुस्तान के इतिहास में उनका नाम है, यह कहना अनुचित नहीं है। दरअसल १९४७ में देश के आर्थिक विकास की दो संभावनाएं थीं। देश के शासकों ने आजादी के बाद जो संभावनाएं चुनीं, वह हमें उस स्थिति तक ले आईं, जिससे बहुत बड़ी वेदना चौधरी साहब को होती थी। इस वेदना का प्रकटीकरण उन्होंने कांग्रेस के अंदर रहते हुए उस समय किया, जब कांग्रेस पार्टी सहकारी खेती के प्रस्ताव को स्वीकारने जा रही थी। उस समय उन्होंने अपने साहस का परिचय दिया, अपनी प्रतिबद्धता का परिचय दिया कि जिस बात में मैं विश्वास करता हूँ, उस बात के खिलाफ यदि मेरा नेता भी कहेगा, तो मैं उसका विरोध करने से नहीं चूकूंगा। उल्लेखनीय है कि पंडित नेहरू उस समय कांग्रेस पार्टी के नेता थे और उन्होंने ही अधिवेशन में सहकारी खेती का प्रस्ताव पेश किया था और ऐसा लगता था मानो हिन्दुस्तान की कम–से–कम कृषि नीति की तो दिशा ही बदल जाएगी। चौधरी चरण सिंह उस समय प्रांतीय नेता थे लेकिन उन्होंने जिस दृढ़ता के साथ इस प्रस्ताव का विरोध किया, उससे यह प्रतीत होता था कि वह केवल किसान की समस्याओं को ही नहीं समझते बल्कि इस बात की अनुभूति करते थे कि हिन्दुस्तान की समस्या किसान की समस्या है। किसान का विकास यानी देश का विकास, देहात का विकास यानी देश का विकास, यह दोनों अलग–अलग नहीं हैं बल्कि दोनों पर्यायवाची हैं।

१९४७ के बाद हमारे दो रास्ते थे। मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि एक गाँधी जी का रास्ता और एक नेहरू जी का रास्ता। अक्सर लोग कहते हैं कि अमुक व्यक्ति की तारीफ करो, देश के आर्थिक विकास

---

* लाल कृष्ण आडवाणी (१९२७–), राजनीतिज्ञ, भारतीय जनसंघ। अध्यक्ष, भारतीय जनता पार्टी (भाजपा)। विपक्ष के नेता और भारत के उप प्रधान मंत्री। २०१५ में पद्म विभूषण और २०२४ में भारत रत्न से समान्नित किए गए।

के लिए गाँधी के रास्ते पर चलो, नेहरू के रास्ते पर चलो लेकिन मैं इसे चौधरी साहब के साहस का ही प्रतीक मानता हूँ कि उन्होंने अपनी पुस्तक 'इकोनॉमिक नाइटमेयर ऑफ इंडियाः इट्स कॉजेज एंड क्योर' में कहा है कि "गाँधी–नेहरू कैन नॉट बी हाईफेनेटेड।" ये दो चीजें हैं। हालाँकि दोनों के अपने–अपने गुण हैं। दोनों के अपने–अपने पक्ष–विपक्ष हैं। नेहरू जी ने हिन्दुस्तान के विकास में बहुत बड़ा योगदान दिया है। आज मैं अगर संसद सदस्य के नाते संसद की महत्ता का कहीं बखान करता हूँ, तो नेहरू जी से कितने भी मतभेद होने के बावजूद उनके योगदान की उपेक्षा तो नहीं कर सकता। इसमें दो राय नहीं कि देश के अंदर संसद का जो स्थान व सम्मान बना, उसमें नेहरू जी का बहुत बड़ा योगदान है। जहाँ तक आर्थिक क्षेत्र का सवाल है, तो उसके बारे में मेरा यह कहना है कि आज जो हमारे देश की स्थिति है या हम जहाँ तक पहुँचे हैं, यह नेहरू जी की नीतियों का ही नतीजा है।

यदि १९४७ में हमने गाँधी जी का रास्ता अपनाया होता, तो देश की हालत कुछ और होती। गाँधी जी ने केंद्रीकरण के स्थान पर विकेंद्रीकरण को, शहर के स्थान पर देहात को, उद्योग के स्थान पर कृषि को, बड़े उद्योग के स्थान पर छोटे उद्योग को चुना। इस चयन के बारे में तर्क के साथ, तथ्यों के साथ और आँकड़ों के साथ १९६७ के बाद लगातार वह चाहे मुख्यमंत्री के रूप में हों, गृहमंत्री के रूप में हों, या देश की राजनीति के शीर्षस्थ नेता के रूप में रहे हों, चौधरी साहब ने बहस छेड़ने का काम किया, जो ६७ से पहले किसी ने नहीं किया था। उन्होंने जनता के सामने यह सवाल भी उठाया कि गाँधी का रास्ता सही था या नेहरू का। आज यह मुद्दा बहस का रूप ले चुका है और इसके बारे में चर्चा आम हो गई है। यानी अब हर एक की जबान पर यह सवाल है कि यह रास्ता बदलना चाहिए। यदि देश को आर्थिक प्रगति करनी है तो वह प्रगति गाँव–किसान की प्रगति के साथ पर्यायवाची है। इसका श्रेय भी चौधरी साहब को ही जाता है।

चौधरी साहब की स्पष्टवादिता, ईमानदारी, सादगी, प्रतिबद्धता और प्रामाणिकता की जो छाप है, वह राजनीति के क्षेत्र में कार्य करने वाले हर कार्यकर्ता के लिए दीपस्तम्भ है। उनका जितना भी हम अनुसरण कर सकें, वह कम है। देश की राजनीति में, खासकर देश की अर्थनीति को दिशा देने में चौधरी साहब का सबसे बड़ा योगदान है।

यदि सही मायने में देश का विकास करना है, तो हमें चौधरी साहब के बताए रास्ते पर चलना होगा, तभी हम एक नया हिन्दुस्तान बनाने में कामयाब होंगे।

३७

ग्राम देवता थे चौधरी चरण सिंह

चौ. कुम्भाराम आर्य*

चौधरी साहब किसान के बेटे थे। किसान के घर पैदा होने से किसान की आर्थिक–सामाजिक और शासनिक प्रशासनिक व्यवस्थाओं से पूर्ण परिचित थे। इसलिए गाँव–गरीब और किसान की व्यथा से वे सदैव बेचैन रहते थे। चौधरी साहब के माता–पिता सोच के धनी थे, इसलिए आर्थिक संकटों के बीच चौधरी साहब को शिक्षा प्राप्त करने का पूरा अवसर मिला।

उस समय धार्मिक–सामाजिक विषमताएं अमानवीयता पर तुली हुई थीं। जिसका पर्दाफाश करने के लिए महर्षि दयानंद सरस्वती वैदिक पताका फहराते हुए जब इधर आए, तो यहाँ के किसान उनके अनुयायी बन गए। इसमे जाट सबसे आगे रहे। चौधरी साहब भी आर्य समाजी बन गए। पुराण पंथियों और आर्य समाजियों के बीच बौद्विक संघर्ष होना स्वाभाविक था, क्योंकि आर्य समाज उनका पर्दाफाश करती थी। आर्य समाजियों और सनातनियों के बीच जब भी शास्त्रार्थ होता, पुराणपंथी टिक नहीं पाते थे और उन्हें हार का सामना करना पड़ता था। इन पुराणपंथियों में ब्राह्मण और बनिये मुख्य थे। चौधरी साहब आर्य समाजी थे, इसलिए पुराणपंथी चौधरी साहब का विरोध करते थे। चौधरी साहब ने महर्षि दयानंद जी के वैदिक साहित्य के स्वाध्याय को अपनी आचार संहिता में ढाल लिया था जो जीवन भर उनके साथ रहीं। इस आचार संहिता के कारण ही चौधरी साहब कुरीतियों के प्रबल विरोधी बने। वे स्वाधीनता के समर्थक थे।

स्वाधीनता अभियान कांग्रेस के माध्यम से महात्मा गाँधी चला रहे थे। चौधरी साहब ने गांधियन साहित्य का अध्ययन किया और कांग्रेस के सदस्य बन कर सक्रिय राजनीति में प्रवेश किया। चौधरी साहब धर्म और सामाजिक क्षेत्र में महर्षि दयानंद जी और राजनीतिक जगत में महात्मा गाँधी के निर्देशन पर आजीवन चले।

---

* चौ. कुम्भाराम आर्य (१९१४–१९९५), स्वतंत्रता सेनानी, राजनीतिज्ञ, और किसान नेता। राज्यसभा सदस्य (१९६०–६४, १९६९–७४), और सीकर, राजस्थान से लोक सभा सदस्य (१९८०–८४)।

चौधरी साहब के चिंतन–मनन का विषय कुरीतियों का निराकरण और देश को स्वाधीनता दिलाना रहा। इस स्वाध्याय मीमांसा ने चौधरी साहब को सत्यनिष्ठ बना दिया। इससे पुराणपंथी लोग चौधरी साहब की महत्ता और गरिमा को योजनाबद्ध ढंग से क्षति पहुँचाने में लग गए। इस सबके बावजूद साधारण जनता, जो धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक और प्रशासनिक वेदनाओं से पीड़ित थी, ने चौधरी साहब को अपना मसीहा मान लिया, जिससे विरोधियों के षडयंत्र कारगर नहीं हो सके।

स्वाधीनता से पूर्व भारत को औपनिवेशिक सत्ता संभालने का अवसर मिला। उसमें विधानसभाओं के चुनाव हुए और मंत्री मंडल बने। चौधरी साहब छपरौली विधानसभा क्षेत्र से विधायक बनकर विधानसभा में पहुँचे।

चौधरी साहब राजनीति में रहते हुए भी राजनीतिक आचार संहिता के मूल तत्व साम–दाम, दण्ड और भेद को पूर्ण रूप से ग्राहय करने के स्थान पर सत्य, न्याय और नैतिकता के सिद्धांत पर चलते रहे, नतिजन उन्हें पग–पग पर संकटों का सामना करना पड़ा।

एक बार चौधरी साहब को देश का प्रधानमंत्री बनने का भी मौका मिला। पर सत्य,न्याय और नैतिकता के मार्ग पर चलने वाले चौधरी साहब ने बहुमत के लिए न तो जोड़–तोड़ की और न किसी के आगे समर्पण। मैंने उनसे कांग्रेस के समर्थन के बाबत बात की तो वह मेरी पीठ पर हाथ रखकर बोले कि "केवल प्रधानमंत्री पद के लिए जीवन भर की ईमानदारी बरबाद करने के लिए चरण सिंह तैयार नहीं। मैं चरण सिंह हूँ और चरण सिंह ही रहूँगा।" मैं, सभी साथी, सहयोगी और शुभ चिंतक सरकार बनाए रखने के लिए चौधरी साहब को मनाने में लगे थे। पर चौधरी साहब की नैतिकता के आगे किसी की कुछ नहीं चली और उन्होंने प्रधानमंत्री पद से त्याग पत्र दे दिया। लोकसभा भंग हो गई। चुनावों की तैयारियां होने लगीं। चुनावों के लिए चौधरी साहब के पास उम्मीदवारों को देने के लिए कुछ नहीं था। अर्थाभाव के कारण पार्टी बुरी तरह से हार गई लेकिन चौधरी साहब इतना सब खोकर भी अहं के साथ कहते थे– "मैंने अपनी ईमानदारी और नैतिकता पर आँच नहीं आने दी।"

ऐसे थे चौधरी चरण सिंह जो यथार्थ में युग पुरुष थे। भागीरथ गंगा को लाकर 'युग पुरुष' कहलाए – चौधरी चरण सिंह राजसत्ता की गंगा को गाँव–गाँव तक ले जाने वाले राजनेता होने के कारण 'युग पुरुष' कहलाए। स्वाधीनता के बाद राजनीतिक सत्ता नागरीय क्षेत्र की शोभा बन गई थी। ग्रामीण क्षेत्र में वह होली के त्यौहार की भाँति पाँच वर्ष में एक बार आती थी।

भारत की स्वाधीनता के साथ राजसत्ता अवतरित हुई और नगरीय

क्षेत्र में फँस कर रह गई। गंगा को तल पर लाने के लिए भगीरथ ने तपस्या की और गंगा को शिव की जटा से मुक्ति दिलाई। गंगा मुक्त होकर भारत भूमि को पवित्र करती हुई बंगाल की खाड़ी में पहुँची। आज गंगा 'भागीरथी' भी कहलाती है। भगीरथ ने गंगा को मुक्त कराया, गंगा ने भगीरथ को 'युग पुरूष के' नाम से अमरता प्रदान की।

चौधरी चरण सिंह ने नागरीय क्षेत्र में फंसी राजसत्ता की पुकार सुनी। उसे मुक्त कराने के लिए उन्होंने दृढ़ निश्चय के साथ संघर्ष का रास्ता अपनाया। उनके संघर्ष के परिणाम स्वरूप राजसत्ता माँ वसुंधरा के लालों के पास पहुँची। राजसत्ता को माँ वसुन्धरा के लालों के पास पहुँचने का अवसर प्रदान करके चौधरी चरण सिंह ग्रामीणों के देवता बन गए। जब तक लोकतंत्र रहेगा, चौधरी चरण सिंह 'ग्राम देवता' के रूप में पूजे जाते रहेंगे।

आज इस बात को कौन नहीं जानता कि एक समय राजनीतिक दलों के नेता, जो किसान और मजदूर की बात करने में हिचक महसूस करते थे, वही आज सत्ता हथियाने के लिए किसान और मजदूर का नारा बुलंद करने में लगे हुए हैं। चौधरी चरण सिंह ने राजसत्ता को गाँव–गाँव तक पहुँचा कर किसान मजदूर की पूछ करवा दी। यही वजह है कि किसान और मजदूर को विश्वास में लेने के लिए राजनेता एक दूसरे से आगे निकलने की होड़ में हैं। इस होड़ के कारण किसान और मजदूर में वर्ग–चेतना उत्पन्न हुई और उसकी आँखें खुल गईं।

अब मजदूर राजनीतिज्ञों के पंजे से छुटकारा पाने के लिए वर्ग चेतना के द्वारा संगठित होगा। किसान आज वर्ग चेतना के आधार पर संगठित होने के लिए कमर कस कर चल पड़ा है। अनेक प्रान्तों में किसान यूनियन, किसान संघर्ष समिति, खेडूत संगठन आदि के नामों से किसान स्वतंत्र रूप से संगठित हो चुकी है। राजनेता इस स्थिति से चिंतित और परेशान हैं। इसके मूल में चौधरी साहब ही रहे, जिन्होंने देश के गरीब–मजदूर और किसान तथा सदियों से शोषित पीड़ित लोगों में चेतना जगाने का काम किया। देश की राजनीति को जन–साधारण की राजनीति बनाने का श्रेय चौधरी चरण सिंह को ही जाता है। इसलिए चौधरी चरण सिंह जन साधारण के राजनीतिक मसीहा होने के नाते भी 'युग पुरुष' कहलाए।

३८

उन्होंने की थी समता के विचार को जनाधार देने की पहल

सुरेन्द्र मोहन*

अकस्मात् १६ वर्ष पहले २३ दिसंबर का वह विशाल जनसमूह आँखों के सामने आ जाता है, जो चौधरी चरण सिंह के जन्मदिन पर उनका अभिनंदन करने के लिए दिल्ली में उमड़ आया था। उस समय चौधरी साहब सत्ता से बाहर थे और संभवतः उनके प्रति जनता की सहानुभूति के चलते इस जनसमूह की विशालता बढ़ गई थी। उतना विशाल जनसमूह उसके बाद कभी दिल्ली में एकत्र नहीं हुआ, न ही किसी अन्य नेता के अभिनंदन में और न ही स्वयं चौधरी चरण सिंह के लिए। उस दिन भी नहीं, जब वे प्रधानमंत्री बने, न ही उनके उस एकमात्र जन्मदिन पर, जब वे प्रधानमंत्री पद को सुशोभित कर रहे थे। उस दिन भी समृद्ध किसानों अथवा कुलकों की संख्या के मुकाबले घुटनों तक धोती बाँधे और मीलों पैदल चल कर आए साधारण किसानों की ही गिनती बहुत भारी थी।

१९८० में जब शिक्षित और बुद्धिजीवी वर्ग चौधरी चरण सिंह का आलोचक था, तब भी यह बात उसकी समझ से परे थी कि उत्तर भारत में अकेले वे इतने लोकप्रिय कैसे हो गए। वास्तव में यह करिश्मा ही था कि १९६७ में १६ विधायकों के साथ कांग्रेस से हटकर संयुक्त विधायक दल के नेता के तौर पर मुख्यमंत्री बनने के दो वर्ष के अंदर वे १९६९ के मध्यावधि आम चुनाव में १०० विधायकों को निर्वाचित कराने में कामयाब हुए और १९७७ तक वे उत्तर भारत के किसानों और पिछड़ों के एकमात्र नेता बन गए।

१९६७ तक चौधरी चरण सिंह उत्तर प्रदेश से बाहर तो जाने ही न जाते थे यदि उनको याद भी किया जाता था, तो उनकी ईमानदार और निरभ्रष्ट छवि के चलते और दूसरे इसलिए कि १९५९ में नागपुर के कांग्रेस

---

* सुरेन्द्र मोहन (१९२६–२०१०), राजनीतिज्ञ, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, प्रजा सोशलिस्ट पार्टी और जनता पार्टी। गाँधीवादी सिद्धांतों को बढ़ावा देते हुए खादी और ग्रामोद्योग आयोग (१९९६–१९९८) की अध्यक्षता की।

अधिवेशन में उन्होंने जवाहरलाल नेहरू द्वारा प्रतिपादित सहकारी कृषि की नीति का विरोध किया था। अलबत्ता जब वे चौथे आम चुनाव के बाद तत्काल कांग्रेस से हटे, तो उन्होंने कांग्रेस विरोध की उस लहर को आंधी बना दिया, जिसमें कांग्रेस कई राज्यों में हारी थी। उसके बाद उनका भारतीय क्रांति दल यूं तो साठे कांग्रेसियों का एक मोर्चा बना, जिसमें बिहार के महामाया प्रसाद सिन्हा, मध्यप्रदेश के तख्तमल जैन, राजस्थान के कुंभाराम आर्य और हरियाणा के देवीलाल शरीक हो गए, तो भी उसकी पकड़ उत्तर प्रदेश में ही रही। १९६९–७४ और १९७४–७५ में भी उनकी भूमिका कुछ वैसी आकर्षक न थी कि वे उत्तर भारत में अपना असर जमा पाते। १९७४ में उत्तर प्रदेश के आम चुनाव में यदि तत्कालीन भारतीय जनसंघ के साथ उनका चुनाव समझौता हो जाता, तो वे कांग्रेस को बुरी तरह हरा सकते थे, पर वे उस अवसर को चूक गए।

परंतु बाद में उत्तर भारत में वे धीरे–धीरे जनमानस में छाते गए। उसके दो बड़े कारणों पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डालना जरूरी है, तभी यह बात स्पष्ट हो सकेगी कि १९६७ में एक बार विपक्ष में आ बैठने पर वे राष्ट्रीय विपक्ष के इतने महत्वपूर्ण नेता कैसे बने कि उनकी टक्कर का कोई अन्य नेता नहीं रहा, जिसको इतना विशाल समर्थन मिला। बल्कि उस दस–बारह वर्षों में स्थिति यह आ गई थी कि जैसे इंदिरा गाँधी से हट कर कोई कांग्रेसी पनप न पाया और घर वापस आने पर मजबूर हो गया, वैसे ही लोकदल से नाता तोड़ने का अर्थ हुआ विपक्ष की राजनीति से हट कर सत्ता पक्ष में जा मिलना या फिर चौधरी चरण सिंह का ही दोबारा दामन थामना।

जमींदारी उन्मूलन में देश के सबसे बड़े राज्य में चौधरी चरण सिंह ने भारी भूमिका निभाई। क्योंकि बिहार में कृष्णबल्लभ सहाय ने अपनी एक मिसाल कायम की और उस सामंतशाही से टक्कर ली, जिसकी जड़ें उत्तर प्रदेश की तुलना में कहीं गहरी थीं, तो भी चौधरी चरण सिंह ने स्वयं किसान समुदाय का व्यक्ति होने के कारण ज्यादा नाम पाया। जमींदारी उन्मूलन के बाद ही मध्यम किसान एक स्वतंत्र वर्ग के तौर पर उभरा और जब दूसरी–तीसरी पंचवर्षीय योजनाओं में देश को खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता के लक्ष्य से खेती को ज्यादा महत्व मिला, तो उसकी संपन्नता और आत्मविश्वास को अपेक्षतया भारी बल मिला। १९६५ में लाल बहादुर शास्त्री ने 'जय किसान' का नारा बुलंद किया। १९६६–६७ के सूखे के उत्पीड़न से किसान और उसके खेत को सिंचाई देने का महत्व और भी बढ़ा। उन्हीं दिनों सी. सुब्रह्मण्यम के खाद्य मंत्रीत्व काल में हरित क्रांति की ओर पग बढ़ाए गए। यानी १९५५–६७ का पूरा काल

भारतीय राजनीति और अर्थनीति में उस किसान और खेती के पदार्पण का काल था, जिसका न तो अपना स्वतंत्र संगठन था और न ही एक सर्वमान्य नेता।

१९५९ में सहकारी खेती को ही प्रमुख मुद्दा बना कर चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, मीनू मसानी और एन. जी. रंगा ने स्वतंत्र पार्टी का गठन किया और लाइसेंस–परमिट राज का विरोध करते हुए कृषि को प्राथमिकता देने की नीति अपनाई। राजस्थान का भूस्वामी संघ, उड़ीसा की गणतंत्र परिषद और बिहार की तत्कालीन जनता पार्टी भी उनके साथ मिले। परंतु स्वतंत्र पार्टी भारत में किसान आंदोलन के एक तरह से संस्थापक नेता एन. जी. रंगा के बावजूद, किसानों की पार्टी न बन पाई। उसने भूमि सुधारों का विरोध करके जमींदारों और रजवाड़ों का साथ दिया। अतः यह भी उस शून्य को भर न सका।

समाजवादी आंदोलन ने भी कृषि को प्राथमिकता देने, खेती की उपज को लाभकर दाम दिलाने, जोत हदबंदी, सिंचाई, अनार्थिक जोतों का लगान माफ करने जैसे महत्वपूर्ण प्रश्न उठाये थे। गुड़–गन्ना, पाट, कपास वगैरह के दाम संबंधी लड़ाईयाँ भी लड़ी थी। जमींदारी उन्मूलन के साथ–साथ भूमि के पुनर्वितरण का सशक्त आंदोलन चला कर किसान जनता में अपनी जड़ें भी जमाई थी। लेकिन जमींदारी उन्मूलन के बाद भी वे जमीन के बंटवारे और भूमिहीनों के शोषण पर बल देते रहे, जिसके चलते जमीन के नए मालिक बने किसानों की विकास समस्याओं के साथ वे पूर्णतः जुड़े हुए नहीं दिखे, बल्कि शायद कई जगह हालत यही बनती गई कि किसान उनको भूमिहीनों की ही पार्टी मानने लगे। फिर भी उनकी हालत स्वतंत्र पार्टी जैसी नहीं हुई। समाजवादी आंदोलन की कमी यह थी कि उसका नेतृत्व मध्यवर्गीय बुद्धि जीवियों और औद्योगिक मजदूरों का था, जबकि कार्यकर्ताओं में किसानों की भारी संख्या थी। दूसरे, आपसी फूट, एक समूह द्वारा कांग्रेस में विलय, पहचान के संकट और क्रमशः जेपी, कृपलानी, लोहिया, नरेंद्र देव और अशोक मेहता के हटने के कारण किसानों में जो ताकत बनी थी, वह टूटी ही।

चौधरी चरण सिंह से वह खाली जगह भर गई। कुछ उनके अपने प्रयास अथवा संकल्प के कारण नहीं, बल्कि परिस्थिति की बाध्यता के कारण। उत्तर भारत में किसानों के उदीयमान मध्यमवर्ग को निभ्रष्ट, ईमानदार, किसान परिवार में जन्मे और सादगी पसंद नेता की जरूरत थी, वह पूरी हो गई। हरित क्रांति की अत्यंत सीमित सफलता से और १९७३–७५ में मुद्रा प्रसार एवं महंगाई की मार से इस प्रक्रिया को मदद

मिली। पाँच–छह वर्षों में चौधरी चरण सिंह उत्तर भारत के प्रमुख जन नेता बन गए, क्योंकि संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी ने उनके दल के साथ विलय करके उनको बिहार में भी एक बड़ा मौका दिया।

दूसरा कारण था, उत्तर भारत में पिछड़ा वर्ग आंदोलन, जो दक्षिण भारत की अपेक्षा पिछड़ गया था। महाराष्ट्र का बहुजन समाज आंदोलन, जो महात्मा फुले से प्रेरणा पाकर मोरे जेधे और खाडिलकर के नेतृत्व में बलवान हो गया था, उसने कांग्रेस के अंदर उच्चतर जातियों के प्रभुत्व को पचास के दशक में समाप्त कर दिया। तमिलनाडु में रामास्वामी पेरियार के द्रविड़ आंदोलन और आंध्रप्रदेश के आत्मसम्मान आंदोलन (जो बाद में जस्टिस पार्टी में मुखर हुआ) ने भी वही भूमिका निभाई और केरल में नारायण गुरू की अप्रत्यक्ष प्रेरणा से बनी एस. एन. डी. पी. ने भी। स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले दशक तक यह प्रक्रिया नर्मदा नदी के दक्षिण में लगभग पूरी हो चुकी थी। किंतु उत्तर भारत में अभी अवरुद्ध थी।

उच्चतर जातियों को उत्तर भारत में जमींदारी का बड़ा सहारा था और वे इस आर्थिक स्वामित्व के साथ–साथ शिक्षा और उसके फलस्वरूप सरकारी सेवाओं में भी बहुत आगे थीं। यहाँ समाज पर उनका दबदबा दक्षिण भारत की तुलना में कहीं अधिक था। स्वतंत्रता आंदोलन में सामाजिक–आर्थिक बदलाव की आकांक्षाओं के कारण जमींदारी प्रथा के खिलाफ भी वातावरण बना और समाज पर कुलीनों के दबदबे के खिलाफ भी। किंतु दक्षिण में तो कांग्रेस आंदोलन में काफी ऐसे नेता आगे आए, जो पिछड़ी जातियों के थे लेकिन उत्तर भारत में ऐसा न हो सका, इसलिए जब जमींदारी का खात्मा भी हुआ और लोकतांत्रिक चुनाव प्रणाली के चलते संख्या का महत्व भी बढ़ा, तो भी पिछड़ा वर्ग अपनी पहचान या अपना नेतृत्व पेश करने में कामयाब नहीं हो सका। कुल मिलाकर कर्पूरी ठाकुर बिहार में आगे आए और उत्तर प्रदेश में चौधरी चरण सिंह दोनों को ही पहला स्थान १९६७ में या उसके बाद मिला। दूसरे, यशवंतराव चव्हाण, संजीव रेड्डी, कामराज नाडार, हनुमंतैया और निजलिंगप्पा १९५७ के आसपास, बल्कि कामराज तो पहले ही, प्रमुखता पा चुके थे। उत्तर भारत मे साठोत्तर दशकों में पिछड़ा वर्ग आंदोलन तेजी के साथ आगे आया और नेता का स्थान भरा चौधरी चरण सिंह ने, क्योंकि पिछड़ों–दलितों, अल्पसंख्यकों के आंदोलनों में भी नेतृत्व के लिए बराबर वे ही आगे आते हैं, जो उनमें अपेक्षतया कम पिछड़े हुए हों। रेड्डी, चव्हाण, कामराज आदि की भी स्थिति वही थी।

भारत की अर्थव्यवस्था और जाति व्यवस्था में जो दो नए वर्ग गत पच्चीस–तीस बरसों में सामने आए हैं और संख्या बल में भी जिनका

दबदबा है, चौधरी चरण सिंह उनके सर्वमान्य नेता के तौर पर उभरे। उनको इसमें मदद मिली अपनी सज्जनता– शालीनता के कारण और उनके अगाध अध्ययन–मनन के चलते। वे पिछड़ी जातियों का सामाजिक समीकरण बना पाए, क्योंकि उन्होंने न केवल उनके सामाजिक संबंधों की जानकारी हासिल की. बल्कि इसलिए कि उन्होंने उनको आर्थिक कार्यक्रम की भी स्पष्ट रूपरेखा बताई और लोकतंत्र के साथ–साथ विकेंद्रीकरण के गाँधीवादी सिद्धांत का समावेश करके पंचायती राज और ग्रामोत्थान का राजनीतिक–सांस्कृतिक धरातल भी दिया और स्वदेशी, स्वभाषा और स्वावलंबन की बुनियादें मजबूत कीं।

१९७६ आते–आते भारतीय अर्थव्यवस्था में भी एक ऐसा मोड़ आ गया था कि पंचवर्षीय आर्थिक नियोजन को छोड़ना पड़ा था। मुद्रा का अवमूल्यन हो चुका था और चीन व पाक युद्धों के चलते खाद्यान्नों और अन्य चीजों के संबंध में आत्मनिर्भरता की कमी बहुत चिंताजनक थी। उसके बाद के दशक में इंदिरा गाँधी ने 'गरीबी हटाओ' के नारे पर चुनाव जीत कर जनता को निराशा की गुफा में ढकेल दिया।

इसलिए पंडित नेहरू द्वारा प्रतिपादित अर्थनीति, या कहिए कांग्रेसी अर्थनीति, अपनी साख पूर्णतः खो चुकी थी। जब जनता पार्टी विशेषकर चौधरी चरण सिंह ने वैकल्पिक अर्थनीति पेश की, तो उसने जनता को अपनी ओर आकर्षित किया।

चौधरी चरण सिंह ने अपने जीवनकाल के अंतिम बीस वर्षों में उत्तर भारत के किसानों और पिछड़ों को ही नया नेतृत्व नहीं दिया, उन्होंने गाँधीवादी अर्थनीति को भी गाँधी जी के निधन के तीस वर्ष बाद राष्ट्रीय चिंतन की मुख्यधारा में लाने में योगदान दिया। किंतु निपट अभिजात्य और कुलीन वर्ग और औद्योगिक–महानगरीय विशिष्ट जनसमूह के हाथों से देश की राजनीति और सामाजिक–आर्थिक सत्ता को छुड़ाने का कार्य जब भी संपन्न होगा, तब इतिहास इस तथ्य की साक्षी देगा कि जेपी और लोहिया जो बातें, सिद्धांत और कर्म से जीवनपर्यंत प्रचारित–प्रसारित करते रहे, उनको अत्यंत सशक्त भूमिका दे कर जनसाधारण के हाथों में राजनीतिक, आर्थिक और सामजिक सत्ता सौंपने की ठोस शुरुआत चौधरी चरण सिंह ने ही की थी। इसीलिए गाँधीवाद और समाजवाद के मध्य एक सेतु की तरह खड़े रह कर उन्होंने इन अवधारणाओं के साथ एक ऐसा जनसमुदाय जोड़ दिया, जो समता के दर्शनशास्त्र को साक्षात रूप दे सकता था। तत्वज्ञानी निःसंदेह चौधरी चरण सिंह की दसियों ऐसी उक्तियां, उदाहरण आदि जमा कर ले सकते हैं, जो उनकी विसंगतियों को उजागर कर दें और वे गाँधी

की बुनियादी सामाजिक मान्यता के संबंध में उनकी आर्य समाजी समझ की सीमाओं पर कटाक्ष भी कर सकते हैं, तो भी शायद वे भी इस तथ्य को अस्वीकार न कर सकेंगे कि सामाजिक समता, आर्थिक संतुलन और राजनीतिक विकेंद्रीकरण की आस्थाओं और कार्यक्रमों को उन्होंने एक अटूट जनाधार प्रदान करने में भारी पहल की है। हमारा समाज इन आकांक्षाओं में से कुछ समय तक मुँह चुरा भले ही ले, वह इनसे मुँह फेर लेने में अब सफल नहीं हो सकेगा।

३९
राजनीतिज्ञ, समाज सुधारक व अर्थशास्त्री का समन्वित स्वरूप

नाथूराम मिर्धा*

भारत की राजनीति में शामिल होने का मेरा और चौधरी चरण सिंह साहब का रास्ता, उद्देश्य और परिवेश एक था। वह भी गरीब किसान के घर पैदा हुए थे और मेरे गाँव में गरीबी का दानव पूरे जोरों पर था। चौधरी साहब ने भी कांग्रेस के राष्ट्रीय आंदोलन में शामिल होकर किसान की दरिद्रता मिटाने का स्वप्न देखा था और मेरे सामने भी इसके अलावा और कोई रास्ता नहीं था। हम दोनों का परिवेश गरीबी का था और दोनों का उद्देश्य भी ग्रामीण क्षेत्र की गरीबी को दूर करना था। इसके लिए हम दोनों ने कांग्रेस का रास्ता अपनाया। हम दोनों में यह समानता थी, पर दोनों के परिवेश में बड़ा अंतर भी था। उत्तर प्रदेश के किसानों ने शोषण की वह भयंकरता नहीं देखी थी, जो राजपूताना का किसान देख रहा था। दूसरे उत्तर प्रदेश का वातावरण अधिक जागरूक और शिक्षित था, लेकिन हमारे यहाँ यह बात नहीं थी। अतः हमको अपने किसानों को निर्भीक तथा साहसी भी बनाना था और उनकी बहबूदी के लिए कानून भी।

चौधरी साहब ने सन् १९३९ तथा १९४५ में किसानों की स्थिति और उनके सुधार की दिशा पर लेख लिख कर हमारा ही नहीं, अन्य प्रांतों के किसानों व उनके नेताओं का रास्ता साफ किया था। इस प्रकार, हम सभी लोग उनको किसान हितों का सबसे बड़ा रक्षक मानने लगे थे। हम दोनों के कार्य–क्षेत्र दूर थे, विचार की बड़ी भारी एकता थी। किसानों की आर्थिक बहबूदी के लिए चौधरी साहब ने जो फार्मूला पेश किया था, उससे पंजाब में चौधरी छोटूराम जी ने लाभ उठाया और मैंने राजस्थान में। हम जान गए थे कि जमीदारों के पंजे से किसानों को छुड़ाए बिना किसानों

---

* नाथूराम मिर्धा (१९२१–९६), स्वतंत्रता सेनानी, राजनीतिज्ञ, और राजस्थान के प्रभावशाली किसान नेता। किसान सभा के सचिव, राष्ट्रीय कृषि मूल्य आयोग के अध्यक्ष। जोधपुर राज्य में राजस्व मंत्री। राजस्थान विधानसभा के सदस्य (१९५२–६७, १९८४–८९)। १९७९–८० और १९८९–९० से केंद्रीय मंत्रि। नागौर निर्वाचन क्षेत्र से छह बार लोकसभा के लिए चुने गए।

की तरक्की नहीं हो सकती। इसलिए श्री चरण सिंह साहब ने कांग्रेस मंत्रिमंडल में रहकर जमींदारी–उन्मूलन कानून बनाया और पास किया। मैंने भी, सबसे पहले, जोधपुर राज्य में मंत्री की हैसियत से, कानून बनाकर किसानों को भूमिधर बनाया और उनको लगान का दस गुणा भी न देना पड़ा। बाद में यही कानून पूरे राजस्थान राज्य में लागू हो गया। चौधरी साहब ने किसानों को रिश्वतखोर पटवारियों और सरकारी अधिकारियों के शोषण से छुटकारा दिलाने में पहल की और साहस का परिचय दिया। इससे चौधरी साहब का कद बहुत ऊँचा हुआ और भारत की राजनीति में किसान एक अहम् भूमिका निभाने गणतंत्र भारत की संसद में चौधरी चरण सिंह के रूप में पहुँच गया।

मैंने राजस्थान में किसानों को जागीरदारों के डाकुओं से मुक्ति दिलाने, उनके आतंक को समाप्त करके किसानों को सहज जीवन दिलाने, उनको कृषि विषयक साधनों से संपन्न करने, उनके मवेशियों के लिए चरागाह सुरक्षित कराने, उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार लाने और उनको स्वतंत्र भारत का स्वतंत्र नागरिक महसूस कराने के अवसर उपलब्ध कराए।

श्री चरण सिंह साहब को ऐसा महसूस होने लगा था कि कांग्रेस का एक वर्ग किसानों की अपेक्षा उद्योगपतियों के अधिक नजदीक है। इसी दौरान पंडित जवाहर लाल नेहरू जी ने, कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन में सहकारी खेती की बात उठा दी। चौधरी साहब की मान्यता थी कि इससे किसान बर्बाद हो जाएगा। अतः आपने भरे अधिवेशन में पंडित जी के प्रस्ताव का सउदाहरण विरोध किया। नागपुर कांग्रेस अधिवेशन से ही पंडितजी को किसान मसीहा चौधरी चरण सिंह के बारे में पूरा ज्ञान हुआ। (इस अधिवेशन में जब चौधरी साहब सहकारिता के बारे में विरोध में बोले, तभी पंडितजी ने पूछा कि ये कौन है, तभी बताया गया कि ये उत्तर प्रदेश से कांग्रेस नेता चौधरी चरण सिंह हैं)। इससे उनके लिए कांग्रेस का द्वार तो अवश्य संकरा होने लगा था, पर देश में, विशेषतः उत्तर प्रदेश में चौधरी साहब किसानों के सबसे बड़े हितैषी बनकर उभरे। इसी के बल पर वह उत्तर प्रदेश में संविद सरकार का गठन करके कई पिछड़ी जातियों के प्रतिनिधियों को मंत्रिमंडल में शामिल होने का अवसर प्रदान कर सके। यह भारत के राजनीतिक जीवन में नई शुरूआत थी। इसका प्रभाव आगे चलकर केंद्र पर भी पड़ा।

मैंने "राष्ट्रीय कृषि आयोग" के अध्यक्ष के रूप में एक बड़ी रपट केंद्रीय सरकार के सामने पेश की। यदि उसको भारत सरकार ईमानदारी के साथ लागू करती तो भारत के किसानों का बड़ा भारी हित होता।

श्री चरण सिंह साहब साहसी, नीति–कुशल, त्वरित निर्णय लेने की शक्ति, अपने जीवन तथा विचारों में पवित्र और देश के बहुसंख्यक वर्ग के प्रबल हितैषी थे। मैंने उनको गृहमंत्री तथा प्रधानमंत्री के रूप में देखा था। वे अपने सहभागियों के विचारों को धैर्य के साथ सुनते थे। वे अनेक उन कमजोरियों से मुक्त थे, जो प्रायः राजनीतिक कार्यकर्ताओं में मिलती है। रिश्वतखोरों और ब्लैकमेल करने वालों से तो वह दूर रहते ही थे, पैसे वालों के दुष्प्रभाव को भी उन्होंने अपने पास फटकने नहीं दिया। इसी कारण चौधरी साहब के जीवन की लोग "सफेद चद्दर" से तुलना करते हैं।

चौधरी चरण सिंह साहब एक व्यक्ति नहीं विचार थे। जिनकी आर्थिक नीति पर यदि ईमानदारी से अमल किया जाए तो किसान–मजदूर ही खुशहाल नहीं होंगे, बल्कि संपूर्ण देश खुशहाल हो सकता है। जो जमीन से उठकर सत्ता के उच्चतम शिखर पर पहुँचा, जिसने करोड़ों बेजुबान शोषित पीड़ितों की आवाज को सत्ता के उच्च गलियारे में पहुँचाया और जिसकी वजह से ही आज हिन्दुस्तान की कोई भी पार्टी चाहे वामपंथी विचारधारा वाली हो या दक्षिणपंथी, सभी किसान और उनकी समस्याओं का राग अलाप रही हैं। वह चौधरी चरण सिंह जी इंसानों में हीरा थे। उनसे मेरा संबंध देश आजाद होने से पहले आजादी की लड़ाई के दौरान से रहा है।

मेरठ जिले के साधारण किसान परिवार में जन्मे चौधरी साहब सच्चे अर्थों में गाँधीवादी नेता थे। गाँधी जी की तरह ही वे कुटीर व लघु उद्योगों के विकास के हामी रहे। चौधरी साहब ने अपने राजनीतिक जीवन की शुरूआत में ही गरीब और किसान पर हो रहे शोषण, अत्याचार तथा भ्रष्टाचार को देखा और उसके खिलाफ उन्होंने जो लड़ाई छेड़ी, उसके लिए वह जीवनपर्यंत लड़ते रहे।

चौधरी साहब ने कभी सिद्धांतों से समझौता नहीं किया। सिद्धांतों की खातिर ही आपने प्रधानमंत्री के पद पर रहते हुए भी लोकसभा भंग करने की सिफारिश की थी। यदि वह श्रीमती इंदिरा गाँधी से घर जाकर या फिर टेलीफोन पर वार्ता करके उन्हें समर्थन के लिए धन्यवाद दे देते तथा प्रमुख इकाईयों पर चल रहे मुकदमे वापस ले लेते तो लोकसभा में उन्हें इंका का समर्थन भी मिल जाता और प्रधानमंत्री पद पर बने भी रह सकते थे। किंतु चौधरी साहब ने इस संबंध में श्रीमती गाँधी से बात करना भी सिद्धांतों के खिलाफ समझा। जिसका परिणाम यह हुआ कि चुनाव कराना अपरिहार्य हो गया, जिसमें लोकदल को पराजय का मुँह देखना पड़ा।

चौधरी चरण सिंह साहब एक राजनीतिज्ञ के साथ–साथ समाज सुधारक और अर्थशास्त्री भी थे। उनकी स्पष्ट मान्यता रही कि जब तक

देश में जातिवाद रहेगा, तब तक देश विकास नहीं कर सकता और पिछड़ा ही रहेगा। इसी बात को ध्यान में रखकर आपने आज से करीब ४ दशक पहले अंतर्जातीय विवाह करने वालों को सरकारी सेवाओं में आरक्षण देने की बाबत नेहरू जी को पत्र भी लिखा। यदि उस समय चौधरी साहब की इस सलाह पर गौर कर लिया जाता तो आज देश के सामने जातीयता एवं क्षेत्रीयता की समस्या नहीं होती।

चौधरी साहब सदैव ही स्पष्टवादी रहे। वोट की खातिर व्यवहारिकता को छिपा कर नाटकीयता का प्रदर्शन उन्होंने कभी नहीं किया। चाहे पंजाब समस्या हो या फिर ईसाई मिशनरीज का सवाल हो, उनके विचार स्पष्ट और दो टूक रहे। यह अलग बात है कि उन पर सत्ताधारियों ने गौर नहीं किया।

चौधरी साहब का जीवन आडम्बरों तथा सुख–सुविधाओं से हटकर सादगीपूर्ण एवं कुछ मान्यताओं पर आधारित रहा। यही कारण है कि गाँव के गरीब मजदूर किसान सभी ने उन्हें अपने अधिकारों का रक्षक और मसीहा माना।

उदात्त मानवीय मूल्य और लोकहित के साथ जुड़ी उनकी राजनीति ने मुझे उनकी ओर आकर्षित किया था। भारत की कृषि, किसान और गरीबों से संबंधित उनकी नीति आज भी प्रासंगिक है। सौभाग्यवश मुझे उनके प्रधानमंत्री काल में उनके मंत्रिमंडल में सिंचाई राज्य मंत्री के रूप में तथा वित्त राज्य मंत्री के रूप में कुछ महीने कार्य करने का मौका मिला। मैंने भी श्री चरण सिंह साहब के सिद्धांतों को आधार मानकर, अपने राजनीतिक जीवन में कृषि और कृषि उद्योगों पर निर्भर करने वाली देश की बहुसंख्यक जनता का हित करने व उसको सुखी और समृद्धि की दिशा में आगे बढ़ाने का संकल्प कर रखा है, पूरा करना ईश्वराधीन है।

दरअसल भारत माँ के महान सपूत, देशभक्त, स्वतंत्रता सेनानी और सर्वहारा के मसीहा चौधरी चरण सिंह जी इस देश की अमिट थाती थे, कोटि–कोटि जन के प्रेरणा स्रोत थे। जीवन में सौम्यता, सादगी, दीप्तीमान मुखमण्डल, कुशल राजनीतिज्ञ तथा ओजस्वी विचारों से ओत–प्रोत क्रांतिकारी युग पुरुष चौधरी चरण सिंह साहब का यह व्यक्तित्व आज हमारा व आने वाली पीढ़ियों का पथ प्रदर्शक है। आज के परिवेश में चौधरी साहब की प्रासंगिकता और अधिक महत्वपूर्ण हो गई हैं।

चौधरी साहब को गाँवों, किसानों व गरीबों की उपेक्षा असहनीय थी। देश के विकास में खेती और खेतीहरों के महत्व को उन्होंने समझा था और उनकी कठिनाईयों का उनको पूरा अहसास था। यही कारण था कि अपने राजनीतिक जीवन में कृषि की विकास योजनाओं को सरकारी

दस्तावेजों के हाशिए से बाहर निकाल, उन्हें मूर्त रूप देने और किसानों/निर्धनों में उनके अधिकारों की चेतना जागृत करने में चौधरी साहब का योगदान कभी भुलाया नहीं जा सकता। गाँधीवादी दर्शन से प्रभावित चौधरी साहब का स्वप्न था कि गाँवों में खुशहाली हो, गरीबी और अशिक्षा की दासता से देहात के लोग स्वतंत्र हों, गाँव के खेत खलिहान, कुटीर उद्योग धन्धे और हस्तशिल्प इस देश के विकास की प्रथम सीढ़ी हों। उनका मानना था कि हमारे देश की ८० प्रतिशत जनता गाँवों में निवास करती है जो इस देश की नींव है और यदि वो ही मजबूत नहीं होगी तो देश मजबूत कैसे हो सकता है। इसीलिए इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उन्होंने जीवनपर्यंत संघर्ष किया, सत्ता से बाहर और सत्ता में रह कर भी। सत्ता के विकेंद्रीकरण के लिए और लालफीताशाही के खिलाफ जो आवाज चौधरी साहब ने बुलंद की थी, वह आज समाज परिवर्तन व ग्राम्य विकास का पर्याय बन गई है। देहातों में आई चेतना व जागृति की लहर और विकास एवं प्रगति की यह बदली आज इसका जीता जागता उदाहरण है। पंचायती राज्य की स्थापना, विकास खर्च का गाँवों की ओर रुख, आज की आवश्यकता बन गई है और सरकार की नीति निर्धारण में चौधरी चरण सिंह साहब की प्रासंगिकता स्वतः ही जुड़ गई है।

आज चौधरी साहब के लिए सच्चे श्रद्धा सुमन यहीं होंगे कि हम सब मिलकर देश की एकता और ग्राम विकास के उत्थान का संकल्प लें, अपनी परंपराओं, संस्कारों व मूल्यों को जीवन में साकार करें और धरती माँ को अपने लहू से सींचने वाले किसानों, मजदूरों और हस्तशिल्पियों के उत्थान के लिए अपना जीवन उत्सर्ग करें ताकि विकास और प्रगति की महक गाँव की माटी में समा जाए।

४०

संघर्ष ही उनकी जीवन-शक्ति था

डॉ. नत्थन सिंह*

भारत के पूर्व प्रधानमंत्री स्व. चौधरी चरण सिंह एक कुशल राजनीतिक नेता की अपेक्षा अधिक अच्छे प्रशासक, लोकहित के साथ प्रतिबद्ध विचारक और श्रेष्ठ इंसान थे। वह यावज्जीवन भारत की राजनीति के अंग रहे, पर राजनीति उन पर हावी कभी नहीं हुई। जब कभी ऐसा अवसर आया कि उनको अपने पद की रक्षा के लिए, राजनीतिक अवसरवादिता की आवश्यकता है, तब वह राजनीतिक मूल्यहीनता अंगीकार करने की अपेक्षा अपने पदों को ही तिलांजलि देते रहे। यह इसलिए संभव हो सका था कि वह मूलतः किसान थे। उनकी आवश्यकताएँ अल्प थीं, कठिन परिश्रम, कष्ट–सहिष्णुता और स्पष्टवादिता के वह अभ्यस्त थे। बंगला, वैभव, मोटर, फार्म हाउस और करोड़ों के बैंक बैलेंस की उनको चाह नहीं थी, यदि होती, तो वह मुख्यमंत्रियों तथा प्रधानमंत्रियों की हाँ में हाँ मिलाते रहते, उनकी नीतियों का विरोध नहीं करते।

यथार्थ में, कांग्रेस के प्रति उनका मोह भंग बहुत प्रारंभ में ही हो गया था। एक दिन बातचीत के दौरान उन्होंने मुझे बताया था, "मैं जब उत्तर प्रदेश के मैदानी इलाकों में बड़ी सख्ती के साथ जमींदारी उन्मूलन कानून को लागू करा रहा था, तो कितने ही कांग्रेसी नेता मेरे खिलाफ हो गए थे। उनके क्रोध से पंतजी मेरी रक्षा करते रहे थे, किंतु मैंने उसी सख्ती के साथ, जब पर्वतीय क्षेत्रों पर उनको लागू करवाया तो पंतजी स्वयं नाराज हो गए।" मोह भंग की प्रक्रिया का आरंभ यहीं से होता है। इसके विकास का बिंदु, कांग्रेस अधिवेशन में, नेहरू जी के सहकारी खेती के प्रस्ताव का विरोध करने में निहित था और चरम सीमा उत्तर प्रदेश में मंत्रिमंडल गठन की प्रक्रिया और उसमें कांग्रेस हाई कमान की अविश्वसनीय भूमिका में केंद्रित है।

इस बिंदु पर पहुँच कर उनको विश्वास हो गया था कि कांग्रेस से

---

* डॉ. नत्थन सिंह (१९२३–२०१५), लेखक और जाट इतिहासकार। आगरा विश्वविद्यालय से पीएचडी (१९५७) । चौधरी चरण सिंह और नाथूराम मिर्धा की जीवनी लिखी।

किसानों, गरीबों, देहात के पिछड़े लोगों, शहर के भूखे नंगे और बेकारों का कोई हित नहीं हो सकता। शासन में भ्रष्टाचार के फैलाव, युवकों में बढ़ती अनुशासनहीनता और नेताओं में विकसित अवसरवादिता पर उनकी आत्मा बड़ी दुखी होती थी। एक बार उन्होंने मुझसे प्रश्न किया– "बताओ! किसानों की बात करने वाला कोई अन्य आज की राजनीति में तुम्हारी दृष्टि में है?" मैं निरुत्तर हो गया था।

इस देश का, पिछले सैंतालीस वर्षों का इतिहास इस तथ्य का साक्षी है कि यहाँ के राजनीतिक नेताओं ने अपनी लोकप्रियता तथा राजनीतिक सत्ता को कायम रखने के लिए बड़े आकर्षक नारे लगाए हैं– "लोकतंत्र की स्थापना", "धर्मनिरपेक्ष राज्य शासन की कल्पना", "गरीबी हटाओ का नारा", "समता तथा एकता का आदर्श" "जवाहर रोजगार योजना" आदि इसी प्रकार के नारे हैं। इन नारों से देश में न तो सच्चे लोकतंत्र की स्थापना हुई, न धर्मनिरपेक्ष समाज को अस्तित्व में लाया जा सका, न गरीबी हटी और न जवाहर रोजगार योजना से देश के लाखों बेरोजगारों को जीविका के साधन मिले। इसके विपरीत लोकतंत्र का नारा देने वाले लोगों ने अपने दलों की आंतरिक लोकतांत्रिक व्यवस्था को अपने ही पैरों तले कुचला। मंत्री तथा मुख्यमंत्री योग्यता, अनुभव और लोक–सापेक्ष मूल्यों के साथ प्रतिबद्धता के आधार पर नियुक्त न होकर नेता के प्रति भक्ति के आधार पर बनाए जाने लगे। फलतः देश का हित, देश के करोड़ों भूखे तथा नंगों का हित न होकर, हित होने लगा नेताओं का। यह लोकतंत्र की हत्या थी।

धर्मनिरपेक्षता का ढोल पीटने वाले नेताओं ने अपने वोट–बैंक की स्थापना के लिए, एक को प्रश्रय देना आरंभ कर दिया और दूसरे की उपेक्षा। इसी तरह जातिवाद को कोसने वाले नेताओं ने विशेषतः कांग्रेस के कर्णधारों ने जिस क्षेत्र में जिस जाति का बहुमत अथवा वर्चस्व देखा, वहाँ से उसी जाति के व्यक्ति को निर्वाचन में अपना प्रत्याशी बनाना आरंभ कर दिया, प्रशासनिक तथा विदेश सेवाओं में अपनी जाति के लोग बिठाए जाने लगे। चौधरी साहब को लगा कि यह तो लोकतंत्र की हत्या थी। अपने पत्रों द्वारा चौधरी साहब ने इसका विरोध किया (देखिए "जातिवादी कौनः एक विश्लेषण" पुस्तक)। उनकी ईमानदारी और स्वच्छ छवि का दूसरा प्रमाण है, जनता शासन के दौरान उनके साथ मोरारजी देसाई के बीच हुए सवाल जवाब (तत्कालीन समाचार पत्रों में प्रकाशित)।

जनता सरकार की किसान विरोधी तथा ग्रामीण क्षेत्र की उपेक्षापरक नीति के फलस्वरूप उनको, विवशतावश उसका विरोध करना पड़ा। यदि वह ऐसा न करते तो यह अपने मूलभूत सिद्धांतों के विपरीत जाना होता।

सन् १९४५ के आस–पास चौधरी साहब ने उत्तर प्रदेश कांग्रेस की बैठक में एक प्रस्ताव इस आशय का रखा था कि किसानों की सन्तानों को सरकारी नौकरियों में पचास फीसदी आरक्षण दिया जाए। उनके इस प्रस्ताव का विरोध हुआ। मैं जिस समय उनके अंग्रेजी में लिखे प्रस्ताव विषयक लेख का हिन्दी अनुवाद करके उनको दिखा रहा था, उस समय उन्होंने मुझे बताया था कि इस प्रस्ताव का विरोध प्रदेश के एक बड़े समाजवादी नेता ने भी किया था और एक कांग्रेस–सदस्य ने तो यहाँ तक कहा था कि "किसानों के बेटे जब सरकारी पदों पर बैठ जाएंगे तो हल कौन चलाएगा।" उस समय चौधरी साहब के चेहरे पर देखने से मुझे लगा कि इन तथाकथित समाजवादियों तथा कांग्रेसियों ने अपने ऐसे कथन तथा कर्मों के द्वारा ही, उनको मोहभंग की स्थिति तक पहुँचाया था। देहात की उपेक्षा के प्रति वह अत्यंत क्षुब्ध और व्यथित थे।

यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि चौधरी साहब जब किसान शब्द का प्रयोग करते थे तब उसका अर्थ केवल हलवाहा नहीं होता था। उनकी किसान की परिभाषा में खेती करने वाला तथा खेती से संबंधित धंधों में लगने वाला प्रत्येक व्यक्ति शामिल था।

चौधरी साहब न केवल निष्ठावान तथा देशभक्ति के साथ प्रतिबद्ध राजनीतिक नेता ही थे वरन् एक कुशल प्रशासक भी थे। जो व्यक्ति अपने विचारों तथा कार्यों में ईमानदार नहीं होता, रिश्वतखोरी–जिसको आज सुविधा शुल्क का नाम दे दिया गया है–से अलग नहीं रहता, वह कुशल प्रशासक नहीं हो सकता। उनकी प्रशासकीय क्षमता के मूल में ये गुण पर्याप्त मात्रा में थे। बड़ौत के स्व. लाला श्रीराम खत्री ने जो चौधरी साहब के बहुत समीप थे, मुझे बताया था कि एक निलम्बित इंजीनियर अपना निलम्बन निरस्त कराने के उद्देश्य से लालाजी को चौधरी साहब से सिफारिश कराने ले गया। चौधरी साहब ने उसकी फाइल देखी और पूरी फाइल देखने के बाद, माथे पर हाथ रखकर बैठ गए और थोड़ी देर बाद लाला जी से बोले, "इस फाइल में से बदबू आती है।" लालाजी इसी उत्तर की अपेक्षा करते थे। चौधरी साहब के हटते ही उसी इंजीनियर की पदोन्नति हो गई।

स्वच्छ प्रशासन और समाज सापेक्ष राजनीति पर चर्चा के संदर्भ में उन्होंने मुझे बताया कि एक उद्योगपति उनसे कोई लाइसेंस लेने के सिलसिले में मिला। लाइसेंस देने पर कमीशन की रकम, सवा छह प्रतिशत से कई करोड़ बैठती थी। चौधरी साहब ने उसको लाइसेंस नहीं दिया।

चौधरी साहब जब उत्तर प्रदेश में मुख्यमंत्री थे, तब उन्होंने कॉलिजों

तथा विश्वविद्यालयों की अनिवार्य छात्र यूनियनों को ऐच्छिक बना दिया था और उसके विरोध में कहीं कोई आंदोलन नहीं हुआ। आपने उत्तर प्रदेश के आंदोलनकारी पटवारियों के त्याग पत्र स्वीकार कर लिए थे और पूरे प्रदेश ने राहत की सांस ली थी। उनमें नीति–निर्धारण और उसको मूर्त रूप देने का पर्याप्त नैतिक साहस था। एतमादपुर आगरा के एक रेस्तरां में दो व्यक्ति प्रदेश में व्याप्त अनुशासनहीनता पर चर्चा कर रहे थे। एक ने प्रश्न किया, इसका हल क्या हो सकता है? दूसरे का उत्तर था – "चौधरी चरण सिंह।" मैं और मेरा साथी उनकी बात सुनकर मुग्ध हो गए। यथार्थ में, अनुशासन और व्यवस्था का नाम था चौधरी चरण सिंह।

गाँधीवाद में चौधरी साहब का अगाध विश्वास था। एक बार मैंने उनसे कहा था – "चौधरी साहब गाँधीवाद आपकी कमजोरी है और आर्य समाज आपकी ताकत।" यह सुनकर विरोध और जिज्ञासा भरी दृष्टि से मेरी ओर देखा। मैंने विनम्रतापूर्वक कहा, "आप समझते हैं कि गाँधी जी का नाम लिए बिना, आप भारतीय राजनीति में संदर्भहीन हो जाएंगे। यह आपको किसान तथा मजदूरों को एक मंच पर लाकर आंदोलनमुखी नहीं बनाने देता। और जब तक ये दोनों शक्तियां एक होकर अपने अधिकारों को प्राप्त नहीं कर लेतीं, अपनी सरकारें नहीं बना लेतीं, तब तक देश में सच्चे लोकतंत्र की स्थापना नहीं हो सकती। गाँधीवाद आपको ऐसा करने से रोकता है। आपकी ताकत है आर्यसमाज, इसने आपको देशभक्त बनाया है, ईमानदारी दी है और कथन तथा कर्म की एकता प्रदान की है।" यह सुनकर उनकी आँखों में चमक आ गई। मैंने आगे कहा– "चौधरी साहब यदि आपने अपनी ऐतिहासिक किसान रैली में किसान और मजदूरों की एकता का नारा लगा दिया होता, तो आप भारत के लेनिन हो जाते।" उनके शब्द थे– "अरे! लेनिन तो महान व्यक्ति थे।" मैंने कहा– "वह महान हुए, अपने देश की जनता को समृद्धि और स्वाधीनता दिलाकर और अपने चरित्र की महानता दिखा कर। चारित्रिक बल आप में भी है, पर आपका गाँधीवाद आपके मार्ग में आड़े आ जाता है।" वह सुनते रहे। मैंने कहा– –"आप कुटीर उद्योगों तथा लघु उद्योगों के विकास द्वारा भारत की काया पलटने की योजना लेकर आए थे। आप चाहते थे कि जो वस्तु लघु उद्योगों में बने कानून द्वारा उसका निर्माण बड़े उद्योगों में बंद कर देना चाहिए। आपकी इस योजना को क्या तथाकथित गाँधीवादियों ने ही पलीता नहीं लगाया था?" वह बोले–"तुम ठीक कहते हो, गाँधी जी की कृपा से राजनीतिक सत्ता छीनने वालों ने ही गाँधी जी को मारा है।"

यथार्थ में चौधरी साहब बहुत सहज और प्रतिबद्ध इंसान थे। राजनीति उनके लिए न तो एक व्यसन था और न अभिप्रेत, वह था अभिप्रेत तक

पहुँचने का एक साधन। कुछ लोग, जब राजनीति को साध्य मान लेते है, तब राष्ट्र तथा समाज का हित उनके लिए गौण हो जाता है। चौधरी साहब के लिए वह केवल साधन था। अपने साध्य तक पहुँचने के लिए वह न तो चाणक्य का अनुकरण करना चाहते थे, न पाश्चात्य दार्शनिक मैकियावली का। चाणक्य के लिए सफलता काम्य थी, साधन की पवित्रता नहीं। मैकियावली के अनुसार अपने वायदे से फिरने के लिए एक राजनीतिक को कोई न कोई बहाना मिल जाता है। चौधरी साहब का सिद्धांत न तो रंगीन बहाना तलाश करना था और न सफलता के लिए चाणक्य के सिद्धांत को अपनाना। यदि ऐसा होता तो वह एक लंबे समय तक उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री रह सकते थे और प्रधानमंत्री भी।

वह मूल्यों के साथ प्रतिबद्ध इंसान थे। मैंने, उनको तीन बार दीक्षांत भाषण देते सुना था। एक बार मेरठ कॉलेज मेरठ में और दो बार जनता वैदिक कॉलेज बड़ौत में। दीक्षांत भाषणों में एक शब्द भी राजनीति के विषय में नहीं बोलते थे। सारा व्याख्यान शिक्षा तथा संस्कृति से संबंधित होता था। संभवतः सन् १९७४ के दीक्षांत समारोह में लगभग दस हजार किसान भाषण सुन रहे थे, वह एक शब्द भी शिक्षा के अतिरिक्त नहीं बोले। किसान निराश हुए और छात्र तथा अध्यापक गर्वित। मेरठ विश्वविद्यालय के कुलपति ने मुझसे कहा था, "मूल्यों के साथ प्रतिबद्ध ऐसा राजनीतिज्ञ मैंने दूसरा नहीं देखा, जिसने इतने अधिक श्रोताओं का लाभ भी अपने राजनीतिक हितों के लिए नहीं उठाया। निश्चित है कि यदि दूसरा व्यक्ति होता तो शिक्षा पर कम, अपनी राजनीतिक उपलब्धियों पर अधिक बोलता। अवसर से अनावश्यक, अमर्यादित और अनैतिक लाभ उठाना उनके जीवन—मूल्यों के विपरीत था।

अपने सबसे बड़े दामाद प्रो. गुरुदत सोलंकी, सदस्य, विधान परिषद, उ. प्र. के स्वर्गवास के बाद उनके बच्चे लखनऊ में रहना चाहते थे। कई लोगों ने श्रीमती सोलंकी को विधान परिषद के लिए नामांकित करने का अनुरोध उनसे किया था। उनमें एक मैं भी था। मेरा तर्क था कि विधान परिषद की सदस्या बनने के बाद उनको वही मकान मिल सकता है, जिसमें आजकल रह रही हैं। उनका उत्तर था— "वे लोग इस घर में आकर क्यों नहीं रहते, इतनी बड़ी कोठी है और रहने वाले केवल हम दो हैं।" और वह टस से मस नहीं हुए।

व्यक्ति पर जब राजनीति हावी हो जाती है, तब वह एकांगी, आत्मनिष्ठ, आत्मकेंद्रित, मित्रों तथा सम्बंधियों से अलगावित, शंकित और अंतर्मुखी हो जाता है। हर समय उसको अपनी तथा अपनी कुर्सी की रक्षा की चिंता रहती है। चौधरी साहब इसके अपवाद थे। वह जब गृहमंत्री थे, बुलंदशहर

के एक पुराने साथी उनसे मिलने आए। आपने उनसे कुशल–क्षेम पूछी। वह बोले–"चौधरी साहब! सब ठीक है, थोड़ी–सी रही है वह भी कट जाएगी।" चौधरी साहब बोले– "निराशा को सवार मत होने दो। मुझे देखो तुम से तो उम्र में बड़ा हूँ। संघर्षों में जीवन की शक्ति पाता हूँ।" यह था चौधरी साहब का दर्शन और व्यक्तित्व।

४१
सर्वहारा के प्रति प्रतिबद्ध थे चौधरी चरण सिंह

परिमल दास*

हमारे देश में किसी व्यक्ति की मृत्यु के बाद उसकी प्रशंसा की बाढ़ उमड़ पड़ती दिखती है। वे लोग भी तारीफ करते नहीं थकते, जिन्होंने उसके जीवनकाल में उसकी निंदा के सिवा और कुछ भी नहीं किया हो। यह परंपरा एक तरफ जहाँ मनुष्य को उसकी बैरी भावनाओं से मुक्त कराती है, वहीं दूसरी तरफ प्रशंसाओं को महज औपचारिकता बना देती है। कभी–कभी यह प्रशंसा झूठी भी लगने लगती है। लोग शिष्टाचार निभाते हैं, मूल्यांकन नहीं करते। मन में कहीं खोट रह जाती है, जिसे वे छिपाना चाहते हैं। मुखौटा ओढ़े ढोंगीपन के प्रदर्शन की होड़ लग जाती है। कभी राजनीतिक बाध्यताएं न चाहते हुए भी कुछ काम करने को मजबूर कर दिया करती हैं। पर कुल मिलाकर सार्वजनिक जीवन का खोखलापन और भी उजागर हो जाता है, दुख की बात यह है कि हम इस खोखलेपन और ढोंगी जीवन को पसंद करने लग गए है।

चौधरी चरण सिंह हाल के इतिहास में गैर–द्विजों में से पहले व्यक्ति थे (अंबेडकर के अतिरिक्त), जिन्होंने सत्ता पर सवर्णों के एकाधिकार को चुनौती देने की प्रक्रिया की शुरूआत की थी। इस काम में अपनी वजहों से या संगठन की कमजोरी के कारण, पूरी सफलता न भी मिली हो, फिर भी वे एक ताकतवर खतरे के रूप में दिखने लगे थे। लोहिया ने जिसकी नींव डाली थी, चरण सिंह ने उस पर इमारत के निर्माण का काम शुरू कर दिया था, इसलिए सवर्ण इनकी तस्वीर को साफ करके उनके व्यक्तित्व को अक्षत नहीं रहने दे सकते थे।

चौधरी साहब को उनके जीवनकाल में कई गलत प्रचारों का शिकार बनाया गया। कुछ तो इनमें ऐसे थे, जिन्हें जानबूझ कर फैलाया गया। जो सबसे अधिक प्रचारित हुआ, वह यह था कि चरण सिंह धनी किसान यानी

---

* परिमल दास जिनेवा में स्थित अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन के प्रोफेसर हैं। उनकी शोध रुचियाँ भारत की विदेश नीति और दक्षिण और पूर्व एशिया की राजनीति पर केंद्रित हैं। इसमें वियतनाम और चीन के साथ भारत के संबंध और दक्षिण पूर्व एशिया में सुरक्षा की स्थिति का विश्लेषण शामिल है।

'कुलक' के प्रतिनिधि थे। कुछ वामपंथी प्रचारकों ने इसे विश्वसनीयता प्रदान करने का प्रयास किया। इसलिए उन्हें चौधरी चरण सिंह के शब्दों में ही जवाब देना उचित होगा। चौधरी साहब अपनी किताब 'इंडियाज इकोनॉमिक पॉलिसी दि गाँधीयन ब्लू प्रिंट' में लिखते हैं, 'भूमि की संपत्ति पर प्रति वयस्क व्यक्ति (जिसमें पत्नी और बच्चे शामिल हैं) हदबंदी की सीमा २७.५ एकड़ से अधिक न हो और अतिरिक्त जमीन भूमिहीनों के बीच, या ऐसे किसान, जिसके पास ढाई एकड़ से कम जमीन हो, बाँट दी जाए।'

जहाँ सिंचाई की व्यवस्था उपलब्ध है, वहाँ उनके अनुसार प्रति व्यक्ति अधिक से अधिक और कम से कम की सीमा क्रमशः १२.५ एकड़ और २.५ एकड़ रखी जानी चाहिए। भारत के समाजवादी आंदोलन में जहाँ सिंचाई की व्यवस्था उपलब्ध न रही हो, हदबंदी की सीमा ३० एकड़ तक बताई जा चुकी है। ऐसी सूरत में जमीन के प्रश्न को लेकर चौधरी साहब को 'कुलक' करार देना मिथ्या दोषारोपण के सिवा और कुछ भी नहीं है।

देश में पिछड़ों की राजनीति गाँव और गरीबी की राजनीति के अलावा और कुछ नहीं बन सकती। राष्ट्रीय स्तर पर बहुसंख्यक के वर्चस्व की स्थापना ग्रामीण अर्थव्यवस्था या कृषि प्रधान आर्थिक नीति से जुड़ी है, कम से कम शुरू के चरणों में। ऊँची जात, ऊँचे वर्ग और अंग्रेजी पढ़े–लिखे लोगों के लिए गाँधी 'दकियानूसी और पुरातनपंथी' थे, लोहिया 'सिरफिरे' और चौधरी चरण सिंह 'कुलक' या जाट नेता चौधरी साहब की भूमिका को समझने के लिए इस संदर्भ और परिप्रेक्ष्य को कतई नहीं भूलना चाहिए। कई दफा उनकी चाल या दाँव गलत भले ही रहे हों, पर रणकौशल कभी गलत नहीं रहा। भारत के सर्वहारा के प्रति उनकी प्रतिबद्धता कभी भी कमजोर नहीं हुई।

भारत के गरीब और गरीबी के बारे में उनकी जानकारी मात्र किताबी नहीं थी। उन्होंने गरीबी को न सिर्फ देखा, जिया भी था। गरीबों के प्रति उनकी हमदर्दी सिर्फ भावनात्मक उद्‌गार या वोट की राजनीति का कला प्रदर्शन नहीं था। वे गरीबी को अन्यायी व्यवस्था की उपज मानकर उसके निराकरण के प्रयत्नों में जुटे हुए थे उनका सादगी का जीवन उनके जीवन दर्शन और आर्थिक चिंतन का ही नतीजा था। कथनी और करनी के बीच फासला कम से कम रखने में वे सदा प्रयत्नशील रहते थे। उनके समाज दर्शन का आधार जाति प्रथा की समाप्ति था। इसे खत्म करने की दिशा में लोहिया ने जहाँ 'विशेष अवसर' के सिद्धांत का प्रतिपादन किया, वहाँ चौधरी चरण सिंह ने 'अंतर्जातीय विवाह' को सरकारी अफसरों के लिए अनिवार्य करार करने का सुझाव १९५४ में पंडित जवाहरलाल नेहरू के समक्ष रखा था।

चौधरी चरण सिंह द्वारा उठाए गए कई मुद्दों में 'गाँव बनाम शहर' के विकास का मुद्दा बहुत ही महत्वपूर्ण है। यह मुद्दा जहाँ एक तरफ उनके समाज दर्शन से जुड़ा हुआ है, वहीं यह पिछले ४७ सालों की गलत अर्थनीतियों के नतीजों से देश को बचाने के लिए अत्यावश्यक भी है। देश की अखंडता देश के सभी हिस्सों के समान रूप से विकास पर टिकी हुई है। अगर शहर द्वारा गाँव का शोषण जारी रहा, तो न सिर्फ आर्थिक विकास ठप्प हो जाएगा, बल्कि साथ–ही–साथ नए सामाजिक और राजनीतिक तनाव पैदा होंगे, जिन्हें संभाल पाना असंभव हो जाएगा।

आधुनिकता के नाम पर अनावश्यक, पर नये–नये मशीनी औजार देश में लाकर देश की अर्थव्यवस्था को नव उपनिवेशवाद के शिकंजों में फांसा जा रहा है। इसके भयानक परिणाम दिखने लग गए हैं। गाँधी–लोहिया चौधरी चरण सिंह द्वारा दिए गए वैचारिक विकल्प को क्रियान्वित कर ही देश को इस अनिवार्य संकट से बचाया जा सकता है।

४२

अल्पसंख्यकों के सच्चे हमदर्द

रशीद मसूद*

उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले के अंतर्गत नूरपुर गाँव के एक साधारण किसान के परिवार में जन्मे चौधरी चरण सिंह देश के एक ऐसे राजनीतिज्ञ थे, जिन्होंने सदैव परिणाम की परवाह किए बिना निःसंकोच और निडर रहकर अपनी बात कही। मेरे विचार से वह स्वार्थ से परे रह कर उस बात को कहते थे जिसे उन्होंने ठीक समझा। कुछ लोग तो चौधरी साहब को बहुत अच्छा मानते थे और कुछ उन्हें बहुत बुरा। जो उन्हें अच्छा मानते थे, वे उनके अनुयायी ही हों, ऐसी बात भी नहीं। लेखक, शिक्षक बुद्धि जीवी, अर्थशास्त्री भी उनके अनुयायी हैं, उनके राजनीतिक विरोधी तथा कांग्रेस के लोग भी हैं। चौधरी साहब को बुरा मानने वालों में व उनके विरोधियों में एक तो वे हैं जिनका उनसे कभी स्वार्थ सिद्ध न हुआ, दूसरे वे हैं जो भ्रष्टाचार और अन्य धांधलियों में संलिप्त पाए गए, जिन्हें उनसे कभी संरक्षण न मिला।

चौधरी साहब के राजनीतिक चिंतन में महात्मा गाँधी के आदर्शों की प्रतिच्छाया स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। चौधरी साहब ने अपने जीवन में, महात्मा गाँधी में जो नैतिकता थी, उसको उतारने का काम किया। उसी नैतिकता के फलस्वरूप ही चौधरी साहब में "गाँधी – विचार" के दर्शन होते थे।

चौधरी चरण सिंह के गाँव और खेत–खलिहान से जुड़े होने की वजह ही थी कि उन्होंने ग्रामीण क्षेत्र में व्याप्त सामंतवाद को समाप्त करने का विचार किया। जमींदारी उन्मूलन में उनके इन्हीं विचारों की झलक मिलती थी, जिसे आजादी के बाद सफलता मिल सकी।

हमारे देश में वर्ग विशेष द्वारा सुनियोजित षडयंत्र के तहत ऐसी व्यवस्था कायम रखने का प्रयास किया गया, जिसमें उत्पादन से जुड़े

---

* रशीद मसूद (१९४७–२०२०), राजनीतिज्ञ, जनता पार्टी व लोक दल। राज्यसभा सांसद (१९८६–८९), १९९० में केंद्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्री। अध्यक्ष, कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीडा) (२०१३)।

बहुसंख्यकों को अलग–थलग रखा गया था। उन्हें शेष समाज, यानी उच्च समाज के कार्यों में दखलंदाजी देने का कोई हक़ नहीं था। चौधरी चरण सिंह ने उस व्यवस्था को, जिसके तहत आर्थिक सामाजिक स्तर से पिछड़े, गरीबों, मजदूरों और किसानों को उपेक्षित रखा गया था, तोड़ने और इन वर्गों के लोगों को संगठित करने का काम किया, ताकि उनका सामाजिक और आर्थिक विकास हो सके तथा वे देश की राजनीतिक व्यवस्था में हिस्सेदारी निभा सकें। असलियत में उनका राजनीतिक चिंतन देश के करोड़ों–करोड़ उपेक्षितों के उत्थान का चिंतन है।

विडंबना यह है कि उसी वर्ग विशेष द्वारा चौधरी साहब के बारे में उन्हीं लोगों के विरोधी होने का प्रचार किया जाता रहा, जिनके लिए वह जीवन भर लड़ते रहे। अक्सर उन पर आरोप लगाए जाते रहे हैं कि "वह हरिजन–विरोधी थे, मुसलमानों के दुश्मन थे, शहरों और बड़ी–बड़ी मशीनों के खिलाफ थे" लेकिन इन आरोपों में सच्चाई कहाँ है?

चौधरी साहब पर लगाए गए आरोप सरासर गलत हैं। असलियत यह है कि उन्होंने हरिजनों–मुस्लिमों को कभी पीछे नहीं रखा। उत्तर प्रदेश में एक हरिजन को गृहमंत्री बनाया, उत्तर प्रदेश व बिहार विधानसभा में हरिजन को उपाध्यक्ष बनाया। जहाँ तक मुसलमानों का सवाल है, केंद्र में उन्होंने अपनी सरकार में तीन कैबिनेट स्तर के मंत्री मुसलमान बनाए, जो अपने आप में एक रिकॉर्ड है और उत्तर प्रदेश कैबिनेट में मुसलमान मंत्रियों की संख्या चार थी। १९८० के लोकसभा चुनावों में मुसलमान लोकसभा सदस्य सबसे ज्यादा लोकदल से ही चुनकर आए। इसकी कोई दूसरी मिसाल भारत के संसदीय इतिहास में नहीं मिलेगी।

अपने मुख्यमंत्रित्व काल मैं चौधरी साहब ने उर्दू बहुभाषी इलाकों के लिए उर्दू भाषा में सरकारी गजट छपवाए जाने की शुरूआत की। उन्होंने १९७९ में पहली बार आदेश पारित किया कि पी.ए.सी. में मुसलमानों की भर्ती की जाए ताकि उनका भी प्रतिनिधित्व पी.ए.सी. में हो सके। चौधरी साहब के कहने से ही उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री बनारसीदास ने १९७९ में आठवीं कक्षा तक उर्दू शिक्षा लागू करने के आदेश दिए लेकिन सन् १९८० में इनकी सरकार ने आते ही इस आदेश को रद्द कर दिया था।

चौधरी साहब न तो शहरों के खिलाफ थे और न बड़ी मशीनों के। उनका मानना था कि जब तक गाँव खुशहाल नहीं होगा– देश खुशहाल नहीं होगा। गाँव के विकास को उन्होंने देश के विकास की दिशा में सर्वोपरि माना था। बड़ी मशीनों के संदर्भ में उनका कहना था कि 'जो वस्तु हाथ से बन सकती है, उसे बड़ी मशीनों से न बनाया जाए।' यदि

इसी बात से उन पर, बड़ी मशीनों के विरोधी होने का आरोप लगाया जाए तो यह कहाँ तक न्याय संगत है?

चौधरी साहब नारों की राजनीति में विश्वास नहीं करते थे। वह काम में विश्वास करने वाले आदमी थे। चौधरी चरण सिंह ने सदैव इस बात पर जोर दिया कि जहाँ तक संभव हो सके, जीवन सादगी से व्यतीत करना चाहिए। भ्रष्टाचार के वे कट्टर विरोधी रहे। उन्हें मौका नहीं मिला और मिला भी तो वह अल्पावधि के लिए, अन्यथा भ्रष्टाचार जैसी बीमारी का इस देश से अंत हो जाता।

चौधरी साहब की ईमानदारी किसी भी शंका से परे थी। उनका निजी जीवन निष्कलंक तथा एक खुली किताब है।

चौधरी साहब शुरू से ही किसान की बहबूदी के हिमायती रहे। वह किसान की समस्याओं को बखूबी जानते थे। उनका स्पष्ट अभिमत था कि देश के विकास की रीढ़ किसान है। नागपुर में संपन्न कांग्रेस महाधिवेशन में तत्कालीन प्रधानमंत्री और देश के एकछत्र नेता पंडित जवाहर लाल नेहरू के सहकारी कृषि संबंधी प्रस्ताव का चौधरी साहब द्वारा जर्बदस्त विरोध करने की यही वजह रही। इस संदर्भ में उनकी धारणा थी कि सहकारिता के माध्यम से संस्थाओं को प्रभुत्व देकर व्यक्ति के अभिक्रम और स्वातंत्र्य को कमजोर बनाने का काम किया जाएगा। जब उन्होंने यह समझ लिया कि गाँव और किसान की तरक्की की बाबत काम करने का कांग्रेस सरकार का सोच ही नहीं है तो उन्होंने कांग्रेस छोड़ दी और तब से आखिरी सांस तक वह किसानों, मजदूरों, गरीबों के लिए लगातार लड़ाई लड़ते रहे। यही सब कारण उन्हें "किसानों के रहनुमा" के दर्जे में लाकर खड़ा कर देते हैं।

चौधरी साहब स्पष्टवादी थे। उन्होंने सांप्रदायिकता के सवाल पर, देश की एकता और अखंडता के मुद्दे पर, दंगों के सवाल पर, हिन्दू–सिख–मुस्लिम किसी पर भी होने वाले जुल्म के सवाल पर अपनी बात साफ कही। सन् १९८० में जब संभल और मुरादाबाद के दंगे हुए, तो चौधरी साहब ने दंगे के दूसरे दिन ही १४ अगस्त, ८० को बागपत की सभा में इसका जोरदार विरोध किया। सांप्रदायिक विद्वेष के तहत पंजाब में हिंदुओं, पंजाब के बाहर मुसलमानों, दिल्ली में सिखों पर जो जुल्म ढाए गए, चौधरी साहब ने उनका खुला विरोध किया।

चौधरी चरण सिंह की गाँधीवादी अर्थनीति वास्तव में देश के दस्तकारों के महत्व को बढ़ाने, उनको उचित मजदूरी दिलाने, खेत–खलिहान से जुड़े लोगों के विकास और छोटे उद्योगों को बढ़ाने की नीति है इन सारी बातों को लोगों तक पहुँचाने की जिम्मेदारी हम सब की है। असलियत

तो यह है कि जब तक इन सवालों को जनता के सामने रखने का काम नहीं किया जाएगा, जिसमें हम आज तक पिछड़े रहे हैं, तब तक एक वर्ग विशेष द्वारा जो वास्तव में इन तबकों की बहबूदी नहीं चाहता, चौधरी साहब के बारे में हरिजन, मुस्लिम और शहर विरोधी होने का दुष्प्रचार किया जाता रहेगा।

४३
सामाजिक परिवर्तन के प्रवर्तक
रामविलास पासवान*

चौधरी चरण सिंह जी देश की राजनीति के ऐसे महापुरुष थे, जिनकी छत्रछाया में रह कर हम लोगों को सामाजिक–आर्थिक क्रांति के लिए संघर्ष करने और राजनीति करने का मौका मिला। दरअसल चौधरी साहब का विश्लेषण करना कोई आसान काम नहीं है। सच तो यह है कि चौधरी साहब के बारे में जो बातें कही जाती थीं, यानी उनके विरोध में जिस तरह का कुप्रचार किया जाता था और जब कोई व्यक्ति उनके समीप आकर उनके व्यवहार, उनका रहन–सहन, क्रिया–कलाप, सादगी देखता था, तो वह सहज ही विश्वास ही नहीं कर पाता था कि यह वही व्यक्ति है, जिसके बारे में इतने सुनिश्चित तरीके से कुप्रचार किया गया है। वह पाता था कि उन बातों का चौधरी साहब के जीवन से कोई सामंजस्य ही नहीं था।

डॉ. राम मनोहर लोहिया ने समाजवादी आंदोलनों में "संसोपा ने बांधी गांठ, पिछड़ा पावे सौ में साठ" का नारा दिया था। लेकिन सही मायने में देखा जाय तो यदि उस नारे को जमीन पर उतारने का किसी ने काम किया तो उस व्यक्ति का नाम था– चौधरी चरण सिंह। मैं पश्चिमी उत्तर प्रदेश के जाट भाईयों की तो नहीं जानता कि वह स्वयं को पिछड़ा मानते हैं या नहीं, लेकिन मैं इतना जरूर जानता हूँ कि लोहिया के बाद समूचे उत्तर भारत के पिछड़े लोगों ने अपने–अपने नेताओं का साथ छोड़ दिया और जिस व्यक्ति के साथ और जिसे अपना नेता माना, उस व्यक्ति का नाम चौधरी चरण सिंह ही था। इसका जीता–जागता सबूत यह है कि उस समय के लोकदल के, जिसका नेतृत्व चौधरी साहब करते थे, लोकसभा में ४२ सदस्य चुनकर आए थे, उनमें ९ हरिजन थे, ११ अल्पसंख्यक समुदाय के (मुस्लिम) थे और शेष पिछड़ी जातियों के तथा किसान तबके से थे। मेरा यह स्पष्ट मानना है कि वे तबके, जिनका समाज में कोई स्थान नहीं था, जिनकी आवाज नहीं थी,

---

* रामविलास पासवान (१९४६–२०२०), बिहार से दलित राजनीतिज्ञ। लोकसभा सदस्य (१९७७–२०१९) और राज्यसभा सांसद (२०१९–२०)। केंद्रीय रसायन और उर्वरक मंत्री (२००४–०९), खान मंत्री (२००१–०२), संचार और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्री (१९९९–२००१), रेलवे मंत्री (१९९६–९८), और श्रम और कल्याण मंत्री (१९८९–९०), उपभोक्ता मामले, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्री (२०१४–२०)।

राजनीति में हिस्सेदारी न के बराबर थी, उन तबकों के लोगों को चौधरी साहब ने समाज में जगह दिलाई। उन्हें जुबान दी और देश की राजनीति में हिस्सेदारी का एहसास दिला कर उन्हें एम.एल.ए., एम.पी. बनाया। मैं समझता हूँ कि देश के जो महान समाजवादी चिंतक भी रहे हैं, उनके आदर्शों को भी यदि किसी ने कर्म में उतारने का काम किया था, तो देश के उस महान सपूत का नाम ही आता है– चौधरी चरण सिंह।

चौधरी साहब कहते थे कि "जो जमीन को जोते–बोये, वह जमीन का मालिक होय।" इसको उन्होंने करके भी दिखा दिया। उत्तर प्रदेश में अपने राजस्व मंत्री काल में किए गए महत्वपूर्ण काम "भूमि सुधार" के तहत उन्होंने जमीन को जोतने वाले खेतिहर किसान को उसका मालिक बना दिया। यहाँ यह जान लेना जरूरी है कि भूमि सुधार कानून तो अन्य प्रदेशों में भी बने, लेकिन उसका सही मायने में यदि कहीं क्रियान्वयन हुआ, तो वह प्रदेश है उत्तर प्रदेश और यह महत्वपूर्ण ऐतिहासिक काम करने का श्रेय चौधरी साहब को ही है।

चौधरी साहब शुरू से ही दिल से जात–पात के घोर विरोधी थे। वह चाहते थे कि देश से जातिवाद का कोढ़ खत्म हो। वह मानते थे कि यह जातिवाद का रोग ही है, जिसने भेदभाव और छुआछूत को बढ़ाने का काम किया है। मुझे याद आता है कि १९८० से १९८४ के बीच जब हम, चाहे वह अल्पसंख्यक का सवाल हो, हरिजन का हो, पिछड़ों का हो, आदिवासी–गिरिजनों का सवाल हो, मंडल कमीशन का सवाल हो या किसान का मामला हो, इसके अलावा अन्य जन समस्याओं के लिए लोकसभा को झकझोरने का काम करते थे, तब हमें उस समय गर्व होता था जब बाद में चौधरी साहब हम लोगों की पीठ थपथपाते थे। उनके मन में गरीबों के प्रति कितना दर्द था, इस संदर्भ में एक बात मैं बताना चाहता हूँ– एक बार "स्टेट्समैन" अखबार में एक गरीब बच्चे का अधनंगा फोटो छपा। उसे देखकर वह रोने लगे और काफी देर तक रोते रहे। उन्होंने बाद में कहा कि "इस मुल्क के गरीब की यह हालत है। एक पत्थर तोड़ने वाली औरत के बच्चे के पास तन ढ़कने तक को कपड़े नहीं हैं और वह नंगे बदन रहने पर मजबूर है।" उन्होंने उस समय अपनी पार्टी लोकदल के महासचिव को बुलाकर कहा था कि– "इसी फोटो की फोटोस्टेट कॉपी करवा कर मुल्क के हर गाँव–गाँव में पहुँचावाओ, ताकि गाँव देहात में रहने वालों को यह महसूस हो सके कि आजादी के इतने साल के बाद भी इस मुल्क में गरीब किस हालत में जीने को मजबूर है। यह असली हिन्दुस्तान है।" सच तो यह है कि उनके मन में देश के सदियों से दबे–थके, गरीब, पिछड़े और कमजोर वर्ग के लोगों के लिए दर्द था और वह हर पल इनकी बहबूदी के लिए सोचते रहते थे।

४४

सामाजिक क्रांति के जनक

अजय सिंह*

राजनीतिक जीवन की शुरूआत से जीवन के अंतिम सोपान तक जिस व्यक्ति ने इस देश के दलितों और पिछड़ों के दर्द को जिया और उनके लिए संघर्ष किया, भारतीय राजनीति के उस शलाका पुरूष का नाम था– चौधरी चरण सिंह २३ दिसम्बर १९०२ को मेरठ कमिश्नरी की हापुड़ तहसील में, बाबूगढ़ छावनी के निकट, नूरपुर गाँव में चौधरी चरण सिंह का जन्म हुआ था। गाँव के परिवेश में पलते–बढ़ते हुए उन्होंने किसानों की समस्याओं और ग्राम्य जीवन की दुरूहताओं को बहुत करीब से देखा था, और देखा था उस शोषण को जिसके चलते देश का अन्नदाता खुद भूखा–नंगा रहने को विवश था। इन्हीं हालात ने उनके मन में एक संकल्प–बीज को रोपा, यह संकल्प था समाज के सबसे पिछड़े और दलित जन के अधिकारों की बहाली के लिए संघर्ष करने का। जीवनपर्यंत वह इसी लक्ष्य को समर्पित रहे।

चौधरी साहब से मेरा पारिवारिक संपर्क था। १९४८ में जिस समय मेरे पिता, कैप्टन भगवान सिंह बुलंदशहर जिले में जिलाधीश थे, चौधरी साहब उत्तर प्रदेश शासन में पार्लियामेंट्री सेकेटरी थे। जब भी चौधरी साहब बुलंदशहर आते, हमारा आतिथ्य अवश्य स्वीकार करते। चौधरी साहब ने उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलन के जरिए, जिसे क्रियान्वित करने पर पिताजी का और चौधरी साहब का पूर्णरूपेण मतैक्य था, जो क्रांतिकारी कार्य किया तथा इसका प्रदेश के पिछड़ों और भूमिहीनों के जीवन पर जो प्रभाव पड़ा था, उसके विषय में मुझे पिताजी से काफी कुछ सुनने और समझने को मिला।

जहाँ तक व्यक्तिगत संपर्क का सवाल है, तो यह अवसर मुझे १९७७ में मिला। मैं विदेशों में पढ़ाई पूरी कर वापस लौटा था और 'इंडिया

---

* अजय सिंह (१९५०–२०२०), आगरा, उत्तर प्रदेश से पत्रकार और राजनीतिज्ञ। आगरा से लोकसभा सांसद (१९८९), केंद्रीय रेल उप मंत्री। राजनीतिक जीवन से पहले सूर्या इंडिया, इंडिया टुडे और द हिंदुस्तान टाइम्स जैसे विभिन्न प्रकाशनों में पत्रकार और संपादक के रूप में काम किया। फिजी द्वीप, टोंगा, तुवालु और कुक द्वीप में भारत के उच्चायुक्त के रूप में प्रतिनिधित्व किया (२००५–०९)।

टुडे' पत्रिका में पत्रकार के तौर पर अपने करिअर की शुरूआत की थी। चौधरी साहब उन दिनों जनता शासन में गृहमंत्री थे। मैं 'इण्डिया टुडे' की ओर से उन्हें इंटरव्यू करने गया था। चौधरी साहब के बारे में जिस अनुशासन और सादगी की बात मैं सुनता आया था, उनसे मिलकर मुझे वैसी ही अनुभूति हुई। कभी–कभी वह पत्रिका की 'लाइन' से भले नाराज हो जाते थे किंतु व्यक्तिगत तौर पर मेरे प्रति उनका स्नेह सदैव बढ़ता ही रहा।

जिस समय चौधरी साहब भारत सरकार में गृहमंत्री एवं प्रधानमंत्री थे, उन्होंने मुझे अपने साथ काम करने को बुलाया किंतु मैंने उस समय विनम्रतापूर्वक अपनी असमर्थता व्यक्त कर दी, क्योंकि वे उस समय सत्ता में थे और उनके साथ काम करने वालों की कोई कमी नहीं थी। १९८० में, जब विधानसभा चुनाव हो रहे थे तथा चौधरी साहब की पार्टी सत्ता से बाहर आ चुकी थी, उन्होंने मुझे फिर बुलाया और अपने साथ जुड़ जाने को कहा। इस बार मैं ना न कर सका और 'हिन्दुस्तान टाइम्स' ग्रुप की डिप्टी एडीटरी छोड़कर उनके संपर्क में आ गया। तब से अंतिम समय तक उनका सानिध्य मुझे प्राप्त हुआ। इस दौरान चौधरी साहब ने मुझे जितना स्नेह दिया, उतना ही विश्वास भी।

१९८० से ८५ तक ऐसे बहुत से अवसर आए, जब मुझे वस्तुस्थिति के प्रति उनके नजरिए को, अवसर विशेष पर उनकी निर्णय लेने की क्षमता और दिशा दृष्टि को, बहुत करीब से समझने का मौका मिला। उस अनुभव के आधार पर यों तो चौधरी साहब के व्यक्तित्व और कृतित्व पर ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं किंतु चौधरी साहब के साथ बीते वर्षों के दौरान, अपने अनुभवों के आधार पर, यहाँ मैं उन दो बातों का उल्लेख करूँगा, जो उन्हें अन्य भारतीय राजनेताओं से अलग करती हैं।

पहली बात तो यह है कि भारतीय राजनीति में हम बड़े–बड़े नेताओं के जैसे–जैसे करीब पहुँचते जाते हैं, वैसे–वैसे उनका कद छोटा पाते हैं किंतु चौधरी साहब के साथ इसका उल्टा था। उनको जितना करीब से कोई देखता, उनकी सरलता, सादगी, अनुशासन, विनम्रता तथा ईमानदारी के नये–नये पृष्ठ उसके सामने खुलते जाते और इस तरह से उनका कद करीब आने पर और ऊँचा नजर आता था।

दूसरी बात–चौधरी साहब के सहयोगी के रूप में काम करते हुए मुझे बहुत से राजनेताओं के संपर्क में आने का तथा उन्हें करीब से बरतने का मौका मिला। मैंने चौधरी चरण सिंह के अलावा श्री मधु लिमये को छोड़कर सामान्यतः अन्य राजनेताओं की गहन अध्ययन में अभिरूचि नहीं पाई। चौधरी साहब के अंदर पढ़ने की एक भूख थी, जो जितनी मिटती

थी, उतनी ही बढ़ती थी। यद्यपि निहित स्वार्थी तत्व उनकी छवि बिगाड़ने के प्रयास में लगे ही रहते थे किंतु चौधरी साहब इस तरह की ओछी आलोचनाओं से अप्रभावित रहते थे।

चौधरी साहब जब किसी बात को सिद्धांत रूप में अपना लेते थे, तो उसका पहले गहन अध्ययन और मनन करते थे। उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार विधेयक उनके गहन चिंतन और अध्यवसाय का परिणाम था और यही कारण था कि उक्त विधेयक विधानसभा में मूलरूप से पारित हो सका तथा उसकी एक भी धारा को न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकी।

चौधरी साहब की यह विशेषता थी कि वह अपने मंत्रिमंडलीय सहयोगियों को उनके विभागों से संबंधित विषयों पर लम्बे–लम्बे नोट्स भेजा करते थे। गहन चिंतन पर आधारित ये नोट्स बेहद महत्वपूर्ण होते थे तथा नीति निदेशक सिद्धांतों के रूप में इन पर अमल किया जा सकता था।

पश्चिमी जीवन शैली की भौंडी नकल करने तथा अंग्रेजी की अधकचरी जानकारी से स्वयं को महिमामंडित समझने वाले, ऐसे लोगों के लिए जो चौधरी चरण सिंह को गाँव–गँवई का प्रतीक मानते रहे हैं, यहाँ एक बात का उल्लेख करना गैर–मुनासिब न होगा। चौधरी साहब का जितना अच्छा अधिकार हिन्दी भाषा पर था, वैसा ही अंग्रेजी भाषा पर भी था।

'लैण्ड रिफार्म्स इन यू.पी. एंड दि कुलक्स' जैसी अकादमिक पुस्तक तथा 'इकोनॉमिक नाइटमेअर ऑफ इण्डियाः इट्स कॉजेज एंड क्योर' जैसी विशद् पुस्तक, जिसमें उनके आर्थिक दर्शन का निचोड़ है, भी चौधरी साहब ने अंग्रेजी में लिखी थीं। इस सबके बाबजूद चौधरी साहब की हिंदी के प्रति अनन्य निष्ठा थी तथा सार्वजनिक मंचों से वे कहा करते थे कि राष्ट्र को एक सूत्र में पिरोने का काम, भाषा के स्तर पर, हिंदी ही कर सकती है।

अध्ययन और लेखन से चौधरी साहब जीवन के अंतिम सोपान तक जुड़े रहे। जीवन के अंतिम दिनों में ही उन्होंने 'लैण्ड रिफॉर्म्स इन यू. पी. एंड दि कुलक्स' पुस्तक लिखी, जिसमें उत्तर प्रदेश के भूमि सुधारों तथा जमींदारी उन्मूलन का विशद विवेचन किया है। १९८५ में अस्वस्थ होने से पूर्व वे 'जनता पार्टी कैसे बनी और किन विसंगतियों के चलते टूटी' इस विषय पर एक पुस्तक लिख रहे थे, साथ ही आरक्षण पर भी एक पुस्तक लिख रहे थे।

चौधरी साहब अस्वस्थ होने से पूर्व अपनी फाइलों को भी पुर्नव्यवस्थित कर रहे थे। इन सब कार्यों में, मैं उनकी सहायता कर रहा था। इस

कार्य के परिणामस्वरूप कोई नई कृति हमारे सामने आती किंतु दुर्भाग्य से उनकी अस्वस्थता और अंततः अवसान के कारण इस महत्वपूर्ण कृति से हम वंचित रह गए।

यों तो चौधरी साहब ने उत्तर प्रदेश में सत्ता में रहते हुए गरीबों और पिछड़ों के लिए बहुत कुछ किया। किंतु इस दिशा में उनका जो अप्रतिम योगदान था वह था इस वर्ग में राजनीतिक चेतना जागृत करना। उन्होंने समाज के दबे–थके वर्गों के मन में, सत्ता में भागीदारी की भावना पैदा की। यह चौधरी साहब ही थे जिन्होंने उत्तर प्रदेश में अपने मुख्यमंत्रित्व काल में पिछड़े वर्ग के चार लोगों को कैबिनेट स्तर का मंत्री बनाया था।

आज देश में कोई भी राजनीतिक दल किसानों और पिछड़ों की अनदेखी नहीं कर सकता। इन हालात को पैदा करने तथा सत्ता के समीकरण में इन वर्गों को एक महत्वपूर्ण कारक की हैसियत प्रदान करने में चौधरी साहब की महत्वपूर्ण भूमिका थी।

आज चौधरी चरण सिंह हम लोगों के बीच नहीं हैं किंतु उन्होंने कर्म और चिंतन के स्तर पर जिस सामाजिक क्रांति का सूत्रपात किया, उस चिंतन को, उन विचारों को, इस देश के दलितों–पिछड़ों और किसानों–मजदूरों तक पहुँचाना हमारा अभीष्ट है।

४५
अभिजात्यों के लिए वह उपेक्षित ही रहे
डॉ. प्रेम सिंह*

दिसम्बर की २३ तारीख को चौधरी चरण सिंह का जन्म दिन होता है। लेकिन भारतियों के लिए यह कोई महत्वपूर्ण या याद रखने लायक घटना नहीं मानी जाती। उन भारतीयों के लिए भी नहीं जिनके हितों और हकों के लिए वे अपने पूरे राजनीतिक जीवन में सक्रिय रहे। बड़े पैमाने पर नेहरू की जन्म शताब्दी मनायी जा चुकी है। यह तथ्य सर्वविदित है कि नेहरू के नाम पर इस देश में इस सरकार से कितना भी धन और सुविधाएँ लूटी जा सकती हैं। ऐसा नहीं कि इस सारे खर्चीले आयोजन के पीछे नेहरू की भूमिका और विचारों के मूल्यांकन और विश्लेषण का मंतव्य निहित हो। यदि ऐसा होता तो अपने पूर्ववर्ती सार्वजनिक व्यक्तियों की कमियों और चूकों से भी हम अपने वर्तमान की समस्याओं से निपटने और भविष्य का पथ प्रशस्त करने में मदद पाते, लेकिन हमारे यहाँ का आम (और विशिष्ट भी) रूझान और मिजाज ऐसा है कि केवल प्रभुत्वशाली धारा को ही धारा माना जाता है और साथ ही उसे कमियों और चूकों से रहित, सही और वास्तविक धारा भी माना जाता है। ऐसे माहौल में विश्लेषण और मूल्यांकन का मायना होता है– प्रभुत्वशाली धारा के व्यक्ति के प्रत्येक निर्णय और कार्यकलाप को उपलब्धि बनाकर प्रस्तुत करना और लोगों की श्रद्धा को, अविवेकी बनाते हुए, उसके पक्ष में झुकाना। प्रभुत्वशाली धारा से पोषित होने वाले वर्ग की सुविधाओं का यही रास्ता है। इसलिए वर्ग हित में ही वे अपना संगठन और जबर्दस्त आग्रह इस रास्ते पर बनाए रखते हैं। इस प्रभुत्वशाली धारा को चुनौती देने वाले व्यक्ति को ब्राह्मण समाज में अछूत अथवा बुद्धिजीवी समाज में विदूषक की तरह दुत्कारा जाता है। संगठित षडयंत्र के तहत उसकी चुनौती को ही निरर्थक, यहाँ तक कि हास्यास्पद करार दिया जाता है।

---

* डॉ. प्रेम सिंह, प्रतिष्ठित शिक्षक हैं। उन्हें साहित्यिक आलोचना में उत्कृष्ट योगदान के लिए मान्यता मिली है, विशेष रूप से उनकी कृति "क्रांति का विचार और हिंदी उपन्यास" के लिए उन्हें हिंदी अकादमी, दिल्ली से सर्वश्रेष्ठ आलोचना का पुरस्कार मिला।

चौधरी चरण सिंह भारतीय सार्वजनिक जीवन में प्रभुत्वशाली धारा को चुनौती देनेवाली हस्ती थे। इसलिए उन्होंने नेहरू के उपहास वह तो जाट बुद्धि है, वह जो १८वीं शताब्दी की बात करता है, और शहरी बुद्धिजीवियों तथा प्रेस की नुक्ताचीनी तथा उपेक्षा का शिकार होना पड़ा। चौधरी चरण सिंह निष्ठाओं में अडिग और प्रखर अहम् के स्वामी थे। इसलिए तमाम विरोधों के बाबजूद वे भारतीय राजनीति में एक दुर्निवार शक्ति बने रहे और अंततः इस देश के अल्पकालिक प्रधानमंत्री बने। आमतौर पर यह माना जाता है कि उनका ६ महीने की अल्प अवधि के लिए प्रधानमंत्री बनना और उस दौरान एक बार भी संसद का सामना न करना उनके प्रधानमंत्री होने के महत्व को खारिज कर देता है। लेकिन सच्चाई इससे ठीक विपरीत है। चौधरी चरण सिंह का अल्पकालिक प्रधानमंत्री बनना ही महत्व की बात है, क्योंकि इसी बिंदु से भारतीय राजनीति के चलन और उसमें उनकी भूमिका को समझा जा सकता है।

यह वास्तविकता है कि चौधरी चरण सिंह का अभी तक समुचित मूल्यांकन नहीं हुआ है। इस दिशा में कोई गंभीर प्रयास भी नहीं होते दिखते। संभ्रात नौकरी–पेशा शहरी और अघाये हुए व्यापारी इस बात से ही नाक–भौं सिकोड़ सकते हैं कि उस ग्रामीण विदूषक का मूल्यांकन करने की क्या आवश्यकता है। उसे आता ही क्या था? न शक्ल, न अक्ल। देहात में भी गरीब, अमीर सभी तरह के लोग मिल जाएंगे जो एक सिरे से चौधरी चरण सिंह को नकार देंगे। विशेषकर ब्राह्मण, ठाकुर, गूजर और हरिजन भी। प्रेस और सरकार ने उन्हें तोते की तरह रटाया है कि वह तो जाटों का नेता है, जातिवादी है, उसे किसानों और गरीबों से कुछ नहीं लेना–देना है। वह तो जाटों का शासन चाहता है। (यहाँ इस सच्चाई की ओर ध्यान दिलाना गैर–मुनासिब नहीं होगा कि चौधरी चरण सिंह के मंत्रिमंडल में एक भी जाट केबिनेट स्तर का मंत्री नहीं था)। अपने को किंचित गंभीर सोच का मानने वालों का तर्क होता था कि वह तो एक क्षेत्रीय नेता है। राष्ट्रीय स्तर पर उसकी कोई पहचान नहीं है। ऐसा व्यक्ति प्रधानमंत्री बनने की बात भी सोचे तो इससे बड़ी हिमाकत क्या हो सकती है। थोड़ा और बारीक सोचने वालों जैसे कि रोमेश थापर का तर्क होता था कि राष्ट्रीय मूल्यांकन के आधार पर चौधरी चरण सिंह बहुत ज्यादा विश्वसनीय नहीं हैं। आर्थिक, राजनीतिक, मीमांसा के आधार पर वे अत्यंत अस्थिर स्वभाव के असंतुलित सामान्यीकरण पर विश्वास करने वाले व्यक्ति हैं। इंदिरा गाँधी और उनके चारण उन्हें हरिजन–विरोधी, खेतिहर मजदूर–विरोधी और गरीब किसान विरोधी बताकर कुलक की 'गाली' देते रहे। कुछ मार्क्सवादी विचारकों– पॉल ब्रास, हो पिंग, बायर्स

ने अलबत्ता उनका गंभीर मूल्यांकन करने की कोशिश की है। समाजवादी विचारक और राजनेता मधु लिमये का मानना है "जमींदारी उन्मूलन का जो कानून था, जो विधेयक था, वह खुद चौधरी चरण सिंह ने बनाया था। उनके मन में चूंकि दर्द था, पीड़ा थी किसानों के बारे में और खास करके गरीब किसानों के प्रति, इसलिए काश्त करनेवाला कोई भी क्यों न हो, उसके अधिकारों को चौधरी चरण सिंह ने इन कानूनों में सुरक्षित रखा।"

मैंने ऊपर कहा कि यह महत्वपूर्ण है कि चौधरी चरण सिंह भारत के अल्पकालिक प्रधानमंत्री बने। उसी तरह क्षेत्रीय स्तर पर उनकी पहचान भी महत्वपूर्ण है। क्योंकि अंततः उनके रहते भारतीय राजनीति में किसानों और किसानियत का जोर हमेशा बना रहा। आजाद भारत की राजनीतिक अर्थनीति के साथ उनका जीवन महत्वपूर्ण रूप से जुड़ा हुआ था। उनका विश्लेषण और मूल्यांकन इसलिए जरूरी है कि उन्होंने १९४५ से १९८५ तक पर्याप्त और ठोस लेखन कार्य किया। दरअसल चौधरी चरण सिंह के लेखन से अपरिचय के कारण ही शहरी बुद्धिजीवी उन्हें अस्थिर और असंतुलित मानते रहे। चौधरी चरण सिंह एक बुद्धिजीवी भी थे, इस सच्चाई को हमेशा झुठलाने की कोशिश होती रही है। बायर्स जब उन पर काम करने भारत आए और उन्होंने यहाँ के शहरी–बुद्धिजीवियों से उनकी पुस्तक "इकोनॉमिक नाइटमेयर ऑफ इंडिया" का ज़िक्र किया तो उन्हें जवाब मिला कि यह पुस्तक चौधरी चरण सिंह ने खुद नहीं लिखी होगी, किसी अन्य से लिखवाई होगी। पॉल ब्रास, जिसने चौधरी चरण सिंह को सहानुभूति पूर्वक समझने का प्रयास किया है, ने १९६५ में कहा "राजनीति में चौधरी चरण सिंह सटीक रूप से बुद्धिजीवी नहीं है। परंतु वे बारीक बुद्धि वाले सुपठित व्यक्ति हैं और अपनी बौद्धिकता को उन्होंने यू.पी. की कृषि मूलक समस्याओं के अनवरत अध्ययन में लगाया है।" लेकिन वह वास्तविक अर्थो में एक महत्व के बुद्धिजीवी थे। उन्होने अपने लेखन के जरिये विश्लेषण और समाधान का सशक्त मेल प्रस्तुत किया। वे ऐसी खासियत से युक्त थे जिसके आधार पर वे राजनीतिक कर्म के साथ बौद्धिकता का समन्वय करके विचारों का सहज सम्प्रेषण कर सकते थे। संगत और व्यापक विचारों के आधार पर उन्होंने ग्रामीण भारत की प्रकृति को दर्शात हुए उस रास्ते को चौड़ा किया जिस पर उनके अनुसार ग्रामीण भारत को अग्रसर होना चाहिए। वास्तविकता यह है कि ४० सालों में फैले उनके तर्कों की एकतानता और संगति अद्‌भुत है। वस्तुतः वे आजीवन बड़े उद्योगों और व्यापारियों की प्रभुत्वशाली धारा, जिसके पुरोधा नेहरू थे, को चुनौती देने में लगे रहे।

अपने आरंभिक राजनीतिक जीवन से लेकर अंत तक वे कृषि सुधारों

और किसानों की समस्याओं के लिए लड़ते रहे। इंदिरा गाँधी के आने से भारतीय राजनीति में लफ्फाजी का दौर शुरू हुआ, लेकिन चौधरी चरण सिंह की सोच और आचरण की एकरूपता बेमिसाल थी। आश्चर्य है कि उनके पीछे इतने लोग थे लेकिन उनके ईमान ने उन लोगों को कभी भी बरगलाना गवारा नहीं किया। मुख्यतः उनकी नीतियाँ भूमि सुधारों और देश की अर्थव्यवस्था के पक्ष को लेकर थीं। वे कभी भी अपनी इन नीतियों में द्वैधग्रस्त नहीं रहे। मधु लिमये ने जनता पार्टी के टूटने के कारणों में एक कारण यह भी गिनाया है कि मोरारजी देसाई व्यापारियों के हित साधना चाहते थे और चौधरी चरण सिंह किसानोन्मुखी अर्थव्यवस्था पर बल दे रहे थे। इससे दोनों के बीच तनाव पैदा हुआ। १९८० के आम चुनावों में भी उनकी घोषणा स्पष्ट थी कि यदि उनकी सरकार बनती है तो उद्योगपतियों को नुकसान उठाना लाजिमी है।

फरवरी १९३७ को चौधरी चरण सिंह को यूनाइटेड प्रोविंसेज की विधानसभा के लिए मेरठ जिले के छपरौली चुनाव क्षेत्र से चुना गया। किसानों के सक्रिय प्रतिनिधि के रूप में उनका जीवन इसी बिंदु से शुरू हुआ। तब से लेकर १९७७ तक वे उत्तर प्रदेश विधानसभा के सदस्य बने रहे। १९५१ से १९६७ तक (१९५९–६० की अल्प अवधि को छोड़कर) वे राज्य मंत्रिमंडल के महत्वपूर्ण सदस्य बने रहे। पहली अप्रैल १९६७ को उन्होंने १७ साथियों के साथ कांग्रेस छोड़ दी। ३ अप्रैल १९६७ के दिन उन्होंने यू.पी. के मुख्यमंत्री पद की शपथ ग्रहण की और १९६८ तक पद पर बने रहे। १९६८ में बी.के.डी. का गठन किया, जो १९६९ के चुनावों में ९८ सीटें जीत कर प्रमुख विरोधी पार्टी के रूप में उभरी। १९७० में वे दूसरी बार संयुक्त सरकार के मुख्यमंत्री बने। उसके बाद १९७७ तक उत्तर प्रदेश विधानसभा में विरोधी दल के नेता बने रहे। २९ अगस्त १९७४ को भारतीय लोकदल का गठन किया जिसमें बी.के.डी., स्वतंत्र पार्टी के प्रमुख हिस्से, संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी, उत्कल कांग्रेस, राष्ट्रीय लोकतांत्रिक दल, किसान मजदूर पार्टी और पंजाबी खेती–बाड़ी जमींदारी यूनियन शामिल हुए। भालोद का १९७७ में जनता पार्टी में विलय हुआ और उसी वर्ष वे छठी लोकसभा के लिए निर्वाचित हुए। मार्च १९७७ से जून १९७८ तक जनता सरकार में गृहमंत्री रहे। जनवरी १९७९ से जुलाई १९७९ तक वित्त मंत्री। उनके ७७वें जन्म दिन, २३ दिसम्बर १९७८ को दिल्ली में लगभग १० लाख किसानों की रैली हुई। राजनीतिक लिहाज से यह एक महत्वपूर्ण घटना थी। क्योंकि इसके माध्यम से खाते–पीते किसानों ने अपना वर्चस्व प्रदर्शित किया और राष्ट्रीय स्तर पर चौधरी चरण सिंह की विचारधारा को अभिव्यक्ति का अवसर प्राप्त हुआ। १९७९ में जनता पार्टी का विभाजन

हुआ। उसी साल जुलाई में कांग्रेस की सहायता से वे प्रधानमंत्री बने।

चौधरी चरण सिंह का यह लंबा सक्रिय राजनीतिक जीवन सहज सत्ता की भूख से परिचालित नहीं था। सत्ता वे चाहते थे, लेकिन भोग के लिए नहीं बल्कि गलत लीक पर जा पड़ी भारत की राजनीतिक अर्थ–व्यवस्था को सही रास्ते पर लाने के लिए। वे एक दृष्टि संपन्न राजनीतिज्ञ थे। वह हर हालत और हर हैसियत में कृषि उन्मुख अर्थ–व्यवस्था लागू करने की कोशिश करते रहे। उनके समस्त वैधानिक प्रयासों का जायजा लें तो यह बात स्पष्ट होती है। उनका पहला वैधानिक कार्य किसानों के पक्ष में व्यापारियों के प्रति लक्षित था। ३१ मार्च और १ अप्रैल १९३८ को उन्होंने दैनिक 'हिन्दुस्तान टाइम्स' में "एग्रीकल्चरल मार्केटिंग" (कृषि विपणन) पर लेख लिखा। उसी साल बाद में उन्होंने प्राइवेट मेम्बर की हैसियत से यू.पी. विधानसभा में "एग्रीकल्चरल प्रोड्यूस मार्केट्स बिल" पेश किया, जिसके तहत व्यापारी की खूंखार प्रवृत्ति के खिलाफ उत्पादक के हितों की रक्षा का विधान था। उनका यह आरंभिक वैधानिक प्रयास सफल नहीं रहा। यू.पी. में ऐसा बिल १९६४ में जाकर पास हुआ। इस बाबत उनका कथन है कि १९३८ और १९६४ के बीच किए गए उनके प्रयासों को कांग्रेस और सरकार के उच्च स्थानों पर बैठे निहित स्वार्थी तत्वों ने सफल नहीं होने दिया। यह सही है। व्यापारी आज तक शक्तिशाली ढंग से संगठित है और प्रभावी तरीके से उनका प्रतिनिधित्व हुआ है। १९३९ में उन्होंने महाजन विरोधी ऋण मुक्ति अधिनियम तैयार करके पेश किया। इस बार उन्हें ख्याति भी मिली और सफलता भी। यह चौधरी चरण सिंह की दृढ़ इच्छा शक्ति का ही परिचायक है कि उन्होंने उत्तर प्रदेश से जमींदारी प्रथा का खात्मा कराया और अन्य कृषि सुधारों को लागू कराया। इस विषय में अर्थशास्त्री डब्ल्यू. ए. लेडजिन्स्की ने १९६३ में योजना आयोग को दी गई अपनी रिपोर्ट में लिखा था "उत्तर प्रदेश को छोड़कर देश के अन्य किसी भी भाग में जमींदारी प्रथा समाप्त नहीं हुई है और किसानों को उनकी काश्त की जा रही जमीनों के मालिकाना हुकूक नहीं दिए गए हैं।.........केवल उत्तर प्रदेश में एक सुविचारित और व्यापक कानून बना है और कारगर ढंग से लागू किया गया है ...... भारत में बहुत से अच्छे कृषि सुधार कानून बेजान ही रहे, लेकिन उत्तर प्रदेश में यह लागू भी हुए और इनकी महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ भी रहीं। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि करने की इच्छा हो तो यह काम किया जा सकता है।" यह रिपोर्ट राष्ट्रीय नेता का पट्टा पहनने वाले नेताओं की वास्तविकता का अच्छा खुलासा करती है। १९५३ में उन्होंने टुकड़ों में बँटे खेतों को एक जगह करने के लिए चकबंदी की व्यवस्था की। यू.पी. में प्रस्तावित भूमि कर लगान का उन्होंने डटकर विरोध किया जिसकी आवाज

केंद्रीय सरकार और योजना आयोग तक पहुँची। वे किसानों से अनाज वसूली के भी विरोधी थे। इस मुद्दे पर उन्होंने केंद्रीय सरकार की नीति को पूर्णतः न मानकर किंतु दबाव के तहत बीच का रास्ता अपनाया था। सामूहिक खेती के मुद्दे पर नेहरू के साथ उनका विवाद जग जाहिर है। भूस्वामित्व और खेतों पर किसानों द्वारा किए जाने वाले श्रम को वे उनकी स्वतंत्रता और सृजनशीलता से जोड़कर देखते थे। सामूहिक खेती के विरोध में प्रस्तुत उनके तर्क भारतीय संदर्भ में विलक्षण ताजगी और प्रभाव लिए थे। जनता पार्टी की सरकार बनने पर आर्थिक नीति तय करने वाली समिति के चौधरी चरण सिंह अध्यक्ष थे। उन्होंने कृषि क्षेत्र पर अधिक पूँजी लगाने के लिए समिति को तैयार किया। १९७९ में वित्त मंत्री के नाते उन्होंने अपना बजट प्रस्तुत किया, जिसे याद कर शहरी बुद्धिजीवयों का जायका आज भी कड़वा हो जाता है। लेकिन पिंग के अनुसार उस बजट में "जनता की सांस और धरती की सुगंध व्याप्त थी।" मधु लिमये लिखते हैं "चौधरी चरण सिंह ने वित्तमंत्री के नाते जो बजट पेश किया था, उसमें उन्होंने एक झटके में जनता पार्टी की आर्थिक नीति के इस मुद्दे को लागू किया।" जाहिर है चौधरी चरण सिंह जनता पार्टी में अपनी घटक पार्टी के सर्वाधिक सांसद होने के बावजूद महज पद प्राप्त करने के लिए नहीं सक्रिय थे, जैसा कि बिना सोचे–समझे उन पर आरोप लगा दिया जाता है। वे देश की अर्थव्यवस्था को किसानों के हित में मोड़ना चाहते थे। १९३७ से लेकर अंत तक, उनके इस प्रयास में कभी भी शिथिलता देखने को नहीं मिली। उन्होंने सार्वजनिक रूप से सदैव यह इजहार किया कि वे गाँधी को अपना पथ–प्रदर्शक मानते हैं। उनकी पुस्तक "भारत की आर्थिक नीति का उप–शीर्षक है, "गाँधीवादी रूपरेखा" जाहिर है कि गाँधी जी के ट्रस्टीशिप के सिद्धांत ने उन्हें परेशान किया होगा। उन्होंने १९४२ में गाँधी के साथ लुई फिशर के साक्षात्कार को उद्धृत किया और निष्कर्ष निकाला। "उनके सिद्धांत के अनुसार ट्रस्टी लोगों ने गलत व्यवहार किया है। अतः उन्हें हटा देना चाहिए।" गाँधी का नाम, अपने परिवार को देश की सत्ता संभालने वाला सुस्थापित वंश बनाने के लिए इस्तेमाल करने वाले नेहरू, इंदिरा गाँधी और राजीव गाँधी से अधिक स्पष्ट पहचान गाँधी को लेकर चौधरी चरण सिंह की थी।

दरअसल शहरी बुद्धिजीवी चौधरी चरण सिंह को समझ नहीं पाए कि उन्हें किस रूप में देखा जाए। राष्ट्रीय मंच पर उभरते हुए वे किसानों की अपार संख्या के साथ शहरी भारत को आकांत कर रहे थे। इस शहरी भारत की सोच और आचरण, रीतियाँ भारत की ग्रामीण सभ्यता से संवाद करना नहीं चाहतीं। इसे अपने ही देसीपन से परहेज है। इसी परहेज ने चौधरी चरण सिंह को उपेक्षित बनाए रखा।

४६
सामाजिक उत्थान के लिए समर्पित व्यक्तित्व
राम नरेश यादव*

आज ४७ वर्ष की स्वाधीनता के पश्चात् जब यह प्रश्न उठता है कि देश में राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के बाद कौन सा नेता था, जिसने अपने जीवन में किसानों की आवाज को बुलंद किया, ग्रामीण भारत के उत्थान की बात की, खेतिहर मजदूरों तथा श्रमिकों के शोषण एवं उत्पीड़न की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया, देश के दारिद्र का चित्रण किया, श्रम को महत्व देकर भारत के विकास का पथ प्रशस्त किया, अशिक्षित तथा अंधविश्वास पर जिंदा रहने वाले करोड़ों दबे–थके लोगों को सम्मान के साथ जिंदा रहने का भाव पैदा कर उन्हें राजनीति से जोड़ने का काम किया, हस्त–शिल्प, कुटीर उद्योग एवं कृषि पर आधारित उद्योगों के विकास को गाँवों के विकास से जोड़ कर देश को नई दिशा देने का काम किया एवं आजीवन मूल्य आधारित राजनीति की, तो एक ही उत्तर मिलता है– वह थे चौधरी चरण सिंह।

किसानों के लिए गौरव की बात है कि एक साधारण किसान परिवार में जन्म लेकर अपने परिश्रम, लगन, तपस्या, निष्ठा तथा सिद्धांतों के प्रति दृढ़ आस्था के बल पर वह गाँव की झोपड़ी से चलकर दिल्ली की सर्वोच्च सत्ता तक पहुँचे थे।

वकालत के पेशे में आने के साथ ही चौधरी साहब ने राजनीतिक जीवन का श्रीगणेश किया। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के नेतृत्व में स्वाधीनता आंदोलन में भाग लिया। अनेक बार जेल जाकर, एक कर्मठ स्वाधीनता सेनानी के रूप में राष्ट्र की दासता की बेड़ियाँ तोड़ने में योगदान दिया था। वह युग था मातृभूमि की बलि वेदी पर अपने को न्यौछावर करने का। उसमें चौधरी चरण सिंह एक सच्चे सत्याग्रही तथा आंदोलनकारी के रूप में खरे उतरे। वह भारत माता के एक महान सपूत और सच्चे स्वाधीनता सेनानी थे। मेरठ तो सन् १८५७ के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की

---

* राम नरेश यादव (१९२८–२०१६), राजनीतिज्ञ। मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश (१९७७–१९७९), उपमुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश (१९७९–१९८०)। उपनेता, राज्यसभा (१९८९)। राज्यपाल, मध्य प्रदेश (२०११–१६)।

क्रांति का अगुआ रहा है। यहाँ से स्वतंत्रता की जो चिंगारी फूटी थी, वह कभी दबी नहीं। आजादी की उस चिंगारी को बढ़ाने का काम मेरठ के इस सपूत न भी किया।

स्वाधीन भारत की रचना एवं निर्माण के लिए उनका एक स्वप्न था, जो महात्मा गाँधी के आदर्शों से प्रेरित था। साध्य एवं साधन की पवित्रता तथा सादा जीवन एवं उच्च विचार जैसे मूल मंत्र को उन्होंने अपने जीवन में उतारा था।

उन्होंने पार्लियामेन्टरी सेक्रेट्री, मंत्री, मुख्यमंत्री तथा भारत सरकार के वित्तमंत्री, गृहमंत्री, उप–प्रधानमंत्री से लेकर प्रधानमंत्री के पद तक को सुशोभित करते हुए अपनी योग्यता का परिचय दिया। उनकी विशेषता यह थी कि उन्होंने अपनी राजनीति को कुलषित नहीं होने दिया, जो अपने में एक महत्वपूर्ण बात है तथा राजनीति करने वाले युवकों के लिए अनुकरणीय है। उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलन कानून बनाकर उन्होंने भूमिहीन किसानों के लिए जो काम किया, वह उनका ऐतिहासिक कार्य है, क्योंकि आज भी कुछ प्रदेशों में जमींदारी की परंपरा कायम है। पटवारियों, जो राजस्व अभिलेख का कार्य करते थे एवं जिनमें परंपरागत तौर पर एक ही समुदाय के लोग चले आ रहे थे, द्वारा प्रदेश व्यापी हड़ताल किए जाने पर उन्होंने उस पद को ही समाप्त कर दिया एवं उनका नामकरण लेखपाल कर दिया। इस निर्णय से पूरे प्रदेश में कई हजार नियुक्तियां हुई जिनमें हर वर्ग के लोगों को स्थान मिला। यह श्रेय चौधरी साहब को ही जाता है।

छठे दशक के उत्तरार्द्ध में तत्कालीन परिस्थितियों का आंकलन करते हुए उन्होंने कांग्रेस से अलग होकर भारतीय क्रांति दल का गठन किया एवं संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी, कम्युनिस्ट पार्टी, जनसंघ की मिली–जुली सरकार का प्रदेश में नेतृत्व किया। परंतु वह संविद सरकार कुछ ही महीनों में गिर गई।

चौधरी साहब में दल चलाने की क्षमता थी, विश्वास था, इसलिए अपने आत्मविश्वास के बल पर किसानों, पिछड़ों तथा दलितों में प्रिय रहे एवं लगभग ५० वर्षों से ऊपर राजनीति में छाये रहे।

आपात स्थिति में वह नजरबन्द रहे। तत्पश्चात् जनता पार्टी के गठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। १९७७ में हुए चुनाव के परिणाम स्वरूप केंद्र में जनता पार्टी की सरकार बनी, उसमें वह गृहमंत्री एवं उप–प्रधानमंत्री बने। सरकार गिरी और जनता पार्टी में विघटन हुआ। उन्होंने जनता दल (एस) का गठन किया तथा प्रधानमंत्री बने। बाद में उन्होंने पुनः लोकदल के नाम पर दल का नेतृत्व किया।

१९७७ में उत्तर प्रदेश में मुझे मुख्यमंत्री पद की जिम्मेदारी सौंपे जाने का श्रेय स्व. चौधरी साहब एवं स्व. राजनाराण जी को है। नेताजी ने मेरे नाम का प्रस्ताव उनके सामने विचारार्थ रखा था, जिस पर चौधरी साहब ने अपनी मुहर लगाई। यदि चौधरी साहब अपनी स्वीकृत नहीं देते तो मेरे जैसे छोटे कार्यकर्ता को उत्तर प्रदेश जैसे विशाल राज्य का मुख्यमंत्री बनने का गौरव कभी प्राप्त नहीं होता। उस कुर्सी पर बैठने के पश्चात् मैंने राष्ट्रपिता बापू के आदर्शों पर चल कर आचार्य नरेन्द्र देव, डॉ. राम मनोहर लोहिया, जयप्रकाश नारायण जैसी महान विभूतियों से प्रेरणा तथा शिक्षा लेकर एवं स्व. चौधरी साहब की सादगी एवं ईमानदारी को हृदयंगम कर किसानों के दामन पर दाग नहीं लगने दिया। आज भी मुझे इस बात का गर्व है और मैं समझता हूँ कि यही मेरी पूँजी है।

किसानों के प्रति उनके मन में बहुत दर्द था। वे कृषि को प्राथमिकता देने की बात करते थे तथा उनका नारा था ”देश की समृद्धि का रास्ता गाँवों और खेतों से होकर गुजरता है।“ गाँधी जी की अर्थनीति की पूरी छाप उनके मस्तिष्क पर थी। गाँधी जी ने कहा था ”अगर कंगाल भारत में रह रहे भूखे भारतीयों की तस्वीर देखनी हो, तो उस 80 प्रतिशत आबादी की बात सोचनी चाहिए, जो खेतों में काम करती हैं, जिसके पास साल में करीब चार महीने तक कोई धन्धा नहीं होता और इसलिए जो लगभग भुखमरी की ज़िंदगी जीते हैं।“ एक अवसर पर उन्होंने यह भी कहा था कि ”हर एक कृषि प्रधान देश को ऐसे एक पूरक उद्योग की जरूरत होती है, जिससे किसान अपने अवकाश के समय का उपयोग कर सके।“ इसीलिए वे जहाँ खेती में पैदावार की वृद्धि कर, किसान को उसके उत्पाद का उचित मूल्य दिलाने की बात करते थे, वहीं कृषि पर आधारित उद्योगों के द्वारा गाँवों का और अंततः सारे देश का विकास भी चाहते थे।

वह कभी–कभी गाँव की गरीबी देखकर बहुत भावुक हो उठते थे। मुझे याद आता है एक प्रसंग, जब वह गया (बिहार) में लोकदल की राष्ट्रीय कार्य समिति की बैठक के पश्चात् सभी नेताओं के साथ राजगृह देखने के लिए गए। वहाँ एक वृद्धा को उन्होंने गर्म पानी के सोते पर स्नान करते देखा। वृद्धा ने आधी घोती पहन रखी थी, आधी हाथ में लिए थी, ताकि नहाने के बाद उस आधी सूखी धोती से अपना तन ढाँप सके। जाहिर था, उसके पास केवल एक ही धोती थी। यह दृश्य देख वे द्रवित हो उठे और क्षण भर स्तब्ध रह कर सोचते रहे। बाद में अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा, ”देखा! यह स्थिति है भारत में गरीबी की।“

चौधरी साहब पक्के आर्यसमाजी थे। उनकी महर्षि दयानंद में अटूट श्रद्धा थी। उनका सामाजिक दर्शन इस बात से जुड़ा था कि सामाजिक

विषमता, जिसका आधार जाति है, समाप्त होनी चाहिए। उनका विचार डॉ. राम मनोहर लोहिया के इस विचार से मेल खाता था कि हमारे देश का सबसे अधिक नुकसान जाति प्रथा से हुआ है। इसके कारण ही हमारा देश गुलाम होता रहा है, क्योंकि समाज के पिछड़े तबके विशेष रूप से खेतों में काम करने वाले किसान एवं मजदूर, देश पर आक्रमण के समय भी शस्त्र नहीं उठा सकते थे, क्योंकि शस्त्र उठाना मात्र क्षत्रियों का काम था। सरकारी सेवाओं में उन्होंने अंतर्जातीय विवाह का प्रस्ताव रखा था। सारे कार्यक्रमों तथा सम्मेलनों एवं शिविरों से इसका उद्घोष किया था। वह जाति प्रथा को भारतीय समाज के लिए कोढ़ समझते थे।

बाबू जगजीवन राम इस देश की राजनीति में प्रमुख स्थान रखते थे। मैंने सोचा था कि यदि चौधरी साहब एवं बाबू जी एक दूसरे के नजदीक आ जाएं एवं मिलजुलकर काम करना आरंभ करें, तो निश्चित रूप से दोनों का जनाधार एक नई सामाजिक क्रांति लाने की दिशा में सार्थक कदम हो सकता था। यह कार्यकर्ताओं की माँग भी थी। मुझे सन् १९८२ का वह दिन स्मरण आता है, जब बनारस सेंट्रल जेल में डेढ़ माह तक मैं अपने लगभग ३०० साथियों के साथ बंद था। वहाँ मुझसे इलाहाबाद एवं वाराणसी से, सामाजिक आंदोलनों से जुड़े काफी लोग मिले एवं उन्होंने आग्रह किया कि "हम मुगलसराय (वाराणसी) में एक विशाल सम्मेलन करना चाहते हैं। उसमें चौधरी साहब के साथ बाबूजी को भी आमंत्रित करना चाहते हैं। हम गए थे लेकिन दोनों नेता एक साथ आने को तैयार नहीं हैं।" अक्टूबर में जब मैं जेल से रिहा हुआ, तो दिल्ली आया और इन नेताओं से मिला। दोनों को अनुनय–विनय कर वाराणसी जाने के लिए राजी कर लिया। दोनों उस सम्मेलन में गए। वहाँ बहुत गर्मजोशी के साथ दोनों नेताओं का स्वागत हुआ। उसके पश्चात् दोनों नेतागण बहुत नजदीक आए। इसका जन–मानस पर बहुत प्रभाव पड़ा किंतु किन्हीं कारणों से एक साथ दोनों नेता चल नहीं सके।

जब चौधरी साहब सरकार से अलग कर दिए गए, तो सन् १९७८ में उनके अनुयायियों ने उनके ७७ वें जन्म दिवस के अवसर पर, दिल्ली में वोट क्लब पर एक ऐतिहासिक रैली करने का निश्चय किया। उस समय किसानों में कितना उत्साह तथा उनके प्रति कितना प्यार था, यह उस ऐतिहासिक रैली में देखने को मिला। उस अवसर पर किसानों ने उन्हें जहाँ लाखों रुपये भेंट किये, वहीं उनके जय–जयकार के नारों ने पूरी दिल्ली को गुंजा दिया। उन्होंने "किसान ट्रस्ट" के नाम से एक ट्रस्ट कायम किया है, जो उनके विचारों को प्रतिपादित करने में लगा है।

मुझे वह दिन भी याद है जब वह सरकार से बाहर थे और सूरजकुंड

में स्वास्थ लाभ कर रहे थे। वहाँ मैं उनसे मिलने गया था। वे काफी अस्वस्थ थे। जब मैं उनसे मिलकर बाहर आया तो मस्तिष्क में एक बात आई कि इस घड़ी में इनकी मनोवैज्ञानिक ढंग से स्वस्थ होने में मैं भी सहायता करूँ। मैंने उन्हें अपना त्याग पत्र सौंपने का निश्चय किया। तत्काल मैंने त्याग पत्र लिखा एवं पुनः उनके पास गया तो उन्होंने कहा कि इतनी जल्दी फिर कैसे वापस आ गए। मैंने उन्हें लिफाफा दिया और कहा कि मेरा मुख्यमंत्री पद से त्याग–पत्र इस लिफाफे में हैं। आप जब चाहें, इसे इस्तेमाल कर सकते हैं। वह बहुत ही प्रसन्न मुद्रा में थे। उन्होंने कहा कि इसकी क्या आवश्यकता है। उन्हें पत्र देकर मैं फिर चला आया।

आज चौधरी साहब नहीं हैं किंतु उनका जीवन, आचार–विचार संघर्ष भरी राजनीतिक यात्रा सामने है, जिससे लोगों को सदैव प्रेरणा मिलती रहेगी।

४७

ग्रामीण राजनीति के युग पुरुष

राकेश कपूर*

चौधरी चरण सिंह के निधन से भारतीय राजनीति में ग्रामीणवाद का युग समाप्त हो गया। देश के कथित अभिजात्य और शहरी मानसिकता के पोषक वर्ग ने चौधरी चरण सिंह को कभी गंभीरता से नहीं लिया। उनकी छवि इस वर्ग के दिमाग में एक अवसरवादी की थी। चौधरी चरण सिंह अपने पूरे राजनीतिक जीवन में एक खूंटे के चारों तरफ घूमते रहे। अभिजात्य वर्ग ने इस खूँटे को सत्ता या कुर्सी का नाम दिया। मगर चौधरी चरण सिंह ने इस अर्धसत्य को अपने जीवन काल में कभी नहीं स्वीकारा। उनकी नजर में यह खूँटा राजनीति की 'देसी' धुरी थी। वे सत्ता पर साधारण व्यक्ति का आधिपत्य चाहते थे। जब भी आरोप लगाए गए, उन्होंने टका सा जवाब दियाः "हिन्दुस्तान का शासन किसी मजदूर–किसान के हाथ में होना चाहिए। भारत को वही आदमी चला सकता है जो गाँव की मिट्टी की सुगंध से वाकिफ हो। बड़े–बड़े शहरों का निर्माण करके हम अपनी कब्रें खोद रहे हैं, जिन पर दिया जलाने के लिए भी किराए के आदमियों की जरूरत पड़ेगी।"

चौधरी चरण सिंह सत्ता के शिखर तक पहुँचने वाले पहले भारतीय किसान थे। क्या वे भारत को वह रूप दे पाए, जो वह देना चाहते थे? उनके शासन काल के दिनों में यदि हम लौटें तो पाएंगे कि चौधरी चरण सिंह ने अपने प्रधानमंत्रित्व काल में पूरे देश में अपने बहुसंख्यक विरोधी खड़े कर लिए। उन्होंने एशियाई खेलों के अयोजन का विरोध किया और राजधानी की महत्वाकांक्षी 'रोहिणी आवास योजना' का विरोध किया। इन दो योजनाओं के विरोध से चौधरी चरण सिंह की छवि एक ऐसे 'सनकी नेता' के रूप में बनी जो देश की प्रगति में रोड़े अटका रहा था, जो देश को १८वीं सदी में लौटाने पर आमादा था। देश की जनता के गले वे कारण नहीं उतरे जो चरण सिंह ने इनके विरोध में रखे थे।

---

* राकेश कपूर पत्रकार, टिप्पणीकार, स्तंभकार और राजनीतिक विश्लेषक। उन्होंने व्यापक दर्शकों के लिए जटिल विचारों और दृष्टिकोणों को प्रभावी ढंग से संप्रेषित किया है। उनका काम राजनीतिक गतिशीलता और सामाजिक रुझानों की गहरी समझ को दर्शाता है।

चौधरी चरण सिंह ने एशियाड का विरोध इस मुद्दे पर किया था कि जिस देश में करोड़ों लोग भूखे रहते हों, जहाँ सभी गाँवों को पेयजल तक सुलभ न हो, वहाँ एशियाड कराना फिजूलखर्ची है। क्या उन्होंने गलत कहा था? चौधरी चरण सिंह ने यदि यह कह दिया कि 'एशियाड' पर खर्च होने वाली राशि राजस्थान में नहर खुदवाने पर खर्च की जाएगी, तो क्या बुरा कहा?

वे बड़े–बड़े कारखानों के विरोधी थे। वे खेती में सहकारिता आंदोलन के खिलाफ थे। वे शहरों के एकांगी विकास के विरुद्ध थे। वे अंधाधुंध मशीनीकरण के खिलाफ थे।

उनका मानना था कि बड़े कारखाने भारत की श्रम शक्ति का दुरुपयोग करते हैं। वे कहा करते थे कि हमारे यहाँ काम तो है कम और आदमी हैं ज्यादा। अगर बड़े कारखाने लगेंगे तो कम आदमियों को रोजगार मिलेगा और बेरोजगारी बढ़ेगी। मगर साथ ही चौधरी साहब कहते थे कि मैं सार्वजनिक क्षेत्र के बड़े–बड़े कारखानों का विरोधी नहीं हूँ। ये कारखाने भी देश की तरक्की के लिए उतने ही जरूरी हैं, जितने कि छोटे कारखाने या कुटीर उद्योग।

कुटीर उद्योग की बात चौधरी चरण सिंह सिर्फ इसलिए करते थे जिससे ज्यादा लोगों को रोजगार मिले। वे पाउडर, टॉफी, टूथपेस्ट या बिस्कुट बनाने के बड़े–बड़े कारखानों या बहुराष्ट्रीय कंपनियों के विरोधी थे। इसीलिए जब चौधरी चरण सिंह जनता शासनकाल में वित्त मंत्री बने तो उन्होंने सबसे ज्यादा कीमतें इन्हीं वस्तुओं की बढ़ाई। मगर साथ ही कुटीर उद्योगों में निर्मित इन्हीं वस्तुओं की कीमतों में जरा भी वृद्धि नहीं की। चूंकि भारत के बाजारों पर भी बड़े–बड़े उद्योगपतियों का वर्चस्व है, अतः कुटीर उद्योग में निर्मित यह माल बाजार से गायब हो गया। जनता में चौधरी चरण सिंह एक निष्ठुर वित्त मंत्री के रूप में प्रसिद्ध हो गए।

चौधरी चरण सिंह बड़े और छोटे कारखानों का उत्पादन क्षेत्र निश्चित करने के हिमायती थे। वे चाहते थे कि बड़े कारखानों का उत्पादन क्षेत्र केवल भारी मशीनरी या कुटीर उद्योगों के लिए आवश्यक आधारभूत मशीनी उत्पादन तक सीमित हो। शेष सभी वस्तुओं, खासकर उपभोक्ता सामग्री, का उत्पादन कुटीर उद्योग में हो।

रोहिणी का विरोध भी चौधरी चरण सिंह के पूरे सोच को प्रकट करता था। शहरों के अंधाधुंध फैलाव से क्या बीसवीं सदी कुलबुला नहीं रही थी। गाँवों की जमीन हड़प कर जो बड़े शहर बसाए जा रहे थे, यह कहाँ तक न्यायसंगत था। किसान की जमीन कौड़ियों के भाव लेकर उसे १०० गुना दामों पर बेचना क्या गाँवों पर शहरी हमला नहीं था? चौधरी चरण

सिंह उसी हमले के विरोधी थे। वे मानते थे कि यह भारत के पिछड़ेपन को बरकरार रखने की प्रक्रिया है। बिजली और पानी की रफ्तार जिस तेजी से शहरों की तरफ मुड़ी है, क्या गाँवों में भी रफ्तार उतनी ही है? हकीकत यह है कि जब दिल्ली और बम्बई बिजली के कृत्रिम प्रकाश में गंगास्नान करती हैं, तब कस्बे और गाँव घुप अंधेरे के साम्राज्य में लालटेन से टिमटिमाते हैं।

अपनी पुस्तक 'इकोनॉमिक नाइटमेअर ऑफ इंडिया' में भी चौधरी साहब ने इस बाबत ज्वलंत सवाल उठाकर उनका समाधान किया है। वे कहते थे– "जिस देश में किसान ज्यादा होंगे, वह देश गरीब होगा और जिसमें किसान कम होंगे, वह अमीर होगा।" इस बारे में वे अमेरिका का उदाहरण देते थे। भारत में खेती में लगे लोगों का प्रतिशत आजादी के बाद बढ़ा। अतः गरीबी भी बढ़ी। जमीन जब निश्चित है तो आबादी बढ़ने से किसान भी ज्यादा ही होंगे। यदि किसान दूसरे काम–धंधों में लगेंगे तो कृषि उत्पादन आधुनिक तरीकों से बढ़ेगा ही और किसान खुशहाल होगा। अमेरिका में यही हुआ है। किसान का बेटा इंजीनियर, डॉक्टर भी हो सकता है। भारत में यही स्थिति चौधरी साहब देखना चाहते थे।

चौधरी चरण सिंह पर दल–बदलू होने का आरोप प्रायः लगाया जाता रहा। उन्होंने १९६७ में उत्तर प्रदेश में चन्द्रभानु गुप्त को झटका देकर मुख्यमंत्री की कुर्सी संभाली। १९७९ में जनता सरकार के प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई को धता बताकर प्रधानमंत्री की कुर्सी पाई। ये दोनों ही घटनाएं इतिहास को एक नया मोड़ देने वाली साबित हुईं। आप कल्पना कीजिए यदि उत्तर प्रदेश में १९६७ में कांग्रेस से विद्रोह कर चौधरी चरण सिंह ने अपनी सरकार न बनाई होती तो क्या अन्य राज्यों में गैर कांग्रेसी सरकारें गठित हो सकती थीं? दरअसल चौधरी चरण सिंह के इस विद्रोही चरित्र का मूल्यांकन राजनीति में अभी तक हुआ ही नहीं है। जनता सरकार के दमघोंटू माहौल के खिलाफ भी चौधरी चरण सिंह ने विद्रोह किया। चौधरी चरण सिंह का यह चरित्र उनकी राजनीतिक इलैक्ट्रिक मोटर रहा है।

जनता सरकार का टूटना बेशक बहुसंख्य जनता के लिए स्वप्न भंग रहा होगा, मगर चौधरी चरण सिंह के लिए वह एक अनिवार्यता थी। वे स्वयं गैर कांग्रेसी पार्टियों के ध्रुवीकरण हेतु प्रयासरत रहे। वे इमरजेंसी से पहले से कहते थे और मानते थे कि यदि इमरजेंसी न लगी होती तो लोकदल विपक्षी पार्टियों का चुम्बक बनती। इसमें चार प्रमुख राष्ट्रीय दलों का विलय पहले ही हो चुका था। मगर इमरजेंसी लगी और जनता पार्टी बनी। चौधरी चरण सिंह इसके पहले उपाध्यक्ष बने। उन्होंने उत्तरी भारत

में कांग्रेस के खिलाफ अलख जगाया। जनता सांसदों में सर्वाधिक संख्या लोकदल खेमे की ही रही। फिर यदि इस खेमे का नेता प्रधानमंत्री बनने का दावा करे, तो इसमें बुराई क्या है?

चौधरी चरण सिंह अक्खड़ थे। वे किसी की सिफारिश नहीं मानते थे। आर्य समाजी थे, ईमानदार थे, कर्मवीर थे, चरित्रवान थे। सिद्धांतों को सर्वोपरि मानते थे। इसीलिए गाँधीवादी थे।

४८
दलितों के हितैषी: चौधरी चरण सिंह
डॉ. राज सिंह राणा*

वर्ष १९२५। आगरा कालेज, आगरा का छात्रावास। एक युवा छात्र छात्रावास में झाड़ू लगाने वाले हरिजन के घर जाकर उससे खाना बनाकर खिलाने के लिए कहता है। झाड़ू लगाने वाला वह हरिजन युवक एकदम हैरान रह जाता है और कुछ समझ नहीं पाता। छात्र के बार–बार आग्रह करने पर आखिरकार वह मजबूर हो जाता है और उस युवा छात्र की यह अनूठी प्रार्थना स्वीकार कर लेता है। छात्र फौरन समूचे छात्रावास में घूम–घूमकर अपने इस निश्चय का ऐलान कर देता है और इस ऐलान से छात्रावास में रहने वाला प्रत्येक व्यक्ति स्तब्ध रह जाता है कि भला कोई सवर्ण किसी 'अछूत' के घर उसका बनाया हुआ खाना कैसे खा सकता है!

इस छात्र का नाम था चौधरी चरण सिंह। दरअसल हुआ यह कि हरिजन के घर खाना खाने से एक दिन पहले वह छात्रावास के अपने कुछ साथियों के साथ बड़े जोर–शोर से छूआछूत की समस्या पर बहस कर रहा था। उसका दृढ़ विचार था कि छूआछूत को मिटना ही चाहिए और वह अपने दोस्तों को भी इस बात पर राजी करने की कोशिश कर रहा था कि वे अपनी रोजमर्रा की ज़िंदगी में छूआछूत को जगह न दें। इन साथियों में से एक पुरातनपंथी साथी ने उसे चुनौती दी कि अगर वह छूआछूत के इतना ही ज्यादा खिलाफ है, तो फिर खुद किसी हरिजन के घर उसका बनाया हुआ खाना खाकर क्यों नहीं दिखाता! यह सुनते ही छात्र चौधरी चरण सिंह ने तुरंत इस बात के लिए हाँ कर ली और अगले ही दिन अपने इस फैसले को अमलीजामा पहना डाला।

मिनटों में ही चौधरी चरण सिंह के भ्रष्ट होने की खबर छात्रावास में तेजी से फैल गई और उसका सामाजिक बहिष्कार कर दिया गया। उसे छात्रावास की रसोई के बर्तनों में भी नहीं खाने दिया गया। चौधरी चरण सिंह ने केले के पत्तों पर खाना शुरू कर दिया पर वह हरिजनों के साथ

---

* डॉ. राज सिंह राणा स्वास्थ्य सेवा में अपने कौशल और ज्ञान के लिए प्रसिद्ध हैं। उन्होंने अपने काम और पहलों से चिकित्सा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

बराबरी का व्यवहार करने के अपने निश्चय से टस से मस नहीं हुआ। काफी दिनों तक छात्रावास में तनातनी का माहौल बना रहा। अंत में छात्रावास के वार्डन को मजबूर होकर उसे रसोई के बर्तनों में खाने की इजाजत देनी पड़ी।

गाँव में भी जब कभी कोई सवर्ण हिन्दू किसी हरिजन के साथ बुरा बर्ताव करता था, तो चौधरी चरण सिंह हमेशा उसका विरोध किया करते थे। जब उन्होंने गाजियाबाद में वकालत शुरू की तब नानक नाम के एक हरिजन को अपना रसोईया रखा। यह १९३० की बात है। उस जमाने में किसी हरिजन को रसोईया रखना बहुत हिम्मत का काम था और यह काम चौधरी चरण सिंह ने कर दिखाया। उन्हें इंसान की बराबरी में अटूट विश्वास था। अपने सक्रिय जीवन के आरंभिक वर्षों में एक आर्यसमाजी नेता के रूप में चौधरी चरण सिंह ने छूआछूत मिटाने के लिए अथक प्रयास किये।

जब चौधरी चरण सिंह उत्तर प्रदेश मंत्रिमंडल में मंत्री बने तो उन्होंने हरिजन युवाओं को रोजगार देने के लिए अनेक कदम उठाए। नवम्बर १९५४ से मार्च १९५९ तक के अपने राजस्व मंत्री के कार्यकाल में चौधरी चरण सिंह ने राजस्व परिषद की ओर से जिलाधिकारियों को इस आशय के अनेक आदेश जारी कराये कि जिलाधीश कार्यालय में चपरासी और लेखपाल तथा उगाही अमीन के पदों पर हरिजनों की नियुक्ति १८ प्रतिशत तक की जानी चाहिए। अधिकारियों के बीच इस प्रस्ताव को लेकर काफी विरोध था। अतः इस दिशा में केवल आंशिक सफलता ही मिल पायी। दिसम्बर १९६३ में फिर चौधरी चरण सिंह ने यह आदेश जारी किया कि उनके अधीन सभी विभागों—कृषि, वन और पशु—पालन में सभी रिक्त स्थानों पर अनुसूचित जाति के उम्मीदवारों की नियुक्ति तब तक की जाए, जब तक उनका १८ प्रतिशत का निर्धारित कोटा पूरा न हो जाए।

चौधरी चरण सिंह ने हमेशा जातिवाद के खिलाफ जेहाद छेड़ा। वे उन संस्थाओं को कभी भी संरक्षण प्रदान नहीं करते थे, जिनका नाम किसी जाति विशेष से संबद्ध हो। उन्होंने मंत्रिमंडल के अपने अन्य सहयोगियों से भी इस बात का अनुरोध किया था कि वे इस प्रवृत्ति को बढ़ावा न दें। उन्होंने तीन बार पत्र लिख कर पण्डित जवाहर लाल नेहरू से यह अनुरोध किया था कि देश की सबसे बड़ी हस्ती होने के नाते उन्हें जातिवाद को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए कदम उठाने चाहिए। चौधरी चरण सिंह ने पंडित नेहरू को यह भी सुझाव दिया था कि जातिवाद के अभिशाप को खत्म करने के लिए सरकार उन उम्मीदवारों को प्राथमिकता दे जिन्होंने अंतर्जातीय विवाह किया हो। उन्होंने तो यहाँ तक सुझाव दिया

था कि विधानसभा और लोकसभा के चुनाव में कांग्रेस का टिकट देते वक्त अंतर्जातीय और अंतर्प्रान्तीय विवाह करने वालों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। पंडित नेहरू ने उनकी भावनाओं की कद्र करते हुए यह सुझाव दिया कि इस प्रकार के सामाजिक सुधार स्वेच्छापूर्वक होने चाहिए, न कि जोर–जबर्दस्ती से।

कैसी विडम्बना है कि एक ऐसे व्यक्ति को हरिजनों का दुश्मन और जातिवादी बताया जाता रहा है जबकि उन्होंने ज़िंदगी भर दलितों के उत्थान के लिए काम किया। यह हरिजनों के लिए भी दुर्भाग्यपूर्ण है कि उनके जायज हकों के लिए ज़िंदगी भर लड़ने वाले व्यक्ति को उनका दुश्मन बताया गया है। न सिर्फ उनके बल्कि हिन्दू समाज और राष्ट्र के लिए भी यह बात दुर्भाग्यपूर्ण है कि बराबरी पर आधारित समाज की स्थापना के लिए संघर्ष करने वाले चौधरी चरण सिंह जैसे प्रगतिशील समाज सुधारक के प्रयासों को विफल करने की हरदम कोशिशें की जाती रहीं।

यूं इन कोशिशों के पीछे क्या मकसद था, यह तो सभी जानते हैं। चौधरी चरण सिंह का बेदाग व्यक्तित्व, नैतिक मूल्यों और सत्य के प्रति उनकी अविचल निष्ठा तथा अपने सिद्धांतों से कभी न डिगने की उनकी आदत, इन सबने मिलकर उनकी एक ऐसी छवि बनाई जिसके सामने उनके विरोधी भी हतप्रभ हो गए। अतः वे किसी ऐसे हथियार की तलाश में रहते थे जिससे वे उन पर पीछे से वार कर सकें। और तो और चौधरी चरण सिंह से स्वयं उनकी जाति वाले नाराज रहते थे क्योंकि उन्होंने कभी अपनी जाति वालों को वरीयता नहीं दी और उन्हें कोई अनुचित लाभ नहीं पहुँचाया, जैसे कि आमतौर पर राजनीतिक नेता किया करते थे।

चौधरी चरण सिंह द्वारा उठाये गए कदमों से यथास्थितिवादी किस प्रकार झुंझलाए, इसकी एक झलक उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमंत्री डॉ. सम्पूर्णानंद द्वारा चौधरी चरण सिंह की पहल कदमी पर बने जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार कानून के बारे में एक गोपनीय रिपोर्ट में की गई टिप्पणी से मिल सकती है। उसमें डॉ. सम्पूर्णानंद ने कहा कि–

"इसका (जमींदारी उन्मूलन कानून) का अर्थ होगा अपने विरोधियों की एक और जमात तैयार करना जिसके पास बहुत अधिक ताकत है। हमने लगभग हर उस वर्ग को अपने खिलाफ कर लिया है जिसके हाथ में अब तक शिक्षा, सम्पति, सामाजिक प्रतिष्ठा और राजनीतिक प्रभाव रहा है। यहाँ हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि इन्हीं लोगों की वजह से समाज में कानून और व्यवस्था कायम रख पाना संभव हो सका है।

हमने जो कदम उठाये हैं, और जो हम उठाना चाहते हैं, उनसे

निश्चय ही ऊँची जातियों के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और हमें यह याद रखना चाहिए कि आम तौर पर यही वे लोग रहे हैं जिन्होंने कांग्रेस को सबसे अधिक समर्थन दिया है। ये लोग कांग्रेस नेतृत्व के साथ सांस्कृतिक रूप से जुड़े रहे हैं और हम लोग उन्हीं के कन्धों पर बैठकर सत्ता में आए हैं।

सार्वजनिक रूप से हमने जो कदम उठाये हैं, उनसे भूमिहीनों और उन लोगों को जिनके पास बहुत थोड़ी सी जमीन है, फायदा हुआ है। शताब्दियों की कुंठा और दबी झुंझलाहट ने उन्हें औरों से अलग रखा है। इन्हें मुख्यतः शोषित संघ जैसे संगठनों ने ही नेतृत्व प्रदान किया है और वे स्वभावतः कांग्रेस नेतृत्व के प्रति संदेहशील हैं। हम उन्हें कितना ही लाभ क्यों न पहुँचायें, वे हमारे पास आने वाले नहीं।"

इस उद्धरण से साफ हो जाता है कि चौधरी चरण सिंह ने दलितों और शोषितों के लिए क्या–क्या किया और वह इन तबकों के कितने बड़े हितैषी थे जबकि उनके विरोधी, जो न एक वर्ग विशेष के थे बल्कि उनके ही दल के भी थे, की इन वर्गों के प्रति क्या दिशादृष्टि थी और वह चौधरी चरण सिंह के विरोध में किस सीमा तक जा सकते थे, यह उपरोक्त टिप्पणी से भी सिद्ध हो जाता है। जबकि चौधरी चरण सिंह को हरिजन विरोधी कहने से पहले इस तथ्य को एकदम भुला दिया जाता है कि अपने राजनीतिक जीवन के आरंभिक दिनों से ही चौधरी चरण सिंह ने हरिजनोद्धार के लिए अथक प्रयास किए। असलियत में चौधरी चरण सिंह का योगदान, खासकर इन तबकों के मामले में अविस्मरणीय है।

४९

दिल्ली में देहात का खामोश कदम

श्याम नंदन मिश्र*

खाने की मेज पर सूखी चपाती, लेकिन तुरंत तवे से आई हुई, दाल गाढ़ी और स्वादिष्ट, एक सब्जी ज्यादातर, और दो कभी—कभी, साथ—साथ प्याज और अदरख के कतरे, संभवतः दही भी और आखिर में कभी—कभी खोये की बर्फी या छोटे—छोटे सफेद—सफेद बताशे के साथ दूध का एक प्याला। यही हर दिन, चाहे अपने परिवार के लोग हों या आमंत्रित उच्च पदस्थ अतिथि।

और पोशाक में, गर्मियों में खादी की एक मोटी धोती के ऊपर एक मोटा उजला कुर्ता, जाड़े में चुस्त पायजामा के ऊपर शेरवानी, मामूली ऊनी कपड़े की गाँधी टोपी, साधारणतया सफेद, कुर्ता और धोती। एक मामूली हिन्दुस्तान मशीन टूल की घड़ी काले रंग के केस में काले फीते के साथ — किसी संबंधी ने लाकर दी तो एक लड़के की तरह इस शौक से लगाया कि जैसे कोई निहायत कीमती और खूबसूरत चीज मिल गई हो और यह दिल्ली के उस माहौल में जहाँ रोलेक्स जैसी हजारों रुपये की घड़ियाँ भी मंजूरे नजर नहीं।

बंगला तो मिनिस्टर का है लेकिन जब तक बेटियों की साज—सज्जा का शिकार न हुआ और ग्रामीण संस्कृति पर थोड़ी शहरी मुलम्मासाजी नहीं हुई थी, तब तक एक एम० पी० के बंगले को दुगुना कर लीजिए, बस यही नजारा है। जिस दिन दूरदर्शन महीनों की रस्साकशी के बाद घर में आया तो वातावरण एक महाव्रत टूटने का था। ज्यादातर परिवार के लोगों में हल्की खुशी थी मगर परिवार के मुखिया के चेहरे पर मायूसी।

और घर में किसी बेटी की शादी हो तो थोड़ी सी बिजली की सजावट, पौधों पर और मकान पर १५—२० मेहमान, आर्यसमाज की पद्धति से संक्षिप्त रूप में कन्यादान और सारा समारोह ३ घन्टे के अंदर संपन्न।

---

* श्याम नंदन मिश्र (१९२०—२००४) भारतीय स्वतंत्रता सेनानी और राजनीतिज्ञ, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, कांग्रेस (ओ) और जनता पार्टी । कई वर्षों तक लोकसभा और राज्यसभा दोनों में संसद सदस्य रहे। राज्यसभा में विपक्ष नेता भी रहे। चरण सिंह की सरकार में विदेश मंत्री बने। भारत छोड़ो आंदोलन और आपातकाल दोनों के दौरान जेल गए।

मिलने वालों की तादाद हर दिन बेशुमार, लेकिन उनसे मिलने का अंदाज तो देखिए, मिलेंगे भी और झिड़केंगे भी। कभी कोई किसी कदर मिलने में नाकामयाब रहा और वापिस चला गया लेकिन वह पुराना कार्यकर्ता या गाँव का पुराना प्रतिष्ठित किसान है, तो बहुत – बहुत अफसोस करना। बड़े–बड़े पूँजीपति हफ्तों कोशिश करें और खुश किस्मती समझिये कि मिल पाए। शाम का वह वक्त कितना दिलचस्प होता है जब एक निजी सचिव मिलने वालों की लिस्ट लेकर आता है और पहले यह सुनता है कि "देखते नहीं कितने काम हैं, इतने लोगों से मुलाकात करूँ तो काम कैसे होगा" और फिर बाद में उसके इसरार पर एक के बाद दूसरे नाम पर ठीक से गौर करना और छाँटते जाना, फिर कहीं–कहीं पर रुकना, तब जाकर बड़ी झिझक और झल्लाहट के बाद दूसरे दिन के मिलने वालों की लिस्ट तैयार होती है।

मगर उस झिड़की से क्या हुआ करता है, कि लोग उसके बावजूद फिर–फिर मिलने आते हैं, छोड़ते नहीं, चिपके रहते हैं, गोंद की तरह? हम और आप उस तरह लोगों को डाँटे–डपटें तो क्या कयामत आएगी, खुदा भला करे।

मगर इतना तो कहना ही पड़ता है कि यह शख्स कभी अपनी आवाज ऊँची नहीं करता, अगर आप कुछ कान के ऊँचे हैं तो उसे पूरी तरह पकड़ भी नहीं सकते। मुस्कराहट इसके होठों से बराबर चिपटी रहती है और हुस्नेवयानी तो देखिए कि जब कभी नाराज हों तो अपने विरोधी को कहते हैं "आप कामयाब हो गए, मुझे नाराज कर दिया।" गलती हुई तो छोटे–से–छोटे से भी माफी माँगने में कोई हिचकिचाहट नहीं।

संसद में भी जब बातें करना तो ऐसी सहजता से कि लगता है कि संसदीय शिष्टता जैसे स्वभाव का अंग बन गई हो। जवान से रवानी भी और मानी भी, तंज भी और मिठास भी – लेकिन सबसे ज्यादा एक खास तरह का लहजा और लय जिससे दलील का उतार–चढ़ाव तो जाहिर होता ही है साथ–साथ उसको आगे बढ़ाने में भी मदद मिलती है। उनकी यह उक्ति बहुत कुछ प्रसिद्ध हो गई है कि किसी को अपनी बात निर्बाध रूप से कहने का अधिकार है, चाहे आप उसे कितना ही गलत क्यों न माने, नहीं तो मजलिस दरहम दरहम हो जाएगी। कभी तीर भी चलाना तो इस तरह कि बेकार न जाए। "धनुष्यमोघ सपद्यत्त वाणम्।"

लेकिन इन चीजों से क्या आपको ये ख्याल हुआ कि यह व्यक्ति वैसा ही रूखा–सूखा है जैसा इसका खाना या जैसी इसकी लिबास या जैसा इसका रहन–सहन। कतई नहीं। हँसी–मजाक का पुट तो प्रायः प्रत्येक वाक्य या लहजे में मिलेगा, और दूसरों को ऐसी ही बातों पर खुली हँसी

साथ दाद देने में भी कोताही नहीं। ज्यादातर खुलुस से ही बातें करेंगे, नहीं नो बिल्कुल औपचारिक तौर पर बात करके कतरा जाएंगे, जिनसे दिल नहीं खोल सकते। जिस बात का विचार पक्का हो गया उसको दृढ़ता से कह भी देते हैं– विशेष रूप से जहाँ सरकारी कर्तव्य का अवसर आता है। रात में परिवार के लोगों के साथ विनोद पूर्ण ढंग से ताश का खेल भी चला करता है जिसका सिलसिला किसी मित्र के आने पर सहसा तोड़ देने में भी कोई मोह नहीं।

राजनीतिक जीवन में ज्यादातर लोग पारिवारिक जीव नहीं रह पाते, सबो के स्नेह से सिंचित रहते हुए भी उनका ख्याल बहुत कम कर पाते। यह एक अर्थ में अत्यंत संकुचित स्वार्थपरता है। लेकिन इनको देखिए तो मालूम होगा कि कहाँ से मरूभूमि में एक सोता मिल गया। ऐसे आदर्श पारिवारिक व्यक्ति राजनीतिक जीवन में कम मिलेंगे। परिवार के लोगों के बीच इनकी अवर्णनीय प्रसन्न मुद्रा से आपको अपने जीवन की कमियाँ बड़ी तीव्रता से महसूस होने लगेंगी। एक बार तो अपने एक निकटतम मित्र के पुत्र को उनके सामने यहाँ तक कह दिया कि "ये तुम्हारी माँ को यहाँ नहीं रखते, अब से उसको बुलाने खुद ही तुम्हारे गाँव जांऊँगा।" पत्नी के साथ पूर्णता की जैसी छवि छिटकती है उसे देखते ही बनता है और जो स्नेह का पवित्र वातावरण पैदा होता है उसकी झाँकी शायद ही कहीं और मिले।

ऐसा व्यक्ति जब दिल्ली आया तो लगा कि जैसे गाँव की निष्कलुष आत्मा आई, किसानों का पुरुषार्थ आया, खेत की हरियाली आई, गाँव की सादगी और चरित्र आया। जो किसान गर्मियों में जलता है, जाड़े में ठिठुरता है, बरसात में भीगता है और भादों की अंधेरी रात में भी मूसलाधार वर्षा के बीच अपनी फसल को बचाने के लिए कटिबद्ध रहता है, उसका प्रतिनिधि दिल्ली आए इसकी प्रतीक्षा थी। दिल्ली में देहात का यह कदम जिसे चौधरी चरण सिंह कहते हैं, आया तो खामोशी से, लेकिन जलजला वरपा कर रहा है। कहीं लोग गर्मजोशी से उसके भ्रष्टाचार उन्मूलन के कार्यक्रम की चर्चा कर रहे हैं, कहीं उसकी गाँधीवादी अर्थनीति का बखान कर रहे हैं, कहीं उसके मंत्रालय द्वारा भूतपूर्व प्रधान मन्त्री, ऊँचे सरकारी कर्मचारी और बड़े से बड़े पूँजीपतियों की गिरफ्तारी पर बहस कर रहे हैं यानी कोई ऐसी जगह नहीं जहाँ उसकी चर्चा न हो चाहे तारीफ में या नुक्ताचीनी मेंः सराहना या समालोचना, अवहेलना कभी नहीं हर हालत में लोगों के दिल व दिमाग में, जबान पर। लेकिन इन सारे विवादों में वह निवात निष्कम्पमिव प्रदीपम्श के रूप में अपना काम करता जा रहा है।

आश्चर्य नहीं कि लोग इसे अपनी मिट्टी का बना देवता मानते हैं। इसमें अपनी मिट्टी की सुगंध, अपनी मिट्टी की सादगी और अपनी मिट्टी की बुलंदी पाते हैं। इस अजीबो गरीब रहनुमा की लोकप्रियता का रहस्य क्या है यह उसकी बड़ी–बड़ी भावपूर्ण आँखों में तो शायद आप पढ़ सकें लेकिन राजनीतिक खुर्दबीन से भी नहीं देख सकते ।

५०

समर्थ राजनीतिक-चिंतक

डॉ. सोमनाथ शुक्ल

बीसवीं शती के राजनीतिक चिंतन में दो राजनीतिज्ञ विशेष रूप से जिज्ञासा के विषय बने हैं, प्रथम लोकनायक जयप्रकाश और दूसरे चौधरी चरण सिंह। जयप्रकाश नारायण के राजनीतिक चिंतन में जितनी संश्लिष्टता है, उतना ही सारल्य चौधरी चरण सिंह के चिंतन में है। संश्लिष्टता के कारण जयप्रकाश जी के चिंतन में असंगति का आरोप लगता है और चरण सिंह के चिंतन में सारल्य होने से उनके चिंतक रूप की अस्वीकृति प्रकट की गई है। जयप्रकाश जी के चिंतन में नागर कौशल है, और चरण सिंह के चिंतन में ग्रामीण गरिमा है। अभिप्राय दो राजनीतिज्ञों की तुलना का नहीं है। केवल चौधरी चरण सिंह के राजनीतिक चिंतन की उत्कृष्टता का निरूपण करना है। चौधरी चरण सिंह के राजनीतिक चिंतन को समझने में किसी कठिनाई का बोध नहीं होता। वे अपने में नितांत स्पष्ट हैं। संभवतः वे किसी कूटनीतिक बुद्धिमत्ता पर विश्वास नहीं करते, और महात्मा गाँधी की तरह सत्यनिष्ठा पर आधारित चिंतन और चरित्र पर गहरा विश्वास करते हैं।

सक्रियतावादी चिंतन

भारत देश की यह परंपरा और प्रतिष्ठा रही है, कि शास्त्रवादी और सक्रियतावादी दोनों पृथक्–पृथक् व्यक्तित्व के नहीं माने गए हैं। सिद्धांत का निरूपण दूसरे के लिए ही नहीं अपने लिए भी होता रहा है। इस प्रकार इस देश के विचारकों ने कथनी और करणी के सामंजस्य को आवश्यक माना है। सिद्धांत और व्यवहार में समन्वय एक सहज स्थिति है। चौधरी चरण सिंह निश्चित रूप से जिन सिद्धांतों का प्रतिपादन करते हैं, वे नितांत व्यवहारिक हैं। उनके चिंतन में शास्त्रीय वाग्विलासिता नहीं है। स्वतः जीवन से और सक्रियता से प्रकट होने वाला चिंतन है। परंपरा निस्सृत–तत्त्वज्ञान की भूमिका में परिस्थितिजन्य तथ्यों की सहज मीमांसा उन्हें शास्त्रीय व्यक्तियों की अपेक्षा सामान्य जन के अधिक निकट ला देती

है। चौधरी चरण सिंह का जो कुछ भी राजनीतिक चिंतन है, वह उनके जीवन में समस्याओं, संघर्षो, समाधानों तथा सफलताओं का प्रतिफल है।

इतिहास का संदर्भ

चौधरी चरण सिंह का राजनीतिक इतिहास इस देश की बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध की गतिविधियों को भी निष्कपट रूप में अभिव्यक्त करने वाला है। भारतीय स्वातंत्र्य के पूर्व कांग्रेस के मंच से राष्ट्रीय जीवन में योगदान उनकी उस मानसिकता को प्रकट करने वाला है, जिसमें राष्ट्रीय पराधीनता के प्रति एक अदम्य विद्रोह है। चौधरी चरण सिंह स्वातंत्र्य संग्राम की प्रथम पंक्ति में भले ही न रहे हों, किंतु स्वतंत्रता का इतिहास यह प्रकट करता है कि एक समर्थ चिंगारी शोला बनने की दिशा में अवश्य थी। एक स्फुलिंग अग्निपुंज बनने जा रहा था। स्वतंत्रता के संघर्ष में किसी भी भूमिका का निर्वाह परवर्ती पीढ़ियों के लिए पावन और प्रेरक प्रसंग है। सर्वाधिक महत्वपूर्ण यह है कि अपने यौवन काल में ही अहिंसक प्रतिकार की सौम्य प्रवृत्ति को स्वीकार किया था। सत्य और अहिंसा के महान आग्रही महात्मा गाँधी के नेतृत्व को स्वीकार करने वाले तत्कालीन युवक अपने संयम और सब के लिए ऐतिहासिक प्रशस्ति के पात्र हैं। चौधरी चरण सिंह का राजनीतिक चिंतन और चरित्र स्वातंत्र्य और स्वराज प्राप्ति से प्रारंभ होता है।

सामंतवाद की समाप्ति

चौधरी चरण सिंह ग्रामीण क्षेत्र से उभर कर आने वाले राजनीतिज्ञ हैं, जिन्होंने ग्रामीण क्षेत्र में सामंतवाद को समाप्त करने का स्पष्ट विचार और विवेक दिया था। जमींदारी उन्मूलन में सामंतशाही को धराशायी करने का उद्देश्य था। स्वतंत्रता के पश्चात् ही इस कार्य और विचार को चौधरी साहब ने वैज्ञानिक और व्यवस्थित ढंग से करने का प्रयत्न किया था। ग्रामीण क्षेत्रों में सामंतवाद की समाप्ति आखिर हो गई। किंतु बड़े किसानों के रूप में सामंतशाही कानून से आँख मिचौनी कर जीवित रही है। इस दिशा में चौधरी चरण सिंह ने एक स्पष्ट चिंतन और चरित्र दिया, कि बड़े खेतिहरों की सीमाबंदी नितांत आवश्यक है। जोतों की सीमा के संबंध में स्पष्ट अभिमत रहा है कि मध्यम आकार की खेती आर्थिक और सामाजिक सन्तुलन को स्थापित रख सकती है। सन् १९७७ में सत्ताधारी पक्ष के विचारार्थ आर्थिक प्रस्ताव में इस विचार – विवेक पर चौधरी साहब ने बल

दिया है। साथ ही सामंती संस्कारों के उन्मूलन के लिए चौधरी साहब ने भूमि स्वामित्व की समाप्ति का विचार दिया है, जिससे जोतदार का राज्य से सीधा संबंध स्थापित हो जाए। वस्तुतः चौधरी साहब एक ऐसी कृषक व्यवस्था के पक्षधर हैं, जिसमें सामंतशाही वृत्तियाँ जो शासन, शोषण और स्वामित्व पर आधारित होती हैं, समाप्त हो जाएं।

समाजवाद की व्याप्ति

चौधरी चरण सिंह का राजनीतिक चिंतन महात्मा गाँधी के आदर्शों के अनुरूप है। इसमें कोई संदेह नहीं कि महात्मा गाँधी के आदर्शों में अधिकांश राजनीतिज्ञों ने अपने अनुकूल अंशों को ग्रहण किया है। किंतु महात्मा गाँधी में जो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नैतिकता की सुगंध है, उसे किसी वाद–विवाद से आवृत्त नहीं किया जा सकता। इस नैतिकता के कारण ही गाँधीवादी विचारधारा चौधरी चरण सिंह के निकट प्रतीत होता है। स्वतंत्रता का परवर्ती राजनीतिक इतिहास, समाजवादी संघर्ष और संरचना का अध्याय है। समाजवाद के प्रयत्नों और प्राप्य में चौधरी साहब की भूमिका कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। इसकी मीमांसा समाजवादी आंदोलन की अक्षमता और सक्षमता दोनों को स्पष्ट रूप से विश्लेषित कर देती है। चौधरी साहब ने स्पष्ट रूप से गाँधीवादी विचारधारा के परिवेश में समाजवाद को स्वीकार किया है। यहाँ यह जान लेना महत्त्वपूर्ण है कि गाँधीवादी विचार राज्य समाजवाद के स्पष्ट रूप से विरोध में था।

महात्मा गाँधी ने बीसवीं शती में बढ़ते हुए राज्य वाद को मानवीय समाज के लिए दुर्भाग्यपूर्ण माना था। समाजवाद का अभिप्राय सरकारीकरण नहीं है। पूँजीवाद को राज्यवाद से अच्छा मानकर भी महात्मा गाँधी ने पूँजीवाद को कभी स्वीकार नहीं किया था। किंतु पंडित नेहरू ने समाजवाद और पूँजीवाद के बीच मिश्रित अर्थव्यवस्था के रूप में समझौता किया था। वस्तुतः इस नीति में समाजवाद ने अपनी तेजस्विता खोई थी, जनता पार्टी की आर्थिक नीति की प्रस्तावना में चरण सिंह जी ने महात्मा गाँधी जी के इस विचार को स्वीकार किया है कि “समाजवाद के लिए आवश्यक योजना जो उच्च स्तर से बननी प्रारंभ होती है आजादी के लिए हानिकारक है। क्योंकि इसमें लोगों के लिए अपने निर्णयों के पालन करने की अपेक्षा, आदेशों का पालन करना आवश्यक होता है। इसके अलावा कार्यपटुता नहीं रहती है। क्योंकि इससे लाखों व्यक्तियों के अपने–अपने विस्तृत ज्ञान का प्रयोग असंभव हो जाता है। जबकि नीचे के स्तर से आरंभ योजना जो गाँधी विचार की अर्थ व्यवस्था पर लागू होती है, सभी

का कल्याण बढ़ाने में प्रत्येक के हितों का ध्यान रखती है और इस प्रकार यह वास्तविक प्रजातंत्र के लिए उपयोगी है।" चौधरी साहब ने समाजवाद को तथ्यगत और तात्विक रूप में समझा है। उनके अनुसार समाजवाद को औपचारिक रूप में या सरकारी रूप में स्वीकार करने से देश का लाभ नहीं होने वाला है। देश की बेरोजगारी और गरीबी आदि को मिटाने के लिए अधिक यथार्थवादी नीतियों को स्वीकार करना होगा। महात्मा गाँधी के विचार इसमें प्रकाश स्तम्भ की तरह हैं।

वस्तुतः समाजवाद के शुद्ध और सात्विक रूप को या गाँधीवादी विचारधारा की नीतिमत्ता को चरण सिंह जी ने अपनी स्वीकृति दी है। यदि समाजवादी विशेष्य से इसे समझा जाए तो यह ग्रामीण समाजवाद है। यह महत्त्वपूर्ण है कि जिस देश में सत्तर प्रतिशत से अधिक लोग ग्रामीण क्षेत्रों में और कृषि कार्य में संलग्न हों, उनकी उपेक्षा कर ऐसे उद्योगों की रचना, विकास और स्वामित्व की चिंता की जाए, जिनसे केवल कुछ ही लोगों का, विशेषकर नागर वर्ग का ही लाभ हो, विवेकपूर्ण नहीं है। यह ग्रामीण समाजवाद उपेक्षित बहुमत के जीवन को सर्वोन्मुखी संपन्नता की दिशा में ले जाने के लिए संकल्पित प्रतीत होता है। जनता पार्टी की आर्थिक प्रस्तावना में चौधरी साहब ने यह स्पष्ट किया है कि "जब तक यह देश आर्थिक विकास के मौजूदा ढाँचे के अनुसार चलता है, जिसमें वह केवल शहरी लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए या अपने उत्पादनों को बिल्कुल कम कीमतों पर नियत करने के लिए, भारी लागत पर आधुनिक पूँजी प्रधान उद्योगों की स्थापना करता रहेगा, तब तक न केवल बेरोजगारी ही बढ़ती जाएगी और पूँजी चन्द लोगों के हाथों में इकट्ठी होती जाएगी, बल्कि इस बात का भी खतरा है कि यह देश धनवान राष्ट्रों के चंगुल में अधिकाधिक फँसता चला जाएगा।" आज के राज्य–समाजवाद से श्रमिकों का शोषण समाप्त हो सकता है, इसे चौधरी साहब विश्वासयोग्य नहीं मानते। वस्तुतः चौधरी साहब एक ऐसे समाजवाद की स्थापना करना चाहते हैं, जो नितांत व्यवहारिक हो और देश के विशाल जनसमुदाय की आर्थिक समस्याओं का समाधान तथा संतुलित आर्थिक संबंधों की स्थापना कर सके और उसके राजनीतिक अधिकारों को संरक्षण दे सके।

वामपंथ या दक्षिण पंथ

चरण सिंह जी के राजनीतिक चिंतन और चरित्र से यह स्पष्ट है कि वे वामपंथी राजनीति के समर्थक हैं। यह विचार योग्य है कि बीसवीं शती

के उत्तरार्द्ध में वामपंथ और दक्षिणपंथ जैसे भेद कृत्रिम हो गए हैं। जिन्हें दक्षिणवादी समझा जाता है, वे भी सामान्य जनों की सुख सुविधाओं को अस्वीकार नहीं कर सकते। विज्ञान और प्राविधि ने यह संभव भी कर दिया है। वामपंथी शक्तियाँ घृणा को मूल्य बनाकर यदि चलने का अभिकन और पुरुषार्थ तत्कालीन परिस्थितियों में करें भी, तो उसकी आवश्यकता नहीं है। स्थूल रूप से यह कहा जा सकता है कि जो चिंतन अभावग्रस्त और अन्यायग्रस्त वर्ग का पक्षधर है, वह वामपंथी है। यह वामपंथ की निष्कपट व्याख्या है। गाँधीवादी विचारधारा वस्तुतः अति–वामपंथी हैं। वामपंथ का हिंसा से या घृणा से संबंध जोड़ना अबुद्धिमत्ता है। वामपंथ उपेक्षित, प्रताड़ित, पद्दलित और पिछड़े वर्ग को उठाने का विचार है, विवेक है और व्यथा है। मानवीय करुणा से आपूरित वामपंथ मानवीय पद्धति से ही समाधान करना चाहेगा। यथावत स्थितिवादी यदि कोई दक्षिणवर्ग है, तो वह चौधरी चरण सिंह को स्वीकार नहीं है। यदि वामपंथ मानवीय आधारों पर सामाजिक विषमताओं का समाधान करना चाहता है, चरण सिंह जी उसे स्वीकार करते प्रतीत होते हैं।

यथार्थवादी चिंतन

यथार्थवादी राजनीतिक चिंतन के पक्षधर होने के कारण चरण सिंह जी विशेष ग्रहणीय हैं। मार्क्स और महात्मा गाँधी के विचारों में सत्ता के अंतिम स्वरूप को लक्ष्य कर जो 'यूटोपिया' है, उस दिशा में चरण सिंह जी ने चिंता नहीं की है, राज्यशक्ति के समाप्त होने की, या जनशक्ति के ऐसे विकास स्तर को स्पर्श करने की कल्पना, जहाँ राज्य समाप्त हो जाए, निश्चयपूर्वक आज 'यूटोपिया' है। आज की राजनीति, राज्यशक्ति और जनशक्ति के संतुलित सामंजस्य की अपेक्षा करती है। चौधरी चरण सिंह ऐसी राजनीति के ही सूत्रधार हैं। महात्मा गाँधी पर विश्वास करने वाले आज के कुछ राजनीतिक विचारक, आज की राजनीति पर विश्वास नहीं करते, वे आने वाले कल की राजनीति का स्वप्न देखते हैं। ये स्वप्नदृष्टा स्वागत योग्य हो सकते हैं; किंतु आज की यथार्थ राजनीति से जूझने का कौशल न प्रकट करना, पलायनवाद भी बन सकता है। ये प्रतीक्षावादी या पलायनवादी जिस 'यूटोपिया' में रह रहे हैं, उससे उन्हें निकलना होगा और यथार्थ की चुनौती स्वीकार करनी होगी। ऐसा प्रतीत होता है कि चरण सिंह जी ने चुनौती भरे यथार्थ को अपने चिंतन और चरित्र में स्वीकार किया है। गाँधी विचार में 'यूटोपिया' से अधिक यथार्थ का महत्व है। केवल सत्ता में जाना ही यथार्थ नहीं। समसामयिक समस्याओं से जूझना भी यथार्थ है।

आदर्शोन्मुखी यथार्थ

चरण सिंह जी के राजनीतिक चिंतन में यथार्थ आदर्शोन्मुखी है। बीसवीं शती के उत्तरार्द्ध के दूसरे दशक में नागपुर के कांग्रेस महा अधिवेशन में पंडित नेहरू द्वारा समर्थित सहकारी कृषि का चरण सिंह जी ने विरोध किया था। उसका अभिप्राय सहकार का विरोध कभी नहीं था। सहकारिता के उस प्रतिमान का विरोध था, जो संस्थाओं को प्रमुखता देकर व्यक्ति के अभिक्रम को और स्वातंत्र्य को क्षीण कर देता है। यथार्थ यह है कि आज ग्रामीण समाज में सहकार की महती आवश्यकता है। सहकारिता व्यक्ति के कौशल और उत्पादन के परिमाण को बढ़ा सकती है, तो वह स्वागत योग्य है। सन् १९७७ की जनता पार्टी की आर्थिक नीतियों की प्रस्तावना में चरण सिंह जी ने सेवा सहकारिता या साधन उपलब्ध कराने के सहकार को स्वीकार किया है। आज के राजनीतिक चिंतन का मुख्य प्रश्न है कि राज्य व्यवस्था व्यक्ति के स्वातंत्र्य को किस सीमा तक सुरक्षित रख सकेगी और राज्य के हस्तक्षेप की क्या मर्यादा हो? चरण सिंह जी ने इस क्षेत्र में यथार्थ और आदर्श का सामंजस्य किया है। किसान को साधनों का भीषण अभाव है। ये सहकार के द्वारा अपनी सामर्थ्य अवश्य ही बढ़ा सकते हैं। इसी प्रकार अपना स्वातंत्र्य अक्षुण्ण रखकर सहकार के समर्थ स्वरूप की अनुभूति कर सकते हैं।

नैतिक राजनीति

चरण सिंह जी ने अपने चिंतन और चारित्र्य की प्रामाणिकता द्वारा एक परिपक्व राजनीति का दर्शन कराया है। सन् १९७७ की कांग्रेस की ऐतिहासिक पराजय के बाद यह अन्याय के प्रतिकार की भावना सहज थी कि आपात्कालीन अनाचारों का नेतृत्व करने वालों को तत्काल दण्डित किया जाए। किंतु जिस राजनीतिक सब्र और संयम का उदाहरण प्रस्तुत किया गया, वह राजनीति की प्रामाणिकता और परिपक्वता का लक्षण है। विभिन्न आयोगों की रचना का वस्तु–स्थिति की जाँच कराने को किन्हीं क्षेत्रों में सही नहीं माना गया। आयोगों को अनावश्यक भी समझा गया क्योंकि आलोचना करने वाले यह विस्मृत कर देते हैं कि जाँच के बिना आज के सत्ताधारी भी निरंकुश और नियंत्रणहीन हो सकते हैं। जाँच आयोगों द्वारा एक ओर तो लोकतान्त्रिक संदर्भ में सत्ता के दुरुपयोग न होने की आकांक्षा बलवती होगी, और दूसरे सत्ता द्वारा सम्पत्ति के अवैध संचय पर लोभ की दृष्टि समाप्त होगी। यह नैतिक राजनीति की नीतिमत्ता

है कि वस्तु स्थिति की जाँच के लिए आयोगों की रचना की गई। इससे स्वस्थ राजनीति के शुभारंभ होने की कल्पना और कामना करनी चाहिए।

अनुशासनवादी चिंतन

लोकतांत्रिक राजनीति में एक जो अनुशासन का अभाव होकर भीड़तंत्र का प्रभाव स्थापित होता है, उसका विरोध चरण सिंह जी के राजनीतिक चिंतन और चरित्र में सर्वत्र परिलक्षित है। अनुशासन के पक्षधर के रूप में उनकी छवि उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्रित्व काल में रही है। अनुशासित व्यक्ति और समाज ही लोकतंत्र को सही दिशा और दायित्व देने में समर्थ हैं। लोकप्रियतावाद कभी–कभी अनुशासन के विरोध में प्रतीत होता है; किंतु चरण सिंह जी ने लोकप्रियतावाद का समर्थन न कर अनुशासन का पक्ष लिया है। फिर भी सन् १९७७ मार्च के महानिर्वाचन ने यह स्पष्ट किया है कि वे अपने चिंतन और चरित्र में लोकप्रियतावाद और अनुशासनवाद दोनों का संतुलन, सामंजस्य और समन्वय करने में समर्थ हैं। भारतीय राजनीति में एक अनुशासन की आवश्यकता है, जो स्वेच्छा से व्यक्ति के मन में जागृत हो तथा समाज संकल्पित और व्यवस्थित होकर प्रगति के मार्ग पर अग्रसरित हो सके।

चरण सिंह जी के अनुशासनवाद को दृष्टिगत रख कर स्वच्छ प्रशासन के लिए अपने कार्यकाल में सर्वत्र और सदैव प्रयत्न किया और कर रहे हैं। राज्यकर्त्ता अपने कर्त्तव्यबोध से यदि सामान्य नागरिक के अधिकारों का रक्षण नहीं करता, तो यह समाज के लिए दुर्भाग्यपूर्ण होता है। राज्यकर्त्ता का कर्त्तव्यबोध उसके लिए अनिवार्य है ही, समाज के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। स्वच्छ प्रशासन में उनसे किसी रुचि वैचिर्त्य का आरोप न कर, सहज रूप से यह देखना कि लोकतांत्रिक संदर्भ में समाज में विभिन्न वर्गों का दायित्व क्या है? प्रशासन में संलग्न व्यक्ति देश में अधिक शिक्षा और सुविधा संपन्न, सामान्य नागरिक की तुलना में हैं। अतः स्वच्छ प्रशासन की आकांक्षा सहज और स्वाभाविक है।

जनवादी चिंतन

चरण सिंह जी एक ऐसे अनुशासनवाद के पक्षधर प्रतीत होते हैं, जो राज्यशक्ति को अधिक विस्तार या उसकी हस्तक्षेपनीयता में अधिक बढ़ोत्तरी पर विश्वास नहीं करता। जनवादी शक्तियों को बढ़ाने पर उनका अधिक विश्वास है। जनवादी शक्तियाँ ही परिवर्तन का समर्थन करती हैं। बीसवीं

शती के उत्तरार्द्ध के दूसरे दशक में, जब चरण सिंह जी के अभिक्रम से भारतीय क्रांतिदल की स्थापना हुई थी, तब यह स्पष्ट हो गया था कि क्रांतिवादी शक्तियाँ यथास्थितिवाद को तोड़ने का संकल्प ले रही हैं। भारतीय क्रांति दल में पिछड़ी जातियों के रूप में मेहनतकश और कृषि मजदूरों ने अपनी भागीदारी और समर्थन से यह सिद्ध किया कि चरण सिंह जी एक ऐसे जनवाद के समर्थक हैं, जो समाज की नींव में विशाल जनसमुदाय को, समर्थ और संपन्न रूप में चाहता है। भारतीय समाज में यह स्थिति स्पष्ट रही है कि उत्पादन में लगा हुआ विशाल जनसमुदाय उपेक्षित रहा है। शेष समाज की सभ्यता में उसे दाखिल नहीं किया गया था। चौधरी चरण सिंह जी का राजनीतिक चिंतन कोटि–कोटि उपेक्षित जनों के प्रति समर्पित है।

५१

संदेश ही पुरुषार्थ

डॉ. एल. एम. सिंहवी*

मेरा अभिमत है कि श्री चरण सिंह द्वारा २३ मार्च, १९७६ को उत्तर प्रदेश की विधानसभा में प्रस्तुत किया गया भाषण हमारे संसदीय इतिहास के सर्वाधिक महत्वपूर्ण व क्रांतिकारी भाषणों में से एक है। यदि हमारे संसदीय संस्थानों का एक समकालीन समयकोष होता, तो यह भाषण निस्संदेह भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक अनिवार्य स्मृति चिह्न होता।

उक्त ऐतिहासिक भाषण में श्री चरण सिंह ने एक दमित राष्ट्र की व्यथा को शब्दों में पिरोया और घेराबंदी में जी रहे भारतवासियों की पीड़ा एवं संताप को प्रत्यक्ष रूप से अभिव्यक्त किया। उन्होंने अदम्य साहस और परिपक्वता के साथ उद्‌गार व्यक्त किए। उन्होंने उचित आक्रोश के साथ परंतु द्वेष या कुटिलता से मुक्त होकर वाणी विमर्श किया। वे एक संत और योद्धा की भाँति दृष्टि एवं वीरता के अद्‌भुत समन्वय के साथ बोले। उन्होंने किसी निश्चित दल या क्षणिक विवाद के किसी पक्ष के लिए नहीं, अपितु राजनीतिक व्यवस्था की मूलभूत संरचना, आम जनता की स्वतंत्रता तथा लोकतंत्र एवं विधि—व्यवस्था के लिए उद्‌भावना की।

श्री चरण सिंह के वीरतापूर्ण भाषण की सच्ची प्रशंसा के लिए, हमें भारत के आधुनिक राजनीतिक और संवैधानिक इतिहास के परिप्रेक्ष्य को पुनः समझना चाहिए और स्वयं को लोकतांत्रिक गौरव के साथ हमारे राष्ट्रीय संकल्प की याद दिलानी चाहिए।

१९४७ में स्वतंत्रता की प्राप्ति और १९५० में हमारे गणतंत्रात्मक संविधान की घोषणा के साथ, स्वतंत्रता, समानता, न्याय और मानव की गरिमा की अवधारणाएं हमारे राष्ट्रीय पंथियन में प्रतिष्ठित हुईं। भारत के स्वतंत्रता संग्राम की लंबी रात और स्वतंत्रता के हमारे उदय में, हमने

---

* डॉ. लक्ष्मी मल सिंघवी (१९३१—२००७) एक प्रख्यात विधिवेत्ता और प्रमुख संवैधानिक विशेषज्ञ, एक राजनयिक, १९६२—१९६७ तक लोकसभा के सांसद और १९९८—२००४ तक राज्यसभा के सदस्य थे। सार्वजनिक कानून और सार्वजनिक मामलों में उनके योगदान के लिए उन्हें १९९८ में पद्म भूषण से सम्मानित किया गया था। श्री सिंघवी का यह लेख परंतप, देशभक्त मोर्चा, पृ. ३८३—३८६ में प्रकाशित हुआ था। नई दिल्ली, १९७८।

स्वयं से वादा किया था कि मानव मन की गुलामी की कभी अनुमति नहीं देंगे। हमारे संविधान और स्वतंत्रता संग्राम के मूल्यों ने हमें एक राष्ट्र के रूप में सत्ता के मनमाने और अधिनायकवादी निरंकुशवाद के सभी रूपों के खिलाफ गहराई से प्रतिबद्ध किया था।

१९७५–७६ की आपातकाल के दौरान, स्वतंत्रता बंधन में थी। स्वतंत्रता ने अपना संवैधानिक आधार खो दिया था। न्यायालयों की शक्ति, जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों का प्रभाव और प्रेस, शिक्षाविदों, व्यवसायों और जनमत के प्रभाव पर अचानक ग्रहण लगा। मार्च १९७६ में आपातकाल में, कम से कम प्रतीत होता है और कुछ समय के लिए सभी व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए, विधायी और प्रशासनिक स्तरों पर खुद को समेकित करने में सफलता प्राप्त की थी। विधानमंडल और न्यायालयों के आकाश पर सबसे काले बादल छाए हुए थे। श्री चरण सिंह का २३ मार्च, १९७६ का भाषण एक वास्तविक गरज और बिजली के रूप में आया, जो उन बादलों को भेद रहा था और कुछ हद तक बिखेर रहा था। श्री चरण सिंह के उक्त भाषण की विशिष्टता उस समय के प्रतिकूल परिस्थितियों में निहित है। राष्ट्र उस समय दमनकारी शासन के घोर अंधकार में डूबा था। जनता की आवाज दमित थी, प्रेस की स्वतंत्रता कुण्ठित, और लोकतांत्रिक संस्थाएँ क्षीण हो रही थीं। सत्ता के गलियारों में चापलूसी का बोलबाला था, जबकि विवेकशील आलोचना दमित थी। नागरिक समाज, उद्योग जगत, कृषि क्षेत्र, सभी दबाव में थे। राजनीतिक नेतृत्व भी संकटग्रस्त था।

ऐसे विषम परिदृश्य में श्री चरण सिंह का भाषण एक अलौकिक प्रकाशपुंज के समान था। उन्होंने विधानसभा के मंच का उपयोग कर, संवैधानिक प्रावधानों के अंतर्गत प्रदत्त वाक स्वतंत्रता का अदम्य साहस के साथ प्रयोग किया। उनके द्वारा उद्घोषित सत्य आज भी सर्वकालिक प्रासंगिकता रखते हैं। यह भाषण भारतीय लोकतंत्र के इतिहास में एक महत्वपूर्ण अध्याय है, जो हमें सत्ता के दुरुपयोग के विरुद्ध सतर्क रहने की सीख देता है।

श्री चरण सिंह ने अपने भाषण की शुरुआत सौम्य परामर्शदाता के रूप में की। उन्होंने कहाः

> "सभापति महोदय, आज सदन में जो चर्चा हो रही है वह ऐतिहासिक महत्व की है। हम सामने आई समस्याओं पर पूर्ण न्याय कर पाएँ या न कर पाएँ, परंतु इस बात में दो राय नहीं हो सकतीं कि हमारा देश और उसका भविष्य एक असाधारण और अभूतपूर्व संकट से गुजर रहा है। प्रारंभ में मैं माननीय

> सदस्यों से कहना चाहता हूँ जो कोषाध्यक्षीय पीठिका पर विराजमान हैं कि मैं उनसे ईमानदारी और स्पष्टता से बात करूँगा और यदि कभी भावनाओं में बहकर मेरे मुख से कठोर शब्द निकल जाएँ तो मैं उनसे क्षमा और सहिष्णुता की अपेक्षा करता हूँ।"

स्पष्टतः, श्री चरण सिंह सदस्यों के साथ एक गहन संवाद के इच्छुक थे। उनका उद्देश्य वाद–विवाद में विजय प्राप्त करना नहीं था, अपितु भावनात्मक गंभीरता के साथ अपनी बात रखना था। यह स्पष्ट है कि उनका ध्यान केवल विधानसभा सदस्यों तक सीमित नहीं था, अपितु दिल्ली के शीर्ष नेतृत्व और समस्त भारत के जनमानस तक विस्तृत था। उनका प्रयास तर्क और विवेक की अपील करना था। यद्यपि श्री चरण सिंह के भाषण का राजनीतिक प्रक्रियाओं पर प्रत्यक्ष प्रभाव का यथार्थ मूल्यांकन कठिन है, तथापि यह निश्चित है कि विधानसभा सदस्य अत्यंत प्रभावित हुए। इस भाषण ने न केवल विधायकों, राजनेताओं, अधिवक्ताओं और जनता के अन्य सचेत वर्गों में व्यापक चर्चा उत्पन्न की अपितु देश में स्वतंत्रता की भावना की निरंतरता के प्रति आशावाद को भी पुनर्जीवित किया।

श्री चरण सिंह का भाषण हमारे संसदीय इतिहास में न केवल इसलिए स्मरणीय होगा क्योंकि इसमें तत्कालीन सरकार की सटीक और सुसंगत राजनीतिक आलोचना है, और न ही केवल इसलिए कि यह आपातकाल के दौरान किसी भी निर्वाचित प्रतिनिधि द्वारा दिया गया सबसे लंबा और सर्वांगीण संसदीय भाषण था, अपितु इसलिए कि यह संघर्षरत स्वतंत्रता के पथ पर विश्वास का एक मील का पत्थर था। उन्होंने अपने तथ्यों को सावधानीपूर्वक प्रस्तुत किया था। उन तथ्यों में स्वयं एक अपरिहार्य तर्क था। उनके तर्क और सदन के विवेक एवं अंतःकरण की उनकी अपील स्वयं तथ्यात्मक परिदृश्य का एक अभिन्न अंग थे। तथ्य पूर्णतः ज्ञात नहीं थे। केवल कानाफूसी, अफवाहें और एकपक्षीय रिपोर्टें ही थीं। श्री चरण सिंह के भाषण ने उन कठोर तथ्यों की पुष्टि और प्रमाणिकता की और विधायकों, विशेषकर सत्तारूढ़ दल के सदस्यों से अपने अंतःकरण की खोज करने का आग्रह किया।

श्री चरण सिंह ने सदन को मनमाने और अंधाधुंध गिरफ्तारी एवं निरोधों, व्यापक आतंक और अमानवीय यातनाओं के बारे में बताया। उन्होंने सदन को बताया कि आपातकाल का दुरुपयोग किया जा रहा है, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और असंतोष को क्रूरतापूर्वक दबाया जा रहा है।

उन्होंने सदन को भारत के स्वतंत्रता संग्राम की विरासत की याद दिलाई और बताया कि उससे कैसे विमुख हो गया है। उनके पास जाँच आयोगों की शक्तियाँ, तंत्र और साधन नहीं थे, फिर भी उन्होंने अपने भाषण में जिन विषयों और तथ्यों के बारे में कहा उससे उनके भाषण को एक अर्थ में 'राष्ट्र का महान अन्वेषण' कहा जा सकता है।

श्री चरण सिंह ने सदन को एक प्रकार की 'भारत दर्शन' यात्रा पर ले गए और प्रत्येक विराम पर उन्होंने एक मूलभूत प्रश्न पूछा। भाषण तथ्यात्मक सामग्री से भरपूर था, और उन्होंने तथ्यों को स्वयं बोलने दिया। उन्होंने संवैधानिक और राजनीतिक व्यवस्था के विघटन, मौलिक और सामान्य कानूनी अधिकारों के निलंबन, निराधार और क्रूर कानूनों तथा प्रशासन और पुलिस की ज्यादतियों की बात की। उन्होंने अविश्वसनीय उदाहरणों और यातना की तकनीकों के भयावह विवरण विस्तार से सुनाए। उन्होंने न्यायाधीशों के प्रेरित सुपरसीजन और स्थानांतरण तथा कुछ ऐसे निर्णयों के बारे में भी बताया जिनमें अभी भी आशा की एक किरण थी। उन्होंने संवैधानिक संशोधनों और अधिकार के दुरुपयोग की जाँच और रोकथाम के लिए संसदीय संस्थानों की अप्रभावीता की बात की। उन्होंने सार्वजनिक जीवन और सार्वजनिक नैतिकता के पतन का उल्लेख किया। उन्होंने तत्कालीन शासकों को चुनौती दी और उन्हें आम चुनाव कराने की धमकी दी, साथ ही यह स्पष्ट और निश्चित भविष्यवाणी की कि सत्तारूढ़ दल को चुनाव में हार का सामना करना पड़ेगा।

अपने भाषण के दौरान, श्री चरण सिंह ने एक नाजुक बिंदु को छुआ। उन्होंने कहा कि उन पर और उनके कई सहयोगियों पर लगाया गया यह आरोप कि वे हिंसा करने जा रहे हैं, निराधार है और एक प्रकार का छलावा है। उन्होंने कहा कि उनके लिए हिंसा की वकालत करना संभव नहीं है, लेकिन साथ ही उन्होंने सदन को याद दिलाया कि महात्मा गाँधी ने गुलामी से अधिक हिंसा को प्राथमिकता दी थी। उन्होंने यह भी स्पष्ट और खुलकर कहा, हालाँकि उस समय व्याप्त राजनीतिक निराशा के दबाव में, कि छह सौ मिलियन लोग लंबे समय तक गुलामी में नहीं रहेंगे और यदि सामान्य स्थिति बहाल नहीं हुई तो एक विस्फोट होगा और देश आग में जल उठेगा। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि गाँधीजी ने कायरतावश नहीं बल्कि आदर्श के रूप में अहिंसा को चुना था, और गाँधीजी के उस कथन को दोहराया कि यदि अहिंसा विफल हो गई तो वे लोगों से स्वराज प्राप्त करने के लिए भौतिक बल का उपयोग करने के लिए कहेंगे। उन्होंने कहा कि हिंसा केवल हिंसा को ही जन्म दे सकती है और राज्य और राजनीतिक तंत्र द्वारा व्यापक हिंसा की चरम स्थितियों में

लोगों के पास उसी सिक्के का जवाब देने के अलावा कोई विकल्प नहीं बच सकता है। श्री चरण सिंह के इस कथन के उस भाग से उस समय व्याप्त निराशा की गहराई का अंदाजा लगाया जा सकता है।

श्री चरण सिंह ने आपातकाल की निरंतरता के विरुद्ध दलीलों का एक प्रभावशाली ढाँचा खड़ा किया। उतनी ही प्रभावी ढंग से उन्होंने स्वतंत्रता दमन के औचित्य के भवन को ध्वस्त कर दिया। उन्होंने पंडित जवाहरलाल नेहरू के १९३६ में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के अधिवेशन में दिए गए भाषण के मार्मिक अंशों का प्रभावी ढंग से उद्धरण किया। श्री चरण सिंह द्वारा पंडित जवाहरलाल नेहरू के भाषण से उद्धृत पहला अंश था:

> "साथियों, मनोविज्ञान में रुचि होने के कारण, मैंने नैतिक और बौद्धिक पतन की प्रक्रिया देखी है और पहले से कहीं अधिक महसूस किया है कि कैसे निरंकुश सत्ता भ्रष्ट करती है, अपमानित करती है और नीचा दिखाती है।"

श्री चरण सिंह द्वारा पंडित जवाहरलाल नेहरू के भाषण से उद्धृत दूसरा अंश था:

> "एक सरकार जिसे आपराधिक कानून संशोधन अधिनियम और इसी तरह के कानूनों पर निर्भर रहना पड़ता है, जो प्रेस और साहित्य को दबाती है, जो सैकड़ों संगठनों पर प्रतिबंध लगाती है, जो लोगों को बिना मुकदमे के जेलों में रखती है... एक ऐसी सरकार है जिसके अस्तित्व के औचित्य की छाया तक नहीं बची है।"

अपने विस्तृत भाषण के अंत में, श्री चरण सिंह ने राष्ट्र की दुर्दशा की तुलना महाभारत के दुर्योधन के दुःखद चरित्र से की। उन्होंने कहा कि दुर्योधन सही और गलत के बारे में जानता था, लेकिन वह अपने अहंकार के कारण सही करने में असमर्थ था। इसी प्रकार, उन्होंने राष्ट्र की दुर्दशा का श्रेय राजनीतिक वर्ग के सामूहिक स्वार्थ को दिया।

श्री चरण सिंह ने अपने सहयोगियों से व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा से ऊपर राष्ट्रीय हित को प्राथमिकता देने का आग्रह किया। उनका भाषण अंतःकरण की पुकार था, लोकतांत्रिक मूल्यों के क्षरण के विरुद्ध एक स्पष्ट आह्वान था। यद्यपि वर्तमान परिस्थितियों के प्रति निराशा की भावना उनके भीतर थी, लेकिन यह राष्ट्र के आदर्शों के प्रति उनकी अटल प्रतिबद्धता का भी प्रमाण था।

उनका भाषण शासन की ज्यादतियों का एक विस्तृत दस्तावेज था, लोकतांत्रिक पतन का एक विधिसम्मत विश्लेषण था, और संभावित परिणामों की एक भविष्यवाणी थी। यह अवज्ञा का एक साहसी कार्य था, अंधकार के समय में आशा की एक ज्योति थी। श्री चरण सिंह की विरासत केवल उनके शब्दों में ही नहीं, बल्कि उनके अटल साहस और राष्ट्र के प्रति उनके गहन प्रेम में निहित है। उनका भाषण लोकतंत्र की नाजुकता और उसकी रक्षा के लिए आवश्यक सतर्कता की एक शक्तिशाली याद दिलाता है।

उनके भाषण में राष्ट्र की दुर्दशा के प्रति दुःख और उदासी की झलक भी थी, लेकिन साथ ही झुकने या हार मानने से इंकार करने का भी संकल्प था। वे जीवन भर लड़ने को तैयार थे और फिर अपनी विरासत उन लोगों को सौंपने के लिए तैयार थे जिनमें उनका असीम विश्वास था। निराशा और समर्पण के उस क्षण में, श्री चरण सिंह बायरन के साथ जा सकते थे जिन्होंने कहा थाः

> "स्वतंत्रता की लड़ाई एक बार शुरू हो जाने पर,
> रक्त से लथपथ पिता से पुत्र को विरासत में मिली,
> हालाँकि अक्सर विफल रहती है, हमेशा जीती जाती है।"

श्री चरण सिंह और उनके स्मरणीय भाषण के बारे में यह उचित रूप से कहा जा सकता है कि व्यक्ति के विचार और संदेश ही व्यक्ति की वास्तविक पहचान है, क्योंकि वह भाषण श्री चरण सिंह का जीवनी संबंधी घटनाओं की सूची या विभिन्न अवसरों पर उनके द्वारा कही या लिखी गई बातों के संकलन या उनकी शारीरिक समानता के चित्रण से बेहतर प्रतिनिधित्व करता है। उस भाषण में वह सर्वोत्कृष्ट व्यक्ति पाया जाता है जो भारत की भूमि के कुछ उल्लेखनीय गुणों का प्रतीक है। वे धरती के हैं, सादगीपूर्ण हैं। उनकी सामान्य समझ में एक विशिष्ट दृढ़ता है। उनमें साहस और शक्ति है। वे अत्यंत सीधे–सादे हैं, और साथ ही जिद्दी और अडिग भी हैं। उनमें एक कठोर बाहरी आवरण के साथ–साथ एक आंतरिक कोमलता और प्राकृतिक उदारता भी है। इन सब से ऊपर, उनका देशभक्ति में एक आध्यात्मिक गुण है। २३ मार्च, १९७६ का उनका भाषण उन्हें उनके सर्वश्रेष्ठ रूप में दर्शाता है। यदि सफलता और उच्च पद मानदंड नहीं होने चाहिए, तो वह भाषण श्री चरण सिंह के प्रतिष्ठित सार्वजनिक जीवन का सबसे चमकदार शिखर था।

५२

चौधरी चरण सिंह की किसान राजनीति

विनय दीक्षित*

स्वतंत्र भारत में भारतीय राजनीति को किसान आधारित और किसान अभिमुख बनाने की लगातार कोशिश करने वाले राजनेताओं में चौधरी चरण सिंह का नाम सबसे महत्त्वपूर्ण है। वे कई बार इस कोशिश में असफल रहे, लेकिन उन्होंने कभी हिम्मत नहीं हारी, इसीलिए वे सफल भी हुए और उन्होंने देश की राजनीति की दशा और दिशा को बदल डाला, लेकिन यह देश के लिए दुर्भाग्य जनक है कि उनके बाद देश में खेती और किसान की बर्बादी और दुर्दशा की सुध लेने वाला आज कोई भी नहीं है।

चौधरी चरण सिंह स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान ही सामाजिक, राजनीतिक क्षेत्र में सक्रिय हो गए थे, तब वे युवा थे। उन्होंने स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करते हुए कई बार जेल यात्राएँ भी कीं और अनेक तरह के कष्ट भी सहे, लेकिन देश सेवा के व्रत को लेकर राजनीति में उतरे चौधरी ने संघर्ष पथ से कदम पीछे नहीं हटाए। इस दौर में सामाजिक–राजनीतिक परिवर्तन की प्रक्रिया में अनेक विचारधाराएँ सचेतन युवा पीढ़ी और देशभक्त लोगों को अपनी ओर आकर्षित कर रही थीं। चौधरी चरण सिंह पर एक ओर जहाँ आर्य समाज की सामाजिक परिवर्तन की क्रांतिकारी विचारधारा का प्रभाव पड़ा, तो वहीं वे महात्मा गाँधी की स्वदेशी अर्थव्यवस्था के विचारों से भी प्रभावित हुए। रूसी क्रांति के बाद भारत में साम्यवादी विचारधारा के प्रसार से शिक्षित युवावर्ग प्रभावित होने लगा था, तब चौधरी ने इस विचारधारा का भी अध्ययन किया और अपने आर्थिक चिंतन में समाजवादी विचारों और कार्यक्रमों को भी अपनाया। विभिन्न विचार धाराओं के सगुण व्यवहारिक पक्ष को अपनाकर चौधरी चरण सिंह एक परिवर्तनकारी शक्ति के रूप में राजनीति में उभरे।

आजादी से पहले ही वे कांग्रेस में एक ताकतवर क्षेत्रीय नेता के रूप

---

* विनय दीक्षित, भोपाल, मध्य प्रदेश में पत्रकार थे।

में उभर चुके थे और आजादी के बाद पहली सरकार में ही एक कनिष्ठ मंत्री के रूप में शामिल होकर उन्होंने उत्तर प्रदेश में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान बना लिया था, लेकिन उन्होंने सत्ता को कभी अपना साध्य नहीं माना, बल्कि सत्ता को समाज और देश सेवा का एक साधन मानकर, सच्चे संत की तरह राजनीति में काम किया। आजादी के बाद भारत की लोक सभा और विधानसभाओं में चुने गए जनप्रतिनिधियों का पेशेवार विश्लेषण करने से जब यह उजागर हुआ कि लोकतांत्रिक शासन प्रणाली में चुने गए जनप्रतिनिधियों में किसानों का प्रतिशत बमुश्किल १५ तक ही है, तो चरण सिंह व्यथित हो गए। केवल कमरे के भीतर ही नहीं, बल्कि जनसभाओं में भी इस बात को कहने लगे कि कृषि–प्रधान भारत देश में लोकतंत्र की मजबूती के लिए जरूरी है कि राजनीति को किसान – अभिमुख दिशा दी जाए और राजनीति में किसान की निर्णायक भूमिका तय की जाए। चौधरी चरण सिंह का यह सोच, उनके किसी निजी स्वार्थ से प्रेरित नहीं था। इस सोच के पीछे उनका भारतीय इतिहास और समाज के गहन अध्ययन से निकले निष्कर्ष ही थे। बाद में चौधरी साहब ने अपनी पार्टी की सभाओं में और जनसभाओं में इस बारे में बताया भी कि भारत जैसे जनसंख्या बहुल, विशाल और विभिन्नताओं से भरपूर देश में कृषि आधारित अर्थव्यवस्था और कृषक लोकतंत्र ही भारत को आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक रूप से मजबूत बना सकता है।

उत्तरप्रदेश में एक कनिष्ठ मंत्री होते हुए भी चौधरी चरण सिंह ने जमींदारी प्रथा को खत्म करने, और भूमि सुधार विधेयक विधानमंडल से पारित कराने में जो महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की, उसकी पूरे देश में सराहना हुई। चौधरी भूमि सुधार कानून को बिना प्रक्रियावादी परिवर्तन के पारित कराने और इसे निष्फल बनाने के निहित स्वार्थी तत्वों द्वारा किए गए प्रयासों के खलिफात बड़ी निर्भीकता से लड़े और सफल भी हुए। उनके कट्टर आलोचकों ने भी माना कि चरण सिंह की लगन और समर्पण के कारण ही उत्तर प्रदेश का भूमि सुधार कानून देश में अपनी किस्म का पहला प्रगतिशील समाजवादी कानून कहा जाता है।

सोवियत रूस में सहकारी खेती की सफलता के प्रचार से भारत के समाजवादी और साम्यवादी प्रभावित होकर भारत में इसे अपनाने पर जोर देने लगे। प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू भी इससे सहमत हो गए और उन्होंने एक योजनाकार 'श्री महालनोबिस' को इस बारे में योजना बनाने का काम सौंप दिया। योजना बनकर तैयार हो गई और १९५९ में नागपुर में हुए अखिल भारतीय कांग्रेस के अधिवेशन में पंडित

नेहरू ने चर्चा के लिए सहकारी खेती विषयक प्रस्ताव रखा, तब कांग्रेस के समाजवादी नेताओं ने इस प्रस्ताव का जमकर समर्थन किया, लेकिन चौधरी चरण सिंह ने अपने संक्षिप्त भाषण में जब इस प्रस्ताव का जोरदार विरोध किया, तो अधिवेशन में सन्नाटा छा गया। विरोधियों ने चौधरी की इस खलिफात को पंडित नेहरू के खिलाफ विद्रोह कहा, तो किसी ने चौधरी को प्रगतिशील कार्यक्रमों का विरोधी बताया, लेकिन पंडित नेहरू ने चौधरी चरण सिंह को अपने विचार खुलकर रखने का पर्याप्त समय दिया और भाषण के बाद भी उन्होंने इस विषय पर उनसे चर्चा की। बाद में पंडित नेहरू ने सहकारी खेती की योजना को स्थगित कर देने की घोषणा की।

सहकारी खेती के विरोध के कारण कम्युनिस्ट और सोशलिस्ट खेमों में चरण सिंह को पूँजीवादी, प्रतिक्रियावादी और प्रगति विरोधी कहा जाने लगा, लेकिन इस आलोचना की उन्होंने कभी परवाह नहीं की। चरण सिंह जमीन से जुड़े नेता थे और वे भली प्रकार जानते थे कि अपने खेत से किसानों का कितना गहरा लगाव होता है। वे जानते थे कि भारतीय परिस्थितियों में सामूहिक खेती या सहकारी खेती मानव स्वभाव के विरुद्ध है। उन्हें विश्वास था कि भारत की परंपरागत कृषि–पद्धति में कोई बदलाव कर सहकारी खेती जैसे प्रयोग से अनाज उत्पादन पर बुरा असर पड़ेगा और देश की कृषि अर्थव्यवस्था और ग्रामीण सामाजिक व्यवस्था बिगड़ जाएगी। उन्होंने १९६० में ही भविष्यवाणी कर दी थी कि सोवियत संघ में भी सहकारी खेती का प्रयोग ज्यादा दिनों तक नहीं चल पाएगा। अपनी भविष्यवाणी सत्य होते तो वे देख नहीं पाए, लेकिन दुनिया ने देख लिया कि गोरवाचेव के शासन काल में सहकारी खेती की पद्धति से ही ग्रामीण क्षेत्र तबाही की हालत में आ गया था और इसे सुधारने के लिए गोर्बाचेव ने पट्टेदारी पद्धति के जरिए कृषि भूमि को निजी संपत्ति के रूप में किसानों को सौंपने की पहल शुरू की थी। कुछ ही समय में सोवियत संघ में बिखराव भी हो गया और यह विशाल देश खण्ड–खण्ड हो गया। रूस के इस अनुभव से यह प्रमाणित होता है कि चरण सिंह द्वारा सामूहिक अथवा सहकारी खेती का विरोध करना दुराग्रह पूर्ण नहीं था, बल्कि एक सुविचारित व्यवहारिक विचार प्रस्तुतिकरण था।

राजनीति और लोकतंत्र को कृषक आधार प्रदान करने के उद्देश्यों के कई निहितार्थ भी थे, जिनका खुलासा चौधरी चरण सिंह ने बाद में किया। आर्य समाज से प्रभावित चौधरी साहब, हिंदू समाज में एकता के प्रबल पक्षधर थे, लेकिन जाति प्रथा, छुआछूत के वे घोर विरोधी थे। गाँव

में जन्मे और गाँव से जुड़े रहे चौधरी जानते थे कि कृषक समाज अपने आर्थिक–सामाजिक हितों के लिए जाति, धर्म और वर्ग की विभाजनकारी रेखाओं को लाँघकर सहयोग और समन्वय करने की विशेषता रखता है। इसीलिए उन्होंने किसान राजनीति को लोकतंत्र में परिवर्तनकारी भूमिका में खड़ा किया। उत्तर प्रदेश में १९७० और १९८० के दशक में चरण सिंह के जनाधार को 'अजगर' नाम देने वाले उनके आलोचक यह भूल जाते हैं कि अ, अर्थात् अहीर, ज, अर्थात् जाट, ग, अर्थात् गुर्जर और र, अर्थात् राजपूत (भूमिपुत्र) को एक जुट करने के बाद ग्रामीण भारत में बचता ही क्या है। राजपूत का व्यापक अर्थ है, भूमि से जुड़े सभी जाति–धर्म के लोग, फिर चाहे वे दलित हों, कोई और पिछड़े या गरीब सवर्ण और अल्पसंख्यक, लेकिन चौधरी के राजनीतिक गणित को न समझने वाले उन्हें अकारण ही जातिवादी राजनीति का प्रणेता कहकर बदनाम करते रहे, जबकि उत्तर प्रदेश के किसानों ने हमेशा चौधरी को "किसानों का मसीहा" ही माना और आज भी मानते हैं।

कृषक लोकतंत्र और विकेंद्रीकृत अर्थ–व्यवस्था में चरण सिंह का गहरा और ईमानदार विश्वास था। उन्होंने महसूस किया कि लोकतंत्र में सत्ता के बिना कुछ भी परिवर्तनकारी काम करना मुश्किल है, तब उन्होंने सत्ता प्राप्त करने के लिए न चाहते हुए भी कई विरोधाभासी समझौते और तालमेल किए। गैर–कांग्रेसी दलों और कांग्रेस दोनों से तालमेल कर उन्होंने १९६७ और १९७० में उत्तर प्रदेश में सरकार बनाई, लेकिन वे शुद्धरूप से दूसरे राजनेताओं की तरह सत्ता लोलुप नहीं थे। चूँकि वे अपने सिद्धांतों और कार्यक्रमों से गहरे रूप से जुड़े थे और सत्ता पाने पर उन्होंने उन्हें लागू भी किया, किंतु जब उन्हें लगने लगा कि सिद्धांतों से समझौता असहनीय होता जा रहा है, तो उन्होंने सत्ता छोड़ भी दी। वे जब–जब पद पर रहे एक मजबूत और ईमानदार शासक के रूप में उनकी ख्याति रही और वे भ्रष्ट, जनविरोधी, कामचोर अफसरों, कर्मचारियों के लिए सिर दर्द बने रहे।

१९७७ में जनता पार्टी की विजय में चौधरी चरण सिंह की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही, लेकिन राजनीति के खेल में उन्हें प्रधानमंत्री पद नहीं मिल पाया, फिर भी वे गृहमंत्री के रूप में जनता पार्टी सरकार में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नेता के रूप में बने रहे। बाद में परिस्थितियाँ कुछ ऐसी बनी रही कि अंतर्द्वंद्वों के कारण सरकार का पतन हो गया और उस समय की राजनीति और देश की परिस्थितियों के हित में चौधरी चरण सिंह को कांग्रेस समर्थन से सरकार बनानी पड़ी और प्रधानमंत्री पद स्वीकार करना पड़ा। १९८० में एक बार फिर विपक्ष में बैठकर चौधरी चरण सिंह

ने गैर–कांग्रेस दलों में नीतियों और कार्यक्रमों के आधार पर एकता कायम करने की कोशिश की। उनकी इस एकता की कोशिश को कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, उड़ीसा, महाराष्ट्र. तमिलनाडु जैसे राज्यों से भी समर्थन मिला। कर्नाटक और आंध्र प्रदेश में गैर–कांग्रेस सरकारें बनीं, तब चौधरी चरण सिंह को एन.टी. रामाराव और रामकृष्ण हेगड़े ने भरोसा दिलाया कि अगले लोक सभा चुनाव में उत्तर ही नहीं, दक्षिण भारत भी देश की राजनीति में परिवर्तन लाने में सहयोगी भूमिका अदा करेगा। हरियाणा में एक बार फिर किसान राजनीति मजबूत होने लगी और विधानसभा चुनाव में चौधरी देवीलाल को अपार जनसमर्थन भी मिला, लेकिन बढ़ती आयु और बिगड़ते स्वास्थ्य के कारण चौधरी चरण सिंह सक्रिय राजनीति से दूर हो चुके थे और कुछ समय बाद ही उनका निधन हो गया।

चौधरी चरण सिंह भले ही आज हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन उनके विचार हमेशा हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे। यह सोचने वाली बात है, कि १९९१ में शुरू किए गए आर्थिक सुधारों के कार्यक्रमों के बाद से देश में आर्थिक विकास तो तेजी से हो रहा है, लेकिन विकास की इस प्रक्रिया में किसान और खेती हाशिए से बाहर हैं क्यों? हर साल देश के कई राज्यों में किसान ऋणग्रस्तता और फसल–बर्बादी से दुखी होकर आत्महत्या कर रहे हैं। भरपूर पैदावार के बाद भी गेहूँ गन्ना, धान, चना, साग–सब्जी उत्पादकों को उनकी फसल का लाभदायक मूल्य नहीं मिल रहा है, विकास के लिए किसानों से औने–पौने दाम पर सरकार और पूँजीवादी ताकतें जमीन छीन लेती हैं, गाँव में रोजी–रोटी का संघर्ष तेज हो रहा है और गाँव से पलायन की रफ्तार बढ़ रही है। आज किसान राजनीति, जाति, धर्म, क्षेत्र या अन्य भावुक मुद्दों में उलझाकर कुचलकर रख दी गई है। चाहे संसद हो या विधानसभा, कहीं भी किसानों की आवाज सुनने वाला कोई नहीं है। आज जरूरत है, एक और चौधरी चरण सिंह की, और इस जरूरत को हमें ही अपने बीच से "चरण सिंह" पैदा करके पूरा करना होगा।

५३

उन्होंने पुलिस की छवि को सुधारा

जे. एन. चतुर्वेदी*

भारतीय पुलिस सेवा के १९५२ के बैच के पुलिस अधिकारी श्री जे.एन. चतुर्वेदी, उत्तर प्रदेश के पुलिस महानिदेशक के पद से सेवानिवृत्त हुए। पुलिस विभाग में आपकी छवि एक कर्मठ और ईमानदार अधिकारी की रही। आपने केंद्र तथा राज्य सरकार में अनेक उच्च तथा महत्त्वपूर्ण पदों पर रहते हुए, बड़ी कुशलता से अपने दायित्वों का निर्वहन किया। जब चौधरी चरण सिंह केंद्र में गृहमंत्री बने, तो आपको दिल्ली का प्रथम पुलिस आयुक्त बनाया गया। चौधरी चरण सिंह ने पदासीन रहते हुए अपने समय में, पुलिस विभाग की छवि को सुधारने व उसे आवश्यक सुविधाएँ प्रदान करने के अनेक कार्य किए। डॉ. किरन पाल सिंह के साथ २८ अप्रैल, २००७ को हुई इस भेंटवार्ता में, इन्हीं बिंदुओं पर प्रकाश डाल रहे हैं श्री चतुर्वेदी जी।

प्रश्न – चतुर्वेदी साहब! आप उ. प्र. केडर के ईमानदार तथा कर्त्तव्यपरायण पुलिस अधिकारियों में रहे। आपके विचार में चौधरी चरण सिंह किस प्रकार के शासन के पक्षधर थे?

उत्तर – डॉ. साहब! मेरे विचार से चौधरी साहब ऐसे पहले उच्च पदासीन राजनीतिज्ञ थे, जिन्होंने प्रशासन में ईमानदारी को महत्त्व दिया तथा जिन्होंने पहली बार भ्रष्टाचार जैसी समस्या पर गंभीरता से ध्यान दिया और उसे दूर करने के उपाय भी किए। वे बड़ा ही साधारण जीवन व्यतीत करते थे। ऐसे आपको बहुत से व्यक्ति मिलेंगे जो दूसरों को शिक्षा देते हैं, पर स्वयं उस पर अमल नहीं करते, परंतु चौधरी साहब ने अपने जीवन के व्यक्तिगत उदाहरण ों से लोगों में विश्वास पैदा किया। वे कहने में नहीं, करने में विश्वास रखते

---

* जे. एन. चतुर्वेदी १९५१ बैच के यूपी कैडर के आईपीएस। डीजीपी, उत्तर प्रदेश (१९८४–१९८५)। कमिश्नर, दिल्ली पुलिस (१९७८–१९८०)। बीएसएफ के प्रमुख और उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग के चेयरमैन भी रहे।

थे। वे प्रशासन में ही नहीं, निजी जीवन में भी ईमानदारी से नियमों का कठोरता से पालन करते थे। सरकारी धन का उन्होंने कभी दुरुपयोग नहीं किया और न ही किसी को करने दिया। उनके अंदर, उनके व्यक्तित्व में कुछ ऐसा तेज था कि जब भी वे मंत्री या मुख्यमंत्री के पद पर आसीन हुए, भ्रष्टाचारी स्वयं ही काँपने लगते थे। शासन में बैठे अधिकारी–कर्मचारी स्वयं चुस्ती से कार्य करने लगते थे। चौधरी साहब वास्तव में जनहित कार्यों पर ध्यान देने वाले, चुस्त–दुरुस्त व स्वच्छ प्रशासन के पक्षधर रहे और उनके समय में जनता ने ऐसा ही अनुभव किया।

प्रश्न – देश तो आजाद हो गया था, परंतु पुलिस विभाग की कार्यशैली उसी पराधीन–काल की पद्धति पर चल रही थी। क्या चौधरी साहब ने उसमें कुछ सुधार किए?

उत्तर – जैसा कि मैंने अभी आपको बताया था, कि चौधरी साहब ईमानदारी को महत्त्व देते थे। उन्होंने ईमानदार अधिकारियों, जिनकी सुख्याति फैली हुई थी, महत्त्वपूर्ण पदों पर बैठाया। यह प्रदेश की व पुलिस की ही नहीं चौधरी साहब की भी खुशकिस्मत थी, कि जब वे प्रदेश के गृहमंत्री बने, तब कई ऐसे उच्च अधिकारी मौजूद थे, जो पूरी निष्ठा व ईमानदारी से अपना कार्य कर रहे थे। उन्हीं में से एक थे श्री निगमेन्द्र सक्सेना, जो मेरठ क्षेत्र के उपमहानिरीक्षक रहे, चौधरी साहब उन्हें बहुत मानते थे और उनके परामर्श को महत्त्व देते थे तथा उसपर यथा संभव कार्यवाही भी करते थे। यद्यपि वे थोड़े–थोड़े समय के लिए गृहमंत्री तथा मुख्यमंत्री रहे, परंतु उन्होंने ही सर्वप्रथम यह सोचा कि पुलिस की कार्यप्रणाली, जो अंग्रेजों के समय से चली आ रही थी, उसको बदलने की आवश्यकता है। अभी तक यह किसी ने सोचा ही नहीं था। वैसे पुलिस परेड या ऐसे ही अन्य अवसरों पर कुछ नेताओं ने पुलिस में बदलाव की बातें तो एकाध बार कहीं, पर वे केवल औपचारिकता ही रहीं, उन पर गंभीर कोई नहीं हुआ।

इस कार्य में चौधरी साहब ही संलग्न हुए। उनके प्रयत्नों से जनता में पुलिस के प्रति विश्वास पैदा हुआ। जनता ने यह भी अनुभव किया कि एक आदमी ऐसा भी है, जो यह मानता है कि पुलिस का रवैया गलत है, उसमें बदलाव की ऐसी अति आवश्यकता है कि पुलिस में ईमानदार अधिकारी को महत्त्व दिया जाए व उसकी कार्यशैली में आमूलचूल परिवर्तन किया जाए। पुलिस जनता की सहयोगी बने। जनता के प्रति जवाबदेही सुनिश्चित हो। ऐसा करके उन्होंने स्पष्टरूप से यह संदेश दे दिया कि शासन या पुलिस प्रशासन को सुधारा जा सकता है। पुलिस जनता के जानमाल की रक्षक है। उनके स्पष्ट आदेश थे कि किसी निरपराध या

गरीब को सताया न जाए और किसी अपराधी के साथ किसी तरह की कोई रियायत न की जाए। नियम सबके लिए एक हैं।

प्रश्न – चतुर्वेदी जी! पुलिस विभाग की भी अपनी समस्याएँ रही हैं, वाहन आदि समुचित पर्याप्त साधन नहीं हैं, कम वेतन, वर्दी, आवास की समस्याएँ हैं या पुलिस पर अनुचित दबाव रहता है। इस विषय में उन्होंने कुछ सकारात्मक कार्य किए?

उत्तर – चौधरी साहब प्रदेश के गृहमंत्री के रूप में तो कुछ अधिक नहीं कर पाए। एक तो उनका कार्यकाल बहुत थोड़ा रहा और दूसरे सभी कुछ नियंत्रण मुख्यमंत्री के हाथ में रहता है, लेकिन जब वे मुख्यमंत्री बने तो उन्होंने कुछ ठोस कदम उठाए। पहले उन्होंने यह मालूम किया कि पुलिस वाले जनता की शिकायत क्यों नहीं लिखते? उन्हें मुख्यरूप से दो कमियों का पता चला। पहली यह कि उन्हें लिखने–पढ़ने को जो सामग्री साल–भर के लिए दी जाती है, वह इतनी कम होती है कि उसमें छह महीने का काम भी नहीं चलता। ऐसी हालत में पुलिसकर्मी या तो अपने पास से कागज–कलम लाते या फिर जो रिपोर्ट लिखाने आता था उससे मँगा लेते थे। दूसरी कमी यह थी कि पुलिस के पास गाड़ियाँ नहीं थीं, जिससे अपराधी को खोजने तथा मामलों की विवेचना–पैरवी आदि करने में कठिनाई होती थी। इन्हीं कारणों से अपराध लिखे नहीं जाते थे। इसी तरह के कई अन्य कारण भी चौधरी साहब के सामने लाए गए। अतः जब वे द्वितीय बार सन् १९७० में मुख्यमंत्री बने, तो उन्होंने जस्टिस गंगेश्वर प्रसाद की अध्यक्षता में एक पुलिस आयोग की नियुक्ति की। इस आयोग को यह पता लगाना था कि आम जनता की शिकायतें क्यों नहीं लिखी जातीं। इसमें किन साधनों की कमी है या भय है कि गत वर्ष के मुकाबले इस वर्ष अपराध बढ़ने न पाएँ। पुलिस की कार्यप्रणाली, पुलिस अधिकारियों व कर्मचारियों की कमी, वेतनमान, रहन–सहन (आवास) की सुविधा, कर्त्तव्यपालन में राजनीतिक हस्तक्षेप आदि सभी पहलुओं का इस आयोग ने अध्ययन किया और अपनी संस्तुतियाँ दीं। यद्यपि इस रिपोर्ट के आने से पहले ही चौधरी साहब की सरकार गिर गई थी, लेकिन आने वाली सरकारों को इन सिफारिशों की पूरी तरह अनदेखी करने की हिम्मत न हुई।

इस्तीफा देने से पूर्व चौधरी चरण सिंह ने मुख्यमंत्री पद पर रहते हुए कुछ आदेश एकदम लागू कर दिए थे जिनमें

– पुलिस थानों में पहली बार गाड़ियों तथा वायरलेस सैटों की व्यवस्था।

- वेतन आयोग के सुझावों को लागू करना।
- समय पर वर्दी आदि देना सुनिश्चित कराना।
- कर्त्तव्यपालन में किसी प्रकार का सरकारी या राजनीतिक हस्तक्षेप नहीं होने दिया जाए तथा ईमानदारी से ड्यूटी करने पर कोई डर नहीं रहना चाहिए।
- पुलिस ट्रेनिंग कॉलेज में प्रशिक्षण के दौरान एक हजार रुपये अग्रिम राशि जमा करने का नियम समाप्त करा दिया तथा ८० रुपये प्रतिमाह अनुदान देने के आदेश भी दे दिए।
- यदि कर्त्तव्यपालन करते समय कोई अराजपत्रित पुलिसवाला मुठभेड़ में मारा जाता है, तो उसके रिटायरमेंट तक का वेतन उसके परिवार को दिया जाए और फिर बाद में नियमित पेंशन।
- सभी अपराध अंकित किए जाएँ बिना इस भय के, कि अपराधों की संख्या बढ़ने पर पुलिस की भर्त्सना होगी। कोई परेशान, सताया हुआ व्यक्ति रिपोर्ट लिखाने आता है तो उसकी रिपोर्ट तुरंत लिखी जाए, जिससे उसे फौरीतौर पर कुछ तो तसल्ली मिले।

चौधरी साहब का मानना था कि अपराध बढ़ने के अनेक कारण होते हैंः जनसंख्या बढ़ना, औद्योगीकरण तथा बेरोजगारी का बढ़ना आदि। केवल पुलिस के सही व तुरंत लिखने से अपराधों का बढ़ना नहीं माना जा सकता। चौधरी साहब यह भी मानते तथा जानते थे कि अपराध छिपाने में केवल पुलिसकर्मी ही नहीं, बल्कि बड़े अधिकारी और यहाँ तक कि सरकार भी शामिल रहती है। ऐसा उन्होंने कई बार अपने भाषणों में भी कहा। उन्होंने प्रतिवर्ष अपराधों के घटते आँकड़े देखकर यहाँ तक कह दिया था कि यदि ऐसे ही अपराधों में कमी होती रही, तो कुछ वर्षों में हमें पुलिस की आवश्यकता ही नहीं रहेगी, थाने बंद करने पड़ेंगे। ऐसी स्पष्ट बातों का असर जनता और पुलिस पर भी पड़ा। उनके कार्यकाल में पुलिस का मनोबल बढ़ा और पुलिस व जनता के बीच एक सहृदयता का वातावरण बनता नजर आया। उन्होंने एक ऐसा माहौल बना दिया कि पुलिस को कार्य करने में आसानी हो गई। पुलिस को इज्जत भी मिलने लगी और अपराधों पर नियंत्रण भी पहले के मुकाबले अधिक बढ़ा।

प्रश्न – क्या जस्टिस गंगेश्वर प्रसाद आयोग की सिफारिशें लागू हुई?

उत्तर – आयोग की रिपोर्ट आने से पहले ही चौधरी साहब मुख्यमंत्री पद त्याग चुके थे, लेकिन यह कार्य पहली बार हुआ था और इसका पूरा श्रेय चौधरी साहब को ही जाता है। उन्होंने पुलिस विभाग की बीमारी को

पहचान लिया था, जिसका इलाज बाद में धीरे–धीरे होता रहा। हाँ! यदि चौधरी साहब कुछ समय तक और मुख्यमंत्री रहते तो यह इलाज एकदम और शीघ्रता से हो जाता।

प्रश्न – पुलिस विभाग में पहले पदोन्नतियाँ बहुत ही कम होती थीं या नहीं भी होती थीं। इस विषय में उनका कोई विशेष योगदान रहा?

उत्तर – वे जब प्रदेश में दोनों बार गृहमंत्री तथा मुख्यमंत्री बने तो उन्होंने इस विषय में कई कार्य किए। इसके साथ ही जब वे केंद्रीय गृहमंत्री बने तो तब भी ये बातें उनके मन में थीं। इसलिए मार्च १९७७ में गृहमंत्री बनते ही लोकसभा के पहले सत्र में ही उन्होंने राष्ट्रीय पुलिस आयोग के गठन की घोषणा कर दी थी। सबसे पहले सन् १९०२ में लार्ड कर्जन ने एक पुलिस कमीशन नियुक्त किया था, उसके ७५ वर्ष बाद चौधरी साहब ने ही ऐसा आयोग बनाने का कार्य किया। उनके बाद के किसी भी राजनेता इतना दृढ़ संकल्प नहीं है, कि राष्ट्रहित में जो यह चाहते हों कि देश में ईमानदार, कर्मठ, संतुष्ट पुलिस हो और काफी मात्रा में पुलिस हो। पुलिस आयोग का गठन करते समय चौधरी साहब ने यहाँ तक कह दिया था कि "किसी भी देश की प्रगति, विकास तब तक संभव नहीं है, जब तक कि हमारे पास पर्याप्त मात्रा में प्रशिक्षित, ईमानदार और काफी पुलिस न हो।"

प्रश्न – पुलिस विभाग में पदोन्नति की बात भी हम कर रहे थे।

उत्तर – हाँ! उत्तर प्रदेश में उन्होंने पहली बार ऐसा किया कि सहायक सब–इंस्पेक्टर का एक नया ही पद बनवा दिया। हमारे यहाँ समस्या यह थी कि औसतन ८ सिपाहियों में एक सिपाही हैड कांस्टेबिल बनता है। इसी तरह से इंस्पेक्टर और सब–इंस्पेक्टर की संख्या तो और भी कम हो जाती है। यह आम बात थी कि ८० प्रतिशत सिपाही बिना पदोन्नति के सिपाही ही रिटायर हो जाते थे। इसे देखते हुए उन्होंने कांस्टेबिल तथा हैड–कांस्टेबिल के बीच में एक फीती तथा दो फीती, अर्थात् लांसनायक व नायक (विशेषरूप से पी. ए. सी. में) के पद सृजित करा दिए और सहायक सब–इस्पेक्टर का पद इसलिए बनवाया, कि किसी कारण से जब कभी इंस्पेक्टर तथा सब–इंस्पेक्टर थाने में मौजूद न हों, तो चाहे कोई छोटा ही अधिकारी रहे, एक सहायक सब–इंस्पेक्टर मौजूद रहे। इन पदों में चाहे वेतन में थोड़ा ही अंतर हो, पर वर्दी पहनने वालों के लिए कंधे पर फीती या बैज बहुत महत्त्व रखता है। वैसे उन्होंने इंस्पेक्टर व डिप्टी एस. पी. के बीच एक सब–डिप्टी एस. पी. की भी बात चलाई थी, पर जहाँ तक मुझे जान पड़ता है वह बात आगे नहीं बढ़ पाई।

प्रश्न – कुछ लोग चौधरी साहब पर दोषारोपण करते है कि उन्होंने अपनी जाति के लोगों को पुलिस की भर्ती में प्राथमिकता दिलाई। आपके विचार में क्या यह सही है?

उत्तर – जब वे राज्य में अल्प समय के लिए गृहमंत्री थे तब तो मुझे ऐसा कुछ मालूम नहीं पड़ा, लेकिन जब वे केंद्र में गृहमंत्री थे और मैं दिल्ली का पुलिस आयुक्त था, तब मुझे उन्हें निकटता से जानने का अवसर मिला। मैं इस बात को कह सकता हूँ कि जितने दिन मैं उनके साथ रहा, और यह भी कि दिल्ली के आस–पास का क्षेत्र जाट–बहुल क्षेत्र है (हरियाणा, राजस्थान, पश्चिमी उत्तर प्रदेश), मुझे अच्छी तरह स्मरण है कि कभी भी उन्होंने किसी भर्ती या किसी नियुक्ति या किसी पदोन्नति के बारे में कोई भी सिफारिश नहीं की। यदि दिल्ली पुलिस में किसी से कुछ कराना होता तो वे मुझसे ही कहते। केवल उन्होंने ही नहीं उनके किसी परिवार के सदस्य ने भी कभी ऐसी कोई बात नहीं की। मैं सबसे बड़े पद पर था और उनका सबसे विश्वासपात्र भी था, जब मुझसे नहीं कहा तो फिर और किससे कहते?

प्रश्न – चतुर्वेदी जी! अंत में एक प्रश्न और। पुलिस कर्मचारियों के प्रति उनका व्यवहार कैसा था? जैसा अन्य मंत्री, मुख्यमंत्री या नेतागण करते हैं या उससे अलग?

उत्तर – ये तो मैंने जब नौकरी शुरू की थी, तभी देखा था कि वे पहले मंत्री थे जो जहाँ जाते थे, वहाँ का जो भी उच्च अधिकारी हो, थानेदार, तहसीलदार, एस. पी., उसे बुलाकर, हाथ मिलाकर, उसका नाम पूछते, कहाँ के रहने वाले हो आदि हालचाल पूछते थे। उन्हें इज्जत देते थे। दूसरे वे ये भी मानते थे कि यदि हम इन अधिकारियों को इज्जत नहीं देंगे तो आम जनता भी इनका आदर नहीं करेगी, जो शासन के लिए ठीक नहीं होगा। वे यह ध्यान रखते थे कि जनता में ऐसा संदेश नहीं जाना चाहिए कि मंत्री या मुख्यमंत्री अधिकारियों को इज्जत नहीं देते। किरन पाल सिंह जी! यह मेरा सौभाग्य है कि उन जैसे व्यक्ति के साथ कार्य करने का अवसर मिला। मैं उनका विश्वासपात्र बना। मैं तो उन्हें जानता भी न था, न मालूम मेरे अंदर उन्होंने ऐसा क्या देखा, जो मुझे दिल्ली का प्रथम पुलिस कमिश्नर बनाया।

डॉ. सिंह – अच्छा चतुर्वेदी साहब! आपका बहुत समय लिया और आपसे काफी कुछ ऐसी बातें मालूम हुई जिनसे मैं बिल्कुल अनभिज्ञ था। मैं आपका बहुत आभारी हूँ। धन्यवाद। प्रणाम।

चतुर्वेदी जी – प्रणाम! खुश रहो। यह मेरा सौभाग्य है कि आपने मुझे

एक अवसर दिया कि मैं चौधरी साहब के महान् व्यक्तित्व पर कुछ थोड़ा बहुत प्रकाश डाल सकूँ। ईश्वर आपको सफलता प्रदान करें।

चौधरी साहब ने पुलिस की छवि को सुधारा

आई. पी. एस. प्रशिक्षण समाप्त कर जब मैं १९५२ में उत्तर प्रदेश आया, तब तक चौधरी चरण सिंह जमींदारी संबंधी क्रांतिकारी अधिनियम के मुख्य प्रेरणास्रोत उन्मूलन होने के कारण प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके थे, किंतु पुलिस से उनका सीधा संबंध न होने के कारण मुझको उनके बारे में अधिक जानकारी नहीं थी। सन् १९५९ से सन् १९६८ तक मैं प्रतिनियुक्ति पर केंद्र सरकार के अधीन कार्यरत रहा। अतः चौधरी साहब के बारे में वास्तविक जानकारी मुझको १९६८ के बाद ही हुई। जिस समय प्रतिनियुक्ति से मैं उत्तर प्रदेश में वापस आया, तब राज्य में राष्ट्रपति शासन लगा हुआ था। चौधरी साहब कांग्रेस से अलग हो गए थे तथा उन्होंने भारतीय क्रांति दल नाम से अलग पार्टी का निर्माण कर लिया था। मुझको मेरे प्रेरणास्रोत श्री निगमेन्द्रसेन सक्सेना, जो उस समय राज्य के सतर्कता निदेशक थे, के साथ पुलिस अधीक्षक के रूप में नियुक्त कर दिया गया। सन् १९६१ से १९६८ के बीच चौधरी साहब राज्य के गृहमंत्री तथा कुछ समय मुख्यमंत्री पद पर रहकर भ्रष्टाचार निरोधी एवं दृढ़ अनुशासन के लिए ख्याति प्राप्त कर चुके थे। सक्सेना साहब कुछ समय मेरठ परिक्षेत्र के डी. आई. जी. के रूप में, चौधरी साहब के इन्हीं दोनों गुणों एवं पुलिस विभाग के कार्यकलाप की गहरी जानकारी के कारण, उनके विश्वासपात्र बन गए थे। सक्सेना साहब के माध्यम से ही मुझको चरण सिंह जी के उपरोक्त गुणों की जानकारी प्राप्त हुई थी। मेरे मन में उनके प्रति आदरभाव का यही आधार था।

सन् १९६७ में जब वे एक मिले–जुले संयुक्त विधायक दल के नेता के रूप में मुख्यमंत्री बने, तब भी सक्सेना साहब सतर्कता निदेशक थे। शपथ लेते ही चौधरी साहब ने सक्सेना साहब को आदेश दिया कि वे तुरंत उन सभी भ्रष्ट अधिकारियों की पत्रावलियाँ लेकर आएँ जिनके संबंध में शासन द्वारा आदेश अपेक्षित थे। देर रात तक बैठकर उन्होंने प्रत्येक मामले का निस्तारण किया।

एक पुलिस अधिकारी को इसलिए निलंबित करने का आदेश दिया कि उसने एक विभागीय नियम व अनुशासन का उल्लंघन कर चौधरी साहब से भेंट करने का प्रयत्न किया था। उन्हीं दिनों मैं एक जाँच के सिलसिले में अलीगढ़ गया, जहाँ उनमें से एक ने अपना अनुभव बताते हुए

कहा, कि एक दिन जब वे पूर्व की भाँति एक स्थानीय न्यायालय में एक कार्मिक को किसी कार्य के लिए पाँच रुपये 'भेंट' करने लगा तो उसने यह कह कर वापस कर दिए "भेंट अभी नहीं लूँगा। चौधरी का जमाना है।" मुझको स्मरण नहीं कि किसी भी मुख्यमंत्री की इस प्रकार की ख्याति रही हो। सन् १९६९ के निर्वाचन के बाद मैं कानपुर एस. एस. पी. नियुक्त हो गया। चौधरी साहब के नवगठित दल भारतीय क्रांति दल को विधानसभा में लगभग १०० स्थान प्राप्त हुए। अतः वे विरोधी – दल के नेता बने।

मैं अपने स्वभाव के अनुसार उनके द्वारा भेजी गई सभी शिकायतों को प्राप्त कर स्वीकार करने तथा जाँच पूर्ण होने पर उसके परिणाम से उनको अवगत करा देता। एक दिन उनके दल के कुछ विधायक मुझसे मिलने आए। बातचीत के बीच उन्होंने बताया, "चौधरी साहब आपकी प्रशंसा कर रहे थे। वे आपके बारे में जानकारी चाह रहे थे। वे कह रहे थे कि ष्मैंने ऐसा कोई अधिकारी नहीं देखा जो मेरे प्रत्येक पत्र का तीसरे दिन उत्तर भेज देता हो।" संयोग से एक दिन राज्यपाल के कानपुर आगमन पर सरकिट हाऊस गया। उस समय भारतीय क्रांति दल के नेता थे। क्षेत्रीय सम्मेलन हेतु चौधरी साहब भी वहीं आए हुए मैंने उनको सम्मान व्यक्त करते हुए अपना परिचय दिया, उन्होंने बड़ी आत्मीयता के साथ हाथ मिला कर कहा "अरे! तुम्हारे बारे में जो सुना है उससे बड़ी खुशी होती है। कभी मुलाकात नहीं हुई।" मैंने उनको बताया कि मैं १९५९ से १९६८ तक केंद्र में प्रतिनियुक्ति पर रहा था।"

उनके पिछले मुख्य मंत्रित्वकाल में संयुक्त विधायक दल के एक प्रमुख नेता ने घोषणा की थी कि प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी की आगामी वाराणासी यात्रा पर उनका घिराव किया जाएगा। यद्यपि राजनीतिक तौर पर श्रीमती गाँधी चौधरी साहब की कट्टर विरोधी थीं, फिर भी चौधरी साहब के लिए देश की प्रधानमंत्री के प्रति इस प्रकार की अशिष्टता असहनीय थी। उन्होंने घोषणा कर दी कि उनके मुख्यमंत्री रहते हुए प्रधानमंत्री के पद की गरिमा की हर प्रकार से रक्षा की जाएगी। वे स्वयं श्रीमती गाँधी के साथ वाराणसी गए। कड़े प्रशासनिक प्रबंध के फलस्वरूप घिराव की योजना विफल कर दी गई। चौधरी साहब जानते थे कि उक्त कदम के कारण उनका मुख्यमंत्रित्व पद खतरे में पड़ने वाला था। वही हुआ भी। संयुक्त विधायक दल की सरकार गिर गई, किंतु उनके लिए पद से अधिक सिद्धांत महत्त्वपूर्ण था।

जनवरी सन् १९७० में जब वे पुनः मुख्यमंत्री बने, तब उन्होंने श्री निगमेन्द्रसेन सक्सेना को राज्य का पुलिस महानिरीक्षक बनाकर स्पष्ट कर दिया कि ज्येष्ठता से अधिक ईमानदारी एवं प्रशासनिक क्षमता ही भविष्य

में महत्त्वपूर्ण पदों पर नियुक्ति का आधार होंगे। मुझे गर्व है कि उन्होंने मुझको राज्य के सतर्कता निदेशक के महत्त्वपूर्ण पद के लिए चयनित किया। पूर्व में इस पद पर एक ज्येष्ठ डी. आई. जी. को ही नियुक्त करने की परंपरा थी।

उस समय के अपने कम–से–कम दो अनुभवों का यहाँ उल्लेख करना उपयुक्त होगा।

एक दिन उन्होंने किसी मामले में बात करने के लिए मुझको अपने आवास पर बुलाया। जब मैं पहुँचा तो वे लॉन में बैठे हुए थे। एक अन्य व्यक्ति भी पास में बैठे हुए थे। कुछ औपचारिक बातचीत के बाद उन्होंने उस व्यक्ति से बड़े रूखे स्वर में कहा, "अब मुझको कुछ बात कर लेने दो", वे सज्जन तुरंत उठकर चले गए। जब मैं बात समाप्त कर वापस जाने लगा, तो मुझको उनके सुरक्षा अधिकारी से ज्ञात हुआ कि वह व्यक्ति उनके कनिष्ठ भ्राता थे।

चौधरी साहब को अवश्य ही मालूम रहा होगा कि उन सज्जन के विरुद्ध सतर्कता विभाग में एक जाँच लम्बित थी, किंतु अनुशासनप्रिय चौधरी साहब ने मुझको उनका नाम भी नहीं बताया। जाँच पूर्ववत् चलती रही। उन्होंने मुझसे भी उस जाँच के संबंध में किसी प्रकार की जानकारी की अपेक्षा नहीं की।

कुछ समय से शिक्षा संस्थाओं में विद्यार्थी यूनियनें अनुशासनहीनता एवं अवांछनीय तत्त्वों के अड्डों का पर्याय बन गई थीं। चौधरी साहब ने मुख्य मंत्री का पदभार ग्रहण करते ही घोषणा कर दी कि भविष्य में शिक्षण संस्थाओं में यूनियन की सदस्यता वैकल्पिक होगी। इस घोषणा का शिक्षकगणों, गंभीर विद्यार्थियों एवं उनके माता–पिता ने स्वागत किया, किंतु पेशेवर नेताओं को यह रास नहीं आया। उनका एक प्रतिनिधि मण्डल चौधरी साहब के समक्ष विरोध प्रदर्शन हेतु उनसे भेंट करने उनके कार्यालय पहुँचा। संयोग से लगभग उसी समय मुझको किसी मामले में बुलाया गया था। चौधरी साहब प्रत्येक व्यक्ति से निर्धारित समय पर अकेले भेंट करते थे। केवल एक अन्य मुख्यमंत्री, जिसमें मैंने यह गुण पाया, वे थे हेमवती नन्दन बहुगुणा। जब उन विद्यार्थियों ने शासन पर उनके मौलिक अधिकारों का हनन करने का आरोप लगाया, तब चौधरी साहब ने उनको समझाने का प्रयत्न किया, "मैंने तो केवल यूनियनों की सदस्यता वैकल्पिक की है, प्रतिबंधित नहीं। यदि विद्यार्थी उसको उपयोगी समझेंगे तो आपही सदस्यता लेंगे, किंतु उनको विवश नहीं किया जाना चाहिए। एक विद्यार्थी को माँ–बाप शिक्षा ग्रहण करने भेजते हैं, नेतागिरी के लिए नहीं। आपका अधिकार भी केवल यही है। "उनमें से कुछ ने उद्दण्डता करने का प्रयास

किया, तो चौधरी साहब ने तुरंत अपने सुरक्षा अधिकारी से उन सबको कार्यालय के बाहर ले जाने का आदेश दिया। उसी शाम उनकी ओर से एक चेतावनी पूर्ण वक्तव्य प्रकाशित किया गया, जिसमें कहा गया था, "कानून से किसी को भी खिलवाड़ करने नहीं दिया जाएगा। किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध अंकित मामला वापस नहीं होगा। जेलों को पिकनिक का स्थान न समझा जाए।"

इसका शिक्षण संस्थाओं पर ही नहीं, बल्कि कम–से–कम पाँच अन्य संगठित वर्गों पर, जो हड़ताल या अन्य प्रकार से विरोध करना चाहते थे अपेक्षित प्रभाव पड़ा। बहुत वर्षों में पहली बार राज्य के विश्वविद्यालयों में शिक्षा – सत्र निर्विघ्न चले। परीक्षाएँ समय से आयोजित हुई। राजनीतिक दलों द्वारा प्रायोजित मिलों इत्यादि हड़तालों पर बिना गोली–डण्डों के प्रयोग के प्रभावी ढंग से नियंत्रण किया गया।

लगभग एक साल के बाद जब कमलापति त्रिपाठी मुख्यमंत्री बने, तो उन्होंने विद्यार्थी नेताओं के दबाव में शिक्षा – संस्थानों में यूनियनों की सदस्यता पुनः अनिवार्य कर दी। फलस्वरूप उनमें अनुशासन हीनता इतनी बढ़ी कि मई १९७३ में उनको त्यागपत्र देना पड़ा और राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू हो गया। त्रुटिपूर्ण नीतियों एवं सस्ती लोकप्रियता के लोभ से पुलिस में अनुशासन हीनता असाधारण रूप से फैल गई और वह भी उनके शासन–काल को समाप्त करने का बड़ा कारण बन गई।

श्री निगमेन्द्रसेन सक्सेना जैसे योग्य एवं निष्ठावान पुलिस अधिकारी के परामर्श का निरंतर लाभ मिलने के कारण चौधरी साहब ने अपराधों की प्रभावी रोकथाम एवं पुलिस प्रशासन में आमूलचूल परिवर्तन लाने हेतु न्यायमूर्ति गंगेश्वर प्रसाद के नेतृत्व में राज्य पुलिस आयोग गठित किया। दुर्भाग्य से जब तक आयोग अपनी संस्तुतियाँ प्रस्तुत कर पाता, चौधरी साहब को त्यागपत्र देना पड़ गया।

आपातकाल के बाद जब मार्च सन् १९७७ में देश में निर्वाचन हुए तो चौधरी चरण सिंह के महत्त्वपूर्ण योगदान के फलस्वरूप उत्तर भारत में जनता पार्टी को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई। गृहमंत्री बनते ही आपातकाल के अनुभवों के आधार पर उन्होंने पुलिस प्रशासन में सुधारों के लिए राष्ट्रीय पुलिस आयोग के गठन तथा राजधानी दिल्ली के पुलिस प्रशासन में आमूलचूल परिवर्तन कर मुम्बई की भाँति पुलिस आयुक्त प्रणाली लागू करने की घोषणा की। उनको इस बात का कष्ट था कि उनके द्वारा मुझे राज्य का सतर्कता निदेशक नियुक्त करने की प्रतिक्रिया स्वरूप राज्य में शासन–परिवर्तन के साथ मुझ जैसे महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों को परवर्ती सरकार का कोपभाजन बनना पड़ा, किंतु मुझे इस बात का गर्व है कि मैं

उनका विश्वासपात्र बन सका तथा दिल्ली का प्रथम पुलिस आयुक्त नियुक्त होने का गौरव मुझे प्रदान किया गया। इस बार पुनः कतिपय राजनीतिक कारणों से उनका कार्यकाल अल्प समय में ही समाप्त हो गया।

मेरा अनुमान है कि उन्हें अपने परिवेश से, अनुयायियों, सहयोगियों, परामर्शदाताओं से उनके आदर्शों एवं नीतियों के अनुरूप अपेक्षित सहयोग नहीं मिला। यदि ऐसा हुआ होता, तो संभव है कि सरदार पटेल के बाद वे देश के सबसे योग्य एवं प्रभावी गृहमंत्री सिद्ध होते।

५४

सर्वप्रथम उन्होंने ही मुझे वित्तमंत्री बनाया था

नारायण दत्त तिवारी*

श्री नारायण दत्त तिवारी जी केंद्र में न केवल वित्तमंत्री रहे, वरन् आप देश की राजनीति में मुख्य भूमिका निभाते हुए तीन बार उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री पद को भी सुशोभित कर चुके हैं। अभी कुछ समय पूर्व ही आपने नवनिर्मित उत्तराखण्ड राज्य के मुख्यमंत्री का ५ वर्ष का कार्यकाल पूरा करने का श्रेय भी प्राप्त कर लिया है। इस समय विश्रांति के क्षणों में इस वयोवृद्ध राजनीतिक खिलाड़ी से ५ जून, २००७ को चौधरी चरण सिंह स्मृति–ग्रंथ के संपादक डॉ. किरन पाल सिंह ने मुलाकात की। यहाँ प्रस्तुत हैं उसी भेंटवार्ता के प्रमुख अंश।

प्रश्न – मान्य तिवारीजी! आप राजनीति में कब आए?

उत्तर – मैं राजनीति में सन् १९३९ में आ गया था। उस समय मैं नाबालिग होते हुए भी कांग्रेस सेवादल का वालंटियर था। सन् १९४१ में व्यक्तिगत सत्याग्रह की मैंने इजाजत माँगी थी, जो कम उम्र होने के कारण मुझे नहीं मिली। उसमें पहले सत्याग्रही विनोबा भावे थे और दूसरे थे जवाहरलाल नेहरू। सन् १९४२ में भारत छोड़ो आंदोलन में मैंने सक्रिय भाग लिया। तब मैंने अपने कदम–श्री में, गाँव में छोटे–मोटे जलूस निकाले। बिलारी के डाक बंगले में डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट तथा ब्रिटिश पुलिस के आने से पहले पर्चे फेंक दिए। हमें पकड़ लिया गया। उस समय अनेक देशभक्त कांग्रेसी जेलों में बंद थे। चौधरी चरण सिंह भी जेल में बंद थे, मेरठ में या नैनी जेल (इलाहाबाद) में कुछ ठीक से याद नहीं आ रहा इस समय, लेकिन उन्होंने पहले व्यक्तिगत सत्याग्रह और दूसरे आंदोलनों में भाग लिया था। वे हमेशा खद्दर पहनते थे।

---

* नारायण दत्त तिवारी (१९२५–२०१८), राजनीतिज्ञ, प्रजा सोशलिस्ट पार्टी और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस। मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश (१९७६–७७, १९८४–८५, १९८८–८९) और मुख्यमंत्री, उत्तराखंड (२००२–२००७)। पहले भारतीय मुख्यमंत्री थे जिन्होंने दो राज्यों के लिए कार्य किया। राज्यपाल, आंध्र प्रदेश (२००७–२००९)

प्रश्न – आपका उनसे परिचय कब हुआ

उत्तर – मेरा उनसे प्रथम या यह कहिए कि जो सक्रिय परिचय हुआ, वह विधानसभा में १९५२ में, विधायक चुने जाने के बाद हुआ। वे बहुत ही पढ़ने–लिखने वाले व्यक्ति थे और वे विशेष रूप से उन विधायकों या व्यक्तियों से अधिक संपर्क रखते थे जो लिखने–पढ़ने वाले हों। चौधरी साहब पंडित पंत के मंत्रीमंडल में पहले पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी रहे फिर बाद में मंत्री बने। उस समय यू. पी. जमींदारी एक्ट को भंगकर, सीरधर, भूमिधर बनाने का श्रेय उन्हीं को जाता है। विधानसभा में भी उस कानून को उन्होंने ही पारित कराया। उन्होंने जमींदारी एक्ट का एक–एक शब्द पढ़ा, असेंबली तथा काउंसिल की जो सिलेक्ट कमेटी बनी, उसमें भी उनका हाथ था। यह कार्य उन्होंने मेरे आने से पहले, जब स्थायी विधानसभा बनी, उससे पहले ही कर लिया था। उसमें बड़े–बड़े जमींदार, राजा आदि थे। उसमें जो कुछ संशोधन होने थे वे बाद में हुए। यह कार्य बहुत कठिन था, क्योंकि जमींदार पार्टी इसका विरोध कर रही थी। चौधरी साहब से मेरी मुलाकात उनके निवास पर ही होती थी। यदा–कदा वे मुझे बुला लिया करते थे और कई विषयों पर चर्चा होती रहती थी। उन्होंने उस समय एक पुस्तक लिखी थी, "कोऑपरेटिव फार्मिंग एक्सरेड"। वे भारत में सहकारी समितियों के द्वारा खेती हो, इसके समर्थक नहीं थे। वे यही मानते थे कि बैलों के जरिए सघन खेती की जाए। वे हालाँकि ट्रैक्टर के विरोधी नहीं थे, पर बैलों द्वारा खेती करने पर विशेष जोर देते थे। कांग्रेस का चुनाव चिह्न शुरू में बैलों की जोड़ी थी, इसका निर्णय करने में भी उनका योगदान था।

प्रश्न – आप गाँधीवादी राजनीति के गिने–चुने राजनेताओं में से एक हैं। चौधरी चरण सिंह भी गाँधीवादी नेता कहे जाते हैं। क्या आप इससे सहमत हैं?

उत्तर – बिल्कुल! वे शुरू से ही पक्के गाँधीवादी नेता थे। मैं तो खैर काफी बाद में आया। उस समय पंडित पंत, चरण सिंह, संपूर्णानंद जी, आचार्य नरेन्द्र देव, (मुख्य समाजवादी) जय प्रकाश नारायण, डॉ राम मनोहर लोहिया आदि नेतागण थे।

प्रश्न – इसके अतिरिक्त कोई ऐसा कार्य जो आपके सामने हुआ?

उत्तर – हमारे सामने उन्होंने जो सबसे मुख्य कार्य किया, वह था चकबंदी एक्ट। इससे काश्तकारों को बहुत लाभ हुआ। जिनके खेत दूर–दूर थे, वे सब एक जगह हो गए और उन्हें काम करने में काफी सुविधा हो गई।

प्रश्न – उत्तर प्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री पंडित गोविंद बल्लभ पंत उन्हें बहुत पसंद करते थे, जबकि उस समय पुरुषोत्तम दास टंडन, संपूर्णानंद जैसे दिग्गज कांग्रेसी भी थे?

उत्तर – जी हाँ, पंतजी उन्हें काफी पंसद करते थे। मैंने पंतजी के यहाँ उन्हें काफी समय तक बैठे रहते देखा था। वे शुरू में पंतजी मंत्रीमंडल में पार्लियामेंटरी सेक्रेटरी थे फिर बाद में उन्हें कैबिनेट मंत्री बनाया गया। उन्होंने मंत्रीपद की शपथ नैनीताल राजभवन में ग्रहण की थी। मैं उस समय प्रजा समाजवादी दल में था, विरोधी दल में था।

प्रश्न – आप उस समय कांग्रेस में नहीं थे?

उत्तर – मैं उस समय कांग्रेस में ही था, लेकिन कांग्रेस के अंदर ही सोशलिस्ट पार्टी बनी। आचार्य नरेन्द्र देव, लोहिया, जयप्रकाश नारायण आदि जो ज्यादातर कांग्रेसी थे, वे कांग्रेसी समाजवादी दल में थे। बाद में सरदार पटेल ने कहा कि कांग्रेस में कोई दूसरी विचारधारा का दल नहीं रह सकता और न ही कोई दूसरे नाम से चल सकता। इसके बाद ही आचार्य नरेन्द्र देव के नेतृत्व में सोशलिस्ट पार्टी अलग हो गई। उन दिनों चौधरी चरण सिंह तटस्थ थे।

प्रश्न – चौधरी साहब से आपके व्यक्तिगत संबंध कैसे थे?

उत्तर – बहुत ही अच्छे रहे। हमारे संबंध आखिर तक मधुर रहे। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती गायत्री देवी जी, जिनका निधन अभी बाद में हुआ था, उनका भी मुझे आशीर्वाद मिलता रहा। उन्हें मालूम था कि मैं अधिक चाय पीने वाला हूँ, तो वे मुझे चाय पिला देती थीं। चौधरी साहब से मैं उम्र में छोटा था, लेकिन हम चार–चार, पाँच–पाँच घंटे तक विचार विमर्श करते रहते थे। हमारी अधिकतर बातें एग्रीकल्चर रिफॉर्म्स, मैकेनाइज्ड फार्मिंग के बारे में होती थीं। वे सबसे आदर के साथ पेश आते थे। वे अपनी बात पर कायम रहते थे और अपने सिद्धांतों पर अटल। जब वे विधानसभा या लोकसभा में अल्पमत रहे, तब भी उन्होंने अपने सिद्धांतों को नहीं छोड़ा।

प्रश्न – सामाजिक और राजनीतिक बुराइयों के प्रति उनका दृष्टिकोण कैसा था?

उत्तर – वे सामाजिक भेदभाव के विरोधी थे। जाति–पाँति तथा छूआछूत को वे देश के लिए हानिकारक मानते थे। ये देश के विकास में बाधक हैं। राजनीति में और सरकार में भी चौधरी साहब रिश्वतखोरी, लूट–खसोट

तथा भ्रष्टाचार के बिल्कुल विरुद्ध थे। वे स्वयं ईमानदार और बेदाग रहे जीवन–भर।

प्रश्न – वे श्रीमती इंदिरा गाँधी के घोर विरोधी थे फिर भी उनके समर्थन से प्रधानमंत्री बने। क्या वह उनका स्वार्थ था या तात्कालिक राजनीतिक परिस्थितियाँ?

उत्तर – इसमें स्वार्थ जैसी कोई बात नहीं है। जब वे प्रधानमंत्री बने तो इंदिरा गाँधीजी ने चौधरी साहब को समर्थन दिया। उस समय बाबू जगजीवन राम भी उम्मीदवार थे। इंदिरा जी ने यह सोचा कि आज के हालात में चौधरी चरण सिंह का प्रधानमंत्री बनना उचित होगा। किसानों को भी यह महसूस होना चाहिए कि किसान का बेटा प्रधानमंत्री हो सकता है। वे प्रधानमंत्री बने और अगले चुनाव तक उस पद पर रहे। इसी बीच उन्होंने १५ अगस्त, १९७९ को लाल किले से देश को संबोधित भी किया।

प्रश्न – चौधरी साहब ने १९६७ में कांग्रेस छोड़ी थी। इस पर आप कुछ प्रकाश डालना चाहेंगे?

उत्तर – वास्तव में चौधरी साहब के चन्द्रभानु गुप्त से मतभेद हो गए थे। उन्होंने गुप्ताजी से ये कहा था कि आप कैबिनेट में दो मंत्री और बनाइए। एक उदित नारायण शर्मा हमीरपुर वाले (बाँदा के आस–पास के) और दूसरे जयराम वर्मा फैजाबाद के। जब इनको मंत्री नहीं बनाया गया, उनकी बात नहीं मानी गई, तो उन्हें बेइज्जती महसूस हुई। उन्होंने कांग्रेस छोड़ दी और जन–कांग्रेस पार्टी बना ली। जब दोबारा चुनाव हुआ तो उनकी पार्टी बी. के. डी. के ९९ विधायक चुनकर आए, पहले से भी ज्यादा।

प्रश्न – वे दो बार मुख्यमंत्री रहे। थोड़े–थोड़े समय के लिए ही रहे। उस समय की कोई विशेष बात?

उत्तर – वे दो बार मुख्यमंत्री रहे। उन्होंने चकबंदी करने का बड़ा अच्छा कार्य किया। पहली बार उन्होंने जनसंघ तथा सोशलिस्ट पार्टी के साथ संविद सरकार बनाई। दूसरी बार तो उनका कांग्रेस से गठबंधन रहा। उनके मंत्रीमंडल में मैं भी था। उन्होंने मुझे वित्तमंत्री बनाया, साथ में संसदीय कार्य सचिव भी बनाया। पहली बार मैं वित्तमंत्री बना। वे कहते थे कि ये (तिवारी) फाइनेंस की बातें जानता है। जहाँ चौधरी साहब बैठते थे, मैं ठीक उनके पीछे बैठता था, क्योंकि मुझे संसदीय कार्यों के बारे में समय–समय पर उन्हें बताना होता था।

प्रश्न – चौधरी साहब राजनीति में परिवारवाद के विरोधी थे?

उत्तर – वे परिवारवाद के विरोधी थे या नहीं थे, मैं ये नहीं कह सकता। अजीत सिंह जी, भगवान उनको दीर्घायु दें, जो आज उनके राजनीतिक उत्तराधिकारी हैं, वे कंप्यूटर के विशेषज्ञ रहे हैं। वे अमरीका से १९ वर्ष बाद लौटे फिर भी उन्होंने उनको कोई तवज्जों नहीं दी। उन्होंने ये नहीं कहा कि तुम चुनाव लड़ो या राजनीति में आ जाओ। वैसे वे उस समय बीमार थे और अजीत सिंह जी उनके जीवनकाल में राजनीति में आ गए थे।

प्रश्न – आपात्काल में जेल से रिहा होने के बाद उन्होंने विधानसभा में काफी लम्बा भाषण भी दिया था। उस समय आप मुख्यमंत्री के पद पर आसीन थे। इस पर आपकी कोई विशेष प्रतिक्रिया या टिप्पणी?

उत्तर – चौधरी साहब को प्रारंभ में हमने पैरोल पर छोड़ा था, फिर बाद में तो सभी रिहा हो गए। आपातकाल का विरोध तो वे करते ही थे, कोई इसमें संदेह ही नहीं है। जहाँ तक हमारा सवाल है, हमने आपातकाल में कोई ज्यादती नहीं होने दी। जब आपातकाल समाप्त हो गया और लोकसभा के चुनाव में कांग्रेस हार गई, तो 'शाह कमीशन' बैठा। उस दौरान हमारी भी पेशी हुई। शाह कमीशन ने इमरजेंसी के समय की वे सभी फाइलें मँगा लीं, जो डी. आई. आर. (डिटेंशन एक्ट) संबंधी थीं। उसमें कोई मामला नहीं बना। एक मामला जिसमें जिलाधीश ने बाँदा के किसी व्यक्ति के संबंध में लिखा था, उसमें केवल मेरा अनुमोदन (एप्रूवल) था। इस पर चौधरी साहब ने कहा कि चलो तुम साफ निकल आए। यह अच्छी बात है। जब मैं मुख्यमंत्री था और वे विरोधी दल के नेता थे, उस समय उन्होंने भाषण तो दिए ही। उन्होंने हमारी सरकार की जो बुराइयाँ थीं, जो कमजोरियाँ थीं, जो कुछ बताया, हमने कहा कि इन्हें तो हम दूर करेंगे ही।

प्रश्न – उनपर जातिवादी होने का कुछ दोषारोपण किया जाता है?

उत्तर – देखिए! जातिवाद हमारे देश में पहले से ही था। इस पर उन्हें दोष देना बिल्कुल गलत होगा। मैं समझता हूँ कि पहली बात उन्होंने कही, बल्कि उन्होंने अपनी किताब में लिखा है कि ये देश तब ही तरक्की करेगा, जब इंटरकास्ट मैरिज होंगी और कास्टलेस सोसायटी बनेगी। आप पढ़िएगा। जाति में वर्गभेद और क्षेत्रीय भेदभावों ने या ऐसी ही परिस्थितियों ने देश को कमजोर किया है। वे जातिभेद तथा वर्गभेद का विरोध करते थे।

प्रश्न – महोदय! अन्य कोई विशेष बात जो आपको इस समय याद आ रही हो?

उत्तर – हाँ! एक ऐसा प्रसंग है जो उनके खेती– संबंधी प्रेम को दर्शाता है। मुझे गार्ड सलेक्ट किया गया, यूरोप में स्वीड़न के द्वारा पढ़ने के लिए, कि वहाँ का कंज्यूमर कोऑपरेटिव सिस्टम (उपभोक्ताओं की समिति) कैसा है? वहाँ के गुन्नार मिर्डल, जो नोबल पुरस्कार विजेता थे, उनकी पत्नी उन दिनों भारत में राजदूत थीं। वे सोशल डेमोक्रेट (समाजवादी) थे। उन्होंने जवाहरलाल जी तथा अशोक मेहता से कहा, कि आप कोई यंग पार्लियामेंटेरियन भेजिए स्वीडन। मुझे वहाँ भेजा गया। वहाँ से जब मैं एक साल बाद लौटा, तो मैं इजरायल होता हुआ आया। इजराइल को उन दिनों मान्यता प्राप्त नहीं थी। वहाँ के लिए मेरा अलग से पासपोर्ट बना। इजराइल में मैंने मशाम ओकीम, मशाम सिदुपी और जो उनके कलैक्टिव फार्मिंग, कोऑपरेटिव फार्मिंग और इंडिविजुअल फार्मिंग, तीन प्रकार की खेतियाँ थीं, उनको भी देखा। जब मैं वापस लौटा तो फौरन चौधरी साहब ने मुझे अपने घर बुलाया और जितना भी इजरायल से कृषि संबंधी साहित्य मैं लाया था,सब मुझसे ले लिया और कहा कि मैं इसका अध्ययन करूँगा। उन्होंने श्एग्रीकल्चरल फार्मिंग एक्सरेड जो बाद में एग्रीकल्चर इन इण्डिया के नाम से छपी थी, उसमें उन्होंने इजरायल का सिस्टम, सोवियत यूनियन का सिस्टम, सबका गहन अध्ययन किया और इस आधार पर भी भारत के संदर्भ में उस तरह की खेती, अर्थात् सहकारी खेती का इण्डिया कांग्रेस कमेटी में भी विरोध किया। यहाँ निजी खेती ही ठीक है। यह उनका निष्कर्ष था, जो बिल्कुल सही था और इसी पर वे हमेशा कायम रहे।

प्रश्न – अच्छा मान्यवर! आपका अमूल्य समय लिया, यह अविस्मरणीय रहेगा। इस भेंटवार्ता के लिए मैं आपका सदैव आभारी रहूँगा। आपका बहुत–बहुत धन्यवाद।

उत्तर – धन्यवाद! आपका कार्य सफल हो।

५५

वे अपने कार्यकर्ता को पूरा सम्मान देते थे

ठाकुर कुशल पाल सिंह*

ठाकुर कुशल पाल सिंह देहरादून के चर्चित वरिष्ठतम नागरिकों में से एक हैं। आप एक सच्चे समाजसेवी, बुद्धिजीवी तथा अच्छे किसान हैं। आप देहरादून क्षेत्र में लोकदल के स्तंभ तथा चौधरी चरण सिंह के विश्वासपात्र भी रहे। उनके स्वर्गवास के बाद आपने राजनीतिक जीवन छोड़ दिया। इस समय आप अपने परिवार और कृषि कार्यों तक ही सीमित रह गए हैं। यहाँ प्रस्तुत है डॉ. किरन पाल सिंह द्वारा दिनांक २८ मई, २००७ की भेंटवार्ता का विवरण।

प्रश्न – ठाकुर साहब! आप देहरादून की जानी–पहचानी हस्तियों में से हैं और चौधरी चरण सिंह के साथ भी आप एक लम्बे अरसे तक राजनीति से जुड़े रहे हैं। आप उनके साथ बिताए क्षणों की कुछ मुख्य बातों से हमें अवगत कराने की कृपा करें।

उत्तर – मैंने चौधरी साहब का सबसे पहले १९६९ में, रुड़की के पास मंगलौर में भाषण सुना था। उससे पहले मैं उनके विशेष सहयोगी, श्री वीरेन्द्र वर्मा के संपर्क में आया और उन्होंने मुझे देहरादून जिले का बी. के. डी. (भारतीय क्रांति दल) का सचिव बनाया था। चौधरी साहब से मेरी वास्तविक भेंट हुई १९७१ के लोकसभा के मध्यावधि चुनाव के बाद। मतगणना के पूर्व चौधरी साहब सर्किट हाऊस में ठहरे हुए थे। हम प्रतिदिन उनके पास जाते थे, उनसे बातें होती थीं। इसी बीच हमने उन्हें अपने गाँव में आमंत्रित किया। वे आए, मेरे घर भोजन किया और काफी देर तक गाँव वालों से बातचीत की। उन्होंने बताया कि जब तक आप

---

* ठाकुर कुशल पाल सिंह, समाजसेवी, बुद्धिजीवी और किसान। सचिव, देहरादून, भारतीय क्रांति दल (१९६९)। प्रतिनिधि, भारत कृषक समाज। अध्यक्ष, देहरादून मंडी समिति। लोकदल की राष्ट्रीय कार्यकारिणी के सदस्य (१९८०–१९८६)। वे देहरादून क्षेत्र में लोकदल के स्तंभ रहे और चौधरी चरण सिंह के विश्वासपात्र थे। चरण सिंह के निधन के बाद, उन्होंने राजनीतिक जीवन छोड़ दिया।

लोगों की, किसानों की स्थिति नहीं सुधरेगी, तब तक देश की हालत भी नहीं सुधरेगी। परिवार के सभी लोग केवल खेती पर निर्भर मत रहो। कुछ खेती करो और कुछ अन्य दूसरे रोजगार के कार्य करो, तभी हमारी गरीबी दूर होगी।

प्रश्न – फिर उसके बाद?

उत्तर – उसके बाद उन्होंने मुझे न जाने क्यूँ इतना प्रोत्साहन दिया। मुझे 'भारत कृषक समाज' का प्रतिनिधि नियुक्त किया। उससे पूर्व उन्होंने मुझे देहरादून मंडी समिति का अध्यक्ष भी मनोनीत किया था। फिर तो मैं लगातार उनके संपर्क में रहा।

प्रश्न – आपने विधानसभा का चुनाव भी तो लड़ा था?

उत्तर – हाँ! लड़ा था १९७४ में। चौधरी साहब ने ही कहा था चुनाव लड़ने के लिए और मुझे पार्टी का टिकट भी दिया उन्होंने। यद्यपि मैंने उन्हें कहा भी था कि देहरादून में हमारी स्थिति चुनाव जीतने की नहीं है, इसके बावजूद भी उन्होंने मुझे चुनाव में खड़ा किया और डोईवाला सहित दो स्थानों पर आकर मेरे चुनाव प्रचार में सभाएँ की व भाषण भी दिए।

प्रश्न – आपके विरोध में कौन–कौन प्रत्याशी थे?

उत्तर – श्री शांति प्रपन शर्मा, श्री बी. बी. शरण और श्री देवेन्द्र शास्त्री, जो बाद में १९७७ में जनता पार्टी के टिकट पर जीतकर विधायक बने। वह मसूरी विधानसभा क्षेत्र का चुनाव था। हालाँकि मैं हार गया था, लेकिन मेरी स्थिति नंबर दो पर थी।

प्रश्न – उन दिनों ब्रह्मदत्तजी नहीं थे क्या? मेरा मतलब वे कहाँ थे?

उत्तर – ब्रह्मदत्तजी तब विधान परिषद् में विपक्ष के नेता थे और उन दिनों वे चौधरी साहब की पार्टी में ही थे। यद्यपि वे मुझसे वरिष्ठ थे, लेकिन हमारा आपस में बड़ा अच्छा तालमेल था, समझ–बूझ थी। हम चौधरी साहब के मालरोड एवेन्यु स्थित निवास, लखनऊ अक्सर जाते रहते थे। उनसे बात–चीत होती रहती थी। वे प्रायः किसानों की बात करते थे। ग्रामीण जनता की गरीबी और बेरोजगारी की उन्हें विशेष चिंता रहती थी।

प्रश्न – उसके बाद भी क्या चौधरी साहब ने चुनाव लड़ने के लिए कभी फिर कहा?

उत्तर – चौधरी साहब ने मुझे १९७७ में जनता पार्टी के टिकट पर टिहरी संसदीय क्षेत्र से चुनाव लड़ने के लिए कहा था, परंतु मैंने मना कर दिया।

मैंने उन्हें बड़े विनम्र शब्दों में समझाया कि मैं केवल देहरादून में नहीं, बल्कि देहरादून के भी ग्रामीण क्षेत्रों, चकराता और मसूरी में कार्यरत रहा, यहीं का कार्यकर्ता हूँ और टिहरी संसदीय सीट का क्षेत्र टिहरी से उत्तरकाशी तक फैला हुआ है, वहाँ मेरा इतना प्रभाव नहीं है। इसलिए मेरा वहाँ से चुनाव लड़ना उचित नहीं है। बात सही थी। वह मान गए।

प्रश्न – ठाकुर साहब! जहाँ तक मुझे याद है १९७७ में टिहरी लोकसभा सीट से श्री त्रेपन सिंह नेगी चुनाव जीते थे और आपने भी एक बार मुझे ऐसा बताया था।

उत्तर – आपने ठीक कहा डॉ. साहब! हुआ यह कि मैंने तो मना कर दिया चुनाव लड़ने से, पर मैंने और श्री अवध बिहारी पंत एडवोकेट ने चौधरी साहब को सुझाव दिया, कि टिहरी लोकसभा सीट से श्री इंद्रमणी बडौनी को टिकट दे दीजिए। वे यहाँ जीत जाएँगे, पर चौधरी साहब के आदेशानुसार जब हम बडौनीजी से मिले, तो उन्होंने कहा कि मैंने तो त्रेपन सिंह से वादा कर लिया है, वे एम. पी. का चुनाव लड़ेंगे और मैं देवप्रयाग से एम. एल. ए. का अगला चुनाव लडूंगा। इस प्रकार हम सब की सहमति से त्रेपनसिंह नेगी को चौधरी साहब ने जनता पार्टी का टिकट दे दिया और वे टिहरी से जीत गए।

तब मैंने देखा और अनुभव किया कि चौधरी साहब मेरे जैसे छोटे पार्टी कार्यकर्ता की बात भी मान लेते थे, जबकि मैं कभी न चुनाव जीता और न एम. एल. ए. बना। संस्तवनः एक आलोक पुरुष का वैसे हम भी वही बात करते थे जो पार्टी हित में होती थी।

प्रश्न – कभी और भी ऐसे अवसर आए जब उन्होंने आप की बात को माना हो? ऐसा कोई संस्मरण?

उत्तर – एक बार नहीं, कई बार मुझे यह सौभाग्य प्राप्त हुआ। एक बार जनता पार्टी के विभाजन के बाद लोकदल के कार्यकारी अध्यक्ष श्री राजनारायण ने, पौड़ी लोकसभा सीट से श्री हेमवती नंदन बहुगुणा के सामने, एक अनजाने से व्यक्ति विजय कुमार शर्मा को टिकट दे दिया। मैं और प्रो. एस. सी. पाण्डे (डी. ए. वी. कॉलेज) घूमते हुए जा रहे थे तो घंटाघर के पास, पी. डब्लू. डी. निरीक्षण भवन के सामने, लोकदल के महासचिव श्री राम शरण दास, जो आजकल समाजवादी पार्टी के प्रदेश अध्यक्ष हैं, खड़े मिले। वे मुझे देखते ही बोले कि कुशलपाल तुमने हमारी नाक कटा दी। कैसे आदमी को टिकट दिला दिया। मैंने कहा कि मुझसे इस बारे में किसी ने भी नहीं पूछा। आप प्रदेश के चुनाव प्रभारी हैं, ये सब

आपको मालूम होना चाहिए। ये तो पार्टी की किरकिरी हो जाएगी। इस पर वे बोले कि तुम चौधरी साहब के पास जाओ और मैं राजनारायण से बात करता हूँ। इससे पहले हमने एक जाने माने, मानवतावादी उच्चकोटि के वकील श्री अवध बिहारी पंत का पार्टी के प्रत्याशी के रूप में नामांकन करा दिया।

दूसरे दिन सुबह मैं दिल्ली में चौधरी चरण सिंह से मिला, उन्हें सब बातें बताईं। वे मुझे उसी दिन होने वाली पार्टी की पार्लियामेंटरी बोर्ड की मीटिंग में ले गए। इस बोर्ड मीटिंग में कार्यकारी अध्यक्ष राजनारायण के अतिरिक्त एस. एन. सिन्हा, मंडल (मंडल आयोग के अध्यक्ष), नरेन्द्र सिंह और स्वयं चौधरी साहब तथा मैं उपस्थित थे। वहाँ सब बातों पर विचार–विमर्श हुआ तो राजनारायण जी के यह कहने पर कि मैंने पुराने समाजवादी को टिकट दिया है, तभी मैंने एतराज करते हुए कहा कि विजय कुमार समाजवादी रहे ही नहीं और न ही उनकी छवि अच्छी है, और टिकट देने से पूर्व मुझसे पूछा भी नहीं गया। इस पर चौ. साहब ने कहा कि बात कुछ भी हो पर कुशलपाल कभी झूठ नहीं बोलता। अंत में विचार–विमर्श के बाद पंतजी को ही टिकट दे दिया गया। मेरे हृदय में चौधरी साहब के प्रति और अधिक श्रद्धा भर गई, क्योंकि चौधरी साहब ने कार्यकारी अध्यक्ष की बात न मानकर, मेरी, एक छोटे से कार्यकर्ता की बात को सम्मान दिया। उनमें यह बड़ी खूबी थी कि वे अपने आदमियों पर पूरा विश्वास करते थे, उचित मान–सम्मान देते थे। शायद ऐसी ही कुछ बातों के कारण चौधरी साहब ने मुझे १९८०–८६ तक लोक दल की राष्ट्रीय कार्यकारिणी का सदस्य बनाया। जब तक वे जीवित रहे तब तक मैं इस पद पर रहा। उनके बाद तो मैंने राजनीतिक जीवन ही छोड़ दिया।

प्रश्न – और कोई इसी तरह की घटना?

उत्तर – ये कोई जनवरी १९८२ की बात होगी। श्री महीपाल शास्त्री देहरादून आए। उनके आग्रह पर मैंने होटल रिलैक्स में उनकी प्रेस कॉनफ्रेंस रखवाई। उसके बाद उन्होंने मुनिकीरेती चलने को कहा और ये भी बताया कि चौधरी साहब वहाँ आए हैं, चुपचाप बिना किसी को बताए, आराम करने के लिए रास्ते में शास्त्रीजी ने कहा कि मैं देहरादून से एम. एल. सी. बनना चाहता हूँ, तुम चौधरी साहब से कह दो। हम चौधरी साहब के पास पहुँचे। वे खुश हुए, बोले आओ– बैठो। वहीं उनके साथ खाना खाया, बिल्कुल सादा, दाल–रोटी, रायता और पालक का साग। यही ये आमतौर पर खाते थे। फिर बातें हुईं तो मैंने कहा कि हमें जब लखनऊ जाना होता है, तो किसी कांग्रेसी एम. एल. ए. के साथ ठहरना

होता है। हमारी पार्टी का कोई है नहीं। आप इन शास्त्रीजी को देहरादून से एम. एल. सी. बनवा दीजिए। वे तुरंत बोले– "इन्हें नहीं! ये सीट तो मैं तुम्हें दूँगा। तुम्हें एम. एल. सी. बनाना है अबकी बार"। मैं बोला तो फिर मुझे भी नहीं। हमारे एक मित्र वीरेन्द्र पैन्युली हैं, जो १९७९ में रुड़की विश्वविद्यालय में व्यख्याता थे, त्यागपत्र देकर आ गए। वे सन् ७४ से ही हमारे साथ पार्टी में रहे हैं और बहुत ही होशियार व अच्छे पढ़े–लिखे हैं। लिखते भी अच्छा हैं, बनारस विश्वविद्यालय में भी रहे हैं। उन्हें आप एम. एल. सी. बनवा दें। चौधरी साहब ने कहा कि जब तुम उसकी इतनी सिफारिश कर रहे हो, तो हमें एक आदमी मुख्यालय में चाहिए प्रेस से बातचीत करने के लिए। उसे वहाँ रख लेते हैं, पर इसके लिए पैन्युली तैयार नहीं हुए। खैर! बात आई गई हो गई। चुनाव भी समाप्त हो गए।

प्रश्न – ठाकुर साहब! फिर किसको बनाया एम.एल.सी?

उत्तर – रुकिए–रुकिए। अभी वही बताने जा रहा हूँ। मैं कुछ दिनों बाद ऐसे ही, बिना किसी कार्य के दिल्ली चला गया। मुझे चौधरी साहब ने एक विशेष सहूलियत दे रखी थी कि मैं जब भी उनसे मिलने जाता, तो मुझे मिलने के लिए इंतजार नहीं करना पड़ता था। उनका शैडो करतार सिंह मुझे सीधे उनके पास ले जाता था। मैं उनके पास पहुँचा तो वे देखते ही बोले–"कुशलपाल मैंने तेरे साथ बड़ा अन्याय कर दिया। तेरी जगह मैंने मुलायम सिंह को एम. एल. सी. बनवा दिया। यदि में ऐसा नहीं करता तो उसके बलशाली राजनीतिक विरोधी उसे मरवा देते।" मैंने कहा कि मैं तो पहले ही आपको मना कर चुका था। अब आपने जो भी किया, ठीक किया। मैं तो एक किसान हूँ, और मेरे लिए इतना ही काफी है कि आपका स्नेह और विश्वास गुझ पर बना रहे। मैंने चौधरी साहब से कभी कुछ नहीं माँगा। वे स्वयं ही मेरा ख्याल रखते थे। एक बार उन्होंने मुझे कहा भी था कि "कुशलपाल मुझे सब छोड़कर चले गए, पर तू नहीं गया और तू जाएगा भी नहीं। गुझे मालूम है तेरी आदत"। इतना विश्वास था उस शख्स को मेरे ऊपर।

प्रश्न – ठाकुर साहब। श्री हेमवती नंदन बहुगुणा आपातकाल में कांग्रेस छोड़कर जनता पार्टी में आ गए थे चौधरी साहब के साथ। बाद में उन्होंने चौधरी साहब को भी छोड़ा और फिर इंदिरा गाँधी की कांग्रेस में वापस चले गए, लेकिन बाद में इंदिरा गाँधी ने उन्हें बाहर का रास्ता दिखा दिया। इस अपमान का बदला लेने के लिए बहुगुणाजी ने पौड़ी लोकसभा की सीट छोड़ी और फिर इंदिरा गाँधी को चैलेंज देकर चुनाव लड़ा। उस चुनाव में चौधरी साहब की, आपकी पार्टी की क्या भूमिका रही? क्योंकि

लोकदल के लिए बहुगुणा तथा इंदिरा गाँधी दोनों ही विरोधी पार्टी के थे?

उत्तर – सिंह साहब! ये बड़ा रोचक प्रश्न उठाया आपने। बहुगुणाजी लोक दल छोड़कर जब वापस कांग्रेस में गए तो वहाँ उन्हें कांग्रेस का महासचिव नियुक्त किया गया, लेकिन वहाँ उनका संजय गाँधी से गंभीर मतभेद हो गया। उन्होंने कांग्रेस छोड़ने के साथ ही पौड़ी लोकसभा सीट से भी त्यागपत्र दे दिया और फिर निर्दलीय के रूप में इसी सीट से कांग्रेस को जीतकर दिखाने का चैलेंज देकर चुनाव लड़ने का निर्णय लिया। कांग्रेस ने, विशेषतौर पर इंदिरा गाँधी ने इसे प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया और बहुगुणा को हराने में येन–केन–प्रकारेण पूरी ताकत लगा दी। इसी बीच मेरे पास श्री रबि रे का तार आया। मैं दूसरे दिन सुबह दिल्ली पहुँचा रबि रे के पास। मैंने पूछा बताइए किसलिए बुलाया? वे बोले आप चौधरी साहब से जाकर यह पूछिए कि पौड़ी सीट से बहुगुणा के सामने लोकदल से किसे चुनाव लड़ाया जाए। मैंने रबि रे से कहा कि हमारा बहुगुणाजी से विरोध कांग्रेस के कारण था। अब तो वे निर्दलीय रूप से लड़ रहे हैं। हमारा उनका कोई व्यक्तिगत विरोध नहीं है। हमें अब उनके खिलाफ चुनाव नहीं लड़ना चाहिए। उन्होंने मुझे कहा कि मधु लिमये, जार्ज फनांडेज और मैं स्वयं, चौधरी साहब को समझाकर हार गए कि बहुगुणाजी के सामने लोकदल का कोई प्रत्याशी न खड़ा किया जाए, पर वे माने नहीं। उनका कहना है कि बहुगुणाजी ने जो धोखा हमें दिया है, उसका प्रतिफल उसे मिले, उसे हरवाना है। सबक सिखाना है। अब जब आपकी भी यही राय है तो तुगलक रोड जाइए और चौधरी साहब से बात कीजिए और फिर जो प्रत्याशी तय होगा, मुझे यहीं कार्यालय में आकर बताइए। मैं चौधरी साहब के पास पहुँचा उनके निवास स्थान पर। मैंने लगभग डेढ़ घंटे तक उनसे बातचीत की और इस बीच उन्हें बड़े ही विनम्र शब्दों में यही समझाया कि हमें बहुगुणाजी के सामने अपना प्रत्याशी खड़ा नहीं करना चाहिए। मैंने उन्हें स्पष्ट बता दिया कि बहुगुणाजी के सामने यदि इंदिरा गाँधी भी स्वयं चुनाव लड़ें तो वे भी जीत नहीं सकतीं। यदि हमने अपना प्रत्याशी बहुगुणाजी के सामने खड़ा किया और ५–७ हजार वोट उनके काट लिए और किसी कारण से वे हार गए तो जनता का सारा गुस्सा हमारे ऊपर फूट पड़ेगा तथा कांग्रेस जीत जाएगी, जो हम नहीं चाहते। हमारे लिए यही अच्छा रहेगा कि इस चुनाव में किसी भी तरह हम बहुगुणाजी का विरोध न करें।

यह सुनकर चौधरी साहब थोड़ा सोचने लगे फिर बोले– 'ठीक है फिर तुम बहुगुणाजी का ही समर्थन करो।'

मैंने कहा हम ऐसा भी नहीं कर सकते। उन्होंने पूछा क्यों नहीं कर सकते? मैंने कहा कि उनके जो साथी–यार हैं, वे उन्हें इंटरनेशनल हीरो बता रहे हैं, भारत का भावी प्रधानमंत्री। हमें यह स्वीकार नहीं है और न ही वे ऐसे हैं कि कभी प्रधानमंत्री बन सकें। यदि वे हमसे मदद मांगेंगे, तो हम अपने प्लेटफार्म से उनके लिए वोट माँग लेंगे, पर हम उस मंच पर खड़े नहीं होंगे जहाँ से उन्हें भावी प्रधानमंत्री के रूप में प्रचारित किया जा रहा है। इससे हम कतई सहमत नहीं हैं। हमारे लिए आपसे बड़ा नेता कोई नहीं है। अंत में वे मान गए और मुझसे बोले– 'ठीक है, बहुगुणा के सामने हम अपना प्रत्याशी नहीं खड़ा करेंगे। ये जाकर तुम कार्यालय में बता दो। मैं उन्हें धन्यवाद देकर, नमस्कार करके लोकदल के कार्यालय 'विंडसर पैलेस' पहुँचा और चौधरी साहब का निर्णय सुनाया, तो मधु लिमये खुशी से एकदम उछल पड़े और कहने लगे कुशलपाल! तुमने हमारी बहुत बड़ी चिंता मिटा दी। हम तो कांग्रेस विरोधी हैं। हम बहुगुणा को हराने में कांग्रेस का साथ कैसे दे सकते हैं?

प्रश्न – क्या चौधरी साहब जिद्दी थे? जैसा कि उन्हें बताया जाता है?

उत्तर – नहीं, ऐसी बात नहीं है। यदि उन्हें जिद्दी माना जाए तो केवल एक बात ही सामने आती है य वह यह कि वे अपने सिद्धांतों से, अपने उसूलों से बिल्कुल नहीं हटते थे। इसे जो लोग उनका जिद्दीपन मानते हैं, उन्हें यह मालूम होना चाहिए कि अपने सिद्धांतों पर अडिग रहना किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का बहुत बड़ा गुण होता जो ढूँढने से भी नहीं मिलता। वे ऊपर से कठोर अवश्य है, कमजोर नहीं। उनके जैसा व्यक्तित्व आज राजनीति में और शासन में रहते हुए उन्होंने कई कठोर निर्णय भी लिए, जो जनता की भलाई तथा देशहित में जरूरी थे, परंतु वे एक नरम दिल इंसान थे। मुझे एक वाकया याद आ रहा है। मैं कहीं अधिक तो नहीं बोल...

प्रश्न – नहीं ठाकुर साहब! आप बोलिए। मैं तो आपके अमूल्य विचारों को ही कलमबद्ध करने आया हूँ। आप बताइए।

उत्तर – एक बार की बात है, मेरे चाचाजी, जो यहीं साथ ही रहते हैं, किडनी की बीमारी से परेशान थे। हमने यह तय किया कि उन्हें दिल्ली ले चलते हैं। वहाँ चौधरी साहब के दामाद डॉ जे. पी. सिंह को दिखा देते हैं। वे उस समय सफदरजंग अस्पताल में सीनियर सर्जन थे। अतः मैं और चाचाजी दोनों दिल्ली पहुँच गए चौधरी साहब के पास। उनसे बातचीत हुई। वह हमसे कुछ ही समय पहले टूर से पहुँचे थे। वहाँ असम

गण परिषद से पहुँचे थे असम के मीटिंग और अन्य कार्य थे। वे बताते रहे। फिर उन्होंने पूछा कैसे आए हो, तो मैंने बताया कि चाचाजी बीमार हैं, डॉ. जे. पी. सिंह को दिखाना है। इस पर उन्होंने कहा कि कुशलपाल! तुम तो उन्हें अच्छी तरह जानते हो, वे देख लेंगे। तुम सुबह लोदी गार्डन आ जाना, वे रोजाना सुबह वहाँ घूमने आते हैं। बात करा देंगे।

हम दूसरे दिन सुबह जब वहाँ पहुँचे तो चौधरी साहब अकेले घूम रहे थे। वे देखते ही बोले कि भाई! जे. जी. सिंह तो आज आए नहीं। तुम किस तरह आए हो। हमने कहा कि बस में बैठकर आए हैं। उन्होंने हम दोनों को अपनी गाड़ी में बिठाया और सीधे डॉ जे. पी. सिंह के निवास पर जा पहुँचे। डॉ साहब ने मुझे देखते ही पहचान लिया, बातें कीं और फिर चाचाजी का परीक्षण करके उन्हें संतुष्ट किया।

मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है, कि ऐसा नेता मिलना मुश्किल है जो अपने एक छोटे से कार्यकर्ता के लिए इतना सर–दर्द ले, उसका इतना ध्यान रखे। वे हर कार्यकर्ता को नाम से जानते थे, नाम लेकर ही बुलाते थे और सबसे बड़ी बात यह थी कि वे पहले उसके घर–परिवार का हाल–चाल पूछते थे, फिर काम बताते थे। इससे बड़ी खूबी क्या होगी किसी नेता में। मैं अपने आप को धन्य मानता हूँ कि मैं इस युग के एक ऐसे देशभक्त, ग्रामीण जनता के सच्चे हितैषी महापुरुष का विश्वासपात्र रहा, जिसकी सच्चाई और ईमानदारी की उनके कट्टर विरोधी भी कद्र करते हैं।

प्रश्न – अच्छा ठाकुर साहब! मैं आपका बहुत आभारी हूँ। आपने चौधरी चरण सिंह के अत्यंत महत्त्वपूर्ण पहलुओं का बड़ी स्पष्टता से उद्‌घाटन किया। इसके लिए बहुत–बहुत धन्यवाद।

उत्तर – आपको भी धन्यवाद! आज उनके विषय में जो थोड़ा–बहुत मुझे याद हो आया, आपको बता दिया। उनके प्रति श्रद्धाभाव से जिस स्मृति – ग्रंथ की रचना का आपने संकल्प लिया है, आप उसमें सफल हों, यही मेरी शुभकामनाएँ हैं और चौधरी साहब के लिए श्रद्धांजलि भी।

भाग ३

आर्थिक और सामाजिक नीतियाँ

५६

गाँधीवादी अर्थनीति के प्रतिपादक

मुलायम सिंह यादव*

चौधरी साहब देश के उन गिने–चुने नेताओं में से थे जिन्होंने देश को भारतीय जनमानस एवं उसकी समृद्ध परंपराओं के अनुरूप सार्थक दिशा–निर्देश प्रदान किया, ताकि भारत की अपनी अलग पहचान बनी रहे। देश के स्वतंत्रता आंदोलन में उन्होंने महात्मा गाँधी व अन्य महान राष्ट्र नेताओं के साथ अग्रिम भूमिका निभायी और स्वतंत्रता के बाद देश के आर्थिक विकास तथा गरीब और पिछड़े लोगों को सामाजिक–आर्थिक न्याय दिलाने में भी वे सदैव सक्रिय रहे। हर आँख के आँसू पोंछने के लिए उन्होंने नेहरू की नीतियों के स्थान पर गाँधी जी का रास्ता चुना।

किसानों के तो चौधरी साहब मसीहा थे ही, साथ ही वे देश के उन थोड़े से नेताओं में थे जिनका सीधा संबंध यहाँ की धरती से रहा है। अपने लंबे राजनीतिक और सार्वजनिक जीवन में गाँवों और किसानों के लिए उन्होंने जितना कुछ किया, शायद उतना उनके किसी समकालीन नेता ने नहीं किया।

भूमि का जैसा बन्दोबस्त किसानों के लिए उन्होंने उत्तर प्रदेश में किया, वैसा संभवतः अन्यत्र कहीं नहीं हुआ। आज दुनिया के अर्थशास्त्री भी यह महसूस करते हैं कि जमीन का अगर कहीं सही बन्दोबस्त हुआ है, तो वह उत्तर प्रदेश में हुआ है और इसका श्रेय चौधरी साहब को है।

गाँधी जी बड़े घर में पैदा हुए थे, गाँव में नहीं, लेकिन उनको ग्रामीण जीवन का बहुत गहरा अनुभव था। चौधरी साहब तो सीधे–सादे किसान के बेटे थे और गाँव तथा खेती से जुड़े थे। वह गाँधी के ग्रामीण अनुभव से परिचित थे। इसीलिए उनका कहना था कि गाँधी जी की नीतियों पर चल कर ही हम देश को समृद्धि के रास्ते पर ले जा सकते हैं। उन्होंने जीवन भर इस दिशा में संघर्ष किया।

---

* मुलायम सिंह यादव (१९३९–२०२२), राजनीतिज्ञ। प्रधान मंत्री एच. डी. देवेगौड़ा और आई. के. गुजराल के अधीन केंद्रीय रक्षा मंत्री (१९९६–१९९८)। मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश (१९८९–१९९१, १९९३–१९९५, २००३–२००७)। लोकसभा सदस्य (१९९६–१९९८, १९९८–२००४, २००९–२०१४, २०१४–२०१९, २०१९–२०२२)। अध्यक्ष, समाजवादी पार्टी (१९९२–२०१७)।

वह कहा करते थे कि किसानों की एक आँख खेत की मेड़ पर और एक आँख लखनऊ पर होनी चाहिए अर्थात इस बात पर कि सरकार क्या कर रही है, तभी देश सही दिशा में आगे बढ़ सकता है। वह सदा गाँव और किसान की बात करते थे। लेकिन चौधरी साहब को केवल किसानों और गाँव का नेता कहना उनके साथ नाइन्साफी होगी, उनका सम्मान गिराना होगा। वास्तव में चौधरी साहब सारे देश के नेता थे, राष्ट्रीय नेता थे। वह गाँव और शहर दोनों के नेता थे। उनका कहना था कि जब तक गाँव खुशहाल नहीं होते, शहर तरक्की नहीं कर सकते। चौधरी साहब जब गाँव और किसानों की तरक्की की बात कहते थे, तो उसमे शहरों की भी खुशहाली निहित होती थी।

चौधरी साहब ने गाँधीवाद के आधार पर आर्थिक नीति का प्रतिपादन किया। उनका मानना था कि देश की आर्थिक तरक्की के लिए गाँवों और किसानों की तरक्की आवश्यक है। वे श्रम–मूलक आर्थिक नीति के समर्थक थे। उनका कहना था कि देश में अपार श्रम शक्ति है और पूँजी की कमी है, इसलिए आर्थिक विकास के लिए उपलब्ध श्रम शक्ति का अधिकाधिक उपयोग सुनिश्चित किया जाना चाहिए। उनका मत था कि हमारी आर्थिक नीति का उद्देश्य कुल राष्ट्रीय उत्पादन बढ़ाने के बजाय उत्पादक रोजगार बढ़ाना होना चाहिए। उनका कहना था कि केवल बड़े उद्योगों पर ध्यान केंद्रित करने की बजाय हमें गाँधी जी के बताये रास्ते पर चल कर कुटीर और ग्रामोद्योगों को बढ़ावा देना चाहिए। कम पूँजी लगाकर अधिक रोजगार के अवसर सृजित करना उनका ध्येय था।

वह गरीबी दूर करने के लिये, बेरोजगारी दूर करने के पक्षधर थे। इसीलिये उन्होंने बेरोजगारी और अर्द्ध–बेरोजगारी खत्म करने और भूमि पर बोझ कम करके खेती के काम मे लगे लोगों को लघु और कुटीर उद्योगों में लगाने पर जोर दिया। वह चाहते थे कि प्रति एकड़ उत्पादकता बढ़े और प्रति एकड़ काम करने वालों की संख्या घटे। उनकी आर्थिक नीति का मुख्य मुद्दा यह था कि हाथ से बनने वाले सामान मशीन से न बनें। उनका मत का कि कोई भी बड़ा या मध्यम उद्योग ऐसी चीज बनाने के लिए न लगे जो कुटीर या छोटे उद्योग के जरिये बनाई जा सकती है। गाँधी–दर्शन के क्रियात्मक पक्ष के अनुसार चौधरी साहब कृषि के लिए उपयोगी एवं कृषि पर आधारित लघु एवं कुटीर उद्योग को प्रोत्साहन देने के पक्ष में थे। उनका विश्वास था कि लघु एवं कुटीर उद्योगों की उन्नति व प्रसार से देश की बेरोजगारी दूर करके अर्थ–व्यवस्था को सुदृढ़ आधार दिया जा सकता है।

चौधरी साहब चाहते थे कि जब तक हमारा आर्थिक विकास उस

स्तर पर न पहुँच जाए, जहाँ श्रमिकों की कमी महसूस होने लगे, तब तक यंत्रीकरण द्वारा उत्पादन में वृद्धि न की जाए। उनके अनुसार देश में खेती का अधिकाधिक विकास करके उत्पादन बढ़ाने तथा खेती के धंधे से अधिक से अधिक लोगों को हटाने के अलावा देश के विकास का कोई दूसरा रास्ता नहीं है। जब तक खेतिहर की क्रय शक्ति नहीं बढ़ेगी, तब तक उद्योगों का विकास भी नहीं होगा। चौधरी साहब का स्पष्ट मत था कि छोटे परिवारों के खेतों और छोटे उद्योगों की छोटी इकाइयों वाली अर्थ–व्यवस्था से ही लोकतंत्र मजबूत होगा।

यह कितनी बिडंबना थी कि आजादी के ४७ वर्षों बाद देश की अपनी कोई भाषा नहीं बन पाई थी और सारा काम–काज विदेशी भाषा में ही हो रहा था। चौधरी साहब अपनी भाषा के बारे में दिन–रात चिंतित रहते थे। उनके भाषा संबंधी विचारों से प्रेरणा लेकर ही हमने उत्तर प्रदेश में सरकारी काम–काज में अंग्रेजी समाप्त कर हिन्दी का प्रयोग अनिवार्य कर दिया। अब उत्तर प्रदेश में विदेशी भाषा में काम–काज नहीं होता और चौधरी साहब के अरमानों को मजबूती के साथ पूरा किया जाएगा। यही चौधरी चरण सिंह के प्रति सबसे बड़ी श्रद्धांजलि होगी।

आज देश नाजुक दौर से गुजर रहा है। कतिपय ताकतें धर्म और संप्रदाय के नाम पर लोगों को बाँटने और देश को कमजोर करने की साजिश कर रही हैं। चौधरी साहब ने ऐसी ताकतों के विरूद्ध संघर्ष किया। वे जीवन भर हिन्दू और मुसलमान की एकता के लिए चिंतित रहे। उन्हीं की प्रेरणा से आज हमारी सरकार हिन्दू–मुस्लिम एकता कायम रखने के लिए बड़ी से बड़ी जोखिम उठाने के लिए तैयार है। हमें संकल्प लेना है कि ईश्वर–अल्लाह के नाम पर इन्सानियत का कत्लेआम नहीं होने दिया जाएगा और हर कीमत पर शान्ति–व्यवस्था और सांप्रदायिक सौहार्द बनाए रखना होगा। यही तो चौधरी साहब की हम सबको सीख थी।

चौधरी साहब अपने सिद्धांतों पर पूरी तरह दृढ़ थे और अपनी बात को बेलाग–लपेट निर्भीक रूप से कहने की उनमें विलक्षण क्षमता थी। यही कारण है कि सहकारी खेती के मामले में उन्होंने पंडित जवाहर लाल नेहरू का भी विरोध किया। अपने सिद्धांतों और नीतियों के लिए उन्होंने १९६७ में कांग्रेस पार्टी को भी छोड़ दिया। मुझे वह जमाना भी याद आता है जब बड़े–बड़े नेताओं ने उनका साथ छोड़ दिया। मुझे आज भी याद है कि ऐसे ही समय एक दिन मैं उनसे मिलने गया। वह मुस्कराते हुए ताश खेल रहे थे। मुझे आश्चर्य हुआ। लेकिन उस वक्त भी उन्होंने मुस्कराते हुए मुझसे कहा था कि घबराना मत, जनता हमारे साथ रहेगी, क्योंकि नीतियाँ अपने साथ हैं।

लोकनायक जयप्रकाश नारायण और डॉ. राम मनोहर लोहिया के साथ–साथ चौधरी साहब ने देश में गैर–कांग्रेसवाद का सूत्रपात किया। वह प्रदेश में पहले गैर–कांग्रेसी मुख्यमंत्री बने। कांग्रेस के विकल्प के रूप में विपक्ष को एकजुट करने में उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की और इस कार्य में उन्होंने दलगत राजनीति और अपने अहम् को आड़े नहीं आने दिया। आज प्रदेशों में गैर कांग्रेसी सरकारें उन जैसे दूरदर्शी और जुझारू नेताओं के ही अथक प्रयासों का प्रतिफल है, जिसके लिए सारा देश उनका कृतज्ञ रहेगा।

५७

प्रेस की आजादी के पक्षधर

कुलदीप नैयर*

चौधरी चरण सिंह से मेरा संबंध काफी पुराना था। वे जब उत्तर प्रदेश में मंत्री थे, तब मेरी उनसे भेंट हुई थी और तब से बने संबंध धीरे–धीरे घनिष्ठता में बदल गए, जो उनके मृत्यु पर्यंत बने रहे। मैं उनका बहुत आदर करता था, इसलिए नहीं कि वह बहुत बड़े नेता थे, इसलिए कि वह एक सच्चे और साफ दिल, ईमानदार इंसान थे।

एक वजह और, वह यह कि वे मेरे लेखों को बहुत ध्यान से पढ़ते थे। एक पत्रकार को इससे बड़ा सम्मान क्या मिलेगा कि एक राजनेता उसके लेखों को पढ़ता ही नहीं है बल्कि उन पर मनन भी करता है। यहाँ यह भी उल्लेख करना आवश्यक समझता हूँ कि वह मेरे ही लेखों कॉलमों को पढ़ते हों, ऐसी भी बात नहीं है, वह हर एक अखबार के संपादकीय तथा स्तम्भों के अलावा विषय पर बहस भी करते थे। लेकिन उनसे प्रेस हमेशा नाराज रहा। प्रेस के, उनके प्रति रवैये में, दिल्ली आने के बाद और बढ़ोत्तरी हुई जो उनके गृहमंत्री, वित्तमंत्री, उप–प्रधानमंत्री और प्रधानमंत्री रहने के बाद भी जारी रही। इसके बावजूद वे प्रेस की आजादी के हमेशा पक्षधर रहे। प्रेस के ऐसे रवैये के बाद भी उन्होंने न तो व्यक्तिगत तौर पर और न किसी सार्वजनिक समारोह में प्रेस के खिलाफ कार्यवाही करने या बंदिश लगाने जैसी कोई बात कही। उनका मानना था कि प्रेस की आजादी के बिना लोकतंत्र स्थायी नहीं रह सकता। इनकी सरकारों के काल में तो प्रत्यक्ष, नहीं तो अप्रत्यक्ष रूप से प्रेस पर अनगिनत बंदिशें लगायी जाती रहीं। पिछली सरकारों में प्रेस पर बराबर दबाव बना रहा।

मैंने शास्त्रीजी (देश के दूसरे प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री) के साथ काम किया है, इसलिए मुझे मालूम है कि चौधरी साहब की एक बात शास्त्री जी से बहुत मिलती थी– वह यह कि वे शास्त्री जी की तरह

---

* कुलदीप नैय्यर (१९२३–२०१८), पत्रकार, स्तंभकार, मानवाधिकार और सांप्रदायिक सौहार्द कार्यकर्ता। संपादक, स्टेट्समैन। एडिटर्स गिल्ड ऑफ इंडिया की स्थापना की। १९९६ में संयुक्त राष्ट्र में भारत का प्रतिनिधित्व किया और ग्रेट ब्रिटेन (१९९०) में उच्चायुक्त के रूप में कार्य किया। २०१९ में पद्म भूषण सहित कई पुरस्कारों से सम्मानित।

बहुत सादा और दिल के साफ थे। उन्होंने कभी भी किसी से कड़वी बात नहीं की। वे बेईमान नहीं थे। मुझे याद आता है कि जब शास्त्री जी मिनिस्टर नहीं रहे थे, तब उनके घर में मुश्किल से गुजारा होता था। इसी तरह चौधरी साहब के यहाँ भी बड़ी मुश्किल से गुजर–बसर होती थी। क्योंकि उनके यहाँ आमदनी का कोई दूसरा जरिया नहीं था। एक बात जो उनकी मुझे सबसे ज्यादा प्रभावित करती है, वह यह कि वे कभी वादा खिलाफी नहीं करते थे। वह चाहे मानव अधिकार का सवाल हो, लोकतंत्र के स्थायित्व का सवाल हो, चाहे धर्मनिरपेक्षता का या गरीबों की हालत सुधारने का प्रश्न हो, उन्होंने इन सवालों पर अपने उसूलों से कभी समझौता नहीं किया। इन सवालों की खातिर वह बराबर लड़ते रहे। उनका मानना था कि इन सवालों पर कभी समझौता नहीं करना चाहिए और यदि कभी इनको पूरा करने का मौका मिले तो हर हालत में पूरा करना चाहिए। आज के हालात में हमारे लिए चौधरी साहब का यही सबसे बड़ा संदेश है।

जयप्रकाश जी का लोकशक्ति में बहुत बड़ा विश्वास था। चौधरी साहब भी लोकतंत्र के लिए लोकशक्ति या जनशक्ति कहें, उसे आवश्यक मानते थे। उनका मानना था, "एक ऐसी ताकत जो जनता की ताकत हो–यदि सरकार कुछ गलत करे, तो रोक सके, उसे सही काम करने के लिए मजबूर कर सके–का होना बहुत जरूरी है। सही साधनों और तरीकों के बिना मंजिल हासिल नहीं की जा सकती।"

दुख इस बात का है कि आज वह हमारे बीच नहीं हैं लेकिन उनके विचार ही हमारे लिए संदेश हैं, जो सदैव भविष्य में भी कदम–कदम पर हमारा मार्ग प्रशस्त करते रहेंगे।

५८

उनका सपना था गाँव, कृषि और किसान की बहबूदी

राम कृष्ण हेगड़े*

गाँधी जी के बाद देश में यदि कोई नेता हुआ, जिसने गाँव, देहात में रहने–बसने वाले लोगों, गरीबों, किसानों, मेहनतकशों के हितों की आवाज उठाई, उनके लिए संघर्ष किया, उस व्यक्ति का नाम था चौधरी चरण सिंह। मेरा उनसे परिचय तो वैसे कई सालों से था, लेकिन १९७७ में जनता पार्टी की जब सरकार बनी, तब मेरा उनसे परिचय प्रगाढ़ता में तब्दील हो गया। मैं जनता पार्टी व जनता संसदीय दल दोनों का जनरल सेक्रेटरी था। इस नाते उस दौरान मुझे चौधरी साहब से मिलने और विचार–विमर्श करने का कई बार मौका मिला और तभी उनके जीवन के अनछुए पहलुओं के बारे में मुझे जानकारी मिली।

चौधरी साहब बहुत ईमानदार, सिद्धांतवादी और सादगी पसंद इंसान थे। उनका नेतृत्व कितना कुशल और प्रभावी था, जिसका वर्णन करना मेरे जैसे व्यक्ति के बस के बाहर की बात है। फिर भी मैं एक दृष्टांत देना आवश्यक समझता हूँ। एक बार बहैसियत जनता पार्टी के जनरल सेक्रेटरी मुझे मिजोरम व नागालैण्ड जाने का मौका मिला। मैंने वहाँ जाकर जाँच की और आने के बाद प्रधानमंत्री व गृहमंत्री को अपनी रिपोर्ट दे दी। वैसे सरकारी स्तर पर भी जाँच की गई थी। रिपोर्ट देने के दो–तीन दिन बाद ही एकाएक मुझे चौधरी साहब का फोन आया कि वह मुझसे बात करना चाहते है। मैं ऑफिस में बैठा संगठन संबंधी फाइलों को देख रहा था। मैंने उनसे कहा कि आप जब भी बतायें, मैं आ जाऊँगा लेकिन उन्होंने मुझसे कहा कि नहीं, मैं आपके पास वहीं आ रहा हूँ। वह जनता पार्टी के कार्यालय में आए और अपने साथ वह फाइल भी लाये। उन्होंने आते ही मुझसे कहा कि इस रिपोर्ट में सच्चाई है। इतना सादा व्यक्तित्व मैंने आज

* रामकृष्ण महाबलेश्वर हेगड़े (१९२६–२००४), कर्नाटक के मुख्यमंत्री (१९८३–८८)। उपाध्यक्ष, योजना आयोग (१९८९–१९९०), केंद्रीय वाणिज्य मंत्री (१९९८–९९) और राज्यसभा सांसद (१९७८–८३, १९९६–२००२)।

तक नहीं देखा जो केवल मेरी सच्चाई को ही बताने पार्टी कार्यालय आए।

दूसरी घटना मुझे याद आती है। एक दिन उन्होंने मुझे सुबह ५ बजे के करीब बुलाया। मैं गया। मैंने देखा कि लॉन में दो–चारपाई बिछी थीं। रात में वह चारपाई पर सोये थे। ऐसा लगता था। वह चबूतरे पर बैठे थे। उन्होंने मुझे चाय पिलवायी। मैंने पूछा कि चौधरी साहब यह कौन–सी चाय है। तब उन्होंने कहा कि पीकर देखो, यह उससे अच्छी चाय है जो आप पीते हो। वह चाय सेहत खराब करती है लेकिन यह चाय नहीं। बातचीत में जब उन्हें यह बात मालूम पड़ी कि मैं भी किसान का बेटा हूँ तो वह बहुत खुश हुए और तब से वह मुझे बेहद प्रेम करने लगे थे।

चौधरी साहब का सपना था गाँव, किसान खुशहाल हों। वह चाहते थे कि बजट का ४० फीसदी हिस्सा गाँव–कृषि–किसान के विकास में खर्च हो। उनका मानना था कि देश की खुशहाली का रास्ता गाँवों और खेतों से होकर गुजरता है। इसमें कोई दो राय नहीं कि वह जीवन भर गाँव, किसान की बहबूदी के लिए प्रयत्नशील रहे और जनता सरकार में उन्होंने गाँव–किसान की बहबूदी के लिए भरसक प्रयास भी किये। इसमें दो राय नहीं कि यदि उन्हें समय मिलता तो ग्रामीण भारत के विकास का नक्शा ही कुछ और होता और देश का नक्शा ही बदल गया होता। मुझे इस बात की बेहद खुशी है कि कर्नाटक सरकार ने चौधरी साहब के सपनों को साकार करने का काम किया है और आज कर्नाटक का किसान खुशहाल है और राज्य का हर गाँव–किसान मूलभूत आवश्यक सुविधाओं से लाभन्वित हो रहा है। यदि आज चौधरी साहब होते तो अपने सपने को साकार होते देख उन्हें कितनी प्रसन्नता होती। हम चाहते हैं कि चौधरी साहब के अधूरे कार्यों को पूरा करें और उनके सपनों का भारत बनाने के कार्य को अपना अभीष्ट मानें।

५९

रोजगारपरक व्यवस्था के पक्षधर

कैलाश नाथ सिंह*

चौधरी चरण सिंह का जन्म मध्यवर्गीय किसान परिवार में हुआ था। वे सादगी और सरलता की प्रतिमूर्ति थे। श्वेत खादी वस्त्रों में स्वस्थ शरीर, सौम्य गंभीर चेहरा और उनकी चमकती आँखें जिनमें करुणा और दृढ़ता एक साथ परिलक्षित होती थीं, प्रत्येक मिलने वाले को अनोखे आकर्षण में बाँध लेती थीं।

बचपन में मिले संस्कार निरंतर मानव जीवन को निर्देशित प्रेरित और गंतव्य की ओर बढ़ने के लिए ऊर्जा तो प्रदान करते ही हैं, उसे अनुशासित, संयमित और निष्ठावान भी बनाते हैं। उसकी आस्था और विश्वास उसे ईमानदारी और परिश्रम से कर्तव्य पालन की प्रेरणा देते हैं और उसका व्यवहार एक विशाल जनसमूह को प्रभावित, प्रेरित और अपने विचारों का अनुगामी बनाने में सफल होता है।

चौधरी चरण सिंह जी के प्रेरणा स्त्रोत महर्षि दयानंद और महात्मा गाँधी थे। बचपन से ही उन्हें आर्य समाजी संस्कार प्राप्त हुए थे। महर्षि दयानंद के सिद्धांतों व सुधार आंदोलन ने उन्हें विशेष रूप से प्रभावित किया था। वास्तव में उनके क्रांतिकारी विचारों की पृष्ठभूमि आर्य समाज द्वारा तैयार हुई थी, जिसने उन्हें महान देशभक्त, राष्ट्रवादी एवं मातृभाषा – अनुरागी बना दिया था। आर्य समाज के समाज सुधार आंदोलन ने उनके मन में भी जातीय भेदभाव व अस्पृश्यता भी जातीय भेदभाव व अस्पृश्यता के उन्मूलन की प्रेरणा जागृत की थी। वह जीवनपर्यंत जातीय भेदभाव को दूर करने के प्रयास में लगे रहे।

१९२१ में जब वह आगरा कॉलेज के छात्र थे, उन्होंने एक वाल्मीकि के साथ भोजन ग्रहण किया था। गाजियाबाद में उन्होंने एक हरिजन को ही अपना रसोइया नियुक्त किया था। साप्ताहिक यज्ञों में भी हरिजन और पिछड़ी जाति के लोगों को वे सदा आमंत्रित करते थे।

---

* कैलाश नाथ सिंह यादव (१९५७–), राजनीतिज्ञ, बहुजन समाज पार्टी (बसपा) और समाजवादी पार्टी। चंदौली लोकसभा निर्वाचन क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते हैं और क्षेत्र के हितों के लिए विभिन्न विधायी गतिविधियों में भाग लेते रहे हैं।

जातीय भेदभाव को कम करने के लिए ही उन्होंने अंतर्जातीय विवाह को प्रोत्साहित किया। उनकी कथनी और करनी में हमेशा साम्य रहा। उन्होंने अपनी पुत्री और निकट संबंधियों को अंतर्जातीय विवाह के लिए प्रोत्साहित कर यह सिद्ध कर दिया कि जो कुछ वह दूसरों को सिखाना चाहते थे, उसे अपने जीवन में उतार चुके थे। उन्होंने बड़ौत (मेरठ) में मुख्य अध्यापक तथा जिला बुलंदशहर के जाट कॉलेज का प्रधानाध्यापक का पद इसलिए ठुकराया था, क्योंकि इन संस्थाओं का नामकरण जाति विशेष का सूचक था।

चौधरी चरण सिंह राष्ट्रीय एकता और अखण्डता की राह में सबसे बड़ा अवरोध जातिवाद को मानते थे, क्योंकि जातिवाद व्यक्ति के दृष्टिकोण को संकुचित और निष्ठा को खोखला करता है। इस संकीर्णता को दूर करने के लिए उनका प्रथम कदम था कि शिक्षण संस्थाएँ जो बालक के जीवन आदर्शों के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं, में जातीय भेदभाव को दूर किया जाए। इसलिए उन्होंने उन समस्त शैक्षणिक संस्थाओं की अनुदान राशि रोकने की माँग की, जो किसी जाति विशेष के नाम से चल रही थीं।

इससे पूर्व भी चौधरी चरण सिंह ने अप्रैल १९३९ में कांग्रेस विधायक दल के समक्ष एक प्रस्ताव रखा था कि लोक सेवा तथा शैक्षणिक संस्थाओं में हरिजन प्रत्याशी बिना किसी भेदभाव के प्रवेश प्राप्त करें तथा अंतर्जातीय विवाह करने वालों को सेवाओं में वरीयता दी जाए। २२ मई १९५४ को एक पत्र के माध्यम से उन्होंने यह भी सुझाव दिया था कि संविधान में इस आशय का संशोधन किया जाए कि भविष्य में केंद्र या राज्य में किसी भी नौजवान को "राजपत्रित पद" पर उस समय तक प्रविष्ट नहीं किया जाएगा, जब तक उसने अपनी जाति के बाहर किसी अन्य जाति में (या अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त किसी अन्य भाषाई से) विवाह किया होने या करने की इच्छा व्यक्त न की हो।

चौधरी चरण सिंह महिलाओं के समान अधिकार और भावनात्मक स्वाधीनता के पक्षधर थे। नारी की रक्षा वह उतनी ही महत्वपूर्ण समझते थे, जितनी कि देश के अन्य कमजोर वर्गों की। वह दहेज प्रथा के भी विरोधी थे। यही कारण है कि उन्होंने अपने इकलौते पुत्र का विवाह आर्य समाज पद्धति से बिना दहेज लिए संपन्न करवाया। वह विवाह में वर–वधू की सहमति के भी पक्षपाती थे। नारी पर किए गए अत्याचार वह सहन नहीं कर सकते थे। बागपत काण्ड (माया त्यागी काण्ड) में एक स्त्री पर पुलिस द्वारा किए गए अत्याचार के विरोध में उन्होंने सत्याग्रह का आवाहन

किया था और उनके निर्देश पर ही उनके समर्थकों ने नारी सुरक्षा और सम्मान के लिए सत्याग्रह किया और हजारों की संख्या में जेल गए।

समाज में बढ़ते हुए नशा–व्यसन के भी वह विरोधी थे और किसी भी तरह के नशे की आदत को वैयक्तिक और सामाजिक उन्नयन में बाधा मानते थे, क्योंकि नशा विवेक को कुंठित करता है एवं व्यसनी को पथभ्रष्ट। इसलिए चौधरी चरण सिंह चाहते थे कि सरकारी स्तर पर इसे रोकने के लिए कड़े कानून बनाए जाएं तथा इस व्यसन में फँसें लोगों के सुधार के लिए पर्याप्त चिकित्सा सुविधाएँ प्रदान की जाएं।

चौधरी चरण सिंह समाज के दलित और शोषित वर्ग के उत्थान के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहे। उन्हें उन्नति के पर्याप्त अवसर उपलब्ध हों, इसके लिए विभिन्न राजकीय सेवाओं में उन्हें विशेष वरीयता देने या उनके लिए आरक्षण की व्यवस्था का सदा समर्थन किया। "मण्डल आयोग" के गठन में उनकी भूमिका महत्वपूर्ण और सराहनीय थी।

"देश की गरीबी का उन्मूलन कृषि की समृद्धि के बिना नहीं हो सकता। उन्नत कृषि ही देश की अर्थव्यवस्था के उत्कर्ष का मार्ग है", उनके इन शब्दों से भलीभाँति स्पष्ट हो जाता है कि उनका दृढ़ विश्वास था कि ग्राम्य प्रधान भारत में प्रजातंत्र का सपना तब तक स्थाई रूप से साकार नहीं हो सकता, जब तक कि धरती पर पसीना बहाने वाले किसान के अधिकार और उन्नति के अवसर स्पष्ट न हों।

चौधरी चरण सिंह ने देश की अर्थव्यवस्था में कृषि के महत्व को स्पष्ट करते हुए कहा था– "कृषक संरचना के चार उद्देश्य होने चाहिए– अधिकतम उत्पादन, रोजगार की व्यवस्था, न्यायोचित वितरण तथा जनवादी प्रवृतियाँ।" यह तभी संभव हो सकता है जब अर्थव्यवस्था के मुख्य आधार कृषि की उन्नति हो। चौधरी चरण सिंह का विचार था कि भारत गाँवों में बसता है तथा गाँवों में छोटी जोत व बिना जोत के लोगों का बाहुल्य है, इसलिए उनकी दृष्टि में ग्रामोत्थान, निम्न वर्ग का उत्थान अथवा देशोत्थान एक दूसरे के पर्याय हैं। इसीलिए उन्होंने "गाँवों की ओर चलो" का नारा बुलंद किया था।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में नेहरू जी ने पाश्चात्य देशों के अनुकरण पर विस्तृत पैमाने पर राष्ट्रीयकृत सहकारी खेती को बढ़ावा देने का प्रावधान किया, परंतु चौधरी चरण सिंह सहकारी खेती में राष्ट्रीयकृत व्यवस्था के अंतर्गत विशाल फार्म स्थापित करने के विरोधी थे, क्योंकि इससे जमीन के साथ आदमी का व्यक्तिगत लगाव कम होता है, जिससे उद्यम में शिथिलता की संभावना बढ़ जाती है। दूसरे, उत्पादित पूँजी कुछ हाथों में केंद्रित हो जाने की भी समस्या बनी रहती है। इसलिए उनका

विचार था कि १०० एकड़ से अधिक के विशाल फार्म के बजाए १०० एकड़ भूमि को २.५ एकड़ के ४० फार्मों में बाँट दिया जाए, तो इसमें पूँजी की लागत कम होगी और पैदावार अधिक। इससे भी बड़ी बात यह होगी कि अधिक संख्या में बेरोजगारों को काम मिलेगा। इस प्रकार वह चाहते थे कि खेतिहर अपनी छोटी–छोटी जोतों के मालिक हों और सेवा सहकारी समितियां उन्हें आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध कराने तथा एक दूसरे से जोड़ने की भूमिका निभाएं।

इसी प्रकार वह कृषि में यंत्रीकरण का समर्थन तो करते थे, परंतु बड़ी–बड़ी मशीनों से, बढ़े–बड़े फार्मों पर खेती करने के बजाए छोटे–छोटे फार्मों पर छोटी–छोटी मशीनों से खेती करना वह अधिक लाभदायक समझते थे। श्री पी. एस. अप्पू, कृषि एवं भूमि सुधार आयुक्त एवं संयुक्त सचिव, ने अप्रैल १९७१ में "सीलिंग ऑन लार्ज होल्डिंग" नामक अपनी रिपोर्ट में छोटी जोतों का समर्थन करते हुए उन्हें कृषि उन्नति के लिए अधिक लाभकारी बताया है।

जनसंख्या वृद्धि के साथ टुकड़ों में विभाजित होते खेत और बिखरी हुई जोतें कभी भी किसान को समुचित लाभ नहीं दे सकतीं। इसलिए उन्होंने चकबंदी की योजना प्रारंभ करवायी, जिसमें किसानों के विभिन्न स्थानों पर बिखरे हुए खेतों को दो–तीन चकों में इकट्ठा कर दिया गया। इससे उसे खेती करने में सुविधा हुई, वह व्यर्थ की भाग दौड़ से बच गया। चकबंदी का एक लाभ यह भी है कि सरकार तथा किसान के बीच सीधे संबंध स्थापित हो जाते हैं। उदाहरण के लिए बस्ती जिले की डुमरियागंज तहसील को लिया जा सकता है, जहाँ छोटे–छोटे खेतों की बहुलता थी। किसी एक किसान परिवार के औसतन २५ खेत थे, जिनका क्षेत्रफल ३०० एकड़ अर्थात एक औसत खेत का रकबा ४ बिस्वा (६०० वर्ग गज) के लगभग था। चकबंदी के बाद, एक परिवार के अधिकार वाले २५ खेतों को दो चकों में बदल दिया गया।

भूमि सुधार और भूमि वितरण संबंधी जो कानून, समय–समय पर पारित हुए, उनके पालन में अधिक सतर्कता तथा उन्हें त्वरित गति से लागू किए जाने पर वह बल देते थे, जिससे सुधार कानूनों का समुचित लाभ जोत विहीन शोषित और दलित वर्ग को प्राप्त हो सके और वे अपनी स्थिति तथा देश की अर्थव्यस्था की उन्नति में सहायक बन सकें।

उनके प्रयासों से जमींदारी उन्मूलन अधिनियम पारित हुआ। उन्होंने उसे अविलंब लागू करने का प्रयास किया, जिससे भूमि जोतों का खेती करने वालों में समान वितरण हो तथा ५० प्रतिशत व्यक्तियों के पास केवल ९ प्रतिशत भूमि होने की विषमता की स्थिति का अंत हो सके। जमींदारी

उन्मूलन से प्राप्त होने वाले लाभों के प्रति लोग आश्वस्त हो सकें, इसके लिए समय–समय पर अपने भाषण द्वारा सशक्त वैचारिक पृष्ठभूमि तथा समुचित जन–मानसिकता भी तैयार करने का प्रयास किया।

खेतिहर किसानों की भूमि का अधिग्रहण वह उचित नहीं समझते थे, फिर भी यदि किन्हीं अति अनिवार्य परिस्थितियों में भूमि का अधिग्रहण करना ही पड़े, तो वह चाहते थे कि किसान को उचित मुआवजा दिया जाए।

किसानों को शोषण से बचाने, न्यायिक अधिकार व रक्षा प्राप्ति के लिए आवाज बुलंद करने के लिए वह "किसान संगठन" या "किसान संस्था" के गठन पर बल देते थे। उनके द्वारा स्थापित "किसान संगठन" उनके कृषि प्रधान अस्तित्व का परिचायक था। वर्तमान समय में भी ऐसे स्वतंत्र कृषक संगठन की नितांत आवश्यकता है, जो देश की आर्थिक एवं सामाजिक नीतियों में अपना प्रभाव रख सके और ग्रामीण जनता व किसान को शोषण से बचाते हुए ग्रामोत्थान का मार्ग प्रशस्त कर सके, तभी भारत का समुचित उत्थान हो सकेगा।

चौधरी चरण सिंह भारत की अपार जन शक्ति को उत्पादन प्रक्रिया से जोड़ना चाहते थे। इसीलिए वह भी महात्मा गाँधी की भाँति बड़े उद्योगों के बजाए कुटीर उद्योगों की स्थापना पर बल देते थे। परंतु इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं था कि बड़े उद्योग स्थापित न हों। वे केवल इतना चाहते थे कि जिन वस्तुओं का उत्पादन सार्वजनिक क्षेत्र में लघु स्तर पर, कुटीर उद्योगों के माध्यम से हो सकता है, उनके लिए बड़े उद्योग लगाने की अनुमति न प्रदान की जाए। जापान जैसा एशिया का एक छोटा देश अपने लघु स्तरीय उद्योगों के द्वारा त्वरित और अभूतपर्व उन्नति कर सका है तथा विश्व की अर्थव्यवस्था में उसे प्रमुख स्थान प्राप्त है।

चौधरी चरण सिंह रोजगार के अधिकार को मौलिक अधिकार बनाने के समर्थक थे, जिससे कार्य करने के लिए इच्छुक व्यक्ति को कार्य उपलब्ध हो सके। इसके लिए तकनीकी प्रशिक्षण, लघु रोजगार परामर्श समितियों की सुविधा उपलब्ध करवाना सरकारी दायित्व समझते थे। वे ऐसे अनावश्यक सरकारी प्रतिष्ठानों को बंद करवाने के पक्षपाती थे जो लंबे अर्से से घाटे पर चल रहे हों या जिनके कारण देश की अर्थव्यवस्था पर विदेशी ऋण का भार बढ़ रहा हो।

चौधरी साहब संचार माध्यमों, विशेषकर आकाशवाणी और दूरदर्शन की स्वायत्त भूमिका को देश की उन्नति में अत्यंत उपयोगी और महत्वपूर्ण समझते थे। संचार माध्यमों के द्वारा सरकारी योजनाओं,

आवश्यक कृषि सूचनाओं, रोजगार सुविधाओं की जानकारी जन–जन तक पहुँचा कर ही वास्तविक लक्ष्य की प्राप्ति की जा सकती है।

अंततोगत्वा उनका दृढ़ विश्वास था कि कृषि विकास तथा रोजगार प्रेरक लघु उद्योगों की व्यवस्था ही निर्धनता, बेरोजगारी तथा सामाजिक और आर्थिक विषमता को दूर कर, भारत के भविष्य को उज्ज्वल बना सकेगी।

६०
एक दृष्टा थे चौधरी चरण सिंह
डॉ. सुब्रह्मण्यम स्वामी*

नगरों में चौधरी चरण सिंह के विचारों की गहराई एवं व्यापकता से बहुत कम ही लोग परिचित हैं। स्वतंत्रता के बाद, महात्मा गाँधी और सरदार पटेल के प्रयाणोपरान्त चौधरी चरण सिंह ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे, जो जवाहर लाल नेहरू द्वारा सोवियत रूस से आयातित समाजवाद के सिद्धांत को चुनौती देने में सक्षम थे।

नेहरू व चौधरी चरण सिंह में राजनीतिक मतभेद स्पष्ट थे। नेहरू जी देश की अर्थव्यवस्था पर राज्य का नियंत्रण चाहते थे जबकि चौधरी चरण सिंह का स्पष्ट अभिमत था कि अर्थव्यवस्था का राज्य मार्ग दर्शन एवं सहायता करे, उस पर नियंत्रण नहीं। उनका मानना था कि यदि किसानों एवं लघु उद्यमियों को लाभकारी मूल्यों एवं उचित विपणन द्वारा सरकारी सहायता मिले, तो अर्थव्यवस्था की प्रगति की दर तेज होगी। आज नेहरू जी व चौधरी साहब दोनों ही हमारे बीच नहीं है किंतु पिछले दशक की घटनाएं चौधरी चरण सिंह की आर्थिक विकास की नीतियों को सर्वथा उचित ठहराती हैं। यही नहीं वह नेहरू–रूस मॉडल, जो हमने अपनाया, को गलत साबित भी करती हैं।

भारी औद्योगीकरण का स्टालिनवादी ढाँचा सर्वप्रथम सोवियत संघ ने अपनाया। फिर यूरोप के अन्य देशों ने और अंततः चीन और भारत ने भी वही ढाँचा अपनाने का काम किया। यह ढाँचा वांछित परिणाम देने में असफल सिद्ध हुआ। पहले पूर्व यूरोप के देश जैसे हंगरी व पोलेण्ड १९६० में इस ढाँचे से अलग हुए। फिर १९७० में चीन ने सोवियत ढाँचे को स्थानीय परिस्थितियों में प्रतिकूल पाया और त्याग दिया। सोवियत रूस में भी ग्लासनोस्त (उदारवादी) कार्यक्रम के तहत यह महसूस किया गया कि यह ढाँचा वांछित परिणाम देने में सक्षम नहीं रहा। सोवियत ढाँचे

---

* डॉ. सुब्रह्मण्यम स्वामी (१९३९–), राजनीतिज्ञ, अर्थशास्त्री और वक्ता। उत्तर प्रदेश से राज्यसभा सांसद (१९८८–१९९४, २०१६–२०२२)। वाणिज्य और उद्योग मंत्री (१९९०–१९९१) और कानून और न्याय मंत्री। वे भारतीय जनता पार्टी (भाजपा), जनता पार्टी, भारतीय जनसंघ और अखिल भारतीय प्रगतिशील जनता दल सहित विभिन्न राजनीतिक दलों से जुड़े रहे।

का तो चौधरी साहब ने १९५९ में अविभाजित कांग्रेस के अधिवेशन में भी प्रखर विरोध किया था।

इस बीच अनेकों देश जैसे जापान, दक्षिण कोरिया, हाँगकाँग, सिंगापुर तथा ताईवान आदि ने चौधरी चरण सिंह द्वारा कृषि एवं लघु उद्योग को प्राथमिकता देने वाली नीति को अपनाया तथा दूसरे विश्व युद्ध के विनाश से पूरी तरह उबर गए। यही नहीं वह १९८० तक नव विकसित देशों की सूची में भी आ गए। वास्तविकता यह है कि आज जापान की प्रति व्यक्ति आमदनी अमेरिका से भी अधिक है जबकि १९५० में वह अमेरिका का दसवां हिस्सा थी।

अतः पिछले चार दशकों का राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय अनुभव यह सिद्ध करता है कि आर्थिक विकास का नेहरू– सोवियत ढाँचा गलत था, जबकि महात्मा गाँधी, सरदार पटेल, चौधरी चरण सिंह की नीतियाँ देश के लिए सर्वोत्तम सिद्ध हुयी हैं। हमारा देश भी आज विकसित देशों की सूची में होता, यदि हमने नेहरू के बजाय चौधरी साहब की नीतियों और सिद्धांतों को अपनाया होता। आज इस बात पर हर भारतीय देशभक्त को मनन करना होगा। मैं चौधरी चरण सिंह जी के प्रशंसकों, उनके अनुयायी और दलीय कार्यकर्ताओं से आग्रह करता हूँ कि वह देश के कोने–कोने में जाएं तथा चौधरी साहब की नीतियों का व्यापक प्रचार व प्रसार करें, जो उन्हें जीवन भर प्यारी रहीं।

६१
जैसा मैंने उन्हें जाना
ए. नीललोहितदास नादर*

चौधरी चरण सिंह का नाम मैंने पहले पहल सन् १९६७ में सुना, जब वह कांग्रेस से अलग होकर विपक्षी दलों के समर्थन से उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री बने थे। मेरी राय में ईमानदारी और संघर्षशील व्यक्तित्व के प्रतीक चौधरी चरण सिंह को उत्तर प्रदेश के कांग्रेसी लोगों ने वहीं दबाकर रखने की कोशिश की, ताकि उनके व्यक्तित्व और सिद्धांत देश भर में न फैलें। कांग्रेस से बाहर आने के बाद उनका व्यक्तित्व राजस्थान, हरियाणा और बिहार में फैलने लगा। गैर कांग्रेसी शक्तियों को मिलाकर जब चौधरी साहब ने भारतीय लोक दल की स्थापना की, तो उनके नाम और सिद्धांतों का और प्रचार हो गया। लेकिन तब भी चौधरी साहब को निकट से जानने का मौका मुझे नहीं मिला। सन् ७७ में वे केंद्र में गृहमंत्री, १९७९ में उप–प्रधानमंत्री तथा प्रधानमंत्री बने। तब भी मैं उनके बारे में अधिक जान नहीं सका, क्योंकि उस समय भी अखबार उनके बारे में गलत प्रचार करते रहते थे। चौधरी चरण सिंह जैसे निष्ठावान और आदर्शवादी नेता के बारे में लोग ठीक रूप से न समझ सकें, ऐसा प्रतीत होता है, इसके लिए कोई षड्यन्त्र रचा गया था।

सन् १९८० में जब मैं संसद सदस्य बनकर दिल्ली आया, तब मुझे चौधरी चरण सिंह को निकट से जानने और उनके द्वारा लिखी हुई पुस्तकें पढ़ने का अवसर मिला। इसके बाद चौधरी चरण सिंह के बारे में मुझे जो जानकारी मिली, उसे संक्षेप में प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहा हूँ।

एक बार एक संवाददाता ने चौधरी चरण सिंह से पूछा कि आप अपने जीवन की कोई अविस्मरणीय घटना बता सकते हैं? उन्होंने जवाब दिया

---

* ए. नीललोहितदास नादर (१९४७–), केरल के प्रमुख राजनीतिज्ञ। १९६० के दशक के उत्तरार्ध में राजनीतिक जीवन की शुरुआत करते हुए, आगे बढ़ कर जिला सचिव और बाद में केरल छात्र संघ (केएसयू) के अध्यक्ष के रूप में कार्य किया। केरल विधानसभा के सदस्य (१९७७–१९८०)। कानून, बिजली, सिंचाई, श्रम और आवास मंत्री (१९७९)। लोकसभा सांसद (१९८०–१९८४)। राज्य अध्यक्ष, जनता दल (सेक्युलर) केरल इकाई।

कि 'मेरे जीवन में हुई सारी घटनाएं समान हैं।' वे जीवन भर कदम–कदम पर संघर्ष करके ही आगे बढ़े, मगर सदा संतुलित रहे। बीमार पड़ जाने पर मृत्यु से भी डेढ़ वर्ष तक लड़ते रहे। चौधरी साहब ने कभी किसी के सामने सिर नहीं झुकाया।

क्या चौधरी साहब का यह संघर्ष केवल एक व्यक्ति का संघर्ष था? सन् १९७९ में जब वह प्रधानमंत्री बने, तो उन्होंने कहा कि "मेरे जीवन की इच्छा पूर्ण हो गई।" एक ग्रामीण किसान का बेटा भारत के प्रधानमंत्री पद तक पहुँच गया, यह एक बड़ी बात थी। चौधरी साहब के राजनीतिक जीवन का उतार–चढ़ाव एक साधारण ग्रामीण भारतीय के जीवन का उतार–चढ़ाव ही था। सन् १९०२ में २३ दिसम्बर को नूरपुर, गाँव में जन्मे तथा ३१ मई १९८७ को किसान घाट में पंच तत्वों में विलीन होने तक का उनका जीवन किसी साधारण भारतीय किसान द्वारा अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए किए गए संघर्षों का प्रतीक है।

चौधरी साहब जब हाई स्कूल के विद्यार्थी थे, तभी से आर्य समाज के सिद्धांत और राष्ट्रीयता के पाठ पढ़कर सहज ही अंग्रेजों के विरोधी बन गए थे। उन्होंने कई बार स्वीकार किया कि उनका सामाजिक दृष्टिकोण स्वामी दयानंद सरस्वती और आर्य समाज के सिद्धांतों से प्रभावित है। सन् १९१७ में मैथिली शरण गुप्त का 'भारत भारती' नाम का काव्य पढ़कर चौधरी साहब देश प्रेम और राष्ट्रीयता की भावना से ओत–प्रोत हो गए। सन् १९१९ की 'जलियाँवाला बाग' की घटना और गाँधी जी के नेतृत्व, दोनों ने, उनको और बढ़ावा दिया।

समाज सुधार संबंधी कार्यों में चौधरी साहब की बचपन से ही रुचि थी। अपने गाँव के हजारों लोगों को इकट्ठा करके उन्होंने ऐसे कामों का आयोजन किया था। वह जब आगरा कालेज के छात्र थे, तब आर्य समाज के आह्वान पर उन्होंने हरिजनों द्वारा आयोजित भोज में भाग लिया था। उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्रित्व काल में उनका रसोइया एक हरिजन था। इस संदर्भ में उन्होंने अपने कुछ परिचितों–मित्रों की सलाह की कोई परवाह नहीं की। उनको जाट, समाज के लोगों से ज्यादा पिछड़े तबके के लोग आदर करते थे और समर्थन देते थे। ऊँची जाति के लोग भी, जो जातिवादी नहीं थे, एक आदर्शवान, सिद्धांतवादी, विचारवान और संघर्षशील राजनीतिज्ञ के रूप में चौधरी चरण सिंह का आदर करते थे।

चौधरी साहब अपने जमाने के बेहद अनुभवी राजनीतिज्ञ थे। सन् १९३० के नमक सत्याग्रह से लेकर कई बार उनको जेल जाना पड़ा। आपातकाल में भी वह जेल में रहे। शासन के क्षेत्र में उनका अनुभव बहुत लंबा था। सन् १९३१ में वह मेरठ जिला बोर्ड के अध्यक्ष चुने गए। उत्तर

प्रदेश में गोविन्द बल्लभ पंत, डॉ. सम्पूर्णानंद, सुचेता कृपलानी, सी. बी. गुप्ता आदि प्रमुख नेताओं के मंत्रिमंडल में उन्होंने भिन्न–भिन्न मंत्रालयों का दायित्व संभाला। उनके शासन में भ्रष्टाचार नाम को भी देखने को नहीं मिलता था।

उत्तर प्रदेश में जमींदारी प्रथा की समाप्ति, भूमि सुधार संबंधी महत्वपूर्ण कार्यों का श्रेय उन्हें ही है। भ्रष्टाचार के मुद्दे पर ही वह कांग्रेस से बाहर आए। डॉ. लोहिया के गैर कांग्रेसवाद को मूर्त रूप देने का श्रेय भी चौधरी साहब को ही जाता है। इसके बाद उन्होंने भारतीय क्रांति दल, भारतीय लोकदल का गठन किया। आपातकाल में जनता पार्टी के गठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

चौधरी चरण सिंह अपने वैयक्तिक जीवन और आर्थिक नीतियों के संबंध में पूर्ण रूप से गाँधीवादी थे। गाँधीवादी आर्थिक कार्यक्रमों के लिए इतना संघर्ष भारत के और किसी राजनीतिक नेता ने नहीं किया है। गाँधीवादी आर्थिक कार्यक्रमों के क्रियान्वयन से भारत की समस्याओं का हल संभव है, यही उनका दृढ़ विश्वास था। वे कई ग्रंथों के रचयिता थे। उनके ग्रंथों में सबसे प्रमुख था 'इकोनॉमिक नाइमेयर ऑफ इंडियाः इट्स कॉजेज एंड क्योर' (भारत की भयावह आर्थिक स्थितिः कारण और निदान)। इस ग्रंथ में चीन और भारत की भौतिक परिस्थितियों का विश्लेषण करके उन्होंने अपनी स्पष्ट राय दी है कि चीन में साम्यवादी राजनीतिक ढाँचा है, तो भी गाँधीवादी आर्थिक कार्यक्रमों के क्रियान्वयन से ही लोगों की प्राथमिक माँगों की पूर्ति हो सकी और जनता की तालीमी समस्याओं का हल हो सका। लेकिन भारत में, जिसने गाँधी जी को जन्म दिया, उन्हीं कार्यक्रमों को त्यागने के कारण ही जनता की बुनियादी समस्याओं का हल न हो सका।

दुनिया के अविकसित राष्ट्रों के एक बड़े आर्थिक विशेषज्ञ गिलबर्ट आट्टिनों ने भी इस बात में चौधरी चरण सिंह की राय से सहमति प्रकट की है। महात्मा गाँधी के बाद चौधरी चरण सिंह ही हिन्दुस्तान में एक मात्र नेता हुए हैं, जो हमेशा अपने विचारों एवं सिद्धांतों पर अटल रहे। जवाहरलाल और गाँधी जी के निकट रहकर भी गाँधीवादी आर्थिक सिद्धांत और कार्यक्रम की महानता अपने शासन के शुरू में समझ नहीं पाये। पाश्चात्य विकास की रणनीति से वे इतने आकृष्ट हो गए थे कि गाँधीवादी आर्थिक कार्यक्रमों को भारत के विकास के लिए बिल्कुल अनुचित समझते थे। उनका विचार था कि भारत के गाँव बिल्कुल पिछड़ी और प्राकृतिक अवस्था में हैं, उनको आधार बनाकर विकास के रास्ते पर आगे बढ़ना मुश्किल है। लेकिन सन् १९६३ में अपनी मृत्यु के छह महीने

पहले योजना के बारे में एक चर्चा में भाग लेकर उन्होंने अपनी गलती महसूस की और कहा कि "जहाँ तक हम देश की समस्याओं की गहराई में जाते हैं, तब महात्मा गाँधी के बारे में सोचने के लिए हम बाध्य हो जाते हैं। जितनी भी प्रगति देश में हो, उस प्रगति का लाभ सबसे गरीब लोगों को नहीं मिलता, तो उससे कुछ फायदा नहीं।" लेकिन अपनी गलती को सुधारने के लिए वह अधिक दिनों तक जिंदा नहीं रह पाये। इस पृष्ठभूमि में चौधरी साहब को देखने पर स्पष्ट मालूम हो जाता है कि अपने सार्वजानिक जीवन में हमेशा वे गाँधीवादी आर्थिक कार्यक्रमों पर अटल रहे लेकिन उनके क्रियान्वयन के लिए उनको अवसर नहीं मिला।

यह बड़ी विडंबना की बात है कि चौधरी चरण सिंह को एक जाति के नेता के रूप में चित्रित करने के लिए हमारे प्रचार के माध्यमों ने हमेशा कोशिश की है। लेकिन जाति प्रथा के विरोध में चौधरी साहब के समान और किसी नेता ने लड़ाई लड़ी नहीं होगी। आर्य समाजी चौधरी साहब सार्वजनिक जीवन में जाति प्रथा का आरंभ से विरोध करते थे। सन् १९५४ में तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित नेहरू को जाति प्रथा मिटाने का सुझाव देते हुए उन्होंने चिट्ठी लिखी कि राजपत्रित पदों (गजेटेड पोस्ट्स) पर केवल अंतर्जातीय विवाहितों की नियुक्ति करनी चाहिए।

चौधरी चरण सिंह ने अपने जीवन के उतार–चढ़ाव के हर पहलू में ग्रामीण भारत एवं किसानों की स्पंदन की धारा को अपना लिया था। अपने को ग्रामीण किसान के प्रतिनिधि कहने में स्वाभिमान का अनुभव करते थे। समय के चलते चौधरी चरण सिंह से संबंधित अन्य बातें भले ही भुला दी जाएँ लेकिन ग्रामीण भारत एवं कृषि को आधार बनाकर उन्होंने जो आर्थिक कार्यक्रम रखे, भारत के राजनीतिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में वह सदैव जिंदा रहेंगे–चिंतनीय रहेंगे। चौधरी चरण सिंह के लिए सबसे बड़ा स्मारक कृषि एवं कुटीर उद्योगों पर आधारित एक नए भारत का निर्माण ही है, उससे ही गरीबी एवं बेकारी की समस्याओं से भारत बाहर निकल सकता है।

६२
नेहरू बनाम चरण सिंह

सत्यपाल मलिक*

केंद्रीय गृहमंत्री चौधरी चरण सिंह ने एक बुनियादी बात नियोजन और देश निर्माण के संदर्भ में उठाई है। उन्होंने श्री नेहरू को अपना नेता और नेक नीयत मानते हुए भी नेहरू जी की आर्थिक नीतियों को देश की दुर्दशा के लिए जिम्मेदार ठहराया है तथा नियोजन में प्राथमिकताओं को पूरी तरह बदल देने की बात बहुत जोरदार ढंग से कही है। चरण सिंह जी ने श्री नेहरू का अंधविरोध नहीं किया है, बल्कि तथ्यों के आधार पर नेहरू जी के आर्थिक विचारों की निरर्थकता साबित करते हुए एक ठोस और आर्थिक वैकल्पिक कार्यक्रम देश के समक्ष रखा है।

जरूरी हो गया है कि दोनों विचारों का अंतर लोगों के सामने आए और देश की आर्थिक बीमारियों के कारण व इलाज पर एक स्वस्थ बहस चले।

चौधरी चरण सिंह जो अपने विचारों को मूलतः गाँधी वादी मानते हैं, उन्होंने इस बात को उत्साहवर्द्धक बताया है कि देश के विभिन्न क्षेत्रों में काम करने वाले लोग अब गाँधीवाद को विभिन्न समस्याओं का समाधान मानने लगे हैं। अभी हाल में प्रकाशित पुस्तक 'गाँधियन ब्लूप्रिन्ट' में चरण सिंह ने लिखा है कि वर्तमान स्थिति आजादी के फौरन बाद की गई इस गलती के कारण पैदा हुई कि हम तत्काल औद्योगीकरण की तरफ चल दिये। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने सदैव कृषि को पहला दर्जा देने की बात कही थी। उसके बाद हस्तकला और कुटीर उद्योगों, फिर छोटे और हल्के उद्योगों तथा सबके बाद भारी उद्योगों के विकास की बात कही थी। मगर गाँधी जी के राजनीतिक उत्तराधिकारी श्री जवाहरलाल नेहरू ने उनके विचारों को तिलांजलि दे दी और ऐसी हवाई नीतियाँ अपनाईं, जो देश की वास्तविकता और आंतरिक स्थितियों से कतई मेल नहीं खाती थीं।

---

* सत्यपाल मलिक (१९४६–), राजनीतिज्ञ । राज्यपाल, जम्मू और कश्मीर, गोवा, मेघालय और बिहार। राष्ट्रीय उपाध्यक्ष, भारतीय जनता पार्टी (२०१२)। उन्होंने पहली बार बागपत से विधान सभा के सदस्य के रूप में चुनाव जीता। उन्होंने चरण सिंह की भारतीय क्रांति दल के सदस्य के रूप में चुनाव लड़ा। भारतीय लोक दल के गठन के बाद पार्टी में शामिल हुए और लोक दल के महासचिव बने।

श्री नेहरू से चरण सिंह जी का विचार वैभिन्न्य कोई ताजा घटना नहीं है, बल्कि यह सन् १९५९ में कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन से ही शुरू हो गया था। नागपुर में कांग्रेस के अधिवेशन में नेहरू जी ने सहकारी खेती संबंधी प्रस्ताव का समर्थन किया था। उस समय चरण सिंह जी ने राष्ट्र नेता जवाहरलाल नेहरू का अधिवेशन में जमकर विरोध किया था। नेहरू जी इसे भूले नहीं। इसके बाद चौधरी साहब के साथ श्री नेहरू, श्री ढेबर और श्री सम्पूर्णानंद जी ने क्या व्यवहार किया वह एक लंबी और अलग कहानी है। अपने राजनीतिक जीवन में चौधरी साहब को इस साहसिक काम की भारी कीमत अदा करनी पड़ी।

पहली पंचवर्षीय योजना में कृषि के लिए ३६ प्रतिशत राशि और उद्योगों के लिए पाँच प्रतिशत की व्यवस्था की गई थी। चरण सिंह का कहना है कि उस समय सरदार पटेल के विचारों का प्रभाव इस योजना पर पड़ा था। मगर सन् १९५६ में यानी दूसरी पंचवर्षीय योजना में कृषि के लिए घटाकर कुल २१ प्रतिशत राशि रखी गई। दूसरी तरफ उद्योग के लिए पहले पाँच से बढ़ाकर २३ प्रतिशत राशि की अपेक्षा पाँच गुना से अधिक बिजली (और सस्ते दामों पर) बड़े उद्योगों को दी जाती रही। इस प्रकार उद्योगों में खर्च होने वाली राशि का अनुपात कृषि के मुकाबले में और भी बढ़ गया।

१९ जनवरी सन् १९५६ को नेहरू जी ने राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में बोलते हुए कहा कि देश की उन्नति के मूल बड़े कारखाने हैं, दूसरी चीजों का उतना महत्व नहीं है। इसलिए उन्होंने इसी वर्ष, बजाय अपने देश में कृषि की उन्नति पर बल देने और उस पर अधिक व्यय करने के २९ अगस्त को अमेरिका से रियायती दरों पर पी० एल० ४८० के अधीन अन्न मांगने (और अधिक से अधिक रुपया उद्योगों पर खर्च करने) का फैसला किया।

पंडित नेहरू ने सन् १९५४ तक समाजवाद का नाम नहीं लिया था। सन् १९५४ के नवम्बर में वह चीन गए और वहाँ से वापस आते ही बिना मंत्रिपरिषद या कांग्रेस वर्किंग कमेटी से परामर्श किए उन्होंने समाजवाद को अपने देश का लक्ष्य घोषित कर दिया तथा दो महीने बाद जनवरी सन् १९५५ में २४ घंटे के अंदर कांग्रेस आवड़ी के अधिवेशन में गाँधीवाद को छोड़कर सर्वसम्मति से समाजवाद की हिमायती बन गई। समाजवाद का अर्थ हुआ बड़े–बड़े कारखाने या बड़े–बड़े फार्म, सरकारी मिल्कियत के नियंत्रण में स्थापित करना और कृषि की अपेक्षा बड़े उद्योगों को प्रोत्साहन देना। चौधरी साहब का कहना है कि इस विषय में एक दिलचस्प बात यह है कि जहाँ नेहरू जी ने चीन की नकल करके समाजवाद अपनाया

और कृषि की बजाय बड़े उद्योगों को पहला स्थान दिया वहाँ उसी देश अर्थात् चीन ने जब (अप्रैल सन् १९६२ में) अपने यहाँ प्राथमिकताओं का क्रम बदल दिया, तो नेहरू जी ने उसी की नकल में (नवम्बर सन् १९६३) को अपनी नीति बदलने अर्थात् कृषि को पहला स्थान देने की बात कही।

चौधरी साहब मानते हैं कि सरदार पटेल की मृत्यु के बाद नेहरू जी कांग्रेस पर पूरी तरह हावी हो गए थे और राष्ट्रपिता की सलाह के ठीक विपरीत दिशा में चल दिए थे।

श्री नेहरू जी की जीवनी लिखने वाले प्रसिद्ध लेखक श्री माइकेल ब्रेखर से बात करते हुए नेहरू जी ने इस बात का खंडन किया कि चीन यात्रा और समाजवाद की मेरी बातों में कोई रिश्ता है। मगर श्री ब्रखर की राय है कि नेहरू जी पर चीन यात्रा के दौरान वहाँ की प्रगति और अनुशासन का भारी असर पड़ा और अंतःकरण में श्री नेहरू जी ने महसूस किया कि एशिया में सैद्धांतिक लड़ाई में चीन बाजी मार रहा है। इस यात्रा के बाद के नेहरू जी के बयानों और अमल से भी यह साबित हो जाता है कि आवड़ी का समाजवाद चीन से आया।

इस दौरान श्री नेहरू ने भारी उद्योगों के प्रति बेहद आसक्ति दिखाई। खेती और रोजगार पैदा करने वाले छोटे उद्योगों की अपेक्षा का यह दौर था। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डॉ. ई. एफ. शमाखर के अनुसार नेहरू अपने इस्पात कारखानों पर बहुत गौरवान्वित थे, कहते थे कि इनमें हम देश की शक्ल बदल देंगे। वह राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं पर भी बहुत गर्व का अनुभव करते थे कि भविष्य का नेतृत्व यहीं से आएगा। मगर मेरी राय में वे एक भयभीत व्यक्ति की तरह अँधेरे में सीटी बजा रहे थे। एक बार जब मैं बम्बई में शानदार अणुशक्ति केंद्र का नेहरू जी के साथ चक्कर लगाकर लौट रहा था तो केंद्र के दरवाजे पर हमारी कार एक भिखारी की बैसाखी पर लगभग चढ़ गई होती। उस समय मैंने नेहरू जी से पूछा कि अणुशक्ति केंद्र और भिखारी क्या साथ–साथ जँचते हैं? इस पर नेहरू जी चुप हो गए।

यह घटना नेहरू जी की भारी उद्योगों पर ज्यादा जोर देने और दिखावे के अर्थशास्त्र की नीति की असफलता को उजागर कर देती है।

मगर दूसरी योजना के बाद जो–जो नतीजे निकले, जो–जो आर्थिक कठिनाइयाँ पैदा हुईं, उनसे नेहरू जी इस नतीजे पर पहुँचे थे कि प्राथमिकताओं के मामले में उन्होंने और योजना आयोग ने गलती की थी। ९ नवम्बर सन् १९६३ को राष्ट्रीय विकास परिषद की बैठक में उन्होंने एक तरह से कबूल भी किया, जब उन्होंने कहा कि कृषि उद्योगों से भी ऊँचा स्थान रखती है तथा कृषि आर्थिक विकास का मूल है।

फिर ११ दिसम्बर सन् १९६३ को लोकसभा में बोलते हुए पंडित जी ने कहा कि 'मैं बड़े–बड़े कारखानों और अर्वाचीन तकनीकी ज्ञान का बड़ा प्रशंसक रहा हूँ, परंतु देश की बेरोजगारी की समस्या उससे हल नहीं हुई तथा यह भी कि आज मुझे रह–रह कर महात्मा जी की याद आती है।' साथ ही यह भी कहा कि 'मेरी और योजना कमीशन की गलती के कारण देश की आर्थिक सम्पत्ति का बहुत बड़ा भाग चन्द आदमियों के हाथों में इकट्ठा हो गया है, मैं लोकसभा को वचन देता हूँ कि भविष्य में यह गलती नहीं होगी।'

उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री बहुगुणा को ७ जनवरी सन् १९७५ को लिखे एक पत्र में चौधरी साहब ने लिखा कि महात्मा जी कृषि को पहला स्थान देना चाहते थे। नेहरू जी ने ठीक इसके उल्टा किया और जब देश बर्बाद हो गया, तो उनको यह महसूस हुआ कि उनसे गलती हो गई है और महात्मा जी की याद की। हो सकता है कि परमात्मा उनको और लंबा जीवन देता तो वे अपनी सारी नीतियाँ बदल देते, परंतु देश का दुर्भाग्य कि उनकी मृत्यु हो गई और डेढ़ वर्ष बाद उनकी बेटी के हाथ में शासन की बागडोर आ गई, जिनको नीतियों के गुण व दोष से कोई मतलब नहीं था। वह कहती थीं कि वह अपने पिता की नीतियों पर ही चल रही हैं, परंतु उनको इतनी मोटी–सी बात भी नहीं मालूम थी कि उनके पिता जी ने, जिनके पास वह रहती थीं, अपनी नीतियों की गलती को खुलकर स्वीकार कर लिया था।

दिलचस्प बात यह है कि जनता पार्टी के भी कई शीर्षस्थ नेता अभी नेहरूजी की ही आर्थिक नीतियों को सही मान रहे हैं।

नेहरू जी के आर्थिक रुझानों की व्यर्थता बताने का काम नकारात्मक होता यदि चरण सिंह जी ने इसके विकल्प में ठोस आर्थिक कार्यक्रम न रखा होता। इसी से आज वे जनता पार्टी के आर्थिक प्रवक्ता बन गए हैं।

चरण सिंह जी का कहना है कि गाँधी जी की वास्तविक प्रतिभा थी; 'उनका एकदम निचले स्तर से नियोजन का विचार।' भारत की बेहतर सेवा खेती से है जिससे खाना और कपड़ा पैदा होता है, कुटीर उद्योग जिससे मानव श्रमशक्ति की जरूरत बढ़ती है, घटती नहीं और जो बिल्कुल साधारण तकनीक के प्रयोग से चलते हैं और विशुद्धतः स्थानीय माल से उत्पादन करते हैं, इन सबको बढ़ाने से ही हो सकती है।

चौधरी साहब के अनुसार यदि हमें प्रगति करनी है तो बेरोजगारी और अर्द्ध–बेरोजगारी को जल्दी से जल्दी खत्म करना होगा। हमें अपनी आर्थिक नीति का उद्देश्य कुल राष्ट्रीय उत्पादन बढ़ाने से बदल कर, उत्पादक रोजगार बढ़ाने का करना होगा। अधिक रोजगार की व्यवस्था से

कुल राष्ट्रीय उत्पादन में तो वृद्धि होगी ही, परंतु यदि हमें कम रोजगार की व्यवस्था और कुल राष्ट्रीय उत्पादन के ऊँचे रेट के बीच में तथा उत्पादन के कम रेट मगर ज्यादा रोजगार के बीच में चुनाव करना हो, तो बाद वाली स्थिति को चुनना चाहिए।

वित्तीय और औद्योगिक आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देने के लिए मौजूदा औद्योगीकरण की प्रणाली छोड़नी होगी और गाँधी जी के बताये उस रास्ते पर चलना होगा जो देश के अनुकूल है। उस रास्ते की अपेक्षाएं हैं, हाथ से बनने वाले सामानों को मशीनों के जरिये बनाने की कतई मनाही। कोई भी मध्य या भारी आकार का उद्योग अस्तित्व में न आने दिया जाए, जो वह चीजें बनाता हो, जो कुटीर या छोटे उद्योगों के जरिये बनाई जा सकती हों। इसके नतीजे के तौर पर जो बड़ी मिलें इस समय ऐसा सामान बना रही हैं, मसलन कपड़ा मिलें, उनको अपना सामान सिर्फ बाहर बेचने के लिए ही बनाने देना होगा। सरकार विदेशों में प्रतिस्पर्धा करने लायक माल बनाने के लिए उनकी हर संभव मदद करेगी मगर यदि फिर भी वे प्रतिस्पर्धा न कर सके और बंद हो जाएं तो छोटे और कुटीर उद्योगों की रक्षा के लिए हम बड़ी मिलों का बंद हो जाना पसंद करेंगे।

वैकल्पिक कार्यक्रम जो चौधरी चरण सिंह जी ने देश के सामने रखा है, उसका सार है योजना में कृषि को पहला दर्जा देना और मशीनों का इस्तेमाल जितनी दूरी तक संभव हो रोकना। पहली बात के लिए ग्रामीण विकास पर सर्वाधिक ध्यान देना होगा और दूसरी के लिए आत्मनिर्भरता इस हद तक बढ़ानी होगी कि बिना विदेशी पूँजी और तकनीकी ज्ञान के काम चलाया जा सके।

गरीबी का मतलब है उन चीजों और सुविधाओं की कमी जो मनुष्य की बुनियादी आवश्यकताओं को पूरी कर सकें। ये चीजें कृषि और गैर कृषि स्रोतों से प्राप्त की जाती हैं। यद्यपि कृषि के विकास को गैर कृषि क्षेत्र के विकास से सहायता तो मिलेगी मगर पहला दूसरे पर निर्भर नहीं करता। जबकि गैर कृषिजन्य स्रोत तब तक विकसित किए ही नहीं जा सकते जब तक कि कृषि स्रोतों का विकास न किया जा सके, या इसे पहले अथवा साथ – साथ न बढ़ाया जाए। दूसरे शब्दों में जब तक अनाज और कच्चे माल का उत्पादन नहीं बढ़ाया जाता और नतीजे के तौर पर जब तक खेती पर आधारित आबादी गैर कृषि देशों की तरफ नहीं जाती तब तक गैर कृषि क्षेत्र का विकास भी नहीं हो पायेगा। इस सत्य का अहसास अब कम से कम हो जाना चाहिए कि कृषि के लिए अधिक आर्थिक स्रोतों की और उस पर अधिक ध्यान देने की जरूरत है।

तब तक न तो कृषि और न गैर कृषि स्रोतों का उत्पादन बढ़ाया जा

सकता है और न ही आबादी पर नियंत्रण किया जा सकता है जब तक कि हमारे लोगों को उनके पुराने तरीके, पुराने रुझान और रिवाज बदलने को तैयार नहीं किया जाता और जितनी लगन और मेहनत के साथ वे अब काम करते हैं उससे अधिक लगन व मेहनत से काम करने की आदत पैदा नहीं की जाती। भाग्यवाद, जातिवाद आदि को समाप्त करना होगा और परिवार नियोजन को बढ़ावा देना होगा तथा संसदीय लोकतंत्र पर नई दृष्टि अपनानी होगी।

चौधरी चरण सिंह के आर्थिक विचारों का क्रियान्वयन एक बड़े मजबूत आर्थिक वर्ग के विरुद्ध जाता है जो देश में राजनीतिक आर्थिक और सामाजिक उच्च वर्ग से मिलकर बना है। इन विचारों का सफल क्रियान्वयन तभी संभव है जब देश की गरीबी की रेखा के नीचे की संपूर्ण आबादी तथा ग्रामीण जनता को पूरी तरह चेता दिया जाए और ग्राम शक्ति का उदय हो जो निहित स्वार्थों और उच्च वर्गीय शहरी चट्टान को तोड़ कर नवनिर्माण की धारा को बाहर ला सके।

इन नीतियों को लागू करने में एक दशक लग सकता है मगर यह समय एक देश की ज़िंदगी में कुछ नहीं होता। इन नीतियों से समता, संपन्नता और निजी आजादी एक साथ हासिल की जा सकती है सभी तरह के समाजवाद और सभी तरह के पूँजीवाद से अलग मूलतः गाँधी जी के विचारों पर आधारित यह रास्ता आधुनिक और उपयुक्त रास्ता है।

६३
आर्थिक व राजनीतिक विचारधारा
डॉ. गंगाधर अग्रवाल*

विचारधारा की पृष्ठभूमि

चरण सिंह जी ने एक मध्य वर्ग किसान के घर जन्म लिया। होश संभालते ही उन्हें ग्रामीण जनता की असहाय स्थिति के पर्यावलोकन का अवसर मिला। जमींदारी प्रथा, शासन–तंत्र, जिसमें ग्रामीण क्षेत्र के मुख्य कार्य चालक दारोगा जी, तब के पटवारी जी, नहर विभाग के अधिकारी पतरौल व अमीन तथा अंग्रेजी पद्धति की न्याय प्रणाली जो स्वतंत्र वातावरण में और दूषित होकर पनपी व इसी प्रणाली से पोषित गाँव के धनी साहूकार अंग्रेजी शासन की देन थे। इन सभी के द्वारा ग्रामीण जनता का शोषण होते वे अपनी आँखों से देखते रहे। ग्रामीण वर्ग के आर्थिक उत्पीड़न व शोषण की चीख पुकार में वह पले और बड़े हुए। एक शहर में उत्पन्न और सीमित विकसित बुद्धिजीवी वर्ग को छोड़कर अन्य लोगों के लिए यह सब बातें साधारण थीं और सभी इस स्थिति से परिचित थे। पर अन्यों की भाँति श्री चरण सिंह ने केवल देखा व सुना ही नहीं, पर वस्तु स्थिति का मनन भी किया। उनके हृदय व मस्तिष्क आन्दोलित हो गए। ग्रामीण असहायों का करुण क्रन्दन उनके कानों में गूँजता रहा। यह गुंजन अब भी उनको उद्वेलित किए है। फलस्वरूप भारतीय कृषि की दयनीय स्थिति पर उनका मनन चलता रहा। इसी संदर्भ में उन्हें अर्थशास्त्र विशेषकर कृषि अर्थशास्त्र के अध्ययन में रुचि हो गई। राजनीति के अध्ययन की भी आवश्यकता हुई, इन विषयों का उन्होंने गहन अध्ययन किया। फिर उन्होंने पाया कि स्वतंत्रता के तीस वर्ष बीत जाने के बावजूद ग्रामीण क्षेत्र की दशा अधिकांश में ज्यों की त्यों रही। वस्तुस्थिति के मूल्यांकन से तथा दीर्घकालीन अध्ययन व मनन से उनके विचार भी परिपक्व होते गए।

---

* डॉ. गंगाधर डी. अग्रवाल, एम.ए. पीएचडी, १९६०–८० के दशकों के दौरान लखनऊ विश्वविद्यालय के एक प्रमुख कृषि अर्थशास्त्री थे।

जीवन के संघर्ष तथा राजनीति, इतिहास व अर्थशास्त्र विषयों के अध्ययन से उनका विश्वास दृढ़ हो गया कि ग्रामीण जनता के जीवन स्तर में उन्नति व कृषि विकास के लिए निम्नांकित कदम अत्यंत आवश्यक हैं—

१. भिन्न—भिन्न वर्गों द्वारा कृषक व कुटीर उद्योगों वाले व्यक्ति व मजदूर वर्ग के आर्थिक शोषण की समाप्ति।
२. कृषि, कुटीर तथा सभी ग्रामीण उत्पादनों की दरों में वृद्धि।
३. सबको रोजगार और आय के साधन।
४. उपरोक्त ध्येय की प्राप्ति के लिए ग्रामीण जनता का संगठन व शासन में उनका उचित प्रतिनिधित्व।
५. ग्राम से पूँजी, प्रतिभा व हृष्ट—पुष्ट जन समुदाय के पलायन पर रोक व ग्राम विकास में राज्य द्वारा ऐसे प्रोत्साहन, जिनसे ग्रामीण क्षेत्र में सदियों से पूँजी व प्रतिभा के निर्गमन द्वारा हुई क्षति की पूर्ति तथा भविष्य में ऐसी क्षति न होने का उचित प्रबन्ध।
६. न्याय प्रणाली में उचित सुधार, जिससे सदैव सबल वर्ग के पोषण की अपेक्षा निर्बल वर्ग को भी न्याय की प्राप्ति।

उपरोक्त परिमाण ही उनके आर्थिक विचारों का आधार स्तम्भ है। उनका राजनीतिक जीवन व विचारधारा भी उपरोक्त आर्थिक एवं सामाजिक सुधारों की भावना से प्रेरित व पोषित है। उन्होने यह भली—भाँति महसूस किया है कि राजनीतिक शक्ति व शासन अधिकार के बिना किसान व अन्य पददलित वर्गों को राहत नहीं पहुँचाई जा सकती। उनके सामाजिक कार्यकर्ता तथा एक नए राजनीतिक दल के नेता के रूप में उभरने की यही भूमिका है।

मेरा उनके निकट संपर्क में आने का कारण भी कृषि अर्थशास्त्र के विषय में उनकी गहरी रुचि व अध्ययन ही है। जहाँ तक मैं समझ पाया हूँ उनके जीवन का प्रमुख ध्येय किसान व ग्रामीण जनता को सुखी व उच्चतर बनाना है। उनका दृढ़ विश्वास है कि ग्रामीण जनता, अपने आर्थिक विकास तथा समाज में अपने न्यायोचित स्थान की प्राप्ति के लक्ष्यों को निजी सबल संगठन द्वारा ही साकार कर सकती है।

वे आँकड़ों को विशेष महत्व देते हैं। उन्हीं के आधार पर यह स्पष्ट है कि भारत गाँवों में रहता है तथा गाँवों में छोटी जोत व बिना जोत के लोगों का बाहुल्य है। इसलिए उनकी दृष्टि में ग्रामोत्थान विशेष कर निम्न वर्ग का उत्थान तथा देश का उत्थान एक दूसरे के पर्याय ही हैं।

शोषण व भ्रष्टाचार निवारण

उत्तर प्रदेश में चौधरी चरण सिंह के राजस्व मंत्रित्व काल में पूरे देश में सर्वप्रथम जमींदारी उन्मूलन दृढ़तापूर्वक संपन्न हुआ; यद्यपि इस प्रदेश में जमींदार वर्ग बहुत प्रभावशाली था। जमींदारी प्रथा के अंत होने पर जमींदार वर्ग द्वारा कृषक वर्ग का आर्थिक शोषण समाप्त हुआ तथा उसे समाज में बराबरी का दर्जा प्राप्त हुआ। उसको आजादी का एहसास हुआ और एक स्वतंत्र व्यक्ति की तरह जीवन–यापन का अधिकार प्रथम बार प्राप्त हुआ। चरण सिंह जी ने ही देश में सर्व प्रथम आयकर के सिद्धांत को कृषि राजस्व में भी लागू किया, जिसके अनुसार निम्न आय के वर्ग को अर्थात् ३।१।८ एकड़ तक वालों को राजस्व से छूट दी गई।

अंग्रेजों द्वारा थोपी गई अजनवी न्याय प्रणाली के माध्यम से तथा राजस्व विभाग के अधिकारी जिनका ग्रामीण क्षेत्र में पटवारी प्रतिनिधि है, नहर विभाग के पतरौल व अमीन तथा पुलिस द्वारा ग्रामीण जनता का शोषण होता रहा। पटवारियों के भ्रष्टाचार को रोकने तथा उनसे कृषक वर्ग को राहत दिलाने के श्री चरण सिंह जी के साहसिक प्रयत्न सदैव याद किए जाएंगे। उन्होंने ही पटवारी को लेखपाल अर्थात् कृषि संबंधी आँकड़े के एक अधिकारी की संज्ञा प्रदान की।

इन प्रयत्नों के बावजूद उन्होंने महसूस किया कि सामाजिक न्याय से वंचित रहेंगे जब तक उन्हें संगठित नहीं किया जाता। इस लिए उन्होंने लोकदल का निर्माण किया और उसके संगठन में अपना जीवन समर्पित किया।

कदाचित श्री चरण सिंह स्वयं भी दल की इस भूमिका से स्पष्ट अवगत न हों और चाहे वे इसकी राजनीतिक आधार को ही अधिक महत्व देते हों, लेकिन यह ऐतिहासिक सत्य है कि भारतीय लोक दल ने जनता पार्टी के विलय के उपरान्त अपने कृषि–प्रधान अस्तित्व की छाप जनता पार्टी पर छोड़ी है। आगे भी एक ऐसे स्वतंत्र कृषक सगठन की, जो दल के अंदर और बाहर देश की आर्थिक एवं सामाजिक नीतियों में अपना प्रभाव रख सके, आवश्यकता रहेगी। ऐसे सगठन की अगुआई श्री चरण सिंह ही कर सकते हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका में किसान संगठन तथा अन्य देशों की भी किसान–संस्थाएँ प्रायः राजनीतिक संस्थाएँ नहीं है। चुनाव में वे अपने उम्मीदवार खड़े नहीं करतीं, पर उनके समर्थन के लिए प्रत्येक राजनीतिक दल आपस में होड़ करते हैं, जिससे कि उनकी उचित माँगों को प्रत्येक दल देश होने के कारण ऐसे संगठन की आवश्यकता सदा

रहेगी, का समर्थन प्राप्त रहता है। वैसे ही भारत में कृषि–प्रधान तभी किसान अपने न्यायिक अधिकारों की प्राप्ति व रक्षा कर सकता है और अपनी आवाज बुलंद कर सकता है जब किसान संस्थाएँ मजबूत हो। शोषण के विरोध में ग्रामीण जनता संगठन के समानांतर मजदूर संघ का भी मुख्य लक्ष्य अपने आर्थिक हितों की रक्षा करना ही है। सही अर्थ में इन संस्थाओं को वर्ग संघर्ष की भूमिका न देकर शोषण करने वाले सबल दलों से, अपने आर्थिक व सामाजिक हितों के संरक्षण के कर्तव्यों के पालन की ही प्रमुखता मिलनी चाहिए। इनके अस्तित्व का सहकारी समितियों की भाँति यही एक न्यायपूर्ण औचित्य है। ग्रामीण सहकारी समिति का प्रादुर्भाव महाजन प्रथा द्वारा शोषण समाप्त करने के लिए ही हुआ था। सहकारी आंदोलन को आर्थिक आंदोलन के रूप में ही देखा जाता है। उसे राजनीतिक संज्ञा देना दुस्साहस होगा। उसी भाँति कृषक संघ व मजदूर संघ के ध्येय वास्तव में उनकी आर्थिक भूमिका अदा करने में ही हैं। वैसे राजनीति व अर्थशास्त्र दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं। आज के युग में तो यह प्रत्यक्ष है कि किसी भी आर्थिक नीति, पूँजीवाद, समाजवाद आदि का पोषण राजनीतिक समर्थन के बिना असंभव है।

यदि भारतीय लोकदल में जातिवाद का आभास रहा है, तो इसका कारण है कि अपने देश में जाति–व्यवसाय एवं आर्थिक–स्तर में घनिष्ठ संबंध है। यह सदियों का अभिशाप है। कतिपय अपवादों के साथ कृषक समुदाय, मजदूर वर्ग व दलित वर्ग की जातियों में निर्धनता का बाहुल्य है एवं अन्य जातियों में धनिक वर्ग अधिक हैं। परंतु निश्चय ही कालान्तर में इस दल को कृषक, मजदूर, दलित वर्ग व हरिजनों को आर्थिक, सामाजिक व न्यायिक अधिकारों के संरक्षण की भूमिका वाला बनकर ही विकसित होना पड़ेगा। आर्थिक प्रगति के प्रयासों के आगे जातिवाद का ह्रास हो जाएगा।

इस लेख में अभी तक आर्थिक नीतियों की नकारात्मक क्रियाओं की ही चर्चा की गई है अर्थात् जमींदारी उन्मूलन, आर्थिक शोषण की समाप्ति, भ्रष्टाचार निवारण इत्यादि। अब श्री चरण सिंह की सकारात्मक (पॉज़िटिव) नीतियों का उल्लेख प्रस्तुत है।

सत्तारूढ़ जनता दल ने कृषि विकास को प्राथमिकता दी है। पंचवर्षीय योजना के व्यय का ४० प्रतिशत कृषि उन्नति के लिए सुरक्षित किया गया है। ग्रामोन्मुख आर्थिक विकास योजनाओं, ग्रामीण औद्योगीकरण, कुटीर धंधों व गृह उद्योगों पर विशेष बल दिया गया है। देश की ८० प्रतिशत जनता ग्रामीण क्षेत्रों में है। इनमें ४५ प्रतिशत गरीबी का शिकार

हैं। उनके रोजगार की व्यवस्था, आय–वृद्धि व आर्थिक–विकास पूर्णतः न्यायसंगत हैं।

इन नीतियों के निर्धारण में श्री चरण सिंह ने विशेष भूमिका निभाई है, जो उनके जीवन की महान उपलब्धि मानी जाएगी। कुछ लोग इनको भारी उद्योगों का विरोधी मानते हैं, पर सत्य इतना ही है कि उनका कहना है–जिन वस्तुओं व उपकरणों का कुटीर व गृह उद्योगों में उत्पादन किया जा सकता है वह इन्हीं उद्योगों के लिए सुरक्षित हो जाएं। उनमें भारी उद्योग अथवा पूँजी प्रमुख तकनीक की आवश्यकता नहीं है। देश में श्रम का बाहुल्य है अतएव इस उपादान के उचित उपयोग के लिए उन उद्योग–प्रणालियों को प्रोत्साहन मिलना आवश्यक है, जो श्रम–प्रमुख हों।

भारी उद्योगों में पूँजी का बाहुल्य होता है। देश में उचित मात्रा में पूँजी का अभाव है। अतएव उक्त विचारधारा न्याय संगत ही है। एक विशेष दल के अध्ययन द्वारा यह तथ्य प्रकाश में आया है कि दामोदर घाटी विकास योजना में अरबों रुपये के व्यय के बावजूद उस क्षेत्र में बसे आदिवासियों की किसी प्रकार की आर्थिक प्रगति नहीं हुई है। जितना धन लगा है, उसके अनुपात में बहुत ही थोड़े लोगों को रोजी मिली है।

पूँजीवादी विचारधारा में कार्यक्षमता व कुशलता की आड़ लेकर भारी उद्योगों का समर्थन किया जाता है। पर अब पाश्चात्य देशों में भी गाँधी दर्शन के समर्थक एवं चिंतक हैं। इस दिशा में "लघु ही सुंदर है" के रचयिता डॉ. श्यूमेकर का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

अर्थशास्त्र का यह प्रारंभिक सिद्धांत है कि उत्पादन आदानों में जो आदान स्वल्प मात्रा में हों, उनकी क्षमता का अधिकतम उपयोग हो। उदाहरणतः कृषि के लिए भूमि सीमित है। अतएव इसकी प्रति इकाई से अधिकतम उत्पादकता का लक्ष्य होना चाहिए। चरण सिंह ने इसी सिद्धांत को अपनी आर्थिक नीति का आधार बनाया है। उनके कटु से कटु आलोचक भी उनकी इस बात से सहमत हैं कि देश की वर्तमान स्थिति में लोगों को रोजी देने, अधिकतम रोजगार प्रदान करने और उनकी क्रयशक्ति बढ़ाने के लिए जिस पर औद्योगिक विकास निर्भर है, श्रम प्रमुख तकनीकी को प्राथमिकता देना आवश्यक है। पूँजी के अभाव में पूँजी प्रमुख तकनीकी को श्रेय देना तर्कसंगत नहीं होगा।

श्री चरण सिंह की 'अर्थनीति' की देश के प्रमुख अर्थशास्त्री डॉ. बी. के. आर. वी. राव ने जो आलोचना की है, वह इस बात पर आधारित है कि श्रम प्रमुख तकनीक अपनाने से उत्पादन अधिशेष कम हो जाएगा और लोगों की बचत के विनियोजन हेतु आकर्षित करने के लिए अनिवार्य नियम बनाने होंगे, जो कि गणतंत्र प्रणाली के अनुकूल

नहीं है। इस प्रकार का सरलीकरण और निष्कर्ष युक्ति–पूर्ण नहीं है। सत्य तो यह है कि जो जनशक्ति उपयोग में नहीं है, वह वर्तमान उत्पादन के उपभोग में साझीदार है फलतः इस तरह के अधिशेष में कमी पहले से ही आ रही है, यदि इसे श्रम–प्रमुख तकनीक द्वारा उपयोग में लाया गया, तो आंशिक रूप से उत्पादन में वृद्धि होने से अधिशेष में भी वृद्धि होगी न कि ह्रास। जनसंख्या की बढ़ोत्तरी का नियंत्रण ही जनसंख्या की वृद्धि द्वारा अधिशेष के ह्रास को रोकने का एकमात्र उपाय है। श्री चरण सिंह ने देश के आर्थिक विकास का एक आधारभूत ढाँचा प्रस्तुत किया है। इसे सुसज्जित करना एक व्यक्ति का दायित्व न होकर भिन्न–भिन्न क्षेत्रों के कार्यकर्ताओं का सामूहिक दायित्व है। इस ढाँचे के छिद्रान्वेषण की अपेक्षा उचित तो यही होगा कि इसे सर्वांगीण बनाने के लिए व्यवहारिक सुझाव प्रस्तुत किए जाएं। वरिष्ठ अर्थशास्त्री डॉ. राव का यह भी कथन है कि देश में श्रम–प्रमुख व पूँजी–प्रमुख दोनों ही प्रकार की तकनीक की मिश्रित प्रणाली उपयुक्त है। श्री चरण सिंह द्वारा अनुमोदित आर्थिक नीति इससे कहीं आगे है। वह तो इस नीति के समर्थक हैं कि कालान्तर में जब देश में आर्थिक विकास इस सीमा तक पहुँच जाए कि श्रमिकों की कमी महसूस होने लगे, तो यंत्रीकरण द्वारा उत्पादकता में वृद्धि की जानी चाहिए, जिससे आर्थिक समृद्धि अधिकतम की जा सके। इस पर भी उनकी यह आलोचना कि उनकी आर्थिक नीति, देश के आर्थिक विकास की अवरोधक है, हास्यास्पद ही मानी जाएगी।

श्री चरण सिंह साधारण से साधारण व्यक्ति के सुझाव का आदर करते हैं तथा अपनी भूल मानने व सुधारने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। एक बार जबकि जमींदारी उन्मूलन के अंतर्गत कृषक वर्ग को भूमि स्वामित्व देने के लिए लगान के दस गुना की वसूली के अभियान को कार्यान्वित करने में वे सफल हो चुके थे, मेरे द्वारा संकलित कृषि संबंधी आय–व्यय के आँकड़े देखने का उन्हें अवसर मिला। जब उन्होंने भली–भाँति सुनिश्चित कर लिया कि आँकड़ों में त्रुटि नहीं है, तब उन्होंने अपने आप कहा कि मैंने दस गुना लगान वसूली की योजना इसलिए सोची थी कि कृषक वर्ग बहुत समृद्ध हो गया है। एक ओर वह भूमि का स्वामी बन जाएगा और दूसरी ओर देश में जो मुद्राप्रसार का प्रकोप है, वह दस गुना जमा कराने से अपने आप समाप्त हो जाएगा। पर इन आँकड़ों द्वारा तो यह प्रतीत होता है कि मेरे यह विचार तर्कसगत नहीं थे। गोल्डस्मिथ की इस उक्ति से कि "स्वामित्व का अधिकार प्राप्त होने से किसान बालू को भी स्वर्ण में परिवर्तित कर सकता है।" इस विचार से वह बहुत प्रभावित हैं,

पर उत्पादन के साधनों के निजी क्षेत्र में उपयोग तथा उसके लाभांश पर सामाजिक नियंत्रण के पक्ष में हैं।

इस देश में कृषि अर्थशास्त्र का विकास बहुत देर से हुआ है और इस विषय की आधारशिला भारतीय संदर्भ में अच्छी तरह निर्मित नहीं हो पाई है। अमेरिका जैसे औद्योगिक शहर प्रधान देश में कृषि अर्थशास्त्रज्ञों का प्रादुर्भाव साधारण कृषक परिवारों से हुआ, उन्हें कृषि का समुचित आवश्यक ज्ञान था। इसके विपरीत भारत के अधिकांश शिखर के वरिष्ठ कृषि अर्थशास्त्र शहर में पले व बड़े हुए हैं। ग्रामीण जीवन से उनका सीधा नाता नहीं रहा। कृषि विज्ञान से वे सर्वथा अनभिज्ञ रहे तथापि विश्वविद्यालयों में अर्थशास्त्री व सांख्य बन गए। ये पाश्चात्य देशों की आर्थिक स्थितियों में विकसित आर्थिक सिद्धांतों के अनुयायी मात्र की भूमिका अदा कर रहे हैं। कुछ ऐसे भी कृषि–अर्थशास्त्री हैं, जिन्होंने अमेरिका में कृषि अर्थशास्त्र का प्रशिक्षण प्राप्त किया है। इस प्रशिक्षण में उत्पादन प्रक्रिया विश्लेषण व प्रारूप निर्माण की प्रमुखता थी। भारतीय कृषि–समस्या का निरूपण उन आधारों पर ढूँढ़ना, बिना बुनियाद के रेत का महल बनाने सा है। इस प्रकार के प्रशिक्षित अधिकांश कृषि–अर्थशास्त्री इन उल्लिखित प्रणालियों का उपयोग आज भी सम्मानप्रद मानते हैं। इन दोनों प्रणालियों के दोष यह हैं कि किसी आदान का उत्पादन में योग निकालने के लिए यह मानना पड़ता है कि अन्य आदान की मात्रा स्थिर है।

कृषि में आदानों की मात्रा में सामंजस्य एक दूसरे के संबंध पर आधारित है। उदाहरणतः यदि खाद की मात्रा बढ़ाई जाती है तो सिंचाई भी अधिक करनी होगी। ऐसा न करने से उत्पादन में वृद्धि की अपेक्षा कमी आएगी। बीज की मात्रा भूमि की इकाई से संबद्ध है। गणतीय तरीकों के उपयोग के लिए पर्याप्त और सही आँकड़े आवश्यक हैं। देश में कृषि – अर्थशास्त्र के वर्तमान अनुसंधान की स्थिति में ऐसी सूचना का अभाव है। इन कारणों से इन गणितीय विश्लेषणों का उपयोग सीमित रूप में ही वांछित है।

पर विदेश में प्रशिक्षित नई पीढ़ी के भारतीय कृषि अर्थशास्त्र उत्पादन प्रक्रिया व प्रारूप द्वारा आर्थिक विश्लेपण का अधिक उपयोग करते हैं। गणितीय विश्लेषणों को अपनाते हैं। उपरोक्त दोषों के कारण इन विश्लेषणों द्वारा भारतीय कृषि समस्या का सही निदान नहीं किया जा सकता। इससे देश में कृषि अर्थशास्त्र के विकास को सही दिशा अभी तक नहीं मिल पाई है। इसके विपरीत श्री चरण सिंह ने कृषि अर्थशास्त्र की पुस्तकों का ही अध्ययन नहीं किया, वरन् भारतीय कृषि प्रणाली व ग्रामीण अर्थशास्त्र पर गहन मनन किया तथा कृषि एवं राजस्व मन्त्री के नाते बहुमूल्य अनुभव

भी प्राप्त किये। वह अपने को अब भी कृषि शास्त्र का एक विद्यार्थी ही मानते हैं। इतने व्यस्त होते हुए भी अध्ययन, मनन एवं चिंतन उनका स्वभाव बन गया है।

गाँधी जी के अनुयायी होने के नाते श्री चरण सिंह को सत्य में अडिग विश्वास है। वह जिसे सत्य समझते हैं, उसके कहने में एवं समर्थन में, उन्हें कोई हिचकिचाहट तथा भय नहीं होता।

पंडित नेहरू जो अपने राजनीतिक जीवन के चरम उत्कर्ष पर थे, उनकी विचारधारा का विरोध करने का साहस इने–गिने लोग ही कर सकते थे। पर चरण सिंह ने अपने युक्ति–संगत भाषण द्वारा नागपुर के खुले अधिवेशन में सहकारी खेती की व्यवहारिकता को असंगत सिद्ध कर दिया। यद्यपि कि नेहरू जी जोरदार शब्दों में इस प्रणाली का डटकर प्रचार कर रहे थे। भारत की राजनीति पर नेहरू की पूर्णतः छाप रहने के कारण चरण सिंह को राजनीतिक क्षेत्र में कुछ काल के लिए एक नगण्य इकाई के रूप में सन्तोष करना पड़ा, पर उन्होंने अपना राजनीतिक स्थान पुनः प्राप्त करने हेतु अपने आधारभूत सिद्धांतों को कभी नहीं छोड़ा। यह उनके महान् व्यक्तित्व का परिचायक है, जबकि बहुत से लोग उनके इस गुण को हठ की संज्ञा प्रदान करते हैं।

६४
आर्थिक विकास की नवीन प्राथमिकताएँ
डॉ. डी. एस. अवस्थी*

यह निर्विवाद है कि किसी भी राष्ट्रीय आर्थिक विकास प्रक्रिया का लक्ष्य जन कल्याण होना चाहिए। विकास साधन है और मानवीय सुख एवं कल्याण साध्य विकास प्रक्रिया का संचालन इस प्रकार होना चाहिए, जिससे सर्व साधारण की दशा में सुधार हो। व्यक्तियों एवं संस्थाओं की राजनीतिक तथा सामाजिक मान्यताओं और आस्थाओं की भिन्नताओं का स्वरूप एवं आकार कुछ भी हो, पर इसमें राष्ट्रीय मतैक्य है कि आर्थिक विकास की नीति की सार्थकता का मूल्यांकन इस आधार पर होना चाहिए कि वह निर्धनता, विषमता तथा बेरोजगारी के अभिशाप से समाज को मुक्त कराने में कहाँ तक सफलता प्राप्त करने में समर्थ है। आर्थिक नीति के इस कल्याणवादी मापदण्ड को स्वीकार करने में सभी अर्थशास्त्री और समाजनेता एकमत हैं।

विकास का मापदण्ड

आर्थिक विकास के इस कल्याणवादी दृष्टिकोण का प्रतिपादन चौधरी चरण सिंह ने अपनी पुस्तक 'भारत की अर्थनीति – गाँधीवादी रूपरेखा' में निम्न प्रभावपूर्ण शब्दों में किया है:

> "किसी अर्थनीति या राजनीति की गुणवत्ता का माप दण्ड यह है कि वह अपने पीड़ित, दुर्बल, बेरोजगार, मूक नागरिकों का उद्धार कैसे करती है और उन सभी लोगों को जो असहाय हैं और जिन्हें दूसरे दिन रोटी का सहारा नहीं है, कैसे राहत पहुँचाती है? भारत में राजनीतिक नेतृत्व की परख अब उसके

---

* डॉ. डी.एस. अवस्थी (१९३४–२०१०?) छत्रपति साहूजी विश्वविद्यालय, कानपुर में अर्थशास्त्र के प्रसिद्ध प्रोफेसर थे। उन्होंने आई. एम. एफ की नीतियों, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार सिद्धांतों, भारतीय अर्थव्यवस्था में उत्पादकता और विकास, मार्क्सवादी अर्थशास्त्र और गाँधीवादी आर्थिक सिद्धांत पर कई किताबें लिखीं और अनेकों का संपादन किया। १९८७ मैं प्रोफेसर अवस्थी भारतीय आर्थिक संघ के अध्यक्ष भी रहे।

> क्रांतिकारी नारों से नहीं होगी, बल्कि इन बेचारों के लिए किए गए काम से होगी।"

चौधरी जी द्वारा प्रतिपादित इस क्रांतिकारी विकास मापदण्ड में समाजवाद तथा साम्यवाद की प्रगतिशीलता की आत्मा समाहित है। वास्तव में प्रगतिशीलता का ऐसा व्यवहारिक रूप राष्ट्रीय आर्थिक विकास में राष्ट्रीय सामूहिक प्रयास का केंद्र बिंदु हो सकता है।

राष्ट्रीय आर्थिक विकास का केंद्र बिंदु अब सामान्य व्यक्ति होना चाहिए। इन करोड़ों असहाय भारतीयों को जिन्हें गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी तथा शोषण की लंबी यातनायें झेलनी पड़ी हैं, अब विकासक्रम का लक्ष्य मानना पड़ेगा। यदि राजनीतिक सीमित हितों एवं उद्देश्यों से ऊपर उठकर राष्ट्रीय हित में चिंतन किया जाय, तो निश्चय ही चौधरी जी के उपर्युक्त मापदण्ड को सभी स्वीकार करेंगे। यह प्रगतिशीलता का मूर्तिमान प्रतीक है। प्रगतिशीलता इस मापदण्ड में अपना सही रूप देखती है। करोड़ों असहाय व्यक्तियों को विकास की नवीन दिशाओं का दर्शन होता है। निहित स्वार्थी में विकास के इस नवीन कल्याणकारी मापदण्ड की चुनौती का सामना करने की शक्ति तथा सामर्थ्य नहीं है।

अतीत के आर्थिक विकास का मूल्यांकन

आर्थिक विकास के अतीत का मूल्यांकन आवश्यक है; जिससे हम भविष्य में विकास की नीतियों का सही निर्माण एवं उनका कार्यान्वयन कर सकें। राजनीतिक स्वतंत्रता की प्राप्ति के उपरान्त आर्थिक स्वतंत्रता का संग्राम प्रारंभ हुआ। राजनीतिक स्वतंत्रता ने आर्थिक स्वतंत्रता की पृष्ठभूमि का निर्माण किया। राजनीतिक दासता तथा शोषण से मुक्ति पाकर आर्थिक दासता तथा शोषण के विरुद्ध महान अभियान प्रारंभ हुआ। नियोजन बद्ध आर्थिक विकास का कार्यक्रम देश में १ अप्रेल सन् १९५१ से प्रारंभ हुआ, जब देश में प्रथम पंचवर्षीय योजना का श्री गणेश हुआ। देश में चार पंचवर्षीय योजनाएँ और तीन वार्षिक योजनाएँ पूरी हो चुकी हैं और पाँचवी पंचवर्षीय योजना अपने अंतिम चरण में हैं। स्वाभाविक है कि राष्ट्रीय सम्पत्ति की बहुत बड़ी राशि के विनियोजन से विकास के कुछ भौतिक परिणाम अवश्य होंगे। लोहा, सीमेंट, बिजली तथा अनेक अन्य औद्योगिक प्रतिष्ठानों की स्थापना होगी। इन वस्तुओं का उत्पादन बढ़ेगा। राष्ट्रीय निवल उत्पाद में वृद्धि होगी। परंतु मौलिक प्रश्न है क्या विकास अपने आदर्शों को प्राप्त करने में सहायक सिद्ध हुआ है? क्या भौतिक अववृद्धियाँ

सामाजिक अनिवार्यताओं एवं आकांक्षाओं के अनुरूप हुई हैं? क्या इसकी दिशाएँ वही रहीं हैं, जिसकी राष्ट्र को आशा रही है?

हमें विकास का मूल्याँकन उसी मापदण्ड पर करना होगा, जिसकी विवेचना हम अभी कर चुके हैं अर्थात् विकास में दुर्बल तथा असहाय वर्ग की स्थिति में कहाँ तक सुधार हुआ है। अर्थात् विकास ने सामान्य जनकल्याण की प्रतिस्थापना में कहाँ तक सफलता प्राप्त की है। इस मापदण्ड पर ही आर्थिक विकास का सही निष्पक्ष मूल्यांकन हो सकता है। व्यवहारिक रूप से इस मूल्यांकन के तीन आधार यहाँ पर देना उपयुक्त होंगे। प्रथम निर्धनता का अभिशाप, द्वितीय बेरोजगारी की स्थिति तथा तृतीय आर्थिक विषमताओं का स्वरूप।

निर्धनता का अभिशाप

नियोजन की प्रक्रिया से निर्धनता का उन्मूलन नहीं हो सका। यह कष्ट का विषय है कि आज भी लगभग भारत की आधी जनता गरीबी के जाल में फँसी हुई है। इस संबंध में उपलब्ध अध्ययन शोध सामग्री निर्धनता की भीषणता की ओर संकेत करती है। दान्डेकर तथा रथ के अध्ययन से स्पष्ट हुआ कि सन् १९६७–६८ में १५ रुपये मासिक से कम उपभोग करने वाले ग्रामीण क्षेत्र में १६६.४ मिलियन लोग थे। इसी वर्ष नगरों में २० रुपए मासिक से कम खर्च करने वाले ४९ मिलियन लोग थे। इस आधार पर शहरी क्षेत्र में ५० प्रतिशत निर्धन तथा ग्रामीण क्षेत्र में ४० प्रतिशत निर्धन थे। प्रो० बरवन के अध्ययन के अनुसार १५ रुपये मासिक से कम उपभोग करने वाले २२० मिलियन लोग थे, जो ग्रामीण जनसंख्या का ५३ प्रतिशत थे। श्री ओझा के अध्ययन के आधार पर स्पष्ट है कि वर्ष १९६७ ६५ में १५ से १८ रुपये मासिक उपभोग वाले ७० प्रतिशत थे और उनकी संख्या २८९ मिलियन थी। डी० कास्टा के अध्ययन ने तो यह शर्मनाक सत्य स्पष्ट किया कि वर्ष १९६३–६४ में ६१ मिलियन लोग ऐसे थे, जो अत्यधिक निर्धनता के कुचक्र में फँसे हुए थे। निर्धनता संबंधी तथ्यों के आधार पर यह स्पष्ट रूप से सिद्ध हैं कि परिमाणात्मक दृष्टि से निर्धन लोगों की संख्या में निरंतर वृद्धि होती गई है और प्रतिशत रूप में भी निर्धनता में कमी नहीं हुई है। यह एक अत्यधिक कष्टदायक सत्य है, जो हमारी विकास आस्था को गहरी ठेस पहुँचाता है। यदि नियोजित विकास प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप निर्धन लोगों की संख्या में वृद्धि हो और देश की संपूर्ण जनसंख्या का लगभग आधा भाग निर्धनता के अभिशाप से ग्रसित रहे, तो यह निश्चय

ही लज्जाजनक है और हमारे राष्ट्रीय मनोबल तथा चरित्र को गिराता है। यह हमें विवश करता है कि हम संपूर्ण विकास प्रक्रिया और संबंधित नीतियों पर मौलिक चिंतन करें, जिससे समस्या का समाधान हो। हमें विकास की नवीन प्राथमिकताओं को खोजना पड़ेगा।

बेरोजगारी का ताण्डव

एक देश के मनोबल को गिराने में जितना उत्तरदायित्व बेरोजगारी का है, उतना शायद किसी अन्य कारक का नहीं। देश में व्याप्त व्यापक निर्धनता का भी कारण बड़े पैमाने की बेरोजगारी है। किसी भी आर्थिक विकास का लक्ष्य बेरोजगारी उन्मूलन होना चाहिए। समस्त उपलब्ध मानवीय श्रम–शक्ति का अधिकतम लाभकारी प्रयोग होना चाहिए।

यदि विकास नीति में रोजगारमूलक नीति को प्राथमिकता न मिलेगी, तो यह निश्चय ही दुर्भाग्यपूर्ण होगा। अतीत की यह मान्यता कि विकास क्रम स्वयं रोजगार मूलक होगा, अब असत्य सिद्ध हुई है। राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि की दर तथा रोजगार साधनों में वृद्धि की दर में बड़ी विषमता दिखलाई पड़ती है। उदाहरण के लिए आई० एल० ओ० ने कुछ महत्वपूर्ण तथ्य प्रकाश में लाए हैं। सन् १९६३ आधार वर्ष की तुलना में सन् १९६९ में विभिन्न राष्ट्रों की राष्ट्रीय उत्पादन तथा रोजगार वृद्धि की दरों की स्थिति इस प्रकार थी –

राष्ट्र	राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि प्रतिशत	रोजगार में वृद्धि की दर
कनाडा	४७	१८
अमरीका	४६	१९
पश्चिम जर्मनी	४७	३
इंग्लैंड	२६	०
जापान	१२७	१४
भारत	१५	९

इससे यह सत्य उजागर होता है कि आर्थिक विकास को कल्याणकारी और दुर्बल वर्ग के लिए सहायक बनाने के लिए आवश्यक है कि रोजगार सृजन की क्षमता को अत्यधिक महत्व दिया जाय। यह सत्य भारत जैसे श्रम–बाहुल्य राष्ट्रों के लिए और अधिक उपयुक्त है। परंतु खेद है कि उत्पादन वृद्धि की उन प्रक्रियाओं का समुचित प्रयोग नहीं हुआ, जिससे श्रम साधन का उपयोग होता और बेरोजगारी की समस्या का समाधान होता। रोजगार मूलक विकास की नीति की उपेक्षा का स्पष्ट परिणाम

यह हुआ कि बेरोजगारी में अनवरत रूप से वृद्धि होती गई, जैसा निम्न आँकड़ों से स्पष्ट है—

नियोजन अवधि	बेरोजगारों की संख्या (मिलियन में)	बेरोजगारी प्रतिशत
प्रथम पंचवर्षीय योजना के अंत में	५.३	२.९
द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अंत में	७.१	३.६
तृतीय पंचवर्षीय योजना के अंत में	९.६	४.५
तीन वार्षिक योजनाओं के अंत में	२३.०	९.६

भगवती कमेटी ने बेरोजगारी का अनुमान देते हुए लिखा कि सन् १९७१ में १८.१ मिलियन श्रमिक बेरोजगार थे जिसमें से १६.१ मिलियन ग्रामीण क्षेत्र में तथा २.६ मिलियन शहरी क्षेत्र में थे। इस प्रकार १० प्रतिशत श्रम शक्ति का उपयोग नहीं हुआ। यदि छिपी हुई ग्रामीण बेरोजगारी तथा अर्ध—रोजगारी की स्थिति का वास्तविक मूल्याँकन किया जाय, तो यह स्थिति और अधिक भयावह होगी। उपर्युक्त आँकड़े यह स्पष्ट करते हैं कि नियोजनकाल में उत्तरोत्तर बेरोजगारी में वृद्धि होती गई।

आर्थिक केंद्रीकरण की विषमता

आर्थिक विकास का एक अन्य मूल्यांकन आधार है— वितरण व्यवस्था का स्वरूप। यदि विकास की प्रक्रिया से आर्थिक शक्ति का विकेंद्रीकरण होता है तथा आय एवं सम्पत्ति—साधनों का समान वितरण होता है, तो विकास नीति का स्वागत किया जाएगा। इसके विपरीत यदि धन एवं आय का केंद्रीकरण होता है और गरीब तथा अमीर का अंतर—पाट चौड़ा होता है, तो हम निश्चय ही विकास प्रक्रिया को आपत्तिजनक समझेगे। इस मापदण्ड के आधार पर जब हम भारतीय आर्थिक विकास का मापांकन करते हैं, तो हमे बढ़ती हुई विषमताएँ दिखलाई पड़ती हैं। विकास के लाभों को कुछ समृद्ध लोगों ने हथिया लिया है। उदाहरण के लिए भारत के २० बड़े निजी प्रतिष्ठानों की शक्ति में अनवरत रूप से वृद्धि होती गई जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट है—

वर्ष	कुल परिसम्पत्ति (करोड़ों में)
१९६३—६४	१३२५.७
१९६६—६७	२३८५.९
१९७२—७३	३५१५.६
१९७५—७६	४९९४.२

इस प्रकार स्पष्ट है कि बड़े निजी एकाधिकारी प्रतिष्ठानों ने शक्ति का केंद्रीकरण कर रखा है। केवल बिड़ला के समूह की परिसम्पत्ति इस अवधि में २८२.९ करोड़ रुपये से बढ़कर १०६४.६ करोड़ रुपये हो गई है। इसमें यह भी हास्यास्पद तथ्य प्रकट होता है कि यह सभी कुछ समाजवाद के नारों के संदर्भ में हुआ। इन आर्थिक शक्ति के केंद्रीकरण ने सरकार के सभी नियमन प्रयासों को निष्फल कर दिया। बड़ी मात्रा में करों की चोरी, एकाधिकारी शक्ति नियमन व्यवस्था की अकुशलता तथा व्यापक भ्रष्टाचार ने आर्थिक विषमताओं को और अधिक बढ़ा दिया। देश में समानांतर अर्थव्यवस्था का जन्म हुआ तथा खुलकर विकास हुआ।

समस्याओं का समाधान – विकास की नवीन प्राथमिकताएँ

निर्धनता, बेरोजगारी तथा आर्थिक विषमताओं में वृद्धि के परिप्रेक्ष्य में ही विकास की नवीन प्राथमिकताओं के निर्धारण की आवश्यकता का अनुभव किया गया। चौधरी चरण सिंह ने अपनी पुस्तक 'भारत की अर्थनीति' में स्थिति का विश्लेषण करते हुए स्पष्ट कहा कि "आर्थिक क्षेत्र की असफलताओं के दो मुख्य कारण हैं– "उद्योग व कृषि के मध्य वित्तीय साधनों का गलत वितरण और बड़ी मशीनों का अपनाया जाना।" यह कथन पूर्ण सत्य है और यदि हमें अपने आर्थिक विकास की प्रक्रिया से निर्धनता, बेरोजगारी तथा विषमताओं को मिटाना है, तो ऐसे दर्शन को अपनाना पड़ेगा जिसका व्यवहारिक रूप ऐसा होगा, जिसमें कृषि को प्राथमिकता दी जाएगी, श्रममूलक लघु तथा कुटीर उद्योगों का विकास किया जाएगा, जिससे भारत की अपार मानवशक्ति का उत्पादन में प्रयोग हो सके तथा आर्थिक नीति से आर्थिक शक्ति का विकेंद्रीकरण हो और हम अर्थव्यवस्था को आत्मनिर्भर बना सकें।

कृषि को प्राथमिकता और उसका भावी स्वरूप

भारत की अर्थव्यवस्था को सबल तथा गतिशील बनाने के लिए कृषि का तीव्र एवं स्वस्थ विकास आवश्यक है। कृषि का स्वस्थ, न्यायपूर्ण एवं गतिशील विकास गैर कृषि अर्थव्यवस्था को भी सबल आधार प्रदान कर सकेगा। भारतीय जनसंख्या का ७२ प्रतिशत कृषि पर आश्रित है, परंतु खेद है, अतीत के नियोजन में कृषि को वह प्राथमिकता नहीं मिल सकी जिसकी अपेक्षा थी। विभिन्न योजनाओं में सार्वजनिक विनियोग में कृषि तथा सिंचाई की स्थिति इस प्रकार थी:

योजनाकाल	व्यय करोड़ रुपये	कुलयोजना व्यय का प्रतिशत
प्रथम पंचवर्षीय योजना	६०१	३१
द्वितीय पंचवर्षीय योजना	९५०	२०
तृतीय पंचवर्षीय योजना	१७५३	२०.४
तीन वार्षिक योजनाएँ	१४३८	२१.७
चतुर्थ पंचवर्षीय योजना	३६७४	२३.३
पाँचवीं पंचवर्षीय योजना	८०८३	२०.५

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि प्रथम पंचवर्षीय योजना को छोड़ कर कृषि तथा सिंचाई पर केवल १/५ राशि व्यय की गई। कृषि पर बड़ी मात्रा पर व्यय की उपेक्षा की गई, जिससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था का पर्याप्त विकास नहीं हो सका और ग्रामीण क्षेत्र की निर्धनता तथा बेरोजगारी की समस्या गंभीर होती गई। भारत को ६००० करोड़ रुपए का खाद्यान्न आयात करना पड़ा। यदि इसी बड़ी राशि को कृषि विकास तथा सिंचाई सुविधाओं के प्रसार में लगा दिया गया होता, तो आज कृषि की स्थिति निश्चय ही दूसरी होती और ग्रामीण बेरोजगारी की स्थिति इतनी जटिल नहीं हुई होती। यह एक हर्ष का विषय है कि जनता सरकार की नवीन आर्थिक नीति में कृषि विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है। चौधरी चरण सिंह जी ने कृषि विकास को यह प्राथमिकता दिलाने में अथक प्रयास किया है तथा अपने आर्थिक विश्लेषणात्मक विवेचन से उन्होंने नई सरकार को कृषि विकास को अधिकतम प्राथमिकता देने की प्रेरणा दी है।

कृषि विकास की रूपरेखा ऐसी होनी चाहिए जिससे हम ग्रामीण निर्धनता तथा बेरोजगारी का उन्मूलन कर सकें। कृषि भूमि की सीमितता, जन–कृषि पर अपार जनसंख्या के भार के भारतीय संदर्भ में यह आवश्यक है कि हम भूमि का अधिकतम मितव्ययी एवं लाभकारी प्रयोग करें। भारतीय परिस्थितियों के संदर्भ में हमें ३ या ४ एकड़ की जोतों को अधिकतम उत्पादक तथा लाभकारी बनाने का प्रयास करना पड़ेगा। कृषि विशेषज्ञों ने सिद्ध किया है कि छोटे फार्मों की उत्पादकता है। इस प्रकार छोटे किसानों के हितों की रक्षा की जा सकेगी। इस स्थिति का चौधरी साहब ने बड़ा उपयुक्त विश्लेषण किया है, जिसका संदर्भ यहाँ देना उपयुक्त होगा। उन्होंने स्पष्ट किया कि "कृषक संरचना के चार उद्देश्य होने चाहिए – अधिकतम उत्पादन, रोजगार की व्यवस्था, न्यायोचित वितरण तथा जनवादी प्रवृत्तियाँ।" ऐसी व्यवस्था से ही हम इन चारों

उद्देश्यों को पूरा कर सकते हैं, जिसमें स्वावलंबी (खुदमुख्तार) खेतिहर अपनी छोटी–छोटी जोतों के मालिक हों और सेवा सहकारी समितियाँ उनको एक दूसरे से जोड़ती हों। इस संबंध में भूमि सुधारों को निष्ठापूर्वक अविलंब लागू करने की आवश्यकता है। भूमि–जोतों का समान वितरण होना चाहिए। ५० प्रतिशत व्यक्तियों के पास केवल ९ प्रतिशत भूमि होने की विषमता की स्थिति का अंत होना चाहिए, तभी ग्रामीण अर्थव्यवस्था को न्यायपूर्ण बनाया जा सकेगा और शोषण को समाप्त किया जा सकेगा। नवीन जनता सरकार को भूमि सुधारों के कार्यान्वयन को सर्वाधिक प्राथमिकता देनी चाहिए, जिससे नवीन सरकार की प्रगतिशीलता का प्रत्यक्ष प्रमाण जनता को मिल सके।

यह सन्तोष का विषय है कि जनता सरकार ने अपने पहले बजट में कृषि की प्राथमिकता को स्वीकार करके सन् १९७८–७९ में १७५४ करोड़ रुपये के परिव्यय का प्रावधान किया है अर्थात् सन् १९७७–७८ की तुलना में ४९० करोड़ रुपये की वृद्धि की गई है। इसके अतिरिक्त ग्रामीण संरचना में सुधार के अनेक कार्यक्रमों, जैसे ग्रामीण सड़कें, पीने के पानी की व्यवस्था आदि का भी ध्यान रखा गया है।

श्रममूलक लघु तथा ग्रामीण उद्योगों को प्राथमिकता

भारत की अपार जनशक्ति को उत्पादन प्रक्रिया से जोड़ना हमारी नवीन विकास नीति का आधार होना चाहिए। इसी नीति से भारत की बेरोजगारी तथा अर्धरोजगारी की समस्या का समाधान होगा। लघु तथा ग्रामीण उद्योगों को प्राथमिकता देने की नीति का कुछ क्षेत्रों में जानबूझकर गलत प्रचार किया गया। यह आरोप लगाया गया कि इससे बड़े उद्योगों तथा आधारभूत उद्योगों को समाप्त किया जाएगा। जिन क्षेत्रों की तकनीकी तथा संगठनात्मक आवश्यकताएँ इस प्रकार की हैं, उनको केवल बड़े स्तरीय उद्योगों से पूरा किया जा सकता है, वहाँ उस प्रकार के उद्योगों का विकास होगा। परिवहन, बिजली, भारी उपकरण आदि के विशिष्ट क्षेत्रों में बड़े उद्योगों का अपना स्थान होगा और उनका विकास होना चाहिए। परंतु भारत जैसे निर्धन देश के लिए जहाँ पूँजी का अभाव है और श्रम का बाहुल्य है, वहाँ पर विकास की सामान्य नीति श्रममूलक होनी चाहिए। इससे आर्थिक शक्ति के केंद्रीकरण को रोक कर विकेंद्रीकरण की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलेगा। पूँजीमूलक बड़े–बड़े उद्योगों का जब स्वामित्व निजी क्षेत्र में होता है, तो इससे अर्जित लाभ भी कुछ चन्द समृद्ध व्यक्तियों तक ही सीमित रह जाता है। परिणाम स्वरूप बहुत बड़े धनी लोगों की

शक्ति में अनवरत रूप से वृद्धि होती जाती है। २० बड़े निजी प्रतिष्ठानों के द्वारा आर्थिक शक्ति के केंद्रीकरण के जो आँकड़े दिए गए हैं, उससे उसी सत्य की स्थापना होती है। विकास के लाभ कुछ लोगों तक ही सीमित हो जाते हैं, आर्थिक सत्ता के इस अहितकर केंद्रीकरण से राजनीतिक एवं सामाजिक भ्रष्टाचार को भी बढ़ावा मिलता है। अपने आर्थिक हितों की रक्षा के लिए यह बड़े–बड़े पूँजीपति राजसत्ता को भी भ्रष्ट करने में कोई कसर नहीं छोड़ते। भ्रष्ट अर्थतंत्र और भ्रष्ट राजतंत्र का गठबंधन, स्वस्थ जनतंत्र के विकास में सबसे बड़ा अवरोधक है। आर्थिक शक्ति के मठाधीश राजनीतिक दलों को चंदा देकर राजनीतिक पर्यावरण को निश्चित रूप से दूषित करते हैं, उन पर प्रभावपूर्ण नियंत्रण लगाने के सभी अतीत के प्रयास निष्फल हुए हैं। अतः हमें विकेंद्रित अर्थव्यवस्था की स्थापना करनी होगी मनुष्य को विकास का केंद्र बनाना पड़ेगा।

पूँजी की प्रति इकाई पर अधिकतम रोजगार सुविधाओं के विस्तार की विकास नीति के माध्यम से ही हम निर्धनता, बेरोजगारी तथा आर्थिक विषमताओं की समस्याओं का समाधान कर सकेंगे। सामान्य रूप से श्रममूलक औद्योगीकरण और अपवादरूप में पूँजीमूलक औद्योगीकरण की नीति का पालन होना चाहिए। देश में कुटीर और लघु उद्योगों का नियोजित विस्तार होना चाहिए। अतीत में भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु तथा कुटीर उद्योगों के विकास तथा प्रोत्साहन के लिए प्रभावपूर्ण कदम नहीं उठाये गए। प्रथम योजना में ४२ करोड़ रुपये, द्वितीय योजना में १८७ करोड़ रुपये, तृतीय पंचवर्षीय योजना में २४१ करोड़ रुपये, चतुर्थ योजना में २५१ करोड़ रुपये लघु तथा कुटीर उद्योगों के विकास पर व्यय किए गए। पाँचवी पंचवर्षीय योजना में ५३५ करोड़ रुपये का प्रावधान है। इस योजना के कुल परिव्यय राशियों के संदर्भ पर लघु तथा कुटीर उद्योगों पर किया गया व्यय अपर्याप्त ही कहा जाएगा। यह हर्ष का विषय है कि जनता सरकार की आर्थिक नीति में इन उद्योगों के विकास को प्राथमिकता प्रदान की गई है। नवीन सरकार की औद्योगिक नीति में इन उद्योगों के विकास तथा संरक्षण की व्यापक व्यवस्था की गई है तथा इन उद्योगों की तकनीकी, वित्तीय विपणन एवं संगठनात्मक समस्याओं के समाधान के लिए प्रभावपूर्ण कदम उठाने का निश्चय व्यक्त किया गया है। जनता सरकार के सन् १९७८–७९ के प्रथम बजट में लघु तथा ग्रामीण उद्योगों के विकास के लिए २१९ करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। किसी एक वर्ष में इन उद्योगों पर व्यय की जाने वाली राशि से यह बहुत अधिक है। आशा है विकास का यह क्रम अनवरत रूप से चलता रहेगा।

कृषि–विकास तथा श्रममूलक एवं रोजगार प्रेरक लघु तथा ग्रामीण

उद्योगों के विकास की नवीन प्राथमिकताएँ निश्चय ही गरीबी, बेरोजगारी और विषमता की समस्याओं का समाधान कर सकेंगी। इस नवीन प्राथमिकता क्रम से हम निश्चय ही सामाजिक न्याय के लिए आर्थिक विकास के लक्ष्य को प्राप्त कर सकेंगे।

निर्धनता, बेरोजगारी तथा विषमता के उन्मूलन के मानवीय लक्ष्यों से प्रेरित नवीन आर्थिक प्राथमिकता के अनुरूप नवीन आर्थिक–संरचना आवश्यक है। ग्रामीण क्षेत्र में भूमि सुधारों को निष्ठापूर्वक लागू किया जाय, जिससे कृषि पर बड़े–बड़े भूस्वामियों का स्वामित्व समाप्त हो और कृषि क्षेत्र में व्याप्त शोषण की प्रक्रियाओं का अंत हो। हरिजन तथा आर्थिक दृष्टि से दुर्बल वर्गों के भूमि वितरण कार्यक्रम को निष्ठापूर्वक लागू किया जाए, जिससे ग्रामीण क्षेत्र के पिछड़े तथा दुर्बल वर्ग के कृषक इन नवीन प्राथमिकताओं के व्यवहारिक रूप का दर्शन कर सकें। इन सुधारों के अभाव में लघु उद्योगों के विकास कार्यक्रम के कार्यान्वयन में भी सावधानी बरतनी होगी। ऐसा न हो कि समृद्ध वर्ग के लोग ही अपना चोला बदल–बदल कर इन उद्योगों को दी जाने वाली वित्तीय एवं अन्य सुविधाओं को डकार जाएँ तथा निर्धन एवं असहाय वर्ग इनसे लाभान्वित न हो सके। इसकी भी पूर्ण व्यवस्था हो कि इन उद्योगों में लगे श्रमिकों के आर्थिक हितों की रक्षा की जाए। इन उद्योगों के विकास से संबद्ध साधनों का सामाजिक न्याय की दृष्टि से ही प्रयोग हो और इन उद्योगों की विकास प्रक्रिया पर सामाजिक नियंत्रण हो। औद्योगिक विकास नीति को समन्वयपूर्ण बनाया जाय, जिससे वृहद्, मध्य, लघु तथा अत्यधिक लघु एवं कुटीर उद्योगों का राष्ट्रीय हितों के अनुरूप संतुलित विकास किया जा सके। सभी स्तरों के उद्योगों के अपने विशिष्ट उपयोगिता क्षेत्र हैं और उनका राष्ट्रीय हितों के अनुरूप विकास होना चाहिए। इस समन्वित विकास–प्रक्रिया में यह सदैव ध्यान रखना चाहिए कि इससे निर्धन वर्ग की शक्ति में वृद्धि हो और शोषक एकाधिकारी शक्तियों का उन्मूलन हो। राष्ट्रीय विकास को अधिक न्यायपूर्ण एवं गतिशील बनाने के लिए एक ओर सार्वजनिक क्षेत्र को अधिक व्यापक, सशक्त तथा कुशल बनाने की आवश्यकता है और दूसरी ओर निजी क्षेत्र को सामाजिक आकांक्षाओं के अनुरूप नियमित करना भी आवश्यक है। सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों का मापदण्ड भी यही होगा कि वह किस सीमा तक सामूहिक प्रयास से न्यायपूर्ण आर्थिक विकास प्रक्रिया के प्रभावपूर्ण उपकरण बन सकें। नवीन प्राथमिकताओं पर आधारित आर्थिक नीति, नवीन न्यायपूर्ण आर्थिक संरचना तथा भ्रष्टाचार मुक्त कार्यान्वयन की त्रिधा से गरीबी, बेरोजगारी तथा विषमता की महान व्याधियों को समूल नष्ट किया जा सकेगा।

६५
समाजवादी विचारधारा और चौ. चरण सिंह
डॉ. धर्मचंद्र विद्यालंकार*

यों तो बहुत सारी चिंतन श्रेणियों का जन्म आधुनिक काल में हुआ है, जिन्होंने मानव–समाज को नई दृष्टि दी है. जैसे कि विकासवाद, विज्ञानवाद और अस्तित्ववाद। ऐसी ही एक विचारधारा पूँजीवाद भी है, जो कि व्यक्ति स्वातंत्र्य पर अतिरिक्त बल देती है, और उसके चरम और विकास की पक्षधर है। इस विचारधारा का उदय उन्मुक्त पश्चिम में औद्योगीकरण और उपनिवेशीकरण अथवा साम्राज्यवाद के विकास के साथ–ही–साथ हुआ था, जोकि मुक्त–व्यापार और खुली प्रतियोगिता को अपना आधार मानती है तथा जिसके आधार पर मत्स्य–न्याय पनपता है। परिणामस्वरूप बड़ी मछली छोटी मछली को अपना आहार बनाती है, तदापि पूँजीवादी विचार – व्यवस्था वैयक्तिक स्वातंत्र्य के नाम पर अन्याय और असमानता को भी अंगीकार करती है, जिसके कारण समाज में गरीबी और अमीरी के मध्य में खाई और भी अधिक चौड़ी होती चली जाती है। विकराल विषमता और विभेदीकरण के इसी बिंदु से समाजवादी विचारधारा का श्रीगणेश होता है, जहाँ पर पूँजीवादी व्यवस्था में समाज के समस्त आय स्रोतों पर कुछ ही लोगों का एकाधिकार स्थापित हो जाता है। अतएव सकल राष्ट्रीय संपत्ति उन्हीं के कोषागारों में संचित हो जाती है, शेष बहुसंख्यक श्रमिक जनसमाज अभाव–अभियोगपूर्ण जीवनयापन करता है।

समाजवादी विचार श्रेणी का जन्म इसी पूँजीवादी विचार–व्यवस्था के विरोध में हुआ। १९वीं शताब्दी में पश्चिम में पूँजीवादी व्यवस्था पर्याप्त विकसित हो चुकी थी, अतएव उसके अन्याय, अभाव और असमानता अथवा विषमता और केंद्रीकरण जैसे दोष भी प्रकट होने लगे थे, तभी आंग्ल विचारक श्री राबर्ट ओवेन और फ्रांस के चिंतक श्री पेयरे लैरोनॉक्स ने १९वीं शताब्दी के चौथे दशक में समाजवादी शब्द का सृजन किया,

---

* डॉ. धर्मचंद्र विद्यालंकार (१९५६–) पलवल, हरियाणा से लेखक और प्रतिष्ठित जाट इतिहासकार। एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, सनातन धर्म कॉलेज, पलवल। आरक्षण की व्यवस्था और सामाजिक न्याय, बलिदान का प्रतिशोध, भारतीय राजनीति में अस्मिता–विमर्श और रहबरे आजम दीनबंधुः चौधरी छोटूराम जैसी कई किताबें लिखी।

और इसे पूँजीवादी अर्थ–रचना, जो कि व्यक्तिवादी थी, की प्रतिस्थापना स्वरूप समष्टिवादी समाज व्यवस्था के रूप में प्रस्तुत किया।

चौधरी चरण सिंह जी उपर्युक्त विचारकों के विषय में अपना यह विचार व्यक्त करते हैं कि इन विचारकों ने पूँजीवादी अथवा स्वतंत्र उद्यम वाले समाजों के विकल्प खोजने का प्रयास किया था। अलबत्ता उनके मूल्यांकन अंशतः पहले के विचारकों (दार्शनिकों) से उन्हें विरासत में मिले थे। वे वास्तव में मानवतावादी और प्रबुद्ध थे। उन्होंने समस्त मानव जाति के लिए मूलभूत समता की नई विषयवस्तु देने का प्रयास किया और शायद यह धार्मिक स्वरूप का सबसे पुराना रूपांतर था, जिसे ईश्वर के समक्ष समता के रूप में अभिव्यक्त किया गया। बाद में औद्योगिक क्रांति के प्रबल होने के साथ–साथ पूँजीवाद के दोष उजागर होने लगे। ऐसी परिस्थितियों में धर्मयोद्धा कार्ल मार्क्स का जन्म हुआ, जिन्होंने समाजवाद को एक विज्ञान और एक पद्धति (विचार) के रूप में विकसित किया। इस प्रकार से वे भी समाजवाद को पूँजीवादी व्यवस्था के प्रतिरोध में ही खड़ा पाते हैं।

यह बात ठीक है कि समाजवाद शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम भले ही अंग्रेजों और फ्रेंच विचारकों ने किया हो, लेकिन उसे पूँजीवादी विचार–व्यवस्था के विरुद्ध एक आर्थिक और सामाजिक दर्शन के रूप में कार्ल मार्क्स ने ही 'कम्युनिस्ट मैनिफेस्टो' और 'दास कैपिटल' जैसे अपने ग्रंथों के माध्यम से रखा। उनके मतानुसार समाज में शोषक और शोषित दो वर्ग सदैव रहते हैं। शोषक–वर्ग समाज के सभी संसाधनों के एकाधिकारी बन जाते हैं, जबकि खेतों और कारखानों में श्रम मजदूरों का ही लगता है। मजदूरों को उनके श्रम का कम मूल्य देकर पूँजीपति उनके श्रम से अतिरिक्त–मूल्य का अर्जन करता है। उसके अनवरत और अबाध संचय अथवा एकाधिकार से पूँजी का केंद्रीकरण समाज के कुछ ही व्यक्तियों के हाथों में हो जाता है। वर्ग–चेतना के स्फुरण के पश्चात् शोषकों और शोषितों में वर्ग–द्वंद्व चलता है, जिसके परिणामस्वरूप अंततः श्रमिक जनगण राज्य–सत्ता और अर्थ–सत्ता को संगठित संघर्ष करके हस्तगत कर लेता है। तभी मार्क्स के अनुसार सर्वहारा वर्ग का अधिनायकवाद स्थापित होता है।[1]

साम्यवाद और समाजवाद

चौधरी चरण सिंह जी यहाँ पर मार्क्स के साम्यवाद और अलग–अलग देशों में प्रचलित नाना रूपधारी समाजवादी विचार व्यवस्थाओं पर भी उन्मुक्त

चिंतन करते हैं, क्योंकि समाजवादी शब्द स्वयं में अभी तक भी पर्याप्त अपरिभाषेय और अस्पष्ट है। चौधरी साहब के शब्दों में– 'समाजवाद' शब्द रुचिकर ढंग से स्पष्ट होते हुए भी आकर्षक है। इसलिए जो लोग और दल सरकार की प्रणाली से नितांत भिन्न विचार रखते हैं, वे भी इस बात का प्रयत्न करते हैं कि वे अपने विचारों और राजनीतिक व्यवहारों में 'समाजवाद' शब्द को जोड़कर अपने सिद्धांतों के प्रति लोगों को आकर्षित करें। इस प्रकार हम यह देखते हैं कि हिटलर ने अपनी फॉसिस्ट राजसत्ता को राष्ट्रीय समाजवाद (एस. आर. ए) सोशलिस्ट रिपब्लिक ऑर्गनाईज़ेशन नाम ही दिया था।"[2]

यहाँ पर हमें चौधरी साहब समाजवाद के अधिनायकवादी और सर्वसत्तावादी स्वरूप से भी सचेत करते हैं। अतएव वे मार्क्स द्वारा प्रवर्तित साम्यवाद को ही वास्तविक समाजवाद मानते हैं। भारतीय समाजवाद में, जो कि आचार्य नरेंद्र देव और डॉ. राममनोहर लोहिया द्वारा प्रस्तावित था, कहीं पर गाँधीवादी अहिंसा भी सम्मिलित है। इसी ओर चौधरी साहब ने भी इंगित किया है– शनैः–शनैः समाजवादियों और साम्यवादियों के बीच अंतर करने में शक्ति (सत्ता) के हस्तांतरण का तरीका ही रहा है। समाजवादी यह विश्वास करते हैं कि निजी स्वामित्व से सार्वजनिक स्वामित्व में परिवर्तन करने के जनतांत्रिक उपायों को काम में लाया जाना चाहिए। यह केवल सिद्धांत है, व्यवहार में कम्युनिस्ट इसमें विशेष अंतर नहीं करते, क्योंकि सोवियत संघ भी स्वयं को गणों का ही संघ मानता रहा है।[3]

चौधरी साहब के उपर्युक्त कथन से इतना तो स्पष्ट है ही कि साम्यवादी विचार व्यवस्था जहाँ पर सत्ता के हस्तांतरण के लिए कई बार हिंसक मार्गों को भी वैध मानती है, वहीं पर समाजवादी व्यवस्था संवैधानिक और जनतांत्रिक अहिंसक उपायों का ही आश्रय इस विषय में लेती है। अतएव दोनों में अंतर साध्य का न होकर साधनों अथवा उपायों का ही है। १९१७ ई. में रूस में जो महान क्रांति हुई थी, वह सामंतवाद और साम्राज्य विरोधी थी। उसका भारतीय जन–मानस पर भी प्रभूत प्रभाव हुआ था। यद्यपि चौधरी साहब साम्यवादी विचार व्यवस्था के व्यापक प्रभाव को अस्वीकार नहीं करते, तथापि वे उसकी निजी अधिकार अथवा उद्यम के राष्ट्रीयकरण की नीति से सर्वथा सहमत नहीं थे– साम्राज्यवाद के संबंध में लेनिन के विचार पूँजीवाद की अवस्था के रूप में भारतीय राष्ट्रवाद की मुख्य विचारधारा बन गए और इस विचारधारा को शिक्षित समाज में लोकप्रिय बनाना आसान था। इसका परिणाम यह हुआ कि हमारा शिक्षित वर्ग इस विचारधारा को राजनीतिक सूक्ति के रूप में स्वीकार करने में प्रवृत पूँजीवाद, साम्राज्यवादियों और पूँजीवादियों में विभेद नहीं हुआ। इस

राजनीतिक सूक्ति के अनुसार साम्राज्यवाद और किया जा सकता। इसके अलावा चाहे कुछ भी हो, मुक्त व्यापार और मुक्त उद्यम का पूँजीवाद के साथ घनिष्ठ संबंध बताया गया है। यह एक ऐसा संयोजन है, जिसने तीनों को बदनाम करने की साजिश की है, विशेषकर निजी उद्यम को आर्थिक उन्नति के अभाव के लिए उत्तरदायी ठहराया गया है।[4]

यहाँ पर स्पष्टतः ही चौधरी साहब का चिंतन गाँधीवाद के कहीं अधिक निकट है। साम्राज्यवाद के नाम पर देशी और विदेशी सभी उद्यमियों को गरियाकर हतोत्साहित करना उन्हें अभीष्ट नहीं है। विशेषकर सत्ता का और संपत्ति का हिंसक उपायों से हस्तांतरण तो उनके लिए और अधिक अस्वीकार्य है, क्योंकि चौधरी साहब महात्मा गाँधी के अहिंसा के जीवन–दर्शन से गहरे रूप से प्रभावित थे। अतएव उन्होंने निजी उद्यमों के सरकारी स्वामित्व एवं राष्ट्रीयकरण का कटु प्रतिवाद ही किया है, क्योंकि इसे वे आर्थिक विकास में अवरोधक ही मानते हैं।

राज्य सत्ता और समाजवाद

इस विषय में वे भारतीय समाजवाद के प्रस्तोता और प्रारूपकर्त्ता नेहरू जी को भी उद्धृत करते हैं– मैं इस बात का कायल हूँ कि विश्व की समस्याओं और भारत की समस्याओं के निराकरण की कुंजी समाजवाद में निहित है और जब मैं इस शब्द का प्रयोग करता हूँ तब मैं अस्पष्ट मानववादी तरीके के रूप में नहीं, बल्कि समाजवाद को एक वैज्ञानिक–आर्थिक विचार के रूप में समझता हूँ। फिर भी समाजवाद आर्थिक सिद्धांत से भी कहीं बढ़कर है, यह एक जीवन–दर्शन है और इस प्रकार इसी रूप में मुझे भी समाजवाद अपील करता है। मुझे समाजवाद के अलावा कोई भी मार्ग नहीं दिखाई देता, जिससे भारतीय लोगों की गरीबी, उनकी व्यापक बेरोजगारी, उनके पतन और गुलामी को दूर किया जा सके।[5]

यहाँ पर भले ही नेहरू जी समाजवाद के प्रति अपनी प्रतिबद्धता का प्रदर्शन करते हैं, तदापि वे भी उसके क्रियान्वयन में मानवीय, अर्थात् अहिंसक उपायों के ही पक्षधर प्रतीत होते हैं। सन् १९५५–५६ में उन्होंने कांग्रेस के राष्ट्रीय अधिवेशन में समाजवादी समाज–निर्माण का संकल्प प्रस्तुत किया था, और १९५९ में नागपुर में 'सहकारी–कृषि' का प्रस्ताव प्रस्तुत किया था, जिसका विरोध चौधरी साहब ने प्रखरता के साथ किया था। नेहरू जी की समाजवादी संकल्पनाएँ व्यवहारिक धरातल पर इसलिए भी मूर्तरूप नहीं ले सकीं कि वे बहुत बड़े जनतंत्र प्रेमी थे। वे इनके क्रियान्वयनार्थ अहिंसक उपायों का उपयोग नहीं करना चाहते थे। यही चेतावनी उन्हें चौधरी साहब

ने भी दी थी, जिसको उन्होंने देर से ही सही, स्वीकार किया।

इस विषय में चौधरी साहब राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी को ही अपना पथ–प्रदर्शक मानते हैं। उन्होंने ही सर्वप्रथम 'हिंद–स्वराज' पुस्तक लिखकर भारतीय स्वतंत्रता और 'ग्राम–स्वराज' का स्वर्णिम स्वप्न देखा था। उन्होंने अंग्रेजी–सत्ता को विस्थापित करके भारतीयों के राष्ट्र–राज्य को शक्ति–संपन्न बनाना ही पर्याप्त नहीं माना था, अपितु वे उसको अधिक–से–अधिक स्वायत्त, स्वावलंबी और स्वतंत्र भी बनाना चाहते थे। वे यह सब अहिंसात्मक और जनतांत्रिक उपायों से ही करना चाहते थे।

गाँधीवादी प्रभाव

इस विषय में चौधरी साहब गाँधीजी के निम्नोक्त विचारों से अपनी सहमति व्यक्त करते हुए इन्हें उद्धृत भी करते हैं बार–बार। जैसे कि गाँधी जी ने १९३४ ई0 में भारत की भावी स्वतंत्र सरकार की समाजवादी अवधारणा के विकास के विरुद्ध अपनी टिप्पणी दी थी– "स्वायत्त शासन का अर्थ एक ऐसा अनवरत प्रयत्न है, जिससे सरकारी नियंत्रण से स्वतंत्रता मिले, चाहे वह विदेशी सरकार हो अथवा राष्ट्रीय सरकार। स्वराज सरकार की (समाजवादी) स्थिति खेदपूर्ण होगी, यदि लोग सरकार की ओर इस आशा से निहारते रहें कि वह उनके जीवन के प्रत्येक कार्य को नियमित नहीं करेगी। कोई भी राष्ट्र, जो अपने मामलों को सरकार के अधिक दखल के बिना ही सरलता और प्रभावशाली ढंग से निभाता रहे, तो वह वास्तव में लोकतांत्रिक है। यदि कहीं भी ऐसी दशा का अभाव होता है तो इस प्रकार की सरकार केवल नाममात्र की ही लोकतांत्रिक सरकार है।"[6] गाँधी निजी अधिकार हनन को भी हिंसा ही मानते हैं।

चौधरी चरण सिंह जी भी गाँधी जी से अपनी सहमति प्रकट करते हैं, क्योंकि वे भी निजी उद्यम और व्यवसाय के पक्षधर थे। अतएव उन्होंने भी केंद्रीकरण व सरकारीकरण का समाजवाद के नाम पर विरोध ही किया है– ऊपर से आरोपित नियोजन, जिसमें समाजवाद आवश्यक रूप से सम्मिलित हो जाता है, स्वतंत्रता का हनन कर देता है; क्योंकि इसमें लोगों से यह आशा की जाती है कि वे अपने निर्णय को आगे न बढ़ाकर केवल (ऊपरी) आदेशों का ही पालन करते रहें। इसके अलावा यह तरीका अकुशल भी है, क्योंकि इसमें उस सूक्ष्म ज्ञान का उपयोग करना संभव नहीं है जो करोड़ों लोगों में भरा हुआ है। यदि योजना को नीचे से ऊपर की ओर बनाया जाए, जैसा कि गाँधी जी की आर्थिक संकल्पना में निहित था, तो इससे प्रत्येक व्यक्ति के हित सार्वजनिक कल्याण की उन्नति में लग जाते हैं

और इस प्रकार से वास्तविक लोकतंत्र की स्थापना में भी सहायता मिलती है। इस प्रकार से हम यह देख सकते हैं कि चौधरी साहब साम्यवाद अथवा समाजवाद की सरकारीकरण की नीति के पक्षपाती नहीं थे। उनके मतानुसार निजी स्वामित्व की अभिप्रेरणा आर्थिक विकास में अत्यंत आवश्यक है। इस विषय में वे आदर्शवादी कम और व्यवहारिक कहीं अधिक थे, अतः वर्तमान की भारतीय सरकारों को भी निजीकरण का मार्ग अपनाना पड़ा है।

सामाजिक न्याय और समाजवाद

दूसरा पक्ष समाजवादी विचारधारा का 'सामाजिक–न्याय' का था, जिसके प्रस्तोता डॉ. राम मनोहर लोहिया जी थे। उनकी यह मान्यता थी कि जातिबद्ध भारतीय समाज में सहस्रों वर्षों से पिछड़े किसानों और दलितों को विकास का उन्मुक्त अवसर नहीं मिला है, अतएव उन्हें शक्ति–संरचना में समुचित प्रतिनिधित्व देने के लिए आरक्षण का प्रावधान किया जाए, जिसकी सीमा उन्होंने वंचित पिछड़े–वर्गों के लिए ६० प्रतिशत तक निर्धारित की थी। लोहिया जी का एक नारा भी बड़ा लोकप्रिय हुआ था। सन् सत्तर के दशक में लोहिया जी ने बाँधी गाँठ, पिछड़ा पावे सौ में साठ। चौधरी चरण सिंह जी ने १९४८ ई० और १९५४ में दो बार इन्हीं पिछड़ी हुई कृषक संतानों अथवा जातियों के लिए केंद्रीय सेवाओं और राज्य स्तर की सेवाओं में ५० प्रतिशत आरक्षण की माँग की थी, जिसकी अनदेखी ही की गई, क्योंकि शासन–सत्ता से लेकर प्रचार–तंत्र तक तब भी वर्चस्वशाली वर्गों के हाथों में ही था।

चौधरी साहब ने समाजवाद की सामाजिक न्याय की संकल्पना को दो रूपों में साकार किया। सर्वप्रथम सत्तर के दशक में उत्तरप्रदेश में मुख्यमंत्री बनने पर उन्होंने अपने मंत्रीमण्डल के गठन में पिछड़े वर्गों को समुचित प्रतिनिधित्व प्रदान किया। जैसे कि पिछड़े अहीर (यादव) किसानों में से श्री रामसेवक यादव, तो श्री बैजनाथ कुरील और श्री रामचंद्र विकल गुर्जर को अपने मंत्रीमण्डल में प्रथम बार समुचित सम्मानजनक स्थान दिया, जिससे कि पिछड़े कृषक–वर्गों में आत्म–सम्मान का भाव बढ़ा। उनकी सामाजिक हैसियत भी बढ़ी। परिणामस्वरूप अब वे भी अपने नामों के साथ चौधरी साहब जैसे सम्मानजनक विशेषण लगाने लगे थे। अब वे समाज में दलितों वाली स्थिति से उबरकर खुदकाश्त किसानों के रूप में जमींदारी उन्मूलन जैसे क्रांतिकारी बिलों (१९५२) के क्रियान्वयन से प्रतिष्ठित हो गए थे। बाद में १९७७ में केंद्र सरकार में गृहमंत्री रहते हुए चौधरी साहब ने १९७८ में 'मंडल–आयोग' का गठन कराया। भले

ही उस काल में उसका क्रियान्वयन न हो सका, तदापि १९९० ई0 में उसके क्रियान्वित होने से पिछड़े किसानों को सरकारी सेवाओं में २७ प्रतिशत का आरक्षण – लाभ मिला। इस प्रकार से उन्होंने समाजवाद के 'सामाजिक न्याय' की संकल्पना को ही साकार किया था। उसकी अर्थनीति से असहमति रखते हुए भी यह उनका सामाजिक समता स्थापना हेतु महान प्रयास ही था। आज भले ही उनके तथाकथित समाजवादी अनुयायियों ने स्वयं को चौधरी साहब का वारिस घोषित कर दिया है, पर वे उनकी अर्थनीतियों और क्रियाविधियों से कोसों दूर हैं। उनके जैसी ईमानदारी, कर्त्तव्यनिष्ठा, स्वाध्यायशीलता और सादगी तथा व्यवहारिकता अब दुलर्भ गुण हैं। आजकल के समाजवादी वाचिक और लफ्फेबाज अधिक हैं। चौधरी साहब भले ही गाँधीवादी अर्थ–रचना के प्रबल पक्षधर थे, तदापि उन्होंने कभी पूँजीपतियों से सत्ता–प्राप्ति हेतु अपवित्र गठबंधन नहीं किया था और न ही साम्यवादी शक्तियों से हाथ मिलाया था, बल्कि हस्तशिल्प और कुटीर उद्योगों को ही बढ़ावा दिया था। वर्तमान के तथाकथित समाजवादी सर्वथा सिद्धांतहीन हो चले हैं। उन्हें संप्रदायवादी और पूँजीवादी शक्तियों से राजनीतिक समझौते करने में भी गुरेज नहीं है, जबकि चौधरी साहब सुविधाजीवी और अवसरवादी राजनीतिज्ञ नहीं थे, वे अपने सिद्धांतों के लिए राजसत्ता का भी परित्याग कर सकते थे। उसके आजकल के तथाकथित अनुयायियों ने पूँजीपतियों और उनके दलालों तथा अभिनेताओं और अपराधियों से अपने संपर्क अधिक बढ़ा लिए हैं। उनके लिए वे औने–पौने दामों में किसानों की बहुमूल्य कृषि–भूमि का भी बलपूर्वक सौदा कर रहे हैं। ऐसा पूँजीवादी समाजवाद आज पनप रहा है। लोहिया और आचार्य नरेन्द्र देव के स्वप्नों का समाजवाद अब बिलख रहा है। चौधरी साहब के और किसानवाद भी आज एक शक्तिशाली और सेवाप्रिय केंद्रीय नेतृत्व के अभाव में दम तोड़ रहे है। अब अनेक वर्गों के नेता भारत में कहाँ हैं? आज तो जातियों और क्षेत्रों में ही क्षेत्रीय क्षत्रप बौने वामन बनकर बलिरूपी जनता का वंचन कर रहे हैं। ऐसे विकट समय में चौधरी साहब की विचारधारा पुनः प्रासंगिक हो उठी है।

संदर्भ

१. भारत की भयावह आर्थिक स्थितिः कारण और निदान, पृष्ठ ३२८
२. वही, पृष्ठ ३२८
३. यथोपरि
४. वही, पृष्ठ ३२२
५. वही, पृष्ठ ३२८
६. अमृत बाजार पत्रिका, कलकत्ता २ अगस्त १९३४
७. भारत की भयावह आर्थिक स्थितिः कारण और निदान, पृष्ठ ३३८–३८

६६
भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था एवं चौधरी चरण सिंह की सार्थकता
प्रो. एस. डी. चमोला*

कृषि क्षेत्र की वर्तमान दशा

भारतीय कृषि आजकल एक नाजुक दौर से गुजर रही है, जहाँ अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्र, जैसे– उद्योग, सेवाएँ, वित्तीय, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, सूचना तकनीक आदि में देश में दिन–दूनी एवं रात चौगुनी प्रगति हो रही है और भारतीय अर्थव्यवस्था में सकल घरेलू राष्ट्रीय आय ८–९ प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से बढ़ रही है, उद्योग लगभग औसतन १२ प्रतिशत की दर से बढ़ रहे हैं। देश का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार १५–१६ प्रतिशत की दर से बढ़ रहा है। इसी प्रकार सकल घरेलू राष्ट्रीय आय में भी सेवाओं का योगदान ६० प्रतिशत हो रहा है। यह भविष्यवाणी की जा रही है कि आगे आने वाले २०–२५ वर्षो में भारतीय अर्थव्यवस्था की गणना विश्व के शक्तिशाली देशों में होने लगेगी और विश्व में भारत का दबदबा बढ़ता जाएगा।

अब प्रश्न पैदा होता है कि क्या अर्थव्यवस्था के इस दौर को दीर्घकाल तक कायम रखा जा सकता है? इस का यही उत्तर है कि इसके लिए कुछ मूलभूत शर्तों को पूरा करना पड़ेगा। इन शर्तों में प्रमुख शर्त यह है कि भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था किस प्रकार काम करती है, कृषि देश की अर्थव्यवस्था का आधार है, यदि यह आधार सशक्त न हुआ तो संपूर्ण अर्थव्यवस्था चरमरा जाएगी। यदि भारतीय अर्थव्यवस्था पिछले कुछ वर्षों में अभूतपूर्व प्रगति पर रही है, तो इसका मुख्य कारण यह है कि भारतीय कृषि में हरित क्रांति आई। इसके फलस्वरूप भारत खाद्यान्नों

---

* प्रो. एस. डी. चमोला ने पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़ से अर्थशास्त्र में एम.ए. और पी.एच.डी. की। वे सीसीएस हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार में अर्थशास्त्र और व्यवसाय प्रबंधन विभाग के प्रोफेसर और प्रमुख के रूप में सेवानिवृत्त हुए। सेवानिवृत्ति के बाद उन्हें भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद से वरिष्ठ फेलोशिप मिली और उन्होंने अपना शोध कार्य पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया, जिसका शीर्षक था 'कौटिल्य अर्थशास्त्र और प्रबंधन का विज्ञानः समकालीन भारत के लिए इसकी प्रासंगिकता'।

में आत्मनिर्भर हो गया। विदेशों पर खाद्यान्नों के लिए निर्भर नहीं रहना पड़ा। देश खाद्यान्नों के आयातों के अपमानों से बचता रहा। देशवासियों का स्वाभिमान बढ़ा एवं देश गर्व से अपना सिर उठाता रहा।

परंतु, वास्तव में पिछले कुछ वर्षों से भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था डगमगा–सी रही है। हरित–क्रांति का रंग फीका पड़ना शुरू हो गया है। कृषि–विशेषज्ञ इस बात से चिंतित हैं कि कृषि में निवेश दिनों–दिन घटता जा रहा है। यह कृषि निवेश सार्वजनिक क्षेत्र एवं निजी क्षेत्र दोनों में घट रहा है। कृषि की उत्पादकता में ठहराव सा आ गया है। देश में खाद्यान्नों की कमी आनी शुरू हो गई है। विदेशों से गेहूँ, दालों, तेलों आदि का आयात बढ़ना शुरू हो गया है। किसानों की आर्थिक दशा पहले से खराब हो रही है और आए दिन कर्ज का भार बढ़ने पर किसान आत्महत्या करने पर मजबूर हो रहे हैं। कृषि–विकास की दर ४ प्रतिशत प्रतिवर्ष से घटकर १ प्रतिशत रह गई है। यद्यपि सकल राष्ट्रीय घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान घटकर २२ प्रतिशत रह गया है, पर खेती पर आधारित जनसंख्या अभी भी लगभग ६० प्रतिशत बनी हुई है। इसका अर्थ यह हुआ कि कृषि क्षेत्र में रोजगार के अवसरों में कोई वृद्धि नहीं हुई और औद्योगिक क्षेत्र में भी कृषि–मजदूरों को रोजगार के अवसर प्राप्त नहीं हो सके। कृषि–क्षेत्र में बेरोजगारी की समस्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। कृषि जोतों का आकार छोटा होता चला जा रहा है। इसके फलस्वरूप जोतें अनार्थिक होती चली जा रही हैं। खेती किसान के गले की हड्डी बन गई है, क्योंकि न तो वह खेती छोड़ सकता है और न ही उसके लिए नए रोजगार की कोई व्यवस्था है। गरीबी एवं असहायता ही उसका भाग्य बन गया है।

डब्ल्यू. टी. ओ., अर्थात् अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन के कारण भारतीय कृषि एवं किसान की हालत पहले से बदतर हो गई है। वैश्वीकरण के कारण कृषि–क्षेत्र में प्रतियोगिता बढ़ गई है। गरीब किसान इस प्रतियोगिता के लिए तैयार नहीं था, परिणाम स्वरूप बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ तथा राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर काम करने वाले खाद्यान्न माफिया सक्रिय हो गए हैं। किसानों को अपने खाद, बीज, कीटनाशकों आदि के लिए इन बहुराष्ट्रीय कंपनियों का मुँह ताकना पड़ता है। इन कंपनियों की यही चाल रहती है कि भारतीय किसान उनकी दया पर रहें और वे अपने लाभों को अधिकतम करते जाएँ।

फसलों के क्षेत्र में ही नहीं, बल्कि पशुपालन क्षेत्र में भी स्थिति ठीक नहीं है। गाय, जो कि इस देश की विरासत मानी जाती है और जो भारतीय जीवन–पद्धति के सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक

पहलुओं से जुड़ी थी, उनकी संख्या तीव्रगति से कम हो रही है। इसके साथ–साथ देशी नस्ल की गायें समाप्ति के कगार पर हैं। संकर नस्ल की विदेशी गायें देशी गायों का स्थान ले रही हैं, जोकि हमारी जीवन–पद्धति से मेल नहीं खा पा रही हैं। घास एवं चारे के लिए जमीन की भारी कमी पड़ रही हैं।

देश में मिट्टी एवं जल प्रबंधन बिगड़ गया है। रासायनिक खादों एवं कीटनाशकों के कारण कृषि–भूमि की उपजाऊ शक्ति में कमी आ गई है। जैविक खादों का प्रयोग कम हो रहा है, सिंचाई के लिए भू–जलस्तर दिनों–दिन गिरता जा रहा है। हजारों हेक्टेयर भूमि लवणता से ग्रसित है। भूक्षरण बढ़ता जा रहा है। अतः परिणामस्वरूप कृषि योग्य भूमि घटती जा रही है। देश का ७० प्रतिशत कृषि योग्य भू–भाग सिंचाई के लिए वर्षा पर निर्भर है, केवल ३० प्रतिशत कृषि भूमि पर ही सिंचाई की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। यह कहावत अब भी सत्य है कि "भारतीय कृषि मानसूनों का जुआ है।"

भारतीय कृषि की दुर्दशा को देखते हुए इस बात का भय बना हुआ है कि देश की अर्थव्यवस्था का आधार सशक्त नहीं है। खाद्यान्नों की कीमतें बढ़ रही हैं, फल एवं सब्जियों की कीमतें आसमान को छू रही हैं, गेहूँ, दालों एवं खाद्य–तेलों का आयात बढ़ रहा है। ऐसी स्थिति में यदि कुछ सालों तक मानसून गड़बड़ रहा तो वह दिन दूर नहीं जब फिर से १९६० के दशक की स्थिति आ जाएगी। राशन की लंबी–लंबी कतारें, खाद्यान्नों की तस्करी, एवं विदेशों के सामने भीख का कटोरा लेकर जाना पड़ेगा। एक कृषि–प्रधान देश के लिए इससे बड़ी शर्म की बात और क्या हो सकती है? देश की उस प्रगति का क्या लाभ जब देश की जनता को खाने के लाले पड़े हों।

चौधरी चरण सिंह के विचारों की सार्थकता

देश की कृषि अर्थव्यवस्था के वर्तमान स्वरूप को देखते हुए चौधरी चरण सिंह के विचारों की सार्थकता नजर आने लगी है। वे अपनी पुस्तकों, लेखों, एवं भाषणों में अक्सर यह कहा करते थे कि यदि देश ने अपनी वर्तमान कृषि–नीति को नहीं बदला, तो भविष्य में देश को इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ेगी। वह भविष्यवाणी अब अक्षरशः सत्य प्रतीत होती नजर आ रही है। उनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'इण्डियाज इकोनॉमिक पॉलिसी', जो कि १९७९ में प्रकाशित हुई थी, उसमें उनके विचारों को स्पष्ट किया गया था, उससे पहले १९६४ में प्रकाशित उनकी पुस्तक 'इण्डियाज पॉवर्टी एंड इट्स

सोल्यूशन', उनके विचारों का स्पष्टीकरण करती है। यह पुस्तक पहले सन् १९५९ में 'ज्वाइंट फ़ार्मिंग ऐक्सरेड' के नाम से छपी थी। बाद के संस्करणों में इसका नाम परिवर्तित कर दिया और यह 'इण्डियाज पॉवर्टी एंड इट्स सोल्यूशन' के नाम से विख्यात हुई। उसके बाद केंद्रीय राजनीति में आने पर उनके भाषणों के कई संकलन प्रकाशित हुए। इसके साथ–साथ अर्थशास्त्रियों, राजनीतिशास्त्रियों समाजशास्त्रियों, कृषि–विशेषज्ञों आदि ने उनके जीवन–दर्शन और विशेषकर उनके आर्थिक–दर्शन पर काफी शोध कार्य किया। इस छोटे से लेख में उन सभी भाषणों, लेखों एवं शोधों का वर्णन करना कठिन है। यहाँ हम केवल उनकी कृषि नीति तक ही सीमित रहेंगे। यद्यपि कृषि क्षेत्र में भी उनका योगदान काफी विस्तृत है, परंतु इस लेख में हमारा प्रयास रहेगा कि उनकी कृषि विकास संबंधी नीतियों का संक्षेप में वर्णन करें और यह दिखाने का प्रयास करें कि उनके विचार आज के संदर्भ में पहले से भी अधिक कितने सार्थक हैं।

अपने सार्वजनिक जीवन में वे हमेशा किसानों एवं ग्रामीण क्षेत्रों के हितैषी बने रहे। जनता पार्टी का 'मैनीफेस्टो' प्रकाशित किया, जिसमें उनके विचारों को पूर्ण स्पष्टीकरण मिला। एक गरीब किसान के घर में पैदा होने के कारण उन्हें ग्रामीण समस्याओं एवं कृषि–क्षेत्र की समस्याओं का अनुभव था। वे एक ऐसे भारत देश की कल्पना करते थे जहाँ का किसान समृद्ध हो। ग्रामीण क्षेत्र विकसित हो, समाज में शोषण एवं असमानता न हो और मानव–गरिमा एवं मानव मूल्यों को ध्यान में रखकर देश का आर्थिक विकास हो।

कृषि का महत्त्व

चौधरी साहब जानते थे कि भूमि सभी प्रकार के कृषि व गैर–कृषि पदार्थों एवं सेवाओं का अंतिम आधार है और यही पदार्थ एवं सेवाएँ गरीबी एवं अमीरी का कारण होती हैं। कृषि से ही मनुष्यों के लिए खाद्य, पशुओं के लिए चारा एवं कारखानों के लिए कच्चा माल जाता है और इसी कच्चे माल से उपभोग के लिए वस्तुओं का उत्पादन होता है। कृषि उत्पादन पर ही देश का निर्यात निर्भर करता है और यह विदेशी मुद्रा कमाने एवं बचाने में सहायक सिद्ध होता है। कृषि–क्षेत्र में आय बढ़ने से उद्योगों के माल की खपत अच्छी होती है, क्योंकि आय बढ़ने से किसानों की क्रय–शक्ति में वृद्धि होने के कारण उद्योगों के माल की माँग अधिक बढ़ जाती है। कृषि की प्रगति के कारण छोटे एवं घरेलू उद्योगों को भी प्रोत्साहन मिलेगा एवं अतिरिक्त मानव–संसाधनों की उपलब्धि भी आसान हो सकेगी। फल,

दूध, सब्जी, तिलहन, दलहन एवं अन्य खाद्यान्नों पर आधारित उद्योग भी ग्रामीण क्षेत्रों में ही पनपने लगेंगे और रोजगार के अवसरों में वृद्धि होने से एक ओर बेरोजगारी की समस्या का हल होगा तथा दूसरी ओर जनसंख्या का शहरों की ओर पलायन कम होगा। गाँव में ही बुनियादी सुविधाओं के कारण गाँवों एवं शहरी क्षेत्रों की असमानता को कम किया जा सकेगा। इस प्रकार की व्यवस्था भारत के इतिहास एवं संस्कृति के अनुकूल भी है, पूँजी एवं प्रशिक्षित मजदूरों की कमी के कारण भारत में बड़े उद्योगों के लगाने से कई समस्याएँ उठ खड़ी होंगी।

भूमि सुधारों का ढाँचा

चौधरी चरण सिंह के अनुसार हमारे कृषि संगठन के चार उद्देश्य होने चाहिए: १. उत्पादन को अधिकतम बढ़ाना एवं गरीबी का उन्मूलन, २. पूर्ण रोजगार को प्राप्त करना, ३. आय के वितरण की असमानताओं को दूर करना एवं धन–सम्पत्ति के वितरण में समानता लाना, तथा ४. प्रजातांत्रिक प्रणाली को सशक्त बनाना। चौधरी साहब के अनुसार इन चारों उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है, पर यह तभी संभव हो सकता है, जब छोटे किसान अपनी भूमि के स्वामी हों और उनकी मदद के लिए सेवा–सहकारिता संस्थाएँ उपलब्ध हों। इन सहकारिता सेवा संस्थाओं का मुख्य कार्य यह हो कि ये किसानों को खाद, बीज, सिंचाई, ऋण, आदि उपलब्ध करवाने में सक्षम हों। सबसे महत्त्वपूर्ण शर्त यह है, कि किसानों को भू–स्वामित्व मिले और उन्हें उनकी जमीन से बेदखल न किया जा सके। सरकार और काश्तकार के बीच जमींदार एवं अन्य मध्यस्थों की कोई भूमिका न हो। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर भूमि–सुधार कानूनों में परिवर्तन करना चाहिए अथवा नए कानून बनाए जाने चाहिए।

भारत में जनसंख्या अधिक है और भूमि का आकार निश्चित है। ऐसी अवस्था में भूमि का दोहन अधिक करने की आवश्यकता है। चौधरी चरण सिंह का यह विचार था कि उत्पादन के अन्य साधन, जैसे– पूँजी एवं श्रमिकों का अधिक प्रयोग किया जाना चाहिए। भारत को बड़ी मशीनों की आवश्यकता नहीं और न ही हमारे किसानों के पास निवेश के लिए बड़ी पूँजी उपलब्ध है। अतः ऐसी परिस्थितियों में उपलब्ध साधनों का ही सघन प्रयोग करके प्रति इकाई भूमि की उत्पादक शक्ति को बढ़ाने का प्रयास किया जाना चाहिए।

चौधरी साहब के अनुसार भारत जैसे देश में न तो सहकारी खेती और न ही संयुक्त खेती सफल हो सकती है। इस प्रकार की खेतियाँ केवल

रूस एवं चीन जैसे साम्यवादी देशों में ही संभव हैं, जहाँ बड़ी–बड़ी मशीनों एवं यंत्रों से खेती की जाती है, और जहाँ बड़ी खेती हैं। उन देशों में प्रजातांत्रिक प्रणाली नहीं है, अतः जोर–जबरदस्ती से ये प्रणालियाँ लागू की जा सकती हैं। भारत जैसे प्रजातांत्रिक देश में हमारी परंपरा, सभ्यता एवं संस्कृति से मेल केवल व्यक्तिगत खेती ही खाती है, न कि बड़े–बड़े फार्म, जिन पर मशीनों से काश्त होती है और जहाँ बड़े पैमाने पर पूँजी का प्रयोग होता है।

चौधरी चरण सिंह का यह पक्का विश्वास था कि कृषि मजदूरों एवं अन्य लाखों गरीब किसानों एवं ग्रामीण बेरोजगारों की आय एवं रोजगार बढ़ाने के लिए कृषि आधारित उद्योगों को प्रोत्साहन देना अति आवश्यक है। इस प्रकार के उद्योग ग्रामीण क्षेत्रों में ही लगाए जाने चाहिए, इससे कृषि को भी प्रोत्साहन मिलता रहेगा एवं आय एवं रोजगार के अवसरों में भी वृद्धि होती रहेगी। अतः सरकार एवं नीति–निर्धारकों को अपना सारा ध्यान इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए लगाना चाहिए। उनका यह मानना था कि सहकारी खेती या संयुक्त खेती के स्थान पर जोतों का एकीकरण, अर्थात् "कंसॉलिडेशन" आवश्यक है, इससे जोतों के विखंडन की समस्या का हल निकलेगा। जोतों का आकार बड़ा होने एवं एक ही स्थान पर होने से वैज्ञानिक ढंग से खेती करना आसान हो जाएगा। चौधरी साहब इस तर्क से भी नहीं सहमत थे कि भूमि की अधिक काश्त सीमा निर्धारित करने पर जो जमीन उपलब्ध होगी उसे गरीबों में बाँटकर उनकी समस्या का हल निकाला जा सकता है। उनके अनुसार अब तक यही अनुभव रहा है कि अतिरिक्त बची हुई भूमि गरीबों में नहीं बाँटी जाती।

श्रम, पूँजी एवं नव–परिवर्तन

भूमि के अलावा उत्पादन के दो अन्य साधन हैं, श्रम एवं पूँजी। इन दोनों साधनों का सघन प्रयोग होना चाहिए। चौधरी चरण सिंह का यह विचार था कि भारत जैसे देश में श्रमिक आवश्यकता से अधिक हैं। अतः छिपी हुई बेरोजगारी की समस्या बनी रहती है, परंतु उनका यह भी मानना था कि इस समस्या का समाधान किया जा सकता है। यह तभी संभव है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में ही कृषि आधारित कुटीर उद्योगों का विकास किया जाए और इसके अलावा कृषि उत्पादन की ऐसी प्रणालियाँ विकसित हों, जिनमें यंत्रीकरण की अपेक्षा श्रमिक अधिक लगाए जा सकें। अतः उन्हीं प्रणालियों पर विशेष ध्यान देना होगा।

भारतीय कृषि पूँजी की भूखी है। कृषि क्षेत्र में निवेश पर्याप्त मात्रा

में नहीं हो रहा है। चौधरी साहब ने कई स्थानों पर अपने लेखों एवं भाषणों में कहा है कि इस का मुख्य दोष भारत सरकार की नीतियों पर है। सरकार के पास कृषि क्षेत्र को छोड़कर बाकी सभी क्षेत्रों के लिए फंड हैं, पर कृषि विकास के लिए नहीं। सरकार की करनी एवं कथनी में बड़ा अंतर है, उन्होंने प्रत्येक पंचवर्षीय योजनाओं का हवाला देकर यह सिद्ध करने की कोशिश की कि भारतीय कृषि क्षेत्र में प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में निवेश घटता गया है। इसके विपरीत विकसित देशों में कृषि निवेश बढ़ता जा रहा है। भारतवर्ष की तुलना में वे देश अपनी कृषि पर काफी ध्यान दे रहे हैं।

चौधरी चरण सिंह का यह मानना था कि कृषि अनुसंधान, प्रसारण एवं शिक्षा ही कृषि–क्षेत्र में नवीनता लाने की कुंजी है। अतः कृषि–शिक्षा, अनुसंधान एवं प्रसारण पर राष्ट्रीय आय का काफी भाग निवेश होना चाहिए, जब तक ऐसा होता रहा तब तक देश में हरित क्रांति आती रही। लेकिन पिछले कुछ वर्षों में इस क्षेत्र में निवेश कम होने से नवीनता ठप सी पड़ गई है। यदि देश में दूसरी हरित क्रांति लानी है तो उसके लिए कृषि–शिक्षा, अनुसंधान एवं प्रसारण पर अधिक निवेश करना आवश्यक होगा। आज के वैश्वीकरण के युग में, जहाँ चारों ओर प्रतियोगिता का बोलबाला है, वही देश प्रगति कर सकते हैं, जहाँ शिक्षा, शोध एवं प्रसारण तकनीकों का नित्य नवीन विकास हो रहा हो।

कृषि–मूल्य नीति एवं खाद्य वितरण

आज भारत में कृषि–मूल्य का निर्धारण, अंतर्राज्यीय एवं अंतर्क्षेत्रीय खाद्य वितरण एक विकट समस्या बनी हुई है। किसान सरकारी मूल्य नीति एवं खाद्य वितरण प्रणाली से संतुष्ट नहीं है। इसी कारण आए दिन किसान आंदोलन जोर पकड़ रहे हैं। इस संदर्भ में चौधरी चरण सिंह ने अपने विचारों को स्पष्ट किया। उनकी दी हुई राय आज पहले से भी अधिक सार्थक प्रतीत हो रही है। संक्षेप में उनके विचार ये थे कि:

१. खाद्यान्नों का आयात केवल तभी करना चाहिए जब चरम सीमा की खाद्य कमी हो।
२. देश में खाद्यान्नों का आयात–निर्यात बेरोकटोक होना चाहिए और इन पर किसी भी प्रकार की पाबंदी नहीं लगाई जानी चाहिए।
३. किसानों को दी जाने वाली फसलों की कीमतों एवं किसानों द्वारा खरीदी गई वस्तुओं की कीमतों का अनुपात इस प्रकार हो कि उपभोक्ताओं को भी नुकसान न हो और साथ में किसानों को भी उचित मूल्य मिले।

४. उच्चतम एवं न्यूनतम मूल्यों की घोषणा की जानी चाहिए। इन सीमाओं के अतिक्रमण के बाद ही सरकार को हस्तक्षेप करना चाहिए।
५. यदि कीमत न्यूनतम मूल्यों से कम होती है, तो सरकार को सीधा किसानों से ही फसल खरीदनी चाहिए और यदि कीमत अधिकतम मूल्यों से ऊपर जाती है तो सरकार को खरीदी हुई एवं बेची हुई वस्तुओं की कीमतों में सामंजस्य बनाए रखना होगा।
६. किसान द्वारा मजबूरी में बेची जाने वाली फसलों की खरीद का विशेष संस्थागत प्रबंध होना चाहिए, ताकि किसान की मजबूरी का नाजायज फायदा न उठाया जा सके।

आज भारत के सामने एक दुविधा आन पड़ी है, एक ओर तो देश के खाद्यान्न भंडार लबालब भरे पड़े हैं और दूसरी ओर भारत की जनसंख्या का एक बड़ा तबका ऐसा है जिसको दो जून की रोटी के लाले पड़े रहते हैं। सरकार इस समस्या का समाधान नहीं कर पा रही, परंतु चौधरी चरण सिंह ने इस संदर्भ में भविष्यवाणी कर दी थी और इसका समाधान भी सुझाया था। उनका सुझाव इस प्रकार था (१) दूसरे देशों को निर्यात बढ़ाया जाए, (२) गरीबों में खाद्य वितरण की विशेष नीति बनाई जाए, (३) फसल चक्र में परिवर्तन लाया जाए, (४) कृषि उत्पादन का उद्योगों में अधिक प्रयोग किया जाए, एवं (५) कृषि श्रमिकों की संख्या कम की जाए।

ग्रामीण एवं कृषि-क्षेत्र की उपेक्षा

पिछले १५० वर्षों से यह देखा जा रहा है कि लोगों का पलायन गाँवों से शहरों की ओर हो रहा है और इस पलायन की गति तीव्र होती जा रही है। पलायन करने वाले लोगों में मुख्यतौर पर शिक्षित, प्रशिक्षित, एवं प्रगतिशील लोग हैं। इस पलायन के कारण पीछे रह जाते हैं, अनपढ़, अप्रशिक्षित एवं गरीब, जिसके फलस्वरूप गाँव और अधिक पिछड़ते जा रहे हैं। इस पलायन का मुख्य कारण है रोजगार के अवसरों की कमी, शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात एवं संचार आदि सुविधाओं का अभाव। चौधरी चरण सिंह के अनुसार देश की स्वतंत्रता के पश्चात् कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्र की उपेक्षा न की होती, तो आज परिस्थितियाँ अलग होतीं और शहरीकरण की जो कठिनाइयाँ आज देश के सामने मुँह बाये खड़ी हैं, वे न होतीं। भारत ने अपनी पंचवर्षीय योजनाओं में बड़े पैमाने की उद्योग–प्रधान व्यवस्था को चुना, जोकि इस देश की दशा के अनुकूल नहीं था।

उपसंहार

चौधरी चरण सिंह के विचार देश की आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीति के विषय में बिल्कुल स्पष्ट थे। उनके अनुसार आदमी केवल अन्न खाकर ही जिंदा नहीं रह सकता, उसे इसके अलावा स्वतंत्रता एवं समानता की भी आवश्यकता रहती है। अतः ऐसी व्यवस्था की स्थापना करने का प्रयास करना चाहिए जिसमें भौतिक सुख–सुविधाओं के साथ–साथ मानवीय मूल्यों का भी विकास हो। ऐसा समाज जो शोषण एवं असमानताओं पर आधारित न हो और व्यक्ति को अपनी संभावनाओं को विकसित करने की पूर्ण स्वतंत्रता हो।

भारतीय अर्थव्यवस्था के कृषि एवं ग्रामीण प्रधान होने के कारण इन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। भूमि की प्रति इकाई उत्पादकता बढ़ाई जानी चाहिए एवं ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा, स्वास्थ्य एवं रोजगार की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए। कृषि पर किसान का स्वामित्व होना चाहिए एवं ऋण, खाद, बीज, सिंचाई आदि के लिए सहकारी संस्थाएँ होनी चाहिए। औद्योगिक क्षेत्र में छोटे एवं घरेलू उद्योगों पर जोर देना चाहिए तथा कृषि–प्रधान उद्योगों का विकास ग्रामीण क्षेत्रों में ही होना चाहिए। सभी उद्योगों का विकास महात्मा गाँधी द्वारा बताए गए मार्ग के अनुसार होना चाहिए। इस देश में न पूँजीवाद और न ही साम्यवाद की आवश्यकता है। यहाँ तो केवल गाँधीवाद का ही प्रचार–प्रसार होना चाहिए क्योंकि गाँधीवाद ही हमारे देश की सभ्यता एवं संस्कृति से मेल खाता है।

अंत में हम यही निष्कर्ष निकालते हैं कि आज के संदर्भ में चौधरी चरण सिंह के विचारों की सार्थकता और भी बढ़ गई है। यदि हमने उनकी बातों का अनुकरण किया होता, तो देश आज उस संकट की परिस्थिति में न होता जिसमें कि हम आज अपने को घिरा पा रहे हैं।

संदर्भ

१. चरण सिंह (१९७९), इण्डियाज इकोनॉमिक पॉलिसी, अखिल भारतीय किसान सम्मेलन, दिहल भाई पटेल हाऊस, रफी मार्ग, नई दिल्ली।
२. चरण सिंह (१९६४), इंडियाज पॉवर्टी एंड इट्स सॉल्यूशन, एशिया पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
३. भारत सरकार, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय (१९७९), सेलेक्टेड स्पीचेज।
४. राणा, आर. एस. (१९९३), फ़र्स्ट किसान प्राइम मिनिस्टर चौधरी चरण सिंहः ए बायोग्राफी, आर. एस. राणा, कुरुक्षेत्र यूनिवर्सिटी, हरियाणा।
५. चरण सिंह (१८८६), लैण्ड रेफॉर्म्स इन यू. पी. एंड द कुलक्स, एंड विकास पब्लिशिंग हाऊस न्यू दिल्ली।
६. चरण सिंह (१९४७), अबॉलिशन ऑफ जमींदारी, किताबिस्तान,इलाहाबाद।

६७

चौधरी चरण सिंह

सर मार्क टली*

चौधरी चरण सिंह भारत के प्रमुख राजनेताओं में से एक थे, फिर भी वे बहुत सरल और मिलनसार थे, तथा मेरे जैसे पत्रकारों को समय देने के लिए तैयार रहते थे। जनता सरकार के पतन और प्रधानमंत्री के रूप में उनके संक्षिप्त कार्यकाल के दौरान भी वे राजनीतिक चर्चा करने के लिए समय निकाल लेते थे। मेरी उनसे हुई बातचीत से मुझे उनके अडिग सिद्धांतों का आभास हुआ। वे अपने सिद्धांतों पर अडिग रहने वाले राजनेता थे, जो ग्रामीण भारत के प्रति समर्पित थे। मुझे विशेष रूप से उनका बताना याद है कि मोरारजी देसाई के प्रति उनका विरोध व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा पर नहीं बल्कि सिद्धांतों पर था। मोरारजी देसाई ने जनता सरकार के उन सिद्धांतों और नीतियों को त्याग दिया था, जिन्हें लागू करने का उन्होंने आश्वासन दिया था।

मैंने हमेशा तर्क दिया था कि अंतर्राष्ट्रीय प्रेस और भारत में अंग्रेजी भाषा के प्रेस ग्रामीण पृष्ठभूमि के राजनेताओं को न ही समझते हैं और न ही उनका सम्मान करते हैं। उन्होंने चौधरी साहब को एक कुलक के रूप में चित्रित किया। वे यह समझने में विफल रहे कि उनकी पुस्तकों से पता चलता है कि वे उन अधिकांश राजनेताओं से कहीं अधिक विद्वान थे जिनकी प्रेस में अक्सर प्रशंसा होती थी। शायद यही कारण था कि चौधरी साहब हमेशा मेरे लिए समय निकालते थे। वे अक्सर कहा करते थे कि शहरी अभिजात वर्ग के वर्चस्व वाली भारत की राजनीति में किसान–समर्थक राजनेताओं के विचारों को गंभीरतापूर्वक नहीं लिया जाएगा।

भाषा पर चौधरी साहब के विचार अंग्रेजी भाषा के प्रेस को पसंद नहीं

---

* सर मार्क टली (१९३५–), लोगों द्वारा सम्मानित प्रख्यात पत्रकार। बीबीसी के नई दिल्ली ब्यूरो के पूर्व अध्यक्ष हैं। उन्होंने ३० साल तक बीबीसी के लिए काम किया, और जुलाई १९९४ में इस्तीफा दिया। अपने कार्यकाल के दौरान, उन्होंने दक्षिण एशिया की प्रमुख घटनाओं को कवर किया। इनमें भारत–पाकिस्तान संघर्ष, भोपाल गैस त्रासदी, ऑपरेशन ब्लू स्टार, इंदिरा गाँधी की हत्या, और सिख विरोधी दंगे शामिल हैं। १९९४ के बाद, वे नई दिल्ली से स्वतंत्र पत्रकार और प्रसारक के रूप में काम कर रहे हैं।

आए। लेकिन उन्होंने महसूस किया कि भाषा और संस्कृति घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई हैं, इसलिए भारतीय संस्कृति के फलने–फूलने के लिए भारतीय भाषाओं का फलना–फूलना आवश्यक था।

स्पष्ट अंग्रेजी बोलते हुए और आधुनिक दुनिया में इसके महत्व को समझते हुए, चौधरी साहब ने भारतीय भाषाओं पर इसके प्रतिकूल प्रभाव को भी पहचाना। अंग्रेजी को एक घातक भाषा कहा गया है क्योंकि यह अन्य भाषाओं को खत्म कर देती है। अंग्रेजी भाषा के समर्थक अक्सर दावा करते हैं कि यह एक भारतीय भाषा बन गई है। चौधरी चरण सिंह समझते थे कि यह तर्क कितना उथला था। वे बहुत अच्छी तरह जानते थे कि अंग्रेजी केवल अभिजात वर्ग की भाषा थी और सरकारी संचार में इसके उपयोग का अर्थ था कि अधिकांश भारतीय उन संचारों द्वारा दी गई जानकारी से वंचित थे।

आज भारत में दुर्भाग्यवश चौधरी चरण सिंह जैसे नेताओं की कमी है।

आर्थिक उदारीकरण ने पूँजीपतियों को मजबूत बना दिया है। उन्हें भारत की नई संपत्ति के निर्माण और जीडीपी विकास के लिए जिम्मेदार माना जाता है। कोई ऐसा प्रभावशाली राजनेता नहीं है जो यह सुनिश्चित करे कि अन्य आवाजें भी सुनी जाएँ। कम्युनिस्ट अपनी पुरानी विचारधारा से जकड़े हुए हैं। अन्य तथाकथित वामपंथी दल स्थानीय जाति की राजनीति में शामिल हैं और उनके पास न तो नेतृत्व के गुण हैं और न ही राष्ट्रीय स्तर पर प्रभुत्व वाले बाजार/पूँजीवाद पर सवाल उठाने की स्थिति में हैं। चौधरी साहब में उस आर्थिक विचारधारा पर सवाल उठाने की बुद्धिमत्ता और साहस था। वे न तो बाजार को पूर्णतः खारिज करते और न ही उस समाजवाद की वापसी की वकालत करते जिसने भारत को इतना नुकसान पहुँचाया हुआ था। उनकी बातें सुनी जातीं। अब जबकि व्यवसाय क्षेत्र अनुबंध खेती, खाद्य प्रसंस्करण, और अनाज विपणन के माध्यम से कृषि में प्रवेश करने की योजना बना रहा है, ऐसे समय में चरण सिंह के विचारों की और भी अधिक आवश्यकता है। चौधरी साहब उन व्यवसायिक मॉडलों की सराहना कर पाते जो किसानों को लाभान्वित करते। वह एक आदर्श भारतीय थे। उन्होंने आगे बढ़ने का एक ऐसा रास्ता तलाशा होता, जो पूँजीवाद और समाजवाद की ज्यादतियों के बीच का मध्य मार्ग होता।

अनुलग्नकः सभी लेखों के स्रोत

भाग १ – व्यक्तित्व और चरित्र

ये अध्याय १९९५ में किसान ट्रस्ट दिल्ली द्वारा प्रकाशित स्मृति और मूल्यांकन से पुनः प्रस्तुत किए गए हैं: १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, १२, १४, १५, १६, १७ (भाग), १८, १९, २०, २१, २२, २३, २४

ये अध्याय २०१० में किरण पाल सिंह देहरादून द्वारा प्रकाशित स्मृति ग्रंथ से पुनः प्रस्तुत किए गए हैं: १३, १७ (भाग)

ये अध्याय १९७८ में देशभक्त मोर्चा द्वारा प्रकाशित परंतप से पुनः प्रस्तुत किए गए हैं: २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१

भाग २ – राजनीति

स्मृति और मूल्यांकन १९९५: ३२, ३३, ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३९, ४०, ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९

परंतप १९७८: ५०, ५१

स्मृति ग्रंथ २०१०: ५२, ५३, ५४, ५५

भाग ३ – आर्थिक और सामाजिक नीतियाँ

स्मृति एवं मुल्यंकाण १९९५: ५६, ५७, ५८, ५९, ६०, ६१

परंतप १९७८: ६२, ६३, ६४

स्मृति ग्रंथ २०१०: ६५, ६६, ६७

चौधरी चरण सिंह की ये स्मृतियाँ राजनीतिज्ञों, पत्रकारों, नौकरशाहों, परिवार के सदस्यों तथा उन महानुभावों ने लिखीं जिन्हें चौधरी साहब के लंबे सार्वजनिक जीवन के दौरान उनसे संवाद करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। ये आख्यान चौधरी चरण सिंह के चरित्र, राजनीति, नीतियों तथा उपलब्धियों को जीवंत रूप में प्रस्तुत करते हैं। इस पुस्तक में चौधरी चरण सिंह की नेतृत्व शैली के साथ–साथ उनके व्यक्तित्व का वर्णन सम्मिलित है। इन लेखों को पढ़ने के पश्चात् आपके मन में कई बार प्रश्न जरूर उठेगा की ऐसा अजूबा इंसान क्या सचमुच था भी?

चौधरी साहब के विचारों का अध्ययन तथा इन विचारों का व्यवहार में प्रयोग करके समाज जरूर लाभान्वित हो सकता हैं। उन्होंने हमारे उन नागरिकों को एक उत्कृष्ट जीवन प्रदान करने की दिशा में विचार किया जो अब तक पर्याप्त पोषण, आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा रोजगार प्राप्त करने में असमर्थ हैं। आज भी प्रभावशाली जीडीपी वृद्धि के आंकड़ों के पश्चात हमारी जनसंख्या का विशाल बहुमत निर्धनता की स्थिति में है। इसके अतिरिक्त, हमारे समाज का नैतिक ताना–बाना निरंतर क्षतिग्रस्त हो रहा है, तथा लगभग प्रत्येक संस्था गहन और व्यापक भ्रष्टाचार से प्रभावित है। इस परिप्रेक्ष्य में चौधरी चरण सिंह एक दूरदर्शी नेता के रूप में उभरते हैं, जिनके पास भारत के आर्थिक विकास के लिए एक स्पष्ट प्रतिमान था–एक ऐसा प्रतिमान जो मुक्त–बाजार पूँजीवाद तथा राज्य–नियंत्रित समाजवाद के दोनों अतिवादों से बचता है।

उनकी १९६६ की कृति “भारत की अर्थनीति, एक गाँधीवादी रूपरेखा” उनके विचारों का उत्कृष्ट प्रतिपादन करती है। इसमें उन्होंने दो प्रमुख स्तंभों को रेखांकित किया: पहला, किसानों को लाभ पहुँचाने वाला कृषि विकास, तथा कारीगरों व भूमिहीनों के लिए गाँवों और छोटे कस्बों में वैकल्पिक रोजगार के अवसर। उनकी नीति संबंधी अनुशंसाएँ भारत की वास्तविकता में गहराई से निहित हैं। ये अनुशंसाएँ देश की विशाल जनसंख्या को संबोधित करते हैं तथा ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों के मध्य, साथ ही तथाकथित ‘उच्च’ और ‘निम्न’ जातियों के मध्य की सामाजिक असमानताओं को पाटने का प्रयास करती हैं। चरण सिंह प्रायः कहते थे कि उन्होंने एक वर्ग–युद्ध और एक जाति–युद्ध दोनों लड़े। गाँधीवादी सिद्धांतों से प्रेरित उनकी आर्थिक सोच पारिस्थितिक रूप से गाँवों का विकास की टिकाऊ नींव पर आधारित थी नाकि भारत के वर्तमान ना रहने योग्य नगरों व कस्बों के अव्यवस्थित निर्माण पर।

अपने आदर्श स्वामी दयानंद सरस्वती और महात्मा गाँधी से प्रभावित, चौधरी चरण सिंह एक उच्च चरित्र और सिद्धांतों–वाले व्यक्ति के रूप में दिखाई पड़ते हैं। निश्चित रूप से यह पुस्तक उनकी राजनीतिक असफलताओं या उनके द्वारा आकांक्षित उपलब्धियों को प्राप्त ना कर पाने की विवेचना नहीं करती। इसके लिए हमें उन स्वतंत्र विद्वानों की ओर दृष्टिपात करना होगा जिन्होंने हमारे देश के राजनीतिक इतिहास और हमारे द्वारा चुने गए नेताओं का गहरा अध्ययन किया है। फिर भी ये अध्याय एक ऐसे व्यक्ति का सजीव और प्रेरक चित्र प्रस्तुत करते हैं, जो अडिग नैतिकता तथा उच्चतम चरित्र के साथ साथ निडर होकर सदैव एक स्वतंत्र मार्ग पर चला। जो लोग सुनने और सीखने की इच्छा रखते हैं, उनके साथ संपूर्ण भारत के लिए चरण सिंह के विचार व शिक्षाएँ आज भी प्रासंगिक हैं।

चरण सिंह अभिलेखागार
२३ दिसंबर २०२४

चरण सिंह अभिलेखागार
www.charansingh.org

ISBN 978-81-978355-1-3

Price ₹1,199